# क्रांतिकारी कोश

इस श्रमसिद्ध व प्रज्ञापुष्ट ग्रंथ **क्रांतिकारी कोश** में भारतीय स्वाधीनता आंदोलन के इतिहास को पूरी प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। सामान्यतया भारतीय स्वातंत्र्य आंदोलन का काल १८५७ से १९४२ ई. तक माना जाता है; किंतु प्रस्तुत ग्रंथ में इसकी काल-सीमा १७५७ ई. (प्लासी युद्ध) से लेकर १९६१ ई. (गोवा मुक्ति) तक निर्धारित की गई है। लगभग दो सौ वर्ष की इस क्रांति-यात्रा में उद्भट प्रतिभा, अदम्य साहस और त्याग-तपस्या की हजारों प्रतिमाएँ साकार हुईं। इनके अलावा राष्ट्रभक्त कवि, लेखक, कलाकार, विद्वान् और साधक भी इसी के परिणाम-पुष्प हैं।

पाँच खंडों में विभक्त पंद्रह सौ से अधिक पृष्ठों का यह ग्रंथ क्रांतिकारियों का प्रामाणिक इतिवृत्त प्रस्तुत करता है। क्रांतिकारियों का परिचय अकारादि क्रम से रखा गया है। लेखक को जिन लगभग साढ़े चार सौ क्रांतिकारियों के फोटो मिल सके, उनके रेखाचित्र दिए गए हैं। किसी भी क्रांतिकारी का परिचय ढूँढ़ने की सुविधा हेतु पाँचवें खंड के अंत में विस्तृत एवं संयुक्त सूची (सभी खंडों की) भी दी गई है।

भविष्य में इस विषय पर कोई भी लेखन इस प्रामाणिक संदर्भ ग्रंथ की सहायता के बिना अधूरा ही रहेगा।
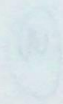
# क्रांतिकारी कोश

## चतुर्थ खंड

# क्रांतिकारी कोश

## चतुर्थ खंड



**श्रीकृष्ण 'सरल'**

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
ISO 9001 : 2000 प्रकाशक
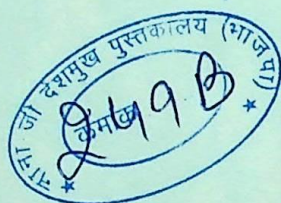
प्रकाशक • प्रभात प्रकाशन
४/१९ आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२
संस्करण • २०१२

मुद्रक • भानु प्रिंटर्स, दिल्ली
मूल्य • चार सौ रुपए (चतुर्थ खंड)
दो हजार रुपए
(पाँच खंडों का सेट)

**KRANTIKARI KOSH** (Encyclopaedia of Indian Freedom Fighters)
*by* Shrikrishna 'Saral'
Published by Prabhat Prakashan, 4/19 Asaf Ali Road, New Delhi-2
Vol IV Rs. 400.00 ISBN 81-7315-235-7
Set of five Vols. Rs. 2000.00 ISBN 81-7315-237-3
e-mail: prabhatbooks@gmail.com

# अनुक्रम

**(काकोरी कांड, चटगाँव शस्त्रागार कांड युग,**
**सन् १९२६ से १९३४ तक तथा**
**सन् १९४२ के भारत छोड़ो आंदोलन के कुछ क्रांतिकारी)**

क्रांतिकारी कोश के पाँचों खंडों की संयुक्त सूची
(प्रत्येक क्रांतिकारी अकारादि क्रम से)
के लिए देखें—
**'क्रांतिकारी कोश : पंचम खंड'** के अंत में।

# ★ अंबिका चक्रवर्ती ★ अर्धेंदु दस्तीदार
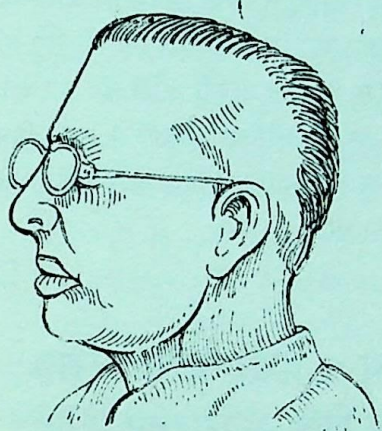
अंबिका चक्रवर्ती
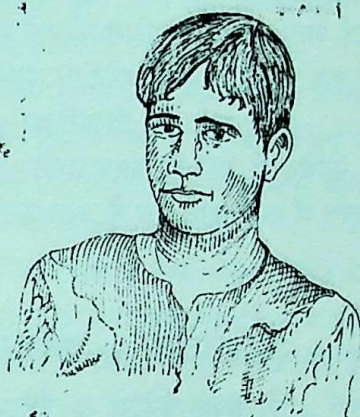
अर्धेंदु दस्तीदार

सूर्यसेन ने चटगाँव शस्त्रागार कांड के लिए अपने जिन साथियों को चुना था, उनमें अर्धेंदु दस्तीदार और अंबिका चक्रवर्ती भी थे। नियत तिथि पर अभियान के कुछ दिन पहले अर्धेंदु बम बनाते हुए बुरी तरह जल गया। वह पूरी तरह से ठीक नहीं हो पाया था, फिर भी उसने शस्त्रागार आक्रमण में भाग लिया और पूरी मुस्तैदी से काम करके दिखाया।

पुलिस और फौज के हथियारखाने लूटकर क्रांतिकारी लोग किसी सुरक्षित पहाड़ी पर पहुँचना चाहते थे। अंबिका चक्रवर्ती को पहाड़ी का रास्ता मालूम था। वह रात्रि के अंधकार में अपने साथियों का पथ-प्रदर्शन करता हुआ उन्हें सुलुकबहर पहाड़ी पर ले गया। प्रत्येक क्रांतिकारी के पास हथियारों का बोझ भी था।

२२ अप्रैल, १९३० को जलालाबाद पहाड़ी पर फौज के साथ हुए युद्ध में अर्धेंदु दस्तीदार और अंबिका चक्रवर्ती ने भी भाग लिया। अर्धेंदु को काफी घाव लगे। उसकी एक बाँह में गोली लगी और गोली लगने के कारण ही हाथ की एक

उँगली टूट गई। उसके गुर्दे के बाईं तरफ भी एक घातक घाव हो गया। उसकी जाँघ में तो घाव पहले से ही था। इतने घाव होने के कारण ही वह अपने साथियों के साथ उस समय नहीं जा सका, जब अँधेरा हो जाने के कारण युद्ध बंद हो गया। अंबिका चक्रवर्ती भी अधिक घायल हो जाने के कारण युद्धस्थल नहीं छोड़ सका।

२३ अप्रैल को सुबह जब फौज की टुकड़ी पहाड़ी पर पहुँची तो उन लोगों ने अर्धेंदु दस्तीदार और अंबिका चक्रवर्ती को घायल अवस्था में गिरफ्तार कर लिया। उन दोनों को अस्पताल भिजवाया गया।

पुलिस इस नतीजे पर पहुँची कि अर्धेंदु दस्तीदार बच नहीं सकेगा। मरने के पहले वह उससे अंतिम बयान लेकर क्रांतिकारियों के भेद मालूम करना चाहती थी। उससे भाँति-भाँति प्रकार से पूछताछ की गई। अर्धेंदु ने अपने विषय के अतिरिक्त कोई अन्य जानकारी पुलिस को देने से इनकार कर दिया। २३ अप्रैल की रात को ही एक बजकर पचास मिनट पर उसने हमेशा के लिए अपनी आँखें बंद कर लीं।

अर्धेंदु बहुत उग्र विचारों का युवक था। राजनीतिक मामलों में अपने पिता से मतभेद हो जाने के कारण उसने अपने घर का त्याग कर दिया और सूर्यसेन के नेतृत्व में क्रांतिकारी दल में काम करने लगा था।

□

# ★ अक्लदेवी ★ कपिलदेव ★ केशवप्रसाद सिंह ★ केशव सिंह ★ कैलाश सिंह ★ गिरवर सिंह ★ छट्टन राय ★ जगन्नाथ सिंह ★ द्वारिकाप्रसाद सिंह ★ महादेव सिंह ★ रामानुज पांडे ★ वासुदेव सिंह ★ शीतल मिस्त्री ★ शीतल सिंह ★ सभापति सिंह

❖ ❖
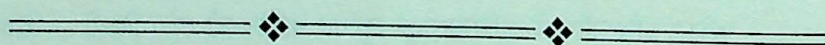
बिहार के आरा जिले में सन् १९४२ के आंदोलन ने बहुत उग्र रूप धारण कर लिया। महिलाएँ भी मैदान में कूद पड़ीं और तोड़-फोड़ के कामों में भाग लेने लगीं। सरकारी कर्मचारियों ने भी आंदोलनकारियों को बहुत सहयोग दिया। अध्यापक वर्ग ने अपने विद्यार्थी वर्ग को उकसाया ही, वे स्वयं भी तोड़-फोड़ के कामों में भाग लेने लगे।

एक स्कूल मास्टर थे श्री जग्गूलाल। ५ सितंबर को तोड़-फोड़ का नेतृत्व करते हुए वे अखाड़े में कूद पड़े। उनके साथ एक विशाल जुलूस निकला, जिसने कई दफ्तरों में आग लगा दी और खजाने तथा हथियारखानों पर अधिकार कर लिया। जब मास्टर जग्गूलाल किसी भी प्रकार कब्जे में आते दिखाई नहीं दिए, तो उनके घर को उड़ाने के लिए डायनामाइट लगा दिए गए। अपने परिवारवालों की जान बचाने के लिए मास्टर साहब ने अपनी गिरफ्तारी दे दी।

पुलिस स्टेशन पर ले जाकर मास्टर जग्गूलाल को इतनी अमानुषिक यातनाएँ दी गईं कि उस सदमे से उनके पिता का प्राणांत हो गया। मास्टर साहब के भाई कपिलदेव को अंग्रेज पुलिस ने गोली मार दी। उन्हें इतने से ही संतोष नहीं हुआ। उन्होंने कपिलदेव का पेट फाड़कर उसकी आँतें बाहर खींच लीं। पुलिस स्टेशन के रास्ते में जो भी व्यक्ति दिख जाता, उसे गोली मार दी जाती थी।

'घोड़ादेई' स्थान पर एक कवि श्री कैलाश सिंह ने ओजस्वी राष्ट्रीय कविताएँ सुनाकर लोगों को उत्तेजित किया। अंग्रेजों ने उन्हें गिरफ्तार करके खौलते हुए पानी में बार-बार डुबोया; यहाँ तक कि उनकी जान ही निकल गई। जगदीशपुर थाने के बलिगाँव में एक आंदोलनकारी छट्टन राय को गोली मार दी गई।

'लसाढ़ी' गाँव में आंदोलनकारियों को दबाने के लिए अंग्रेजी फौज भेजी गई। उस गाँव के ग्वालों को भी जोश आ गया और नगाड़े बजाते हुए उन्होंने अंग्रेजी फौज पर आक्रमण कर दिया। इस युद्ध में बारह लोग शहीद हुए, जिनके नाम हैं—वासुदेव सिंह, शीतल सिंह, केशव सिंह, जगन्नाथ सिंह, सभापति सिंह, गिरवर सिंह, महादेव सिंह, केशवप्रसाद सिंह, द्वारिकाप्रसाद सिंह, रामानुज पांडे, शीतल मिस्त्री और अक्लदेवी।

बिहार प्रांत में प्रतिरोधात्मक आंदोलन पूर्णरूप से क्रांतिकारी आंदोलन में परिणत हो गया और उसने अन्य प्रांतों की अपेक्षा अच्छा नाम कमाया।

□

# ★ अतुलकुमार सेन ★ अनिल भादुड़ी ★ मणि लाहिड़ी

"यह वाटसन का बच्चा हम लोगों के विरुद्ध अपने अखबार में जहर उगलता रहता है। यदि इसका मुँह बंद नहीं किया गया तो छोटे-छोटे संपादक भी हमारी तरफ भौंकना प्रारंभ कर देंगे।"

"कर क्या देंगे, कर ही दिया है। 'स्टेट्समैन' बड़ा अखबार है। उसकी

देखा-देखी छोटे-छोटे अखबार भी हम पर कीचड़ उछालने लगे हैं।''

''इसलिए यह जरूरी हो गया है कि हम 'स्टेट्समैन' के संपादक अल्फ्रेड वाटसन को ठिकाने लगाकर अन्य संपादकों को सबक दें।''

''वाटसन को सबक सिखाने का बीड़ा कौन उठाना चाहता है?''

ये विचार चल रहे थे कलकत्ता के क्रांतिकारियों के बीच। बीड़ा उठाने का प्रश्न जब सामने आया, तो अतुलकुमार सेन नाम के एक तरुण क्रांतिकारी ने स्वयं को प्रस्तुत करते हुए कहा—

''अल्फ्रेड वाटसन पर हाथ साफ करने का पहला अवसर मुझे दिया जाए।''

अतुलकुमार सेन की बात मान ली गई और उसे एक अच्छा रिवॉल्वर पार्टी की ओर से दिया गया।

५ अगस्त, १९३२ को जब अपने घर मध्याह्न भोजन लेकर अल्फ्रेड वाटसन अपनी कार द्वारा अपने ऑफिस के फाटक पर पहुँचा और फाटक के अंदर जाने के लिए ज्यों ही उसकी कार धीमी हुई, अतुलकुमार सेन ने अपना हाथ खिड़की के अंदर डालकर वाटसन पर गोली चला दी। चूँकि कार आगे सरक रही थी, अत: खिड़की की दीवार अतुल के हाथ से टकराई। इसके दो दुष्परिणाम हुए—एक यह कि गोली निशाने पर नहीं बैठी और वह वाटसन को हानि पहुँचाने के स्थान पर काँच को फोड़ती हुई निकल गई। दूसरा दुष्परिणाम यह हुआ कि हाथ में टक्कर लगने के कारण अतुल का रिवॉल्वर वाटसन की कार के अंदर गिर पड़ा। फाटक पर जो दरबान था, वह अतुल की तरफ लपका और गोली चलने की आवाज सुनकर पास ही खड़ा एक सिपाही भी वहाँ पहुँच गया। दोनों ने मिलकर आक्रमणकारी को काबू में कर लिया।

बहुत जोर लगाकर अतुलकुमार सेन ने अपना एक हाथ मुक्त कर लिया और अपनी जेब में से कोई वस्तु निकालकर मुँह में रख ली। उस वस्तु के खाने से वह बेहोश हो गया तथा अस्पताल पहुँचकर उसकी मृत्यु हो गई।

वाटसन के ऊपर पहले प्रयत्न के विफल हो जाने पर इस बार क्रांतिकारियों के एक दल ने उसपर आक्रमण किया।

२८ सितंबर, १९३२ को अपना दिन का काम समाप्त करके जब वाटसन अपनी कार द्वारा महिला सेक्रेटरी के साथ घर जा रहा था, तो एक खुली हुई कार में बैठकर उसका पीछा कर रहे कुछ क्रांतिकारियों ने उसकी कार की बगल में पहुँचकर उसपर गोलियाँ चलाईं। दो गोलियाँ वाटसन के कंधे में लगीं। वाटसन ने अपने ड्राइवर से गाड़ी तेज चलाने के लिए कहा। ड्राइवर ने गाड़ी तेज चलाई; लेकिन इसी समय एक बग्घी सामने आ गई और वाटसन की कार को रुकना पड़ा। क्रांतिकारियों की कार उसके निकट पहुँच गई और उन्होंने उसपर कुछ गोलियाँ

फिर चलाईं। वाटसन और महिला सेक्रेटरी दोनों ही घायल हुए। इसी समय एक सारजेंट वहाँ पहुँच गया और उसने वाटसन के आक्रमणकारियों पर गोलियाँ छोड़ीं। क्रांतिकारी कार से भाग खड़े हुए। सारजेंट ने वाटसन की गाड़ी द्वारा उनकी कार का पीछा किया। आगे चलकर एक बैलगाड़ी आ जाने के कारण क्रांतिकारियों की कार का भी रास्ता रुक गया। वे लोग कार से नीचे कूदकर भागे। एक क्रांतिकारी एक दिशा में भागा और तीन अन्य क्रांतिकारी अन्य दिशा में। अकेला क्रांतिकारी तो भागने में सफल हो गया, पर तीन क्रांतिकारियों में से भागते-भागते दो गिर पड़े और गिरते ही उनकी मृत्यु हो गई। मरनेवाले क्रांतिकारियों के नाम थे—मणि लाहिड़ी और अनिल भादुड़ी। जो क्रांतिकारी पकड़ा गया, उसपर तथा कुछ अन्य पर मुकदमा चला और उन्हें आजीवन कारावास के दंड दिए गए।

यह बात अवश्य हुई कि इस घटना के पश्चात् समाचार-पत्रों ने क्रांतिकारियों के विरुद्ध अनर्गल लिखना बंद कर दिया।

□

# ★ अनंतसिंह

अनंतसिंह

२८ जून, १९३० की सुबह जब लोगों के हाथों में दैनिक अखबारों की प्रतियाँ पहुँचीं, तो बड़े-बड़े अक्षरों में छपी एक सनसनीपूर्ण खबर ने उन्हें चौंका दिया। खबर थी—'आज दिनांक २८ जून, १९३० को क्रांतिकारी सूर्यसेन का एक विश्वसनीय लेफ्टिनेंट और चटगाँव शस्त्रागार लूट का महत्त्वपूर्ण नायक अनंतसिंह कलकत्ता में इंस्पेक्टर जनरल पुलिस के कार्यालय में आत्मसमर्पण करेगा।'

खबर सचमुच चौंका देनेवाली थी। जिसने भी वह खबर पढ़ी, एकाएक उस पर विश्वास नहीं कर सका। जहाँ भी चार-छह लोग एकत्र होते, चर्चाएँ चल पड़तीं—''यह समझ में नहीं आता कि जब चटगाँव क्रांति के छोटे-छोटे किशोर क्रांतिकारी भी पुलिस और फौज से डटकर मुकाबला कर रहे हैं तो अनंतसिंह जैसा

महत्त्वपूर्ण और दिलेर क्रांतिकारी क्यों समर्पण कर रहा है?''

''मुझे तो लगता है कि वह समर्पण करने वाला नहीं; और पुलिस ने क्रांतिकारियों में फूट डालने के लिए ही खबर शरारतन छपवाई है।''

''और अगर अनंतसिंह समर्पण करने के लिए पुलिस दफ्तर तक जाएगा भी तो रास्ते में ही कोई अन्य क्रांतिकारी उसपर गोली चलाकर उसे खत्म कर देगा। सचमुच ही पुलिस की यह गहरी चाल है।''

''नहीं भाई, यह शरारत से छपी हुई खबर नहीं हो सकती, क्योंकि सरकार विरोधी समाचार-पत्रों में भी यह छपा है। मुझे तो लगता है, वह समर्पण करेगा और अपने किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसके समर्पण की योजना उसके साथी क्रांतिकारियों ने ही बनाई होगी।''

''यदि यह कथन सच है, तो इसमें सूर्यसेन की ही कोई चाल मालूम पड़ती है। यह नहीं हो सकता कि सूर्यसेन के परामर्श के बिना इतना बड़ा क्रांतिकारी समर्पण करे।''

''मुझे तो लगता है कि सरकार क्रांतिकारियों के प्रश्न को लेकर निर्दोष लोगों को बहुत त्रास दे रही है। अनंतसिंह ने सोचा होगा कि यदि मैं समर्पण कर दूँ, तो कई लोग पुलिस के हाथों त्रास पाने से बच जाएँगे।''

''नहीं-नहीं, यह नहीं हो सकता। न तो पुलिस ही इतनी मूर्ख है और न ही क्रांतिकारी। यदि इसे सच भी मान लिया जाए, तो अपनी इस चाल की सफलता के फलस्वरूप पुलिस सूर्यसेन जैसे नेता को समर्पण हेतु विवश करने के लिए तो जनता को और भी अधिक त्रास देने लगेगी। क्या क्रांतिकारी इस बात को नहीं जानते होंगे?''

''अरे भाई, इन सभी अटकलों का नतीजा कल सुबह का अखबार निकाल देगा। उसने समर्पण किया या नहीं, यह खबर हम लोग कल के अखबार में पढ़ लेंगे।''

''हम कल की प्रतीक्षा क्यों करें? हम तो आज दिन-भर इंस्पेक्टर जनरल पुलिस के कार्यालय के आसपास ही मँडराते रहेंगे और यदि वह समर्पण करता है, तो हम उसे देख भी लेंगे।''

और सचमुच ही कलकत्ता में इंस्पेक्टर जनरल पुलिस के कार्यालय को जानेवाली सभी सड़कों और गलियों में लोगों की अपार भीड़ देखी गई। अनंतसिंह कब कार्यालय पहुँच गया, उसका पता लोगों को तब चला, जब 'इनकलाब जिंदाबाद' के नारों से वातावरण गूँज उठा। लोग उसके दर्शन तो नहीं कर पाए, पर उनके मन के अनिश्चय की समाप्ति अवश्य हो गई।

जिस महान् क्रांतिकारी अनंतसिंह ने समर्पण किया, वह प्रारंभ से ही चटगाँव

शस्त्रागार लूट की योजना में सम्मिलित था।

चटगाँव शस्त्रागार की लूट की योजना बनाते समय सूर्यसेन ने अनंतसिंह को यह दायित्व दिया था कि वह शस्त्रागारों पर आक्रमण करने के पहले अपने साथियों को शस्त्र-सज्जित करने के लिए कुछ हथियारों का संग्रह करे। अनंतसिंह ने इस कार्य को बखूबी किया। उसने चौदह पिस्तौलें और एक दर्जन बारह बोर की ब्रीच लोडर बंदूकें जुटा लीं। कुछ बने हुए बम उसने कलकत्ता से मँगवाए और चटगाँव में भी बमों का निर्माण किया गया।

चटगाँव में दो शस्त्रागारों पर प्रमुख रूप से आक्रमण करना था। एक था पुलिस का शस्त्रागार और दूसरा फौज का। पुलिस शस्त्रागार पर आक्रमण का नेतृत्व गणेश घोष को दिया गया था। उनके प्रमुख सहायक के रूप में अनंतसिंह को कार्य करना था।

पुलिस शस्त्रागार सफलतापूर्वक लूट लिया गया; लेकिन शस्त्रागार में आग लगाते समय हिमांशु दत्त नाम के एक क्रांतिकारी के कपड़ों में आग लग गई। किसी उपयुक्त स्थान पर उसे उपचार हेतु ले जाने का दायित्व अनंतसिंह ने पूर्ण किया।

फैनी स्टेशन पर पुलिस द्वारा घेर लिये जाने पर क्रांतिकारी अनंतसिंह ने अप्रतिम युद्ध क्यिा और वह अपने साथियों को सुरक्षित निकाल ले गया।

सूर्यसेन की योजना के अनुसार ही अनंतसिंह ने पुलिस के हाथों समर्पण किया था। समर्पण के पश्चात् पुलिस ने अनंतसिंह को कई यातनाएँ दीं; पर उस वीर ने अपने दल का कोई भेद पुलिस को नहीं दिया। उसके समर्पण के पूर्व जिन क्रांतिकारियों ने गिरफ्तार होकर पुलिस को अपने बयान दे दिए थे, उन्होंने भी अपने बयान बदल दिए। उन्हें कमजोरियों से बचाने के लिए ही अनंतसिंह समर्पण करके जेल में पहुँचे थे।

□

# ★ अनाथबंधु पंजा ★ निर्मलजीवन घोष ★ प्रद्योतकुमार भट्टाचार्य ★ बृजकिशोर चक्रवर्ती ★ मृगेंद्रकुमार दत्त ★ रामकृष्ण रे

❖ ❖
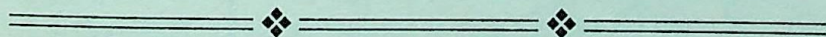
बंगाल का मिदनापुर जिला क्रांतिकारियों का गढ़ बना हुआ था। वहाँ के प्रशासक भी क्रांतिकारियों के दमन में अमानवीय नृशंसता का परिचय दे रहे थे।

अनाथबंधु पंजा
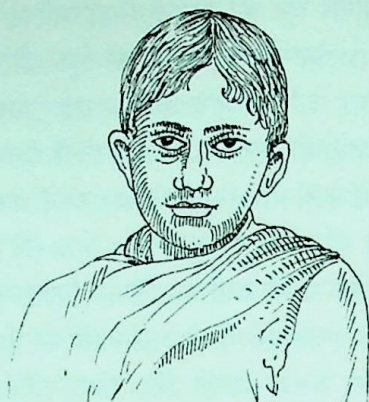
निर्मलजीवन घोष
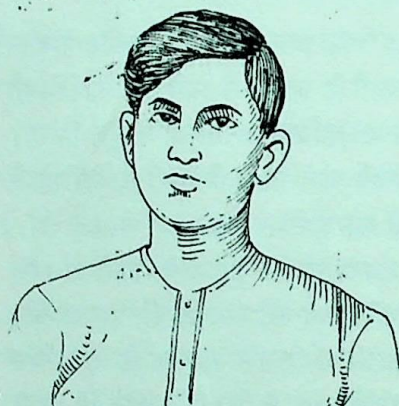
प्रद्योतकुमार भट्टाचार्य
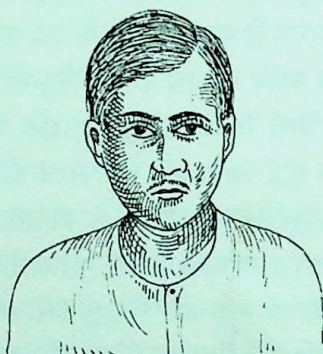
बृजकिशोर चक्रवर्ती

मृगेंद्रकुमार दत्त
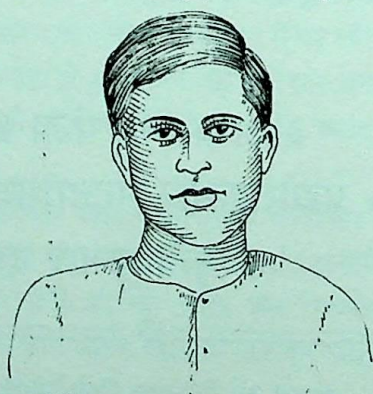
रामकृष्ण रे

मिदनापुर के क्रांतिकारियों ने संकल्प कर डाला—

''हम लोग मिदनापुर के डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेटों को उस समय तक मारते जाएँगे, जब तक वहाँ कोई भारतीय डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट नियुक्त नहीं किया जाता।''

शासन ने क्रांतिकारियों की चुनौती को कोई महत्त्व नहीं दिया।

मिदनापुर के एक विद्यालय में प्रदर्शनी लगाई गई थी। प्रदर्शनी के उद्‌घाटन के लिए वहाँ के अंग्रेज डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट मि. जेम्स पैड्डी सादर आमंत्रित थे। ७ अप्रैल, १९३१ को संध्या समय साढ़े सात बजे वे प्रदर्शनी के उद्‌घाटन के लिए विद्यालय में उपस्थित हुए। प्रदर्शनी कई कमरों में लगाई गई थी। पहले कमरे में प्रदर्शनी का उद्‌घाटन करने के पश्चात् वे प्रदर्शन उपकरणों को देखते-देखते दूसरे कमरे में पहुँचे। वे उस कमरे के उपकरणों को देख भी नहीं पाए थे कि एक युवक ने अपने रिवॉल्वर से उनपर गोलियाँ दागना प्रारंभ कर दिया। जान बचाने के लिए वे अगले कमरे में भागे, तो एक अन्य क्रांतिकारी ने उनपर कुछ गोलियाँ छोड़ीं।

गोलियाँ चलने के कारण वहाँ भगदड़ मच गई। जब शांति स्थापित हुई तो डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट महोदय को एक कमरे में दीवार के सहारे खड़े पाया गया। उन्हें तुरंत घोड़ागाड़ी में डालकर अस्पताल पहुँचाया गया और एक विशेष ट्रेन द्वारा कलकत्ता से डॉक्टरी सहायता मँगाई गई। कलकत्ता के डॉक्टरों ने मिदनापुर पहुँचकर पैड्डी साहब का ऑपरेशन करके एक गोली निकाली।

अगले दिन प्रातःकाल दस बजे फिर ऑपरेशन किया गया तथा एक गोली और निकाली गई। डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट महोदय की हालत बिगड़ती गई और ८ अप्रैल, १९३१ की संध्या को वे इस दुनिया से चल बसे। मिदनापुर के क्रांतिकारियों की प्रतिज्ञा की पहली कड़ी सफल रही। मारनेवालों का कोई पता नहीं चला।

मि. जेम्स पैड्डी की हत्या से ब्रिटिश सरकार बौखलाई तो बहुत, लेकिन क्रांतिकारियों के आगे झुकी नहीं। मि. जेम्स पैड्डी के स्थान पर दूसरे अंग्रेज मि. रॉबर्ट डगलस को मिदनापुर का डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट नियुक्त किया गया।

जब मि. रॉबर्ट डगलस ने मिदनापुर के डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट का कार्यभार सँभाला, तो वे प्रारंभ से ही भयभीत रहे। उन्होंने अपने भय का प्रदर्शन करते हुए अपने भाई और अपने मित्रों को कुछ पत्र भी लिखे। शासन ने उनकी सुरक्षा का समुचित प्रबंध किया। क्रांतिकारियों की धमकी से सरकारी कामकाज तो रोके नहीं जा सकते थे। मि. डगलस मिदनापुर के डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के पदेन अध्यक्ष भी थे।

३० अप्रैल, १९३२ को मिदनापुर के डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की मीटिंग चल रही थी। सदस्यों की संख्या काफी थी। मीटिंग की कार्यवाही संध्या के पाँच बजे तक सुचारु रूप से चलती रही। मि. डगलस फाइलों पर हस्ताक्षर भी करते जा

रहे थे। लगभग साढ़े पाँच बजे बरामदे में से होते हुए दो युवक मि. डगलस के इजलास में पहुँचे। उनमें से एक उनकी कुरसी के दाहिनी ओर और दूसरा बाईं ओर उनके बिलकुल निकट पहुँच गया। उन दोनों ने साथ-ही-साथ मि. डगलस पर गोलियाँ दागना प्रारंभ कर दिया। आठ गोलियाँ खाकर मि. डगलस लुढ़क गए और दोनों आक्रमणकारी भाग खड़े हुए। एक क्रांतिकारी एक बगीचे की तरफ भागा और दूसरा क्रांतिकारी 'अमर लॉज' नाम के एक भवन की तरफ। बगीचे से थोड़ी दूर पर कुछ झोंपड़ियाँ थीं। उस तरफ भागनेवाला क्रांतिकारी एक झोंपड़ी में घुस गया। झोंपड़ी में दीवारें नहीं थीं और पत्तियाँ भी इतनी कम थीं कि वह बाहर से दिखाई दे रहा था। डगलस के अंगरक्षकों ने उसपर गोलियाँ छोड़ीं। झोंपड़ी में से निकलकर वह बाहर भागा और उसपर फिर गोलियाँ छोड़ी गईं। गोलियों से घायल होकर वह गिर पड़ा और उसे गिरफ्तार कर लिया गया। उसका नाम प्रद्योतकुमार भट्टाचार्य था। उसकी तलाशी ली गई। उसकी जेब में एक परचा पाया गया, जिसमें लिखा था—

'हिजली जेल के कैदियों पर किए गए अमानुषिक अत्याचारों का यह एक हलका-सा प्रतिरोध है। हमारे बलिदानों से ब्रिटेन को सबक सीखना चाहिए और भारतीयों को भी इन बलिदानों से जाग्रत होना चाहिए।'

हिजली जेल के अमानुषिक अत्याचारों का संदर्भ यह था कि १६ सितंबर, १९३१ की रात्रि को जेल के सारे सैनिकों ने संगठित होकर वहाँ के कैदियों पर हमला बोल दिया और एक घंटे तक निहत्थे कैदियों पर लाठियाँ चलाईं, संगीनों से हमला किया और गोलियाँ छोड़ीं। गोलियों से संतोषकुमार मित्रा और तारकेश्वर सेन नाम के दो क्रांतिकारी कैदी मारे गए। सरकार ने मामले को रफा-दफा कर दिया। उसी हिजली कांड के अत्याचारों का उल्लेख प्रद्योतकुमार भट्टाचार्य ने अपने पत्र में किया था।

मि. डगलस पर गोलियाँ चलानेवाला दूसरा क्रांतिकारी पकड़ा नहीं जा सका।

मि. डगलस को तुरंत ही मिदनापुर अस्पताल भेजा गया। विशेष डॉक्टरी सहायता खड़गपुर से बुलाई गई; लेकिन वे बच नहीं सके और रात्रि के पौने दस बजे उन्होंने दम तोड़ दिया। अपने साथी क्रांतिकारी का नाम बताने के लिए पुलिस ने प्रद्योतकुमार भट्टाचार्य को भाँति-भाँति की यातनाएँ दीं। यातनाओं से बचने के लिए उसने गलत नाम बता दिया।

प्रद्योत का मुकदमा एक विशेष ट्रिब्यूनल को सौंपा गया, जिसने २५ जून, १९३२ को प्रद्योत को मृत्युदंड का फैसला सुना दिया। मिदनापुर के केंद्रीय कारागार

में उसे १२ जनवरी, १९३३ को सुबह पाँच बजे फाँसी के फंदे पर झुला दिया गया।

रॉबर्ट डगलस की मृत्यु के पश्चात् मिदनापुर के डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट के पद पर बी.ई.जे. बर्ग की नियुक्ति की गई। पिछले दो अफसरों की हत्याओं के कारण मि. बर्ग अपने लिए विशेष रूप से सतर्क थे और उन्होंने अपनी सुरक्षा के कड़े प्रबंध किए थे।

मि. बर्ग फुटबॉल के अच्छे खिलाड़ी थे और जब कभी वे फुटबॉल खेलते थे तो दर्शकों की अपेक्षा उनकी सुरक्षा के लिए वहाँ पुलिस के अधिक लोग रहते थे।

२ सितंबर, १९३३ को मि. बर्ग की टीम टाउन क्लब और मोहम्मडन स्पोर्टिंग की टीम के बीच फुटबॉल का एक मैच आयोजित था। क्रांतिकारियों को इस मैच की खबर लग गई।

फुटबॉल मैच अभी प्रारंभ नहीं हुआ था; लेकिन खिलाड़ी लोग प्रारंभिक अभ्यास कर रहे थे। उस समय कुछ बंगाली लोग नेकर पहनने के बजाय अपनी धोती को ही ऊपर खोंसकर खेल खेला करते थे। उस समय भी कई धोतीबाज खेल का अभ्यास कर रहे थे।

अपने दो अंगरक्षकों को साथ लेकर डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट मि. बर्ग अपनी कार द्वारा खेल के मैदान पर पहुँचे। दोनों अंगरक्षक सीमा रेखा से सटकर खड़े हो गए और मि. बर्ग मैदान में उतर पड़े। वे फुटबॉल की तरफ बढ़े। जिस खिलाड़ी से गेंद छीनने के लिए बढ़े, उसने अपना रिवॉल्वर निकालकर मि. बर्ग पर गोलियाँ दाग दीं। वह एक क्रांतिकारी था और उसका नाम मृगेंद्रकुमार दत्त था। उसके साथ के दूसरे खिलाड़ी ने भी अपनी पिस्तौल से मि. बर्ग पर गोलियाँ छोड़ दीं। वह भी एक क्रांतिकारी था और उसका नाम अनाथबंधु पंजा था। छह गोलियाँ खाकर बर्ग भूमि पर गिर पड़ा और कुछ क्षणों में ही उसकी मृत्यु हो गई।

असिस्टेंट सुपरिंटेंडेंट पुलिस, जो बिलकुल ही पास खड़ा था, लपका और उसने मृगेंद्र का रिवॉल्वर धक्का देकर नीचे गिरा दिया। इसी बीच मि. बर्ग के अंगरक्षक दौड़ पड़े और उनमें से एक ने मृगेंद्र पर गोली चला दी। मृगेंद्र गिर पड़ा और पकड़ लिया गया।

दूसरे क्रांतिकारी अनाथबंधु पंजा को रिजर्व इंस्पेक्टर पुलिस ने गोली मार दी और वह घटनास्थल पर ही मर गया। मृगेंद्र की मृत्यु अगले दिन अस्पताल में हो गई।

इसी बीच खेल के मैदान को घेर लिया गया और जितने भी दर्शक थे, सभी की तलाशी ली गई। इस तलाशी का परिणाम यह निकला कि तीन क्रांतिकारी—

निर्मलजीवन घोष, बृजकिशोर चक्रवर्ती और रामकृष्ण रे गिरफ्तार हो गए। उन लोगों पर मुकदमा चला और उन्हें फाँसी का दंड सुनाया गया।

बृजकिशोर चक्रवर्ती और रामकृष्ण रे को २५ अक्तूबर और निर्मलजीवन घोष को २६ अक्तूबर, १९३४ को मिदनापुर के केंद्रीय कारागार में फाँसी के फंदों पर झुला दिया गया।

अपने तीन अंग्रेज डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट खोकर ब्रिटिश सरकार को मिदनापुर के क्रांतिकारियों के सामने झुकना पड़ा। उसके पश्चात् एक भारतीय को ही मिदनापुर का डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट नियुक्त किया गया।

□

# ★ अनिलचंद्र दास

क्रांतिकारी अनिलचंद्र दास की माँ ने यह आवेदन-पत्र दिया कि उसके बीमार पुत्र का जेल में ठीक तरह से इलाज नहीं किया जा रहा है, अत: किसी प्राइवेट डॉक्टर से उसका इलाज कराने की अनुमति दी जाए। उस दुखियारी माता की यह प्रार्थना अस्वीकार कर दी गई।

अनिलचंद्र दास ने कलकत्ता विश्वविद्यालय से एम.एस-सी. की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। उसका संबंध क्रांतिकारी दल से हो गया और वह क्रांति के क्षेत्र में खुलकर काम करने लगा।

अनिलचंद्र को गिरफ्तार करने में पुलिस को सफलता मिली और उसपर मुकदमा चलाया गया। पुलिस ने क्रांतिकारियों के रहस्य जानने के लिए उसे बहुत मारा-पीटा और भाँति-भाँति की यातनाएँ दीं। उसे खराब स्थान पर रखा गया। वह बीमार पड़ गया।

अपना अपराध छिपाने के लिए पुलिस ने यह ज्ञापित कर दिया कि अनिलचंद्र में पागलपन के लक्षण दिखाई दे रहे हैं। इतना ही नहीं, उससे मिलने की किसीको अनुमति भी नहीं दी गई।

१७ जून, १९३२ को अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट ने अनिलचंद्र की माँ को सूचित किया कि अनिल की मृत्यु जेल में हो चुकी है। अनिल की माँ पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा। उसे यकीन था कि पुलिस की ज्यादतियों के कारण ही उसके बेटे की मृत्यु हुई होगी। उसने अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट को इस आशय का प्रार्थना-पत्र दिया कि अनिल के पोस्टमार्टम के समय उसके निजी डॉक्टर को

उपस्थित रहने दिया जाए। उसकी माँ की यह प्रार्थना मान ली गई। जब एक प्राइवेट सर्जन अनिल का पोस्टमार्टम देखने जेल के अस्पताल में पहुँचा, तो जेल के सर्जन ने उससे कह दिया कि अनिल का पोस्टमार्टम तो पहले ही हो चुका है। पोस्टमार्टम की रिपोर्ट भी उसको नहीं दिखाई गई। पुलिस ने एक निरपराध की बलि लेकर अपना पाप छिपा लिया।

□

## ★ अनुजचरन सेनगुप्ता ★ दिनेशचंद्र मजूमदार
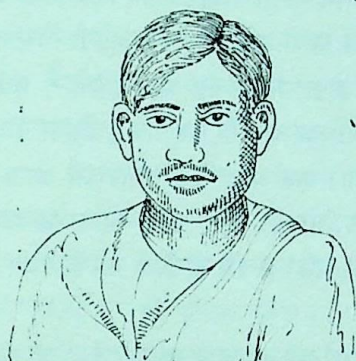
दिनेशचंद्र मजूमदार

कलकत्ता के सर्वोच्च पुलिस अधिकारी मि. चार्ल्स टेगार्ट पर क्रांतिकारी लोग खार खाए हुए थे। क्रांतिकारियों के दमन के लिए वह कुख्यात था। उसे मारने के लिए १२ जनवरी, १९२४ को गोपीमोहन साहा ने प्रयत्न किया था; पर टेगार्ट के धोखे में एक अन्य यूरोपियन मि. ई.डे. मारा गया था। इस अपराध में गोपीमोहन साहा को १ मार्च, १९२४ को फाँसी का फंदा चूमना पड़ा था।

दुबारा भी चार्ल्स टेगार्ट पर दो क्रांतिकारियों ने प्रयत्न किया; पर टेगार्ट का भाग्य अच्छा था कि इस बार भी वह बाल-बाल बच गया।

कलकत्ता के अनुजचरन सेनगुप्ता और दिनेशचंद्र मजूमदार ने टेगार्ट को मारने का संकल्प किया। कई दिन उन्होंने इस बात की जाँच में लगाए कि वह घर से ऑफिस तथा ऑफिस से घर कब पहुँचता है और किस रास्ते से जाता है।

२५ अगस्त, १९३० को चार्ल्स टेगार्ट लाल बाजार स्थित पुलिस हेडक्वार्टर्स पहुँचने के लिए अपनी कार से निकला। डलहौजी स्ट्रीट में जो ट्राम गाड़ी की लाइन जाती थी, वह उसीके पास से अपनी कार चला रहा था। उसकी कार पेपर करेंसी कार्यालय से कुछ ही आगे पहुँची थी कि बम का भयंकर धमाका हुआ। वह सँभल भी नहीं पाया था कि उसकी कार की दूसरी तरफ भी बम का वैसा ही विस्फोट हुआ। उसकी गाड़ी तो क्षतिग्रस्त हुई, पर वह बच गया।

जिन लोगों ने बम फेंके थे, वे विभिन्न दिशाओं में भाग खड़े हुए। अनुजचरण सेनगुप्ता भागते-भागते डलहौजी इंस्टीट्यूट तक पहुँच गया। वहाँ पहुँचते-पहुँचते वह पूर्णरूप से श्लथ हो चुका था। गश खाकर वह गिर पड़ा। लोगों ने और पुलिस ने उसे घेर लिया। उसके कपड़े खून से सने हुए थे। बम के टुकड़ों से वह स्वयं भी घायल हो गया था। उसे उठाकर लाल बाजार पुलिस स्टेशन ले जाया गया। वहाँ जाते ही उसने दम तोड़ दिया। अनुजचरन सेनगुप्ता खुलना जिले के 'सेनहटी' स्थान का रहनेवाला था। वह एक पत्र का संपादक भी रह चुका था।

बम का प्रहार करके दिनेशचंद्र मजूमदार डलहौजी स्क्वायर के दक्षिण की तरफ भागा। वह लपककर एक खाली खड़ी हुई टैक्सी में जा कूदा। उस टैक्सी में ड्राइवर नहीं था। वह बाहर खड़ा हुआ था। वह ड्राइवर को तलाश करे, इसके पहले ही टेलीग्राफ ऑफिस का एक आदमी भी टैक्सी में घुसा और उसने दिनेशचंद्र को वहीं दबोच लिया। अपने को दबोचनेवाले की तरफ ज्यों ही उसने अपनी पिस्तौल तानी, दबोचनेवाले ने उसे छोड़ दिया। मुक्त होकर दिनेशचंद्र अब वेलेजली भवन की तरफ गया; पर वहाँ पुलिस का जमघट अधिक था और वह पकड़ लिया गया।

दिनेशचंद्र मजूमदार पर मुकदमा चला। एक धारा के अंतर्गत उसे आजन्म कारावास का दंड मिला और दूसरी धारा के अंतर्गत बीस साल की सख्त सजा मिली। अंडमान भेजने के पहले दिनेशचंद्र को 'सी' क्लास के कैदी की हैसियत से मिदनापुर की जेल में रखा गया।

८ फरवरी, १९३२ की सुबह उसकी कोठरी का ताला खोलने के लिए जेल के अधिकारी पहुँचे तो उन्होंने देखा कि कैदी जेल से फरार है। वह अपने साथ अन्य चार पुराने कैदियों को भी ले भागा। उसके भाग निकलने से मि. चार्ल्स टेगार्ट की सुरक्षा का प्रबंध कड़ा कर दिया गया।

मिदनापुर जेल से भागकर दिनेशचंद्र मजूमदार अंततोगत्वा फ्रांसीसी बस्ती चंद्रनगर पहुँच गया। एक पुराना मकान किराए पर लेकर वहाँ पाँच क्रांतिकारी प्रश्रय पाए हुए थे। दिन के समय वे घर में ही बंद रहते थे। जब सब लोग सो जाते थे, तो वे अपनी गतिविधियों में संलग्न हो जाते थे। होते-होते चंद्रनगर की पुलिस को उनपर संदेह हो गया।

९ मार्च, १९३३ को फ्रांसीसी पुलिस कमिश्नर मि. क्विन ने शाम पाँच बजे पुलिस दल के साथ उस मकान पर दबिश दी। एक क्रांतिकारी ने पुलिस को आते हुए देख लिया, जो उस समय मकान के बाहर ही बैठा हुआ था। साथियों को पुलिस के आगमन की सूचना देने के लिए वह दौड़कर अंदर गया और एक-दो मिनट में ही तीन क्रांतिकारी बाहर की ओर झपटे। उनमें से एक लड़खड़ाकर झाड़ी में गिर

पड़ा और पुलिस ने उसे दबोच लिया। दो अन्य क्रांतिकारी काफी तेज गति से सड़क की ओर भागे। पुलिस कमिश्नर मि. क्विन साइकिल लेकर उन दो क्रांतिकारियों के पीछे भागे। सड़क पर जाते हुए उन्हें ऐसे दो व्यक्ति मिले, जो सामान्य नागरिक लग रहे थे। पुलिस कमिश्नर को देखकर उन्होंने न तो कोई विशेष भाव प्रदर्शित किया और न भागने का प्रयत्न किया। उन्हें पार करके पुलिस कमिश्नर आगे बढ़ गया। उसे फिर खयाल आया कि उन लोगों से पूछताछ तो करनी चाहिए। वह साइकिल मोड़कर उनके पास पहुँच गया और उसने झपटकर पूछा—''तुम लोग कौन हो?''

एक क्रांतिकारी ने उत्तर दिया—''हम तुम्हारे बाप हैं।'' और दूसरे क्रांतिकारी ने बिलकुल पास से पुलिस कमिश्नर पर तीन गोलियाँ दाग दीं। पुलिस कमिश्नर साइकिल सहित सड़क पर गिर पड़ा। उसकी सहायता के लिए कुछ सिपाही दौड़े। एक सिपाही भी गोलियों से घायल हो गया। दोनों क्रांतिकारी गोलियाँ छोड़ते हुए भाग निकले। इन दो क्रांतिकारियों में से एक दिनेशचंद्र मजूमदार था, जो मिदनापुर जेल तोड़कर भागा था। मि. क्विन की अगले दिन अस्पताल में मृत्यु हो गई। उनका शव वायुयान से फ्रांस भेजा गया।

दिनेशचंद्र मजूमदार चंद्रनगर से भागकर कलकत्ता जा पहुँचा। २२ मई, १९३३ को प्रात: चार बजे सशस्त्र पुलिस ने उसका मकान घेर लिया। पुलिस काफी संख्या में पहुँची थी। गलियों और सड़कों की नाकाबंदी करने के साथ-ही-साथ आसपास के मकानों पर भी पुलिस पहुँच गई। पुलिस के कुछ लोग उस कमरे की खिड़की तक पहुँच गए, जिसमें दिनेशचंद्र सोया हुआ था। शायद दिनेशचंद्र को पुलिस की उपस्थिति का आभास हो गया था। उसने एकदम खिड़की खोलकर पुलिस इंस्पेक्टर पर गोली चला दी। गोली इंस्पेक्टर के कंधे में लगी। अब दोनों ओर से गोलियाँ चलने लगीं। एक क्रांतिकारी लपककर खिड़की से बाहर निकला और वह पड़ोस के मकान की छत पर कूद गया। वहाँ पुलिस पहले से ही मौजूद थी। वह पकड़ लिया गया।

पुलिस और क्रांतिकारियों के बीच गोलियों का आदान-प्रदान होते-होते सुबह हो गई। क्रांतिकारियों की गोलियाँ समाप्त हो गई थीं। उन्होंने आवाज लगाई—''हम समर्पण कर रहे हैं।'' इसके साथ ही दरवाजा खोलकर उन्होंने अपने हथियार देहली पर रख दिए। वे गिरफ्तार कर लिये गए। गिरफ्तार किए गए क्रांतिकारियों में दिनेशचंद्र मजूमदार और उसके चार साथी थे। ५ अक्तूबर, १९३३ को उनपर मुकदमा दायर हो गया। दिनेशचंद्र मजूमदार को फाँसी का दंड सुनाया गया और अलीपुर सेंट्रल जेल में ९ जून, १९३४ को आधी रात के समय उसको फाँसी पर झुला दिया गया।

□

# ★ अनुरूपचंद्र सेन

चटगाँव के युवा वर्ग में चेतना की जो लहर आई, वह देखते ही बनती थी। जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं था, जहाँ चटगाँव के युवक बढ़-चढ़कर अपने हौसले न दिखा रहे हों। स्थान-स्थान पर अखाड़े तैयार हो गए थे, जहाँ ये नवयुवक कसरत करके अपने शरीर सुगठित करते, कुश्तियाँ लड़ते और लाठियाँ चलाने का प्रशिक्षण भी प्राप्त करते थे। कुछ केंद्रों पर तलवार और बल्लम-भालों के संचालन का प्रशिक्षण भी दिया जाता था। वे लोग स्वामी विवेकानंद के उपदेशों से प्रेरणा ग्रहण करके बलवान बनने के सभी उपक्रम कर रहे थे, जिससे वे अपने समाज और देश के लिए अधिक-से-अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकें। शारीरिक बल का योग जब आत्मबल के साथ हो जाए तो 'सोने में सुहागा' की कहावत चरितार्थ हो जाती है। चटगाँव के नौजवान आत्मबल के संचय में भी लगे हुए थे। शास्त्रों का पठन-पाठन उनका नियम बन गया था। वे लोग अपने देश के वीर-वीरांगनाओं, बलिदानियों और महापुरुषों की गाथाएँ पढ़ने एवं सुनने में रुचि लेते तथा तदनुरूप अपने जीवन को ढालने का प्रयत्न भी कर रहे थे।

नगर के बड़े-बूढ़े इन युवकों की गतिविधियों के प्रशंसक बन गए थे। नगर का असामाजिक तत्त्व इन युवकों से भयभीत रहने लगा था, क्योंकि पुलिस का बहुत कुछ काम ये युवक स्वयं ही कर लेते थे। नगर में गुंडागर्दी, छेड़छाड़ और लूटपाट की घटनाएँ कम हो गई थीं; क्योंकि इस ओर भी ये युवक अपनी भूमिका निभा रहे थे।

चटगाँव के पुलिस क्षेत्र में युवकों की इस चेतना के प्रति मिश्रित प्रतिक्रिया हुई। एक ओर जहाँ अपराधों की कमी के कारण पुलिस को आराम था, वहीं दूसरी ओर उसे यह संदेह करते देर नहीं लगी कि युवा वर्ग की यह चेतना सोद्देश्य है और इसपर निगरानी रखी जानी चाहिए।

पुलिस का संदेह सही निकला। उसके गुप्तचरों ने अपने अफसरों को सूचना दी कि सभी नौजवान किसी क्रांतिकारी दल के सदस्य हैं और वे किसी षड्यंत्र की संरचना में लगे हुए हैं। कुछ स्थानों पर अवैध हथियारों का संग्रह और आपत्तिजनक साहित्य रखने के प्रमाण भी मिले।

राज्य शासन ने यही निर्णय लिया कि विस्फोट के पहले ही विस्फोटक को समाप्त कर दिया जाए। पूरे बंगाल में और विशेष रूप से चटगाँव जिले में नजरबंदी और गिरफ्तारियों का जो सिलसिला सन् १९२४ से प्रारंभ हुआ, तो उसने थमने का

नाम नहीं लिया। कोई भी झूठा-सच्चा कारण बताकर, युवकों को पकड़कर जेल में ठूँस दिया जाता और वहाँ उनको भाँति-भाँति की यातनाएँ दी जाती थीं। बिना मुकदमा चलाए इन चेतनाशील युवकों को वर्षों तक जेलों में सड़ाते रहने का हक जैसे शासन को प्राप्त हो गया था।

इस प्रकार के युवकों में एक अनुरूपचंद्र सेन भी था, जिसे नजरबंद करके भाँति-भाँति की यातनाएँ दी गई थीं और प्रयत्न किया गया था कि वह अपने दल के रहस्य पुलिस को बता दे। अनुरूपचंद्र सेन पर अपने दल के भेद देने की दिशा में तो कोई प्रभाव नहीं हुआ, पर उसके शरीर पर यह असर हुआ कि उसने जीवित रहने से इनकार कर दिया। नजरबंदी में ही ४ अप्रैल, १९२८ को जेल में अनुरूपचंद्र सेन की मृत्यु हो गई। देश की आजादी की बलिवेदी पर वह अपने प्राणों की भेंट चढ़ा गया।

□

# ★ अपूर्व सेन ★ निर्मल सेन ★ सावित्री देवी

"हम आपका आतिथ्य स्वीकार करने में असमर्थ हैं, माँ! क्या आप नहीं जानतीं कि जो क्रांतिकारियों को प्रश्रय देते हैं, उनपर मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ता है?"

"और बेटे! तुम जो मुसीबतें झेल रहे हो और अंग्रेजों के साथ देश की आजादी की लड़ाई लड़ रहे हो, तो क्या यह सब तुम केवल अपने लिए ही कर रहे हो?"

"नहीं माँ! हम जो कुछ कर रहे हैं, वह अपने देश और देशवासियों के लिए कर रहे हैं।"

"तो क्या देशवासियों का तुम्हारे प्रति कोई कर्तव्य नहीं है?"

"है क्यों नहीं, माँ; पर इस समय तो आप घर में अकेली हैं और आप पर दो बच्चों का भार भी है। भाई साहब के स्वर्गवासी हो जाने के कारण आप स्वयं भी तो निराश्रित हो गई हैं।"

"ईश्वर सबका आश्रयदाता है, मेरे बच्चे, क्या मैं यह सहन कर पाऊँगी कि भोजन के समय मेरे घर आए हुए बच्चे भूखे चले जाएँ?"

अब क्रांतिकारी सूर्यसेन ने अपने हथियार डाल दिए। गृहस्वामिनी सावित्री देवी के आगे उनकी एक न चली। वे उनका आतिथ्य स्वीकार करने के लिए

विवश हो गए।

'घलघाट' गाँव में सावित्री देवी का दुमंजिला मकान था। वे सूर्यसेन और उनके साथियों को भोजन कराने ऊपर के कमरे में ले गईं। १४ सितंबर, १९३२ को रात्रि के नौ बजे का समय था। भोजन समाप्त करके सब लोग बैठे ही थे कि परिवार की छोटी बालिका ने तेजी से ऊपर पहुँचकर सूचना दी कि गली में पुलिस के आदमी घूम रहे हैं। क्रांतिकारी लोग सँभल भी न पाए थे कि एक हवलदार के साथ कैप्टेन कामरूँ सीढ़ियों पर चढ़ता हुआ दिखाई दिया। हवलदार आगे और कैप्टेन पीछे था। क्रांतिकारी अपूर्व सेन ने नीचे उतरने के क्रम में हवलदार को जोरदार धक्का दिया। हवलदार जीने से नीचे जा गिरा। सूर्यसेन ने कैप्टेन कामरूँ पर गोली चला दी। गोली लगने से कैप्टेन कामरूँ भी जीने से नीचे गिर गया। इस स्थिति का लाभ उठाकर सूर्यसेन और उनके साथ की क्रांतिकारिणी प्रीतिलता वादेदार कूदकर भाग गए। अपूर्व सेन ने भी सीढ़ियों पर से छलाँग लगा दी। वह उठकर भाग भी नहीं पाया था कि अन्य सैनिकों ने उसपर गोलियाँ चला दीं। अपूर्व सेन ने तत्काल दम तोड़ दिया।

मकान के अंदर घिरे क्रांतिकारी निर्मल सेन ने भी खिड़की के रास्ते से कूदना चाहा; पर ऐसा करने के प्रयत्न में उसको एक गोली लगी और वह फिर अंदर हो गया। खिड़की के रास्ते से सैनिकों ने कई गोलियाँ चलाईं; पर वे कमरे के अंदर नहीं गए। हवलदार ने मकान के चारों ओर तगड़ा पहरा बिठा दिया और उसने एक आदमी को पास के पुलिस स्टेशन पर कुमुक लाने के लिए भेजा। नई कुमुक आ जाने पर सैनिकों ने खिड़की के अंदर फिर गोलियों की बौछारें छोड़ीं। अंदर से गोलियों का कोई उत्तर नहीं आया। युक्तिपूर्वक सैनिकों ने जब ऊपर के कमरे में झाँका तो उन्हें एक शव पड़ा दिखाई दिया। क्रांतिकारी निर्मल सेन दम तोड़ चुका था। वे लोग उसके शव को उठा ले गए।

क्रांतिकारियों को प्रश्रय देने के कारण सावित्री देवी, उनके पुत्र तथा अन्य दो व्यक्तियों पर मुकदमा चलाया गया और सभी को चार-चार वर्ष के कठोर कारावास का दंड दिया गया।

सावित्री देवी को अपने दंड का दुःख नहीं था। उन्हें इस बात का दुःख था कि उनके मकान में हुई मुठभेड़ में क्रांतिकारी मारे गए।

□

## ★ अबदान सिंह ★ सुक्खू सिंह

वे दोनों भाई जब घर से चले थे तो उन्हें यह तो पता था कि वे ब्रिटिश हुकूमत के विरुद्ध विद्रोह का झंडा उठाकर जुलूस में सम्मिलित होने जा रहे हैं, लेकिन उन्हें यह पता नहीं था कि वे साथ-ही-साथ महायात्रा के लिए भी निकल पड़ेंगे।

उत्तर प्रदेश के रायबरेली जिले के सरेनी पुलिस स्टेशन पर आक्रमण की योजना बन गई और उसमें अबदान सिंह एवं सुक्खू सिंह हौसले के साथ सम्मिलित हुए। उनके पीछे-पीछे गाँववालों की भीड़ भी थी। ज्यों ही वे थाने पर पहुँचे, पुलिस दल बंदूकें ताने हुए उनके स्वागत के लिए तैयार था। थानेदार की कड़कती हुई आवाज उनके कानों में पड़ी—"लौट जाओ, वरना गोलियों से भून दिए जाओगे।"

"हम लौटने के लिए नहीं, थाने पर तिरंगा झंडा फहराने आए हैं।" अबदान सिंह ने भी उसी कड़क के साथ उत्तर दिया और आगे बढ़ना जारी रखा।

'धाँय!' की आवाज हुई और एक घातक गोली अबदान सिंह के सीने में आकर लगी। वह गिरे, इसके पहले ही उसके साथ चल रहे उसके भाई सुक्खू सिंह ने तिरंगा झंडा अपने हाथ में थाम लिया और वह आगे बढ़ चला। दूसरी गोली ने सुक्खू सिंह की गति को भी रोक दिया। दोनों भाई आजादी की बलिवेदी पर अर्पित हो गए।

□

## ★ अब्दुल रसूल कुर्बान हुसेन ★ जगन्नाथ बी. शिंदे ★ मलप्पा धनशेट्टी ★ श्रीकृष्ण शारदा

१२ जनवरी, १९३१ को देश के कई भागों में देश के एक महान् सांस्कृतिक संत स्वामी विवेकानंद की जयंती मनाई जा रही थी। इसी दिन देश के एक कोने में—यरवदा जेल की वधशाला में भारत के चार देशभक्तों को फाँसी पर झुलाया जा रहा था। फाँसी पर झूलनेवाले भारत माता के ये चार सपूत थे—

१. अब्दुल रसूल कुर्बान हुसेन,

२. जगन्नाथ बी. शिंदे,

३. मलप्पा धनशेट्टी,

अब्दुल रसूल कुर्बान हुसैन — जगन्नाथ बी. शिंदे

मलप्पा धनशेट्टी — श्रीकृष्ण शारदा

४. श्रीकृष्ण शारदा।

इन चार सपूतों का अपराध यह था कि वे अकोला पुलिस की उस बर्बरता को बरदाश्त नहीं कर पाए, जब एक उत्तेजित भीड़ पर अंधाधुंध गोलियाँ छोड़कर पुलिस ने पचीस विद्रोहियों को मार डाला और सैकड़ों लोग घायल हुए।

यह उपद्रव गांधीजी की गिरफ्तारी के विरोध में हुआ। पुलिस ने महात्मा गांधी को ५ मार्च, १९३० को गिरफ्तार करके यरवदा जेल में डाल दिया। देशभक्त जनता भड़क उठी और उसने भीषण विद्रोह खड़ा कर दिया। पुलिस ने निहत्थे लोगों पर गोलियाँ चलाईं और पचीस लोग मारे गए। विद्रोहियों का खून गरम हो चुका था। वे भी पत्थर लेकर पुलिसवालों पर पिल पड़े। तीन पुलिसवालों को मार डाला गया और शहर के सभी भागों में आग लगा दी गई। मरे हुए सिपाहियों की

लाशें जलती हुई आग में फेंक दी गईं। उनकी राख ही हाथ लगी।

इस विद्रोह के फलस्वरूप सैकड़ों लोगों की गिरफ्तारियाँ हुईं और उनपर मुकदमे चले। अभियुक्त चार विद्रोहियों को मृत्युदंड सुनाया गया और उन्हें १२ फरवरी, १९३१ को महाराष्ट्र की यरवदा जेल में फाँसी दे दी गई।

□

## ★ अभयपद मुखर्जी ★ गोपाल दत्त ★ श्रीमती नवनीत कोमला सिन्हा ★ परेशनाथ विश्वास ★ मणींद्रनाथ चौधरी ★ लावण्यलता चंदा ★ सिराजुल हक उर्फ सरोजकुमार बोस ★ सुधांशुमोहन सेन राय ★ सुबोधचंद्र कर
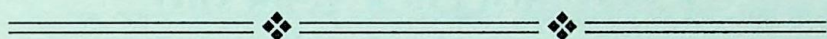
टिपरां के जिला मजिस्ट्रेट मि. स्टीवेंस को दो अल्प वयस्क छात्राएँ मौत के घाट उतार चुकी थीं और उनको आजीवन कारावास का दंड घोषित किया जा चुका था। इस कांड के संबंध में कुछ और भी गिरफ्तारियाँ की गईं। १७ दिसंबर, १९३१ को मणींद्रनाथ चौधरी नाम के कॉलेज के एक छात्र को गिरफ्तार किया गया। उसपर आरोप लगाया गया कि उसने आक्रमण करनेवाली छात्राओं को रिवॉल्वर उपलब्ध कराए थे। इसी क्रम में लावण्यलता चंदा और श्रीमती नवनीत कोमला सिन्हा को भी गिरफ्तार किया गया। उनपर मुकदमा चलाने के लिए विशेष ट्रिब्यूनल की नियुक्ति की गई। उन्हें आजीवन कारावास का दंड दिया गया।

कुछ क्रांतिकारियों ने खुफिया पुलिस के दारोगा के घर पर बम फेंका था। इस संबंध में अभयपद मुखर्जी और गोपाल दत्त को गिरफ्तार करके उन्हें दो वर्ष के कठोर कारावास का दंड दिया गया।

१६ दिसंबर को सिराजुल हक उर्फ सरोजकुमार बोस एवं परेशनाथ विश्वास की तलाशी लेने पर उनके पास रिवॉल्वर और कारतूस पाए गए। उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। २६ दिसंबर को सुबोधचंद्र कर और सुधांशुमोहन सेन राय को गिरफ्तार करके उन्हें दंडित किया गया।

□

★ अमरनाथ ★ अमूल्यकंचन दत्त ★ उपेंद्रनाथ राय
★ छत्रपति राय ★ जीवन सान्याल
★ तारादास भट्टाचार्य ★ ताराप्रसन्न सर्वाधिकारी
★ दंतू चटर्जी ★ दीनबंधु घोषाल ★ द्विजेंद्र दास
★ ननिगोपाल बागची ★ पटेल विश्वास
★ पुलिन बख्शी ★ प्रफुल्ल कुमार मजूमदार
★ प्रबोधचंद्र मजूमदार ★ प्रेमांशु दासगुप्ता
★ बँगलाप्रसन्न गुह ★ रमणी देव
★ राधारमण भट्टाचार्य ★ विनय सेन
★ विमल दासगुप्ता ★ शचींद्र लाल
★ सुधांशु कुमार बोस ★ सुधेंदु सरकार
★ सुधेंशु कुमार चटर्जी ★ सुरेंद्र कुमार चक्रवर्ती
★ सुरेंद्रनाथ राय

❖ ❖

बंगाल के क्रांतिकारियों को शासन की ओर से अन्यायों, अत्याचारों एवं दमन के नित्य नए उपहार मिल रहे थे और वे लोग भी शासन को उसी भाषा में उत्तर दे रहे थे। चटगाँव शस्त्रागार कांड के पश्चात् चटगाँव और ढाका के अंग्रेज प्रशासक क्रांतिकारियों का दमन करने में विशेष रुचि ले रहे थे। क्रांतिकारियों ने भी उन अफसरों की चुनौतियों को स्वीकार किया था। उनका नया लक्ष्य था ढाका के जिला मजिस्ट्रेट मि. एल.जी. डुर्नो की हत्या।

क्रांतिकारियों ने उन सभी स्थानों पर अपने आदमी नियुक्त कर रखे थे, जहाँ-जहाँ मि. डुर्नो जाते थे। एक दिन २८ अक्तूबर, १९३१ को अपना प्रातःकालीन ऑफिस कार्य समाप्त करके लगभग साढ़े बारह बजे डुर्नो साहब अपनी कार में बैठ कर अपने घर जा रहे थे। कुछ खरीदने के लिए एक दुकान पर उन्होंने अपनी गाड़ी रोकी और नीचे उतर पड़े। उनके दुर्भाग्य से दो क्रांतिकारी वहाँ मौजूद थे। अवसर

का लाभ उठाने की दृष्टि से उन्होंने डुर्नो साहब पर गोलियाँ चला दीं। एक गोली उनकी कनपटी में लगी और दूसरी जबड़े में। घटनास्थल पर खड़े कुछ लोगों ने आक्रमणकारियों का पीछा किया; लेकिन वे पकड़े नहीं जा सके। डुर्नो साहब का ऑपरेशन करके दोनों गोलियाँ निकाल ली गईं; लेकिन उन्हें अपनी एक आँख भी निकलवानी पड़ी।

मि. डुर्नो पर किए गए आक्रमण का बदला लेने के लिए पुलिसवालों से भरी हुई लॉरियाँ इधर-उधर छोड़ दी गईं। उन लोगों ने छात्रावासों और नौजवानों के सभी अड्डों पर छापे मारे और बेरहमी के साथ छात्रों की पिटाई की तथा उनका सामान उठा ले गए। उन लोगों ने कई घरों को भी बरबाद कर दिया।

ढाका के कलेक्टर पर किए गए इस आक्रमण से शासकीय क्षेत्रों और विशेष रूप से यूरोपियन लोगों पर बहुत आतंक छा गया। वाइसराय ने नं. ९ बंगाल क्रिमिनल लॉ ऑर्डिनेंस जारी करके पुलिस को अत्याचार करने के मनमाने अधिकार दे दिए। यूरोपियन लोगों ने अपनी सुरक्षा के लिए 'रॉयलिस्ट पार्टी' नाम की एक संस्था का गठन कर डाला।

एक दिन रॉयलिस्ट पार्टी के तीन सदस्य बैठे हुए आपस में बातें कर रहे थे कि एक नवयुवक उनके सामने पहुँच गया और उसने प्रत्येक पर एक-एक गोली चला दी। गोलियाँ मर्मस्थल पर नहीं लगीं और वह नवयुवक गिरफ्तार कर लिया गया। बाद में पता चला कि उस युवक का नाम विमलदास गुप्ता था। उसीने मिदनापुर के कलेक्टर मि. पैड्डी पर गोलियाँ चलाई थीं। उसे ग्यारह वर्ष के कठोर कारावास का दंड दिया गया।

अन्य क्रांतिकारियों की धर-पकड़ भी बहुत तेजी के साथ हुई। २८ अक्तूबर की रात को पबना कॉलेज के छात्र सुधेंदु सरकार को गिरफ्तार कर लिया गया। २९ तारीख को छत्रपति राय, ननिगोपाल बागची, दंतू चटर्जी और ताराप्रसन्न सर्वाधिकारी के घरों की तलाशियाँ लेकर उनको गिरफ्तार कर लिया गया। नए बंगाल ऑर्डिनेंस के अनुसार, कलकत्ता कॉरपोरेशन के प्राइमरी स्कूल के अध्यापक सुरेंद्रनाथ राय, प्रेमांशुदास गुप्ता और दीनबंधु घोषाल को गिरफ्तार कर लिया गया। सिराजगंज में कांग्रेस कमेटी के मंत्री उपेंद्रनाथ राय को भी गिरफ्तार किया गया। पटेल विश्वास को भी गिरफ्तार किया गया, जिसके पास से दो रिवॉल्वर और कुछ कारतूस मिले।

ढाका में भी तलाशियाँ ली गईं और अध्यापकों में से विनय सेन, द्विजेंद्र दास और रमणी देव को गिरफ्तार किया गया। ३ नवंबर, १९३१ को ढाका मेडिकल एसोसिएशन के प्रधान प्रबोधचंद्र मजूमदार को तथा कलेक्टर डुर्नो पर गोली चलाने

के सिलसिले में सुरेंद्र कुमार चक्रवर्ती को गिरफ्तार किया। इसी संदर्भ में सुधांशु कुमार बोस को भी गिरफ्तार किया गया।

नए बंगाल ऑर्डिनेंस के अंतर्गत जिन अन्य व्यक्तियों को गिरफ्तार किया गया, वे थे—प्रफुल्ल कुमार मजूमदार, अमूल्यकंचन दत्त, अमरनाथ, पुलिन बख्शी, शचींद्र लाल, तारादास भट्टाचार्य, राधारमण भट्टाचार्य, सुधेंशु कुमार चटर्जी, बँगलाप्रसन्न गुह और जीवन सान्याल।

इन गिरफ्तारियों की अशासकीय जाँच के लिए जब सुभाषचंद्र बोस ढाका जा रहे थे, तो सब-डिवीजनल ऑफीसर ने उन्हें जाने से रोका। आज्ञा न मानने पर उन्हें ढाका के निकट तेजगाँव नामक स्टेशन पर ११ नवंबर को गिरफ्तार करके ढाका सेंट्रल जेल भेज दिया गया।

□

# ★ अमरेंद्र नंदी
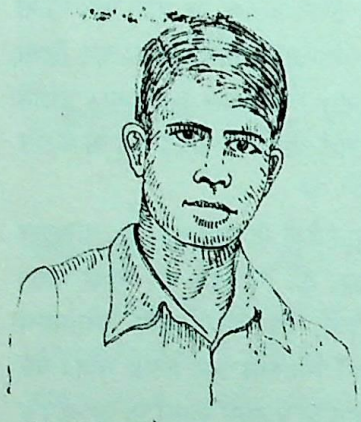
अमरेंद्र नंदी

चटगाँव के पुलिस शस्त्रागार के हथियारों की लूट के पश्चात् क्रांतिकारी अमरेंद्र नंदी अपने शेष साथियों से बिछुड़ गया। उसके कुछ साथी तो जलालाबाद की पहाड़ी पर पहुँच गए थे, लेकिन वह चटगाँव नगर में ही प्रश्रय स्थल बदलता रहा। उस समय तक चटगाँव क्रांतिकारियों के प्रभाव से मुक्त हो चुका था और सेना तथा पुलिस वहाँ फिर सक्रिय हो उठी थी।

२४ अप्रैल, १९३० को चटगाँव की पुलिस को यह पता चला कि अमरेंद्र नंदी स्थानीय हाई स्कूल के भवन में छिपा हुआ है। हाई स्कूल की छुट्टियाँ होने के कारण अमरेंद्र ने उसे अपना प्रश्रय स्थल बना रखा था। उस समय उसके पास एक रिवॉल्वर, एक पिस्तौल और कुछ कारतूस थे।

चटगाँव की पुलिस अमरेंद्र नंदी की खोज में हाई स्कूल जा पहुँची। अमरेंद्र नंदी को वहाँ से भागना पड़ा। सदरघाट सड़क पर भागते-भागते वह अलकारन लेन

क्षेत्र में एक पुलिया के नीचे छिप गया। पुलिस ने उसे पुलिया के नीचे छिपते हुए देख लिया था। पुलिस ने पुलिया को दोनों तरफ से घेर लिया। पुलिस दल के लोग पुलिया के नीचे गोलियाँ भी छोड़ते जा रहे थे। अमरेंद्र नंदी भी गोलियों का उत्तर गोलियों से देता रहा। जब बहुत देर तक उसकी तरफ से कोई गोली नहीं आई, तो पुलिस को संदेह हुआ कि शायद वह मर गया है। झाँककर देखा गया तो मालूम हुआ कि अमरेंद्र का शरीर लहूलुहान पड़ा है। उसे बाहर निकाला गया। उस समय वह जीवित था। उसे तुरंत अस्पताल भेजा गया; लेकिन वह बच नहीं सका। जाँच करने पर यह पता चला कि वह पुलिस की गोलियों से नहीं, स्वयं अपनी ही गोली से मरा था। पुलिस की एक भी गोली उसके शरीर पर नहीं लगी थी।

अमरेंद्र नंदी ने आत्मघात का नहीं, आत्मबलिदान का पथ अपनाया। आत्महत्या और आत्मबलिदान में फर्क यह होता है कि जब कोई व्यक्ति अपने जीवन से तंग आकर उसे समाप्त करता है तो वह कृत्य 'आत्महत्या' कहलाता है; लेकिन जब कोई व्यक्ति किसी उच्च उद्देश्य से प्रेरित होकर, अपने या अपने दल के भेद दूसरों पर प्रकट न होने देने के लिए, अपने जीवन को समाप्त करता है तो उसका यह कृत्य 'आत्मबलिदान' की संज्ञा पाता है।

पुलिस द्वारा यातनाएँ देने पर कुछ कमजोर प्रकृति के लोग अपने दल के रहस्य बतला देते हैं। यातनाएँ सहकर भी जो लोग अपने दल के रहस्य नहीं बताते, वे कभी-कभी असामान्य स्थिति में—जैसे नींद में बड़बड़ाकर या किसी नशे की बहक में अपने दल के भेद खोलते हुए देखे गए हैं। ऐसी स्थिति से बचने के लिए ही क्रांतिकारी लोग आत्मबलिदान का पथ अपनाते थे।

क्रांतिकारी अमरेंद्र नंदी ने भी अपने दल की भलाई की दृष्टि से ही आत्मबलिदान का पथ अपनाया।

□

★ अमलेंदु बागची ★ उपेंद्रचंद्र मजूमदार
★ कुमारी कमला चटर्जी ★ क्षितीशचंद्र बोस
★ खगेंद्र मलिक ★ चाँद मियाँ ★ चारुचंद्र राय
★ देवेंद्रनाथ भट्टाचार्य ★ प्रभासचंद्र लाहिड़ी
★ बिजनकुमार सेनगुप्ता ★ भूदेवप्रसाद सूर
★ माखनलाल राय ★ मुरारीमोहन भादुड़ी
★ रमेशचंद्र चौधरी ★ श्यामबिहारी मुखर्जी
★ श्यामविनोद पाल चौधरी ★ सत्यव्रत घोष
★ सुधींद्रनाथ सरकार ★ सुधीरचंद्र मजूमदार
★ सुनील कुमार मुखर्जी ★ सुरेंद्रनाथ घोष
★ हरेंद्रचंद्र भट्टाचार्य ★ हीरालाल चक्रवर्ती
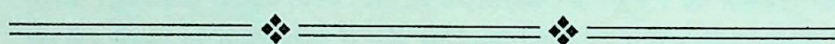
बंगाल में ब्रिटिश हुकूमत और क्रांतिकारियों के बीच जगह-जगह झड़पें हो रही थीं। ब्रिटिश हुकूमत क्रांतिकारियों को पूरी तरह से कुचल डालने के लिए कृत-संकल्प थी और क्रांतिकारी थे, जो किसी भी कीमत पर झुकने को तैयार नहीं थे।

क्रांतिकारियों का पक्ष लेने के कारण श्री सुभाषचंद्र बोस को गिरफ्तार कर लिया गया था। बाद में उन्हें छोड़ दिया गया। उनकी गिरफ्तारी ने भी क्रांतिकारियों को भड़का दिया। शासन और उसके चमचों पर आक्रमण होने लगे। गिरफ्तारियों का भी ताँता लग गया।

८ नवंबर, १९३१ को 'पबना' में प्रभासचंद्र लाहिड़ी और सुधींद्रनाथ सरकार को तथा बारीसाल में हरेंद्रनाथ घोष और सत्यव्रत घोष को बंगाल ऑर्डिनेंस के अंतर्गत गिरफ्तार कर लिया गया। इसी ऑर्डिनेंस के अंतर्गत ९ नवंबर को चारुचंद्र राय और कलिहारी कांग्रेस कमेटी के मंत्री भूदेवप्रसाद सूर एवं बाबू क्षितीशचंद्र बोस को गिरफ्तार कर लिया गया। इन दोनों पर तो कैसल्स पर गोली चलाने का आरोप भी लगाया गया था। इसी दिन ढाका के अंतर्गत बालीगाँव के हीरालाल चक्रवर्ती, श्यामविनोद पाल चौधरी और मुंशीगंज कांग्रेस कमेटी के मंत्री सुनील कुमार मुखर्जी को गिरफ्तार कर

लिया गया। बंगाल ऑर्डिनेंस के अंतर्गत बाबू रमेशचंद्र चौधरी, उपेंद्रचंद्र मजूमदार और सुधीरचंद्र मजूमदार को गिरफ्तार किया गया।

पहले टिपरा छात्र संघ के कार्यकर्ता हरेंद्रचंद्र भट्टाचार्य और अमूल्यकंचन दत्त को गिरफ्तार करके छोड़ दिया गया था, क्योंकि सरकार उनके विरुद्ध कोई मुकदमा नहीं बना सकी थी। नए बंगाल ऑर्डिनेंस के अंतर्गत उन्हें फिर गिरफ्तार कर लिया गया।

कलेक्टर मि. डुर्नो पर जो गोलियाँ चलाई गई थीं, उस क्रम में पहले भी कुछ गिरफ्तारियाँ हुई थीं। उस क्रम में अब माखनलाल राय और खगेंद्र मलिक को गिरफ्तार कर लिया गया।

२८ दिसंबर को पबना के छात्र मुरारीमोहन भादुड़ी को और ७ जनवरी, १९३२ को कलकत्ता स्कॉटिश चर्च कॉलेज की छात्रा कुमारी कमला चटर्जी को बंगाल ऑर्डिनेंस के अंतर्गत गिरफ्तार किया गया। एक अन्य अभियोग में एक मुसलमान युवक चाँद मियाँ, देवेंद्रनाथ भट्टाचार्य और श्यामबिहारी मुखर्जी को गिरफ्तार करके लंबी अवधि के कठोर कारावास की सजा दी गई। डाक लूटने के अपराध में बिजनकुमार सेनगुप्ता और अमलेंदु बागची को गिरफ्तार किया गया। सभी को सजाएँ दी गईं।

□

## ★ अमानीसिंह

अलीगढ़ का युवक अमानीसिंह जब घर से निकला तो उसकी माँ ने पूछा—

''बेटा, यह समय तो तुम्हारे अभ्यास का समय है। तुम अभ्यास के समय कभी घर से बाहर नहीं जाया करते। आज इस समय तुम कहाँ जा रहे हो?''

अमानीसिंह ने अपनी माँ से कहा—

''माँ! यह बताओ कि मैं तुमसे सच-सच बात कहूँ या झूठ बोलूँ?''

अपने बेटे के इस कथन पर आश्चर्य व्यक्त करते हुए माँ ने कहा—

''बेटे! आज तुम्हारा व्यवहार कुछ विचित्र-सा लग रहा है। क्या मैंने तुम्हें कभी झूठ बोलने की प्रेरणा दी है?''

''तो माँ! मैं तुम्हें सच-सच ही बताऊँगा। आज अपने नगर में ब्रिटिश हुकूमत के विरुद्ध एक जुलूस निकलने वाला है। यह जुलूस गांधीजी की प्रेरणा का

फल है, जिन्होंने जेल जाने के पहले कहा था—'करो या मरो'।''

माँ ने 'करो या मरो' का कथन सुनते ही कहा—

''बेटा, तुझे जो अच्छा लगे वह कर; लेकिन ऐसा कुछ मत करना, जिससे मेरा दूध कलंकित हो।''

''नहीं माँ! ऐसा कभी नहीं होगा।'' कहता हुआ अमानीसिंह माँ के पैर छूकर बाहर चला गया। कुछ समय बाद उसकी माँ को सुनने को मिला कि उसका बेटा हाथ में झंडा थामे हुए सीने पर गोली खाकर शहीद हो गया। माँ की आँखों से आँसू तो गिरे, पर उसने समाचार देनेवाले से फिर पूछा—

''मेरे बेटे ने छाती पर ही गोली खाई है न?''

□

# ★ श्रीमती अमिता सेन

श्रीमती अमिता सेन की गणना भी बंगाल के प्रभावशाली क्रांतिकारियों में की जाती थी। बंगाल ऑर्डिनेंस के अंतर्गत उनकी गिरफ्तारी १९३४ में हुई। कुछ समय तक उन्हें नजरबंद रखकर हिजली जेल भेज दिया गया। सन् १९३८ में उनको जेल से मुक्ति मिली।

बंगाल ऑर्डिनेंस के अंतर्गत अन्य महिला क्रांतिकारियों को भी बंद किया गया और उन्हें विभिन्न अवधि के कारावास का दंड मिला। वे थीं—

१. सुशीला दासगुप्ता,
२. लावण्यप्रभा दासगुप्ता,
३. सुरमा दासगुप्ता,
४. कमला दासगुप्ता,
५. सुनीति देवी,
६. उषा मुकर्जी,
७. प्रतिभा भद्र,
८. सरयू चौधरी,
९. इंद्रसुधा घोष,
१०. श्रीमती हेलना बाल,
११. श्रीमती प्रफुल्ला नलिनी,
१२. श्रीमती अरुणा सान्याल,
१३. श्रीमती आशा दासगुप्ता,
१४. श्रीमती सुषमा दासगुप्ता,
१५. सुभद्रा भद्र,
१६. प्रमिला गुप्ता,
१७. शांतिकणा सेन,
१८. शांतिसुधा घोष,
१९. विमलाप्रतिभा देवी,
२०. हास्यबाल देवी,
२१. ममता मुकर्जी,
२२. सरोज नाग।

□

# ★ अर्धेंदु गुहा ★ कुमुदिनी

रंग-बिरंगी चूड़ियों से भरा हुआ एक बड़ा झब्बा सिर पर लादे हुए एक चूड़ीवाला चटगाँव जिले के 'कुमीरा' गाँव में फेरी लगाता हुआ घूम रहा था। उसका संगीतात्मक स्वर गाँव की गलियों में गूँज रहा था। गाँव के एक घर से एक बालिका ने उसे आवाज दी—

"ऐ चूड़ीवाले भैया! जरा अपनी चूड़ियाँ हमारे यहाँ आकर दिखाना।"

"आया बिटिया!" कहता हुआ वह चूड़ीवाला मकान के बाहरी बरामदे में पहुँचा और वहाँ उसने अपने सिर से चूड़ियों का झब्बा उतार लिया। बालिका उसे मकान के सहन में ले गई, जहाँ घर की महिलाओं को चूड़ियाँ देखनी थीं।

अंदर पहुँचकर चूड़ीवाले ने देखा कि एक परिचित लड़की उसकी प्रतीक्षा कर रही है। लड़की ने उस चूड़ीवाले के हाथ में तह किया हुआ एक कागज थमा दिया। वह चूड़ीवाला और कोई नहीं, महान् क्रांतिकारी सूर्यसेन था; जिसकी योजना के अनुसार चटगाँव में पुलिस और फौज के शस्त्रागार लूट लिये गए थे। फौज से हुई मुठभेड़ के पश्चात् सूर्यसेन अपनी सुरक्षा के लिए गाँवों में घूम रहा था। वह लड़की, जिसने उसके हाथ में पत्र दिया था, उसकी प्रिय शिष्या कुमुदिनी थी। उन दिनों वह क्रांतिकारियों के लिए 'पोस्ट बॉक्स' का काम कर रही थी। कुमुदिनी के पास यह पत्र अर्धेंदु गुहा नाम के एक क्रांतिकारी ने भिजवाया था। उन दिनों चटगाँव के गिरफ्तार क्रांतिकारियों पर अदालत में मुकदमा चल रहा था और अदालत की कार्यवाही देखने के लिए अर्धेंदु गुहा वहाँ पहुँचा करता था। उसीके माध्यम से जेल के अंदर से क्रांतिकारी अपने पत्र बाहर भेजा करते थे।

सूर्यसेन ने कागज खोला तो उसे कोरा पाया। वह बालिका एक गिलास में पानी लेकर जब सूर्यसेन के पास पहुँची, तो सूर्यसेन ने पानी पीने के बजाय उसमें कागज को डुबो दिया। पानी से भीगने से कागज के ऊपर कुछ पंक्तियाँ उभर आईं। उसपर लिखा था—

'कच्ची-पक्की रोटियाँ और पतली दाल खाते-खाते हम लोग परेशान हैं। लड्डू-जलेबियाँ भिजवाने का प्रबंध कीजिए।'

इस सांकेतिक भाषा का अर्थ सूर्यसेन ने समझ लिया। जेल के अंदर के क्रांतिकारियों ने उनसे बम और रिवॉल्वर भेजने की प्रार्थना की थी। पहले भी उन्हें संदेश मिल चुका था कि क्रांतिकारी लोग जेल तोड़कर बाहर निकलना चाहते हैं।

जेल तोड़ने की योजना क्रांतिकारियों की एक साहसिक योजना थी। वह

जेल किसी किले से कम नहीं थी। उसपर दिन-रात कड़ा पहरा रहता था। शासन को मालूम था कि उसके अंदर गणेश घोष, अनंतसिंह और लोकनाथ बल जैसे क्रांतिकारी बंद हैं। प्रबंध भी उनके अनुरूप ही किया गया था। पहली बार वहाँ अंग्रेज जेलर रखा गया था। हिंदुस्तानी वार्डर हटाकर वहाँ अंग्रेज वार्डर रखे गए थे। जेल की दीवार की बुर्जियों पर मशीनगनें रख दी गई थीं। जेल की रक्षा हथियारबंद गुरखे सैनिक करते थे।

इतना कड़ा पहरा और इतनी सख्ती होने पर भी अंदर एवं बाहर के क्रांतिकारियों में पारस्परिक संपर्क था। जेल के अंदर जिन क्रांतिकारियों पर मुकदमा चल रहा था, उनकी ओर से सुभाष बाबू के बड़े भाई शरत्‌चंद्र बोस मुकदमा लड़ रहे थे। कानूनी सलाह देने के लिए अभियुक्त और उसके वकील को एकांत में बात करने का अवसर दिया जाता था। इस स्थिति का लाभ उठाकर शरत्‌चंद्र बोस ने ही अनंतसिंह को यह परामर्श दिया था कि सभी क्रांतिकारी अपनी बहस खुद ही किया करें और बहस में अधिक-से-अधिक समय लगाया करें। ऐसा करने से क्रांतिकारियों को जेल तोड़ने की योजना को कार्यान्वित करने के लिए समय मिल सकता था। शासन की नीति से यह स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि वह शीघ्र फैसला करके क्रांतिकारियों को जल्दी ठिकाने लगाना चाहती थी।

शरत्‌चंद्र बोस के परामर्श के अनुसार गणेश घोष, अनंतसिंह और लोकनाथ बल अपने मुकदमे की बहस स्वयं ही करके काफी अधिक समय लगा रहे थे। मुकदमे की कार्यवाही बड़ी शिथिल गति से चल रही थी। इस बीच जेल के अंदर के क्रांतिकारियों को जेल तोड़ने का सामान जुटाने का अवसर मिल गया। उन्होंने जेल के अंदर विस्फोटक पदार्थ, डायनामाइट और भेदक सुरंगें मँगवा लीं। योजना यह थी कि बाहर के क्रांतिकारी आकस्मिक रूप से पहरेदारों पर बमों से आक्रमण करेंगे और ठीक उसी समय डायनामाइट एवं सुरंगों की सहायता से जेल की दीवारें उड़ा दी जाएँगी और क्रांतिकारी लोग बाहर निकल भागेंगे।

एक अन्य योजना के अंतर्गत यह तय किया गया था कि एक खाली मकान किराए पर लेकर उसकी दीवारों के नीचे बारूदी सुरंगें बिछा दी जाएँ और किसी गुप्तचर द्वारा पुलिस को यह सूचना भेज दी जाए कि अमुक मकान में क्रांतिकारियों का बम का कारखाना है। जब पुलिस के बड़े-बड़े अफसर उस मकान की तलाशी लेने जाएँ, तभी बारूदी सुरंगों से मकान को उड़ा दिया जाए और एक साथ पुलिस के कई अफसरों की सामूहिक मृत्यु का आनंद उठाया जाए। तैयारी भी पूरी कर ली गई और एक खाली मकान किराए पर लेकर उसके अंदर सुरंगें बिछा दी गईं। एक कमरे के अंदर बम बनाने का मामूली सामान रख दिया गया। दुर्भाग्य से एक दिन

झाड़ू लगाते समय मकान मालकिन ने दीवार के नीचे कुछ तार दबे हुए देखे। उसने वे तार आसपास के लोगों को दिखाए और बात पुलिस तक पहुँच गई। पुलिस ने दीवार के अंदर की बारूदी सुरंगें निकाल लीं। पुलिस इतनी सतर्क हो गई कि उसने जेल का भी अच्छी तरह से परीक्षण किया और क्रांतिकारियों की तलाशियाँ लीं। उनके पास से विस्फोटक पदार्थ बरामद कर लिये गए। यह घटना 'डायनामाइट कांड' के नाम से मशहूर हो गई। कुछ क्रांतिकारी पकड़े भी गए।

जब शासन को क्रांतिकारियों के इतने खतरनाक इरादों का पता चला, तो उसकी अक्ल ठिकाने आ गई। शासन को क्रांतिकारियों के साथ संधिवार्त्ता के लिए विवश होना पड़ा। संधि की शर्तों के अनुसार यह तय हुआ कि अब क्रांतिकारी लोग भयंकर वारदात नहीं करेंगे और मुकदमे में देर लगाने की नीति छोड़ देंगे। शासन ने उन्हें आश्वासन दिया कि डायनामाइट कांड के क्रांतिकारियों को सजा नहीं दी जाएगी और चटगाँव शस्त्रागार कांड के अभियुक्तों को भी बड़ी सजाएँ नहीं दी जाएँगी। शासन के साथ यह संधि क्रांतिकारियों की बहुत बड़ी विजय थी। □

# ★ अशफाक उल्ला खाँ
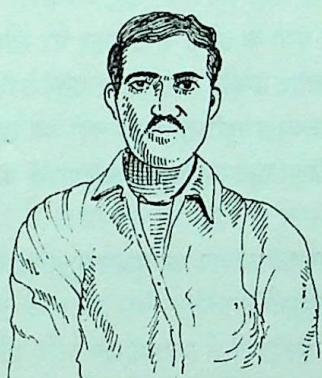
अशफाक उल्ला खाँ

श्री गणेशशंकर विद्यार्थी 'प्रताप' कार्यालय, कानपुर में बैठे हुए 'प्रताप' के लिए संपादकीय लेख लिखने में व्यस्त थे। उसी समय तार वितरण करनेवाले डाकिए ने उनकी मेज पर तार रखकर हस्ताक्षर करने के लिए एक परचा आगे बढ़ा दिया। विद्यार्थीजी ने तार का नंबर देखकर और परचे पर उसी नंबर के स्थान पर हस्ताक्षर करके डाकिए को रवाना किया। तार को बिना खोले बिना पढ़े ही उन्होंने टेबल के एक कोने पर रख दिया और संपादकीय लेख लिखने में फिर व्यस्त हो गए। जो संपादकीय लेख वे लिख रहे थे, वह इतना महत्त्वपूर्ण था कि उसे समाप्त किए बिना किसी दूसरे काम के लिए वे समय नहीं देना चाहते थे। वे

'काकोरी षड्यंत्र कांड' में शामिल अशफाक उल्ला खाँ के ऊपर अग्रलेख लिख रहे थे, जिसे १९ दिसंबर, १९२७ को फैजाबाद जेल में फाँसी पर लटकाया जाने वाला था। वे लिख रहे थे—

'जिस समय 'प्रताप' का यह अंक आप लोगों के हाथों में पहुँचेगा, उस समय तक देश का एक दीवाना अशफाक उल्ला खाँ देश की आजादी के अरमान लिये हुए फाँसी के फंदे पर झूल चुका होगा। एक ऐसा नौजवान हमारे बीच से जा चुका होगा, जो मुसलमान होते हुए भी भारत माता का एक कट्टर भक्त था और भारत माता के लिए कुर्बानी देने के लिए जो प्रत्येक क्षण बेताब रहा··· ।'

विद्यार्थीजी के लेखन में इसी समय व्यवधान हुआ। आया हुआ तार, जो उन्होंने टेबल के कोने पर पटक दिया था, हवा के झोंके से उड़ा और उस कागज पर आ गिरा, जिसपर वे अशफाक के विषय में लिख रहे थे। वे अपने और अशफाक के बीच किसी व्यवधान को सहन करने की स्थिति में नहीं थे। उन्होंने तार को उठाया और फिर उसे कहीं पटक देना चाहा; पर ज्यों ही उन्होंने वह तार अपनी उँगलियों के बीच थामा, उन्हें लगा जैसे अशफाक का खिला हुआ चेहरा शिकायत के लहजे में उनसे कह रहा हो—

'ऐसी भी क्या बेरुखी है, विद्यार्थीजी, जो आप अपनी नजरे-इनायत से मुझे महरूम कर रहे हैं। इस कागज पर कलम रगड़ने के लिए तो आपको बहुत वक्त मिलेगा, पर जब मैं खुद आपकी खिदमत में हाजिर हो गया हूँ तो चंद लमहे मुझे भी अता फरमा दीजिए।'

विद्यार्थीजी ने सोचा कि जब यह तार हवा के झोंके से उड़कर मेरे सामने ही आ गिरा है तो इसे ही खोलकर पढ़ लिया जाए। उन्होंने तार खोला और उसे पढ़ने लगे। वे कुछ उलझन में पड़ गए। तार का मंतव्य उनकी समझ में नहीं आ रहा था। तार फैजाबाद से दिया गया था और तार देनेवाला खुद अशफाक उल्ला खाँ था। तार का मजमून था—

'१९ दिसंबर को दिन के दो बजे लखनऊ स्टेशन पर मुझसे मुलाकात करें। उम्मीद है, आप मेरी इल्तिजा कुबूल फरमाएँगे।'

विद्यार्थीजी उलझन में पड़ गए—

१९ दिसंबर तो कल ही है और कल सुबह ही तो अशफाक को फैजाबाद जेल में फाँसी पर झुला दिया जाएगा। फिर अशफाक ने कल लखनऊ स्टेशन पर मुलाकात करने के लिए मुझे क्यों बुलाया है ? क्या उसकी फाँसी की सजा माफ कर दी गई है और क्या वह कल ट्रेन से फैजाबाद से शाहजहाँपुर जा रहा है ? क्या इसी कारण उसने मुझे मुलाकात के लिए लखनऊ स्टेशन पर बुलाया है ? अगर फाँसी

की सजा माफ की जाकर उसे छोड़ा जा रहा होता तो इतना बड़ा तथ्य मुझसे छिपकर कैसे रह सकता था? जब प्रिवी कौंसिल तक ने उसके फाँसी के दंड की पुष्टि कर दी है, फिर माफी का सवाल ही कहाँ उठता है?

इस गुत्थी में विद्यार्थीजी कुछ देर उलझे रहे; पर आखिर उनके दिमाग ने वह गुत्थी सुलझा ही ली। गुत्थी सुलझ जाने की सफलता से उनकी आँखों में चमक आ गई और उनके मुँह से बोल फूट पड़े—

'अच्छा बच्चू, यह बात है! तुमसे मुलाकात करने के लिए मैं कल लखनऊ जरूर पहुँचूँगा और मैं अकेला ही तुमसे मुलाकात करके संतुष्ट नहीं हो जाऊँगा, मैं 'प्रताप' के पाठकों से भी तुम्हारी मुलाकात कराऊँगा।'

ट्रेन आने के कुछ समय पूर्व ही श्री गणेशशंकर विद्यार्थी १९ दिसंबर को अपने साथियों के साथ लखनऊ स्टेशन पर पहुँच गए। वे अपने साथ एक फोटोग्राफर भी लेते गए। सभी के हाथों में पत्तों में लिपटे हुए हार-फूल भी थे।

दिन के ठीक दो बजे फैजाबाद से आनेवाली ट्रेन लखनऊ स्टेशन के प्लेटफॉर्म पर रुकी। विद्यार्थीजी ने एक डिब्बे के दरवाजे पर खड़े हुए रियासत उल्ला खाँ को पहचान लिया, जो अशफाक उल्ला खाँ के बड़े भाई थे। उनके सामने पहुँचकर विद्यार्थीजी ने पूछा—

"क्या अशफाक उल्ला खाँ इसी डिब्बे में हैं?"

"जी हाँ, वह इसी डिब्बे में है। कल उसीने तो अपने हाथ से आपके नाम तार लिखकर मुझे दिया था और फैजाबाद से वह तार मैंने आपके नाम भेज दिया था।"

विद्यार्थीजी और उनके साथियों ने डिब्बे के अंदर प्रवेश किया। पूरा डिब्बा धूपबत्तियों के खुशबूदार धुएँ से गमक रहा था। एक तरफ पलंग पर एक सफेद चादर ओढ़े हुए अशफाक उल्ला खाँ चिरनिद्रा में सोए हुए थे। विद्यार्थीजी ने अपने हाथों से अशफाक के चेहरे से कफन थोड़ा नीचे सरकाया और उनकी आँखों से कुछ आँसू टपक पड़े। उस महान् देशभक्त शहीद को उन्होंने माल्यार्पण किया। उनके साथ गए सभी व्यक्तियों ने पुष्पहार चढ़ाकर उस महान् शहीद को श्रद्धांजलियाँ अर्पित कीं। फोटोग्राफर ने चिरनिद्रा में सोए हुए अशफाक का एक फोटो लिया।

चलते समय विद्यार्थीजी ने अशफाक के बड़े भाई से कहा—

"शाहजहाँपुर में आप शहीद की एक मामूली-सी कब्र बनवा दीजिए। एक अच्छा-सा मकबरा बनवाने की जिम्मेदारी मेरी है। मैं कोशिश करूँगा कि अशफाक का मकबरा ऐसा बने, जो एक नजीर बनकर रह जाए।"

विद्यार्थीजी उस महान् क्रांतिकारी अशफाक उल्ला खाँ के अंतिम दर्शन

करके लौट आए, जिसने फाँसी से एक दिन पहले ही अपने भाई के मार्फत तार भिजवाकर उन्हें लखनऊ बुलवाया था। अशफाक विद्यार्थीजी को बहुत मानता था और उनसे कोई बात छिपाकर नहीं रखता था। उसने एक पत्र में उन्हें यह भी लिख दिया था कि मेरी कब्र को पुख्ता आप ही करवाएँ; क्योंकि मेरे मुकदमे के कारण मेरे भाई लोग तबाह हो चुके हैं। उनकी देखभाल करते रहने की प्रार्थना भी अशफाक ने उनसे की थी। विद्यार्थीजी ने जब अशफाक के अंतिम दर्शन किए तो उनकी आँखों में चित्रपट की भाँति उसका समस्त क्रांतिकारी जीवन घूम गया—

शाम का समय है। शाहजहाँपुर नगर के बाहर एक नौजवान झूम-झूमकर चल रहा है। उसके झूम-झूमकर चलने का कारण यह नहीं है कि उसने शराब पी रखी है। झूम-झूमकर चलना उसकी आदत ही है। जब कभी वह मस्ती में होता है और कोई शायरी उसके दिमाग में उभरने लगती है तो एकांत ही उसे अच्छा लगता है। वह झूम-झूमकर चलने लगता है और कुछ गुनगुनाता भी चलता है। इस तरह उसके झूमने तथा गुनगुनाने का कुछ नतीजा निकलता है और वह नतीजा होता है कोई नज्म या गजल। इस वक्त भी वह गुनगुनाता हुआ चल रहा है। वह गुनगुना रहा है और अपनी मस्ती में खोया हुआ है। एक साइकिलवाला उसके बिलकुल पास से निकलकर कुछ आगे बढ़ता हुआ चला जाता है। नौजवान का ध्यान भंग होता है और वह साइकिलवाले को आवाज लगाता है—

''अरे बिस्मिल भाई साहब! जरा ठहरिए! जरा सुनिए तो!''

साइकिलवाला अपना नाम पुकारे जाने पर रुकता है और उस नौजवान के पास पहुँचता है। नौजवान अभिवादन करते हुए कहता है—

''मैं अशफाक, आपको आदाब अर्ज कर रहा हूँ, बिस्मिल भाई साहब! आप तो मेरे पास से इस तरह गुजर गए जैसे हम एक-दूसरे के लिए अजनबी हों।''

''तसलीम अर्ज है, भाई अशफाक। मैं आपके पास से सचमुच ही अजनबी की तरह से गुजर गया। मैंने आपको देख लिया था और पहचान भी लिया था; पर मुझे आप शायरी के खयालों में डूबे हुए नजर आए, इसलिए आपको बाधा पहुँचाना मैंने उचित नहीं समझा।''

''हाँ, आपका अंदाज बिलकुल ठीक निकला; पर आप यह तो बताइए कि आप शाहजहाँपुर कब आए और आपके ऊपर चल रहे मुकदमे का क्या हुआ?''

''आए हुए तो मुझे तीन दिन हो गए हैं, भाई अशफाक, पर सच बात तो यह है कि अब तो मैं अपने काम से काम रखता हूँ। रही बात मुकदमे की, मैं उससे बेदाग बरी हो गया हूँ। सरकार मेरे खिलाफ कुछ साबित नहीं कर सकी।''

''यह तो बहुत अच्छी बात हुई, भाई साहब, कि आप 'मैनपुरी षड्यंत्र

कांड' जैसे मामले में बेदाग बरी हो गए; पर यह काम छोड़ने का तो नहीं है। अगर इसी तरह लोग हिम्मत हारकर बैठते जाएँगे तो आखिर यह देश आजाद कैसे होगा?''

''अब यह काम तुम जैसे नौजवानों को अपने कंधों पर लेने का है, अशफाक! हम लोगों को छुट्टी दो और तुम सँभालो अब यह काम।''

''जहाँ तक इस तहरीक में शरीक होने का सवाल है, मैं इसमें गले-गले डूबने के लिए तैयार हूँ; पर मेरी शर्त है कि मैं आपके साथ काम करूँगा। मैं किसी ऐरे-गैरे के साथ काम नहीं कर सकता।''

''मुझपर इतना भरोसा क्यों कर रहे हो, अशफाक? तुम जानते हो कि मैं एक कट्टर आर्यसमाजी हूँ और तुम एक कट्टर मुसलमान। तुम्हें अपनी नमाज से और मुझे हवन-पूजन से फुरसत नहीं, फिर हम दोनों का साथ कैसे निभ सकता है?''

''देश के काम में ये चीजें कहाँ आती हैं, भाई साहब! क्रांतिकारियों का मजहब तो उनका मकसद ही होता है। अगर मैं गलत कह रहा हूँ तो आप मुझे टोक दीजिए।''

''तुम गलत नहीं कह रहे हो, अशफाक, पर सच बात तो यह है कि इस काम से अब मेरा जी उचट गया है।''

''आपका जी उचटने की वजह मैं बता सकता हूँ आपको। मेरा अंदाज है कि आप अपने गलत साथियों से परेशान हुए हैं, भाई साहब, इस काम से नहीं।''

''तुमने सही नस पर उँगली रख दी है, अशफाक! पर सही किस्म के साथी मैं लाऊँ कहाँ से?''

''यह बंदा आपकी खिदमत में हाजिर है, आप इसपर यकीन कर सकते हैं।''

''यकीन तो मैं आप पर वैसे भी करता हूँ, जनाब 'हसरत' साहब! आप एक अच्छे शायर हैं, अच्छे खानदान के हैं और मेरे सहपाठी के छोटे भाई हैं। यकीन न करने की तो कोई बात ही नहीं है।''

''देखिए बिस्मिल भाई साहब, आप और सबकुछ कहिए, लेकिन जनाब 'हसरत साहब' कहकर मेरा मजाक न उड़ाइए। अभी-अभी तो मैं चंद अलफाज जोड़ना सीख रहा हूँ। यदि आपके साथ रहा तो शायरी भी सीख जाऊँगा।''

''अच्छा तय रहा, भाई अशफाक, हम लोग एक-दूसरे से मिलते रहेंगे। इस समय भी वह चीज अपने दिमाग से निकाल दें, जो तुम अभी गुनगुना रहे थे और मैं भी अपना एक जरूरी काम निबटा लूँ।''

इस वार्त्ता के पश्चात् अशफाक उल्ला खाँ और पं. रामप्रसाद बिस्मिल एक-दूसरे से अलग हो गए; पर क्रांति के क्षेत्र में उन दोनों का मिलन होकर ही रहा। अशफाक उल्ला खाँ ने रामप्रसाद बिस्मिल को बता दिया कि वह एक कट्टर मुसलमान है और एक कट्टर मुसलमान उसूलों की पाबंदी में भी उतना ही कट्टर होता है। क्रांति के क्षेत्र में दोनों का दिल मिल गया। दोनों एक-दूसरे पर बहुत भरोसा करते थे। अशफाक ने अपनी खूबियों से बिस्मिल के साथ बराबरी का दर्जा हासिल कर लिया। अब वह उन्हें 'भाई साहब' नहीं, 'राम' कहकर पुकारता था और उनके बगैर रह नहीं सकता था।

एक बार अशफाक बीमार पड़ गया। तेज बुखार की हालत में वह 'राम! राम!' पुकारने लगा। उसके घरवालों ने जब यह सुना तो उन्हें बहुत हैरानी हुई। वे सोचने लगे कि यह बेहोशी की हालत में 'राम-राम' क्यों पुकार रहा है। उन्हें शक हुआ कि कहीं किसीने इसे हिंदू तो नहीं बना लिया। जब अशफाक के कुछ हिंदू पड़ोसी उसकी हालत देखने गए तो उन्होंने भी उसके मुँह से 'राम-राम' शब्द निकलते सुने। उनमें से एक समझदार थे और उन्हें राज मालूम था। उन्होंने अशफाक के भाई लोगों को बताया कि यह बेहोशी में अपने दोस्त रामप्रसाद बिस्मिल को पुकारता रहता है। रामप्रसाद बिस्मिल को बुलाया गया। बिस्मिल ने अशफाक का हाथ अपने हाथ में लेकर दो-तीन बार उसका नाम पुकारा। धीरे-धीरे अशफाक की तंद्रा दूर हुई और उसने अपनी आँखें खोल दीं। अपने दोस्त 'राम' को देखकर उसे बहुत तसल्ली हुई। कुछ दिन बाद वह स्वस्थ भी हो गया। राम और अशफाक की दोस्ती शाहजहाँपुर में मशहूर हो गई।

अच्छे और खराब इनसान कहाँ नहीं होते! वे हर जगह होते हैं। वे शाहजहाँपुर में भी थे। एक समय आया, जब शाहजहाँपुर भी हिंदू-मुसलिम दंगों की चपेट में आ गया। एक-दूसरे पर चाकू-छुरे चलने लगे और घरों में आग लगाई जाने लगी। दोनों ओर से कुछ जानें गईं। नगर में कर्फ्यू लगा दिया गया। लोगों का सड़कों पर निकलना दूभर हो गया। यदि सड़कों पर निकलें तो चाकू-छुरों से मरें या पुलिस की गोलियों से। कुछ लोगों की दीवानगी से शहर के सभी लोगों का जीवन अभिशाप बन गया। शहर की यह हवा भी अशफाक उल्ला खाँ और रामप्रसाद बिस्मिल के दिलों में फर्क नहीं डाल सकी। जान जोखिम में डालकर वे लोग एक-दूसरे से मिले और तय हुआ कि कुछ करना चाहिए। एक दिन दोनों में सलाह हो गई। अशफाक उल्ला खाँ ने ठेठ मुसलिम लिबास धारण किया। अलीगढ़ी पायजामा और शेरवानी पर उन्होंने जानबूझकर झब्बेदार तुर्की टोपी लगाई, जिससे दूर से ही लोगों की समझ में आ जाए कि वे मुसलमान हैं। पं. रामप्रसाद बिस्मिल ने खद्दर

की धोती पर कुरता पहना और एक दुपट्टा कंधे पर डाल लिया। उनकी शिखा बँधी हुई थी और वे माथे पर चंदन का लेप किए हुए थे। दोनों दीवाने इस प्रकार नगर की प्रमुख सड़क पर जा खड़े हुए और आवाज देने लगे—

"अगर पुलिस को गोलियाँ चलाने का शौक है तो वह हम लोगों पर गोलियाँ चलाए। यदि हिंदुओं और मुसलमानों को खून की प्यास हो तो वह हम लोगों पर चाकू-छुरे चलाएँ। हम लोगों का खून बहाकर आप लोग अपनी दीवानगी मिटा लें और हिंदू-मुसलिम दंगों को हमेशा के लिए बंद कर दें। कोई भी मजहब इतना संकीर्ण नहीं कि वह एक-दूसरे का खून बहाए। हिंदू और मुसलमान दोनों ही भारत माता की संतान हैं। हमें चाहिए कि हम भाई-भाई की तरह से मिलकर रहें।"

अपील सुनी और लोगों के दिलों पर असर हुआ। दोनों ही नौजवान नगर के सितारे थे। कुछ हिंदू लोग भी सड़क पर निकल आए और कुछ मुसलमान भी। जहाँ एक-दूसरे की गरदनों पर लोग चाकू-छुरे चला रहे थे, वहीं वे लोग गले मिलने लगे। कई राम और कई रहीम मिलाप में एक-दूसरे से गुँथ गए। पता नहीं पड़ा, कर्फ्यू कहाँ गया और कहाँ गया नगर का तनाव। शाहजहाँपुर का जन-जीवन सामान्य हो गया। राम और अशफाक के नाम लोगों की जुबानों पर थे।

अशफाक उल्ला खाँ शाहजहाँपुर का वह नौजवान था, जिसपर लोगों की निगाहें जमे बिना नहीं रह सकती थीं। उसका कद बहुत अच्छा और भरा हुआ था तथा उसका रंग गोरा और खिला हुआ था। उसका सीना बहुत चौड़ा था और उसकी कमर पतली थी। कमर और सीने के अनुपात से वह सिंह के समान दिखाई देता था। उसकी पेशानी चौड़ी तथा उभरी हुई थी और उसकी आँखों में हमेशा एक खुशनुमा चमक रहती थी। वह जिससे भी मिलता, बहुत शिष्टाचार के साथ पेश आता था।

रामप्रसाद बिस्मिल भी अपने ढंग का एक ही नौजवान था। कसरत से कमाई हुई उसकी देह फौलादी थी। संयम और नियम के कारण उसके चेहरे पर एक विशेष प्रकार की आभा विद्यमान रहती थी, जो लोगों को उसके संकल्पों का परिचय देती थी। बिस्मिल की चौड़ी छाती के अंदर भावनाओं से भरा हुआ एक हृदय था और उस हृदय में भारत माता की एक तसवीर थी, जिसकी उदासी हटाकर वह उसे हँसती-मुसकराती हुई देखना चाहता था। भारत माता ही वह क्षितिज थी, जहाँ अशफाक उल्ला खाँ और रामप्रसाद बिस्मिल मिले हुए थे।

अशफाक उल्ला खाँ रामप्रसाद बिस्मिल के साथ क्रांतिकारी दल में सम्मिलित है, यह लोगों को मालूम नहीं था। अशफाक के एक बड़े भाई भोपाल रियासत में एक ऊँचे ओहदे पर थे और उनके पास बंदूक का लाइसेंस था। अपने भाई की बंदूक से अशफाक ने अच्छी निशानेबाजी सीख ली थी और उसकी गिनती अच्छे

शिकारियों में होती थी। अशफाक के व्यक्तित्व की एक विशेषता यह थी कि उसके विचार स्वतंत्र थे और वैचारिक धरातल पर वह किसीके सामने झुकने के लिए तैयार नहीं होता था। क्रांतिकारी दल में भी वह अपने विचार खुलकर रखता था। हाँ, वह बहुमत की कद्र अवश्य करता था और पूरा दल जो निर्णय लेता, वह उसे स्वीकार कर लेता था।

अशफाक और बिस्मिल जिस दल में कार्य कर रहे थे, उसका नाम 'हिंदुस्तान प्रजातंत्र संघ' था। इस दल के प्रमुख संगठक शचींद्रनाथ सान्याल थे और उसकी फौजी शाखा के प्रभारी रामप्रसाद बिस्मिल थे। जब भी कोई साहसिक अभियान कार्यान्वित किया जाता, उसकी योजना रामप्रसाद बिस्मिल बनाते थे और वे ही उसका नेतृत्व करते थे। इस प्रकार के अभियानों में बिस्मिल को अशफाक पर पूरा भरोसा रहता था।

रामप्रसाद बिस्मिल ने संघ की एक बैठक शाहजहाँपुर में आयोजित की। उस बैठक में अन्य क्रांतिकारियों के अतिरिक्त अशफाक उल्ला खाँ भी सम्मिलित हुए। रामप्रसाद बिस्मिल ने सुझाव रखा कि हम लोगों को अब राजनीतिक डकैतियाँ बंद कर देनी चाहिए, क्योंकि इनके द्वारा कभी-कभी नर-हत्याएँ होती हैं और धन अधिक नहीं मिलता। इन डकैतियों के स्थान पर उन्होंने सरकारी खजानों पर डकैतियाँ डालने का परामर्श दिया। अपने प्रस्ताव की सार्थकता की पुष्टि के लिए उन्होंने अपना एक अनुभव सुनाया, जब वे शाहजहाँपुर से ट्रेन द्वारा लखनऊ की यात्रा कर रहे थे। उन्होंने बताया कि प्रत्येक स्टेशन की आमदनी एक थैले में बंद करके वह थैला ब्रेकवान में रखे एक लोहे के संदूक में डाल दिया जाता है। उन्होंने ट्रेन रोककर वह संदूक लूट लेने का प्रस्ताव रखा।

रामप्रसाद बिस्मिल के ट्रेन डकैती के प्रस्ताव से अधिकांश सदस्य सहमत हुए और इस कार्य के प्रति उनमें अत्यधिक उत्साह दिखाई दिया। उनके प्रस्ताव का यदि किसीने विरोध किया तो वह किया अशफाक उल्ला खाँ ने। उनका कथन था—

"ट्रेन रोककर सरकारी खजाना लूट लेने के कारण क्रांतिकारी दल और ब्रिटिश हुकूमत में सीधा टकराव पैदा हो जाएगा, जो अभी नहीं है। सरकारी खजाना लूट लिये जाने के कारण वह सरकार को एक खुली चुनौती हो जाएगी और सरकार अपनी पूरी ताकत हमें मिटाने के लिए लगा देगी। ऐसी हालत में हम लोग अपनी आजादी की लड़ाई को और आगे बढ़ाने के पहले ही खत्म हो जाएँगे तथा हमारा मकसद पूरा नहीं होगा। इसलिए मेरा खयाल है कि हम लोग पहले अपनी बुनियाद को पुख्ता करें और फिर मौका पाकर हुकूमत से सीधे टकराने की बात सोचें। मैं यह

भी जाहिर कर देना चाहता हूँ कि मेरे कहने का मतलब यह न लिया जाए कि मैं इस एक्शन से पीछे हटना चाहता हूँ या डरता हूँ। अगर मेरी बात नहीं मानी गई और ट्रेन डकैती का काम हाथ में लिया ही गया तो मैं अपने पूरे जोश के साथ उसमें हिस्सा लूँगा।''

अशफाक उल्ला खाँ का संशोधन बहुत अच्छा था; पर दूसरे सदस्यों के अत्यधिक उत्साह के कारण उनकी बात नहीं मानी गई और ट्रेन डकैती की बात पक्की हो गई।

९ अगस्त, १९२५ को शाहजहाँपुर से रामप्रसाद बिस्मिल के नेतृत्व में सात क्रांतिकारियों का एक दल सहारनपुर से लखनऊ जानेवाली ट्रेन में सवार हुआ। उन लोगों के पास लोहे के संदूक को तोड़ने का सब सामान था। तीन क्रांतिकारियों को काकोरी स्टेशन से दूसरे दर्जे के डिब्बे में सवार होने का निर्देश दिया गया। ये तीन क्रांतिकारी थे—शचींद्रनाथ बख्शी, राजेंद्रनाथ लाहिड़ी और अशफाक उल्ला खाँ। इन लोगों को यह भी निर्देश था कि जब ट्रेन काकोरी स्टेशन से कुछ दूर आगे बढ़ जाए तो वे जंजीर खींचकर ट्रेन रोक दें। बख्शी, लाहिड़ी और अशफाक ने अपना पार्ट बखूबी अदा किया। वे काकोरी स्टेशन से ट्रेन के दूसरे दर्जे के डिब्बे में सवार हुए तथा जब गाड़ी काकोरी स्टेशन और आलमपुर स्टेशन के बीच पहुँची तो उन्होंने जंजीर खींच दी। धीरे-धीरे करके ट्रेन रुक गई। वह शाम का समय था। सूरज डूब चुका था और कुछ-कुछ अँधेरा हो गया था। गाड़ी रुकने के साथ ही गार्ड नीचे उतरा और उस डिब्बे की ओर जाने लगा, जहाँ जंजीर खींची गई थी। सभी क्रांतिकारी ट्रेन से नीचे कूद पड़े और वे गोलियाँ चलाने लगे। उन्होंने मुसाफिरों को खिड़कियाँ बंद कर लेने और नीचे न उतरने की चेतावनी दे दी। गार्ड को जमीन पर पेट के बल लेट जाने का आदेश दिया गया। ड्राइवर को भी इसी प्रकार लिटा दिया गया। संदूक को नीचे गिराकर उसे तोड़ने के लिए उसपर हथौड़े के प्रहार किए जाने लगे। उसमें एक सूराख तो हो गया, पर वह बड़ा नहीं हो रहा था। सब लोग परेशान थे कि अब क्या किया जाए। अशफाक उल्ला खाँ गाड़ी को घेरे हुए फायर कर रहे थे। संदूक टूटते न देख उन्होंने अपना माउजर पिस्तौल मन्मथनाथ गुप्त को दिया और वे स्वयं कुल्हाड़ा लेकर लोहे के संदूक पर पिल पड़े। वे काफी लंबे-चौड़े और बलिष्ठ पठान थे। अपनी पूरी ताकत के साथ उन्होंने संदूक पर वार किए और उसमें इतनी बड़ी दरार पैदा कर दी कि उसमें हाथ डालकर, नोटों की गड्डियोंवाले सभी थैले निकालकर एक चादर में बाँध लिये गए। जब संदूक तोड़ने का काम चल रहा था तो एक गुरखा सिपाही ने बंदूक लेकर नीचे उतरने का प्रयास किया। एक क्रांतिकारी ने उसपर गोली चला दी और वह गिरकर समाप्त हो गया। एक अन्य व्यक्ति ने खिड़की के बाहर हाथ

निकालकर अपनी पिस्तौल से एक क्रांतिकारी को निशाना बनाना चाहा; पर वह ऐसा करे, इसके पहले एक गोली उसके हाथ में जाकर लगी और पिस्तौल उसके हाथ से नीचे गिर पड़ी। जिस ट्रेन को क्रांतिकारियों ने लूटा, उसमें चौदह व्यक्तियों के पास बंदूकें थीं। इनमें से दो फौजी अंग्रेज अफसर भी थे। उनमें से एक तो बेंच के नीचे घुस गया और दूसरा चला तो संडास के अंदर छिप गया।

ट्रेन लूट लेने के पश्चात् क्रांतिकारी लोग जंगल के रास्ते से लखनऊ जा पहुँचे।

अशफाक उल्ला खाँ का कथन बिलकुल सही निकला। ट्रेन डकैती ने सरकार को सीधी चुनौती दी और उसके जासूस अपराधियों का पता लगाने में जुट गए। एक क्रांतिकारी भूल से अपनी खादी की चादर घटनास्थल पर भूल गया, जिसके कारण पुलिस इस नतीजे पर पहुँची कि ट्रेन डकैती सामान्य न होकर राजनीतिक है। जासूसी विभाग के अफसर मि. हर्टन ने बहुत तत्परता दिखाई। उन्होंने शासन के सामने प्रस्ताव रखा कि प्रमाण मिलने की प्रतीक्षा न करके एक साथ सभी संदिग्ध व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया जाए। उनका विश्वास था कि प्रमाण तो बाद में मिल ही जाएँगे। उनकी बात मान ली गई और देश-भर में २६ सितंबर, १९२५ को सुबह चार बजे विभिन्न स्थानों पर छापे मारकर कई क्रांतिकारियों को गिरफ्तार कर लिया गया। रामप्रसाद बिस्मिल भी शाहजहाँपुर में अपने घर से गिरफ्तार हो गए। अशफाक उल्ला खाँ के घर को भी पुलिस ने घेर लिया; पर पुलिस की हलचल देख वे पिछले दरवाजे से खिसक गए और अपने घर से लगभग एक मील की दूरी पर गन्ने के खेत में जा छिपे। जब पुलिस को अशफाक हाथ नहीं लगे तो वह उनके भाई की बंदूक उठा ले गई। दो-एक दिन अशफाक गन्ने के खेत में ही छिपे रहे। वहीं उनका खाना पहुँचा दिया जाता था। आखिर उन्होंने शाहजहाँपुर छोड़ना तय कर लिया।

होते-करते अशफाक उल्ला खाँ बनारस जा पहुँचे। बनारस के उनके साथी गिरफ्तार हो चुके थे। कुछ क्रांतिकारी विचारों के युवक बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के छात्रावासों में रहते थे। इन युवकों से अशफाक की अच्छी मित्रता हो गई और वे कभी इस छात्रावास में तो कभी उस छात्रावास में रहने लगे। अशफाक हिंदू नाम धारण करके हिंदू लिबास में रहते थे। हिंदू शिष्टाचार और रहन-सहन की बारीकियों तक से वे परिचित थे और किसीको तनिक भी संदेह नहीं हुआ कि वे मुसलमान हैं।

कुछ दिन बनारस रहने के पश्चात् अशफाक उल्ला खाँ राजस्थान निकल गए और वे प्रसिद्ध क्रांतिकारी अर्जुनलाल सेठी के परिवार में रहने लगे। इस परिवार में उन्हें काफी स्नेह मिला। सेठीजी की पुत्री उनका बहुत ध्यान रखती थी। अशफाक

ने जब देखा कि सेठीजी के परिवार का स्नेह उनके लिए बंधन न बन जाए तो वे सेठीजी से अनुमति लेकर वहाँ से चल दिए। बाद में, जब वे गिरफ्तार हुए और उनको फाँसी हुई तो अर्जुनलाल सेठी की पुत्री को इतना धक्का लगा कि वह बीमार पड़ गई और बच न सकी।

राजस्थान छोड़कर अशफाक बिहार जा पहुँचे। वे पलामू के डाल्टनगंज में रहने लगे। प्रजा कार्य विभाग के दफ्तर में उन्हें एक नौकरी भी मिल गई और वे दफ्तर के बाबू की तरह काम करने लगे। लगभग आठ महीने तक उन्होंने यह नौकरी की। उन्होंने स्वयं को मथुरा जिले के एक कायस्थ परिवार का व्यक्ति घोषित किया था। अपनी उर्दू जुबान के कारण उन्हें कायस्थ बनने में कोई कठिनाई नहीं हुई। डाल्टनगंज में रहकर अशफाक ने बँगला भाषा सीख ली और वे बँगला भाषा में बखूबी बातचीत करने लगे तथा बँगला गीत गाने लगे।

जिस दफ्तर में अशफाक काम कर रहे थे, उसका इंजीनियर शायरमिजाज था। जब उसे मालूम पड़ा कि उसके दफ्तर का एक बाबू भी शायरी करता है तो वह अशफाक को अपने साथ मुशायरों में भी ले जाने लगा। अशफाक के कारण इंजीनियर साहब का रुतबा बढ़ता था। इंजीनियर साहब ने खुश होकर अशफाक का वेतन बढ़ा दिया। शायर के रूप में भी अशफाक को अच्छी ख्याति मिली। वह इंजीनियरिंग के काम को भी समझने लगा और उसके मन में खुद इंजीनियर बनने का विचार पैदा हुआ। इसके लिए उसे प्रशिक्षण प्राप्त करना आवश्यक था। उसने तय किया कि वह अफगानिस्तान होते हुए रूस पहुँचकर वहाँ इंजीनियरिंग की शिक्षा प्राप्त करेगा। अफगानिस्तान पहुँचने के लिए पासपोर्ट आदि बनवाने की गरज से अशफाक उल्ला खाँ दिल्ली जा पहुँचा।

दिल्ली में अशफाक उल्ला खाँ अपने एक मुसलमान मित्र के साथ ठहरा, जो शाहजहाँपुर का ही रहनेवाला था और उसका सहपाठी भी था। पास में ही एक मुसलमान इंजीनियर महोदय भी रहते थे, जिनसे अशफाक की जान-पहचान हो गई और वह उनके यहाँ आने-जाने लगा। इंजीनियर साहब की युवा पुत्री को अशफाक बहुत पसंद आ गया। एक दिन उस लड़की ने अपनी नौकरानी के हाथ एक पत्र भी अशफाक के पास भेजा। अशफाक ने शिष्टाचारवश उस पत्र का संक्षिप्त उत्तर दे दिया और उस लड़की को समझाया कि वह संबंध बढ़ाने की कोशिश न करे। अशफाक ने उसके घर जाना-आना भी बंद कर दिया। एक दिन अशफाक को एकांत में देख वह लड़की उसके पास पहुँच गई और प्रणय-निवेदन कर बैठी। अशफाक यह तो नहीं बता सकता था कि वह एक फरार क्रांतिकारी है और फाँसी का फंदा उसके सिर पर लटक रहा है। उसने कई अन्य तरीकों से उस लड़की से

यह कह दिया कि उन दोनों की शादी संभव नहीं है। यह अशफाक के आकर्षक व्यक्तित्व, मीठी जुबान और पूर्ण शिष्टाचार का ही परिणाम था कि लड़कियाँ उसे चाहने लगती थीं; पर वह अशफाक ही था, जिसने अपने चरित्र को सदैव ही ऊँचा रखा और उसने किसीका जीवन बरबाद नहीं किया।

अशफाक अपने जिस मित्र के साथ ठहरा हुआ था, उसके दिल में दगा पैदा हो गई। अशफाक की गिरफ्तारी के लिए सरकार ने भारी इनाम घोषित कर रखा था। पुरस्कार के लालच में उसके मुसलमान मित्र ने उसे गिरफ्तार करा दिया। न मजहब काम आया, न एक गाँव का होना काम आया और न सहपाठी होना भी। एक दगाबाज ने अपने मित्र को ही पुलिस के हाथों सौंप दिया।

गिरफ्तार करके अशफाक उल्ला खाँ को लखनऊ जेल में रखा गया। उस समय तक काकोरी कांड के उसके अन्य साथियों के भाग्य का फैसला हो चुका था और अपील आदि की प्रक्रिया चल रही थी। इसी समय भागलपुर से काकोरी कांड के एक अन्य अभियुक्त शचींद्रनाथ बख्शी को भी गिरफ्तार करके लखनऊ लाया गया। अशफाक जब डाल्टनगंज में रह रहा था तो शचींद्रनाथ बख्शी भी कभी हजारीबाग और कभी भागलपुर में रहकर अपना फरारी का जीवन व्यतीत कर रहे थे। दोनों को एक-दूसरे के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं था।

काकोरी कांड के पूरक के रूप में इन दोनों का मुकदमा चला। जब पहले दिन ये लोग अदालत में मिले, तो ऐसा व्यवहार किया जैसे एक-दूसरे को जानते ही नहीं। यद्यपि एक-दूसरे से लिपट जाने के लिए वे बेताब हो रहे थे, पर फिर भी अजनबियों जैसा व्यवहार कर रहे थे। पुलिस और जेल के अधिकारी भी उनके नकली व्यवहार को समझ रहे थे। दोनों एक-दूसरे के पास अदालत के बाहर खड़े हुए थे। जेल के अधिकारी ने चालाकी के साथ काम लिया। उसने शचींद्रनाथ बख्शी को नाम लेकर पुकारा। नाम सुनकर अशफाक बख्शीजी की तरफ मुखातिब हुए और बोले—

"अच्छा आप ही शचींद्रनाथ बख्शी हैं! मैंने आपकी बड़ी तारीफ सुन रखी है।"

शचींद्रनाथ बख्शी ने अशफाक के साथ सीधे बात न करके जेल के अधिकारी से उसका परिचय जानने के लिए पूछा—

"क्या आप मुझे इनका परिचय देंगे, जो मुझसे सवाल कर रहे हैं?"

जेल के अधिकारी ने कहा—

"ये प्रसिद्ध क्रांतिकारी अशफाक उल्ला खाँ हैं।"

इसपर बख्शी अशफाक से मुखातिब होकर बोल उठे—

''अच्छा, आप ही अशफाक उल्ला खाँ हैं! मैंने भी आपकी बहुत तारीफ सुन रखी है।''

यहाँ तक तो नाटक सफलतापूर्वक निभ गया; पर भावनाओं का इतना जोरदार विस्फोट हुआ कि वह अभिनय न जाने कहाँ उड़ गया और अगले ही क्षण दोनों एक-दूसरे के प्रगाढ़ आलिंगन में बँध गए। पुलिस और जेलवालों ने जब उन दोनों को इस प्रकार गले मिलते देखा तो उन सभी ने तालियाँ बजा दीं। जेल अधिकारी कह उठा—

''राम और भरत का यह मिलन देखने के लिए ही तो हम लोग तरस रहे थे।''

जब तक उनका पूरक मुकदमा चला, दोनों को एक साथ ही रखा गया। जी भरकर वे दोनों एक-दूसरे के साथ रहे।

आखिर उनके पूरक मुकदमे का फैसला भी सुना दिया गया। अशफाक उल्ला खाँ को फाँसी का दंड घोषित किया गया था और शचींद्रनाथ बख्शी को आजीवन कालापानी का। यह दंड सुनकर अशफाक उल्ला खाँ तो प्रसन्नता के मारे खिल उठे, पर शचींद्रनाथ बख्शी शोक समुद्र में डूब गए। निराश होकर उन्होंने जज की ओर मुखातिब होकर कहा—

''एक ही जुर्म के लिए आपने दो प्रकार की सजाएँ देकर हम लोगों को अलग-अलग क्यों कर दिया?''

फैसला सुनाने के पश्चात् उन दोनों को पृथक्-पृथक् जेलों में रखा गया। फाँसी की सजा पाकर अशफाक उल्ला खाँ अपने अन्य साथियों की पंक्ति में पहुँच गए, जिन्हें फाँसी के दंड घोषित किए गए थे। वे थे—रामप्रसाद बिस्मिल, ठाकुर रोशनसिंह और राजेंद्रनाथ लाहिड़ी।

फाँसी की सजा पाए हुए क्रांतिवीरों के पक्ष में जनता ने आंदोलन खड़ा किया। क्रांतिकारियों ने भी फैसले के विरुद्ध अपील की। अशफाक उल्ला खाँ से भी अपील पर हस्ताक्षर करने के लिए कहा गया। अशफाक का उत्तर था—

''मैं परवरदिगार खुदाबंद के अलावा और किसीसे माफी नहीं माँग सकता।''

आखिर रामप्रसाद बिस्मिल के बहुत आग्रह पर अशफाक ने अपील पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए। अपील का कोई सुपरिणाम नहीं निकला। अपील खारिज की जाकर अशफाक उल्ला खाँ को फैजाबाद जेल भेज दिया गया।

अशफाक को तोड़ने की पुलिस के अफसरों ने भी जी-तोड़ कोशिश की थी, पर अशफाक ने किसी एक की न सुनी। अशफाक से पुलिस सुपरिंटेंडेंट ऐनुद्दीन बार-बार कहता—''तुम इन हिंदुओं के बहकावे में क्यों आ गए? ये लोग

तो अंग्रेजों को हटाकर अपना हिंदू राज कायम करना चाहते हैं।''

एक दिन तंग आकर अशफाक ने कह ही दिया—

''जनाब! अंग्रेजी राज से हिंदू राज कहीं बेहतर होगा।''

पुलिस अधीक्षक महोदय अपना-सा मुँह लेकर लौट गए। उन्होंने फिर कभी अशफाक को फुसलाने की कोशिश नहीं की।

फैजाबाद जेल के अंदर अशफाक फाँसी के दिन का इंतजार कर रहे थे। एक दिन १७ दिसंबर, १९२७ को जेल के अधिकारी कृपाशंकर हजेला के साथ उनके दोनों बड़े भाई रियासत उल्ला खाँ और शहंशाह खाँ मुलाकात के लिए पहुँचे। वे अपने साथ अपने बच्चों अर्थात् अशफाक के भतीजों को भी साथ ले गए थे। अशफाक को देखकर दोनों भाइयों की आँखों में आँसू आ गए। उनके भतीजे तो जोर-जोर से रोने लगे। उन्हें इस प्रकार रोते देखकर शिकायत-भरे लहजे में अशफाक ने हजेला साहब से कहा—

''हजेला साहब! आप इन लोगों को साथ क्यों लाए? ये रोने का मौका है कि खुश होने का! आप इन्हें बताइए कि हिंदुओं में खुदीराम बोस व कन्हाईलाल दत्त और दीगर सैकड़ों फाँसी के तख्तों पर चढ़कर यह सबूत दे चुके हैं कि वे भारत माता के बेटे थे। भाई, एक मुसलमान को भी तो फाँसी पर चढ़कर एक सबूत देने दो कि मुसलमान भी भारत माता के बेटे हैं। मैं मुसलमानों में पहला खुशनसीब हूँ, जिसे सबूत देने का मौका मिल रहा है।''

अपनी कोठरी के सामने कुछ अन्य कोठरियों की ओर उँगली का संकेत करते हुए अशफाक ने फिर कहना प्रारंभ किया—

''उन कोठरियों की तरफ देखिए! उन तीन कोठरियों में तीन सगे भाई यानी एक माँ की कोख से पैदा हुए, एक बाप के तीन बेटे बंद होकर फाँसी का इंतजार कर रहे हैं। सिर्फ डेढ़ सेर राब के ऊपर झगड़ा कर बैठने और दो आदमियों के कत्ल के अपराध में उन तीनों भाइयों को मौत की सजा मिलेगी। जब फकत डेढ़ सेर राब की खातिर वे फाँसी पर चढ़ सकते हैं, तो मेरे ऊपर तो बरतानिया हुकूमत के खिलाफ जंग छेड़ने और उनसे हिंदुस्तान का साम्राज्य छीन लेने का मुकदमा चला है। क्या यह मुकदमा जान की बाजी लगाने लायक नहीं था? फिर रोने-धोने की क्या बात है? इन्हें तो खुश होना चाहिए कि इनका भाई या इनका चाचा अपने मुल्क के लिए अपनी जान की बाजी लगाकर फाँसी पर चढ़ रहा है।''

इसके बाद कागज के दो मुड़े हुए परचे अपने भाई रियासत उल्ला खाँ की ओर बढ़ाते हुए अशफाक ने कहा—

''इनमें से एक तार है, जो मैंने गणेशशंकर विद्यार्थीजी के नाम लिखा है।

जेल से बाहर जाते ही यह तार आप उन्हें करना न भूलें। यह दूसरा परचा उन्हींके नाम लिखा गया खत है। यह भी आप जल्दी-से-जल्दी उनके पास पहुँचा दीजिए।''

तार के अंदर अशफाक ने गणेशशंकर विद्यार्थी को लिखा था—

'१९ दिसंबर को दिन के दो बजे लखनऊ स्टेशन पर मुझसे मुलाकात करें। उम्मीद है, आप मेरी इल्तिजा कुबूल फरमाएँगे।'

१९ दिसंबर, १९२७ की सुबह आ पहुँची। अशफाक ने अपने लिए खासतौर से मँगवाए गए नए कपड़े पहने। उन कपड़ों पर उसने इत्र छिड़का और 'कुरानशरीफ' का बस्ता कंधे पर टाँगकर कलमा पढ़ते हुए खुशी-खुशी फाँसी के तख्ते की तरफ चल दिया। तख्ते पर चढ़ने के पहले अशफाक ने उसका चुंबन किया और फिर लटकती हुई रस्सी की ओर देखकर बोला—''मेरी महबूबा, मुझे मालूम था कि निकाह के लिए तू मेरा इंतजार कर रही थी। ले, मैं आ गया और हम दोनों अब इस तरह मिलेंगे कि कोई हमें जुदा नहीं कर सकेगा।''

अशफाक के गले में फाँसी का फंदा डाला गया। खुदा का नाम लेते हुए वह क्रांतिवीर खुशी-खुशी फंदे पर झूल गया और सिद्ध कर गया—मुसलमान भी तो भारत माता की संतान हैं।

फैजाबाद की जेल में अशफाक उल्ला खाँ का वह शेर गूँजता रहा, जो मरने के कुछ समय पहले उसने पढ़ा था—

'तंग आकर हम भी उनके जुलम के बेदाद से,
चल दिए सूए अदम जिंदाने फैजाबाद से।

□

## ★ अशर्फी

बिहार के मधुबनी जिले के अंतर्गत 'गौहर' ग्राम में जब ७ जुलाई, १९३५ की सुबह हुई, तो लोगों का ध्यान एक मकान की तरफ गया, जिसका दरवाजा खुला पड़ा था, लेकिन उस कमरे में कोई दिखाई नहीं दे रहा था। आसपास के लोगों को मालूम था कि उस कमरे में अशर्फी नाम का एक विद्यार्थी रह रहा था, जो हाई स्कूल की परीक्षा की तैयारी कर रहा था। कुछ और विद्यार्थी भी उसके पास आते-जाते रहते थे।

काफी दिन चढ़ने पर भी जब अशर्फी के कमरे में कोई हलचल दिखाई नहीं दी, तो लोगों ने कमरे के अंदर झाँककर देखा। उन लोगों को एक हृदयविदारक

दृश्य देखने को मिला। अशर्फी का निर्जीव शरीर कमरे के अंदर पड़ा हुआ था। उसके कपड़े खून से रँगे हुए थे। कमरे के अंदर भी खून फैला हुआ था। लोगों ने इस घटना की सूचना पुलिस को दे दी।

पुलिस इस परिणाम पर पहुँची कि अशर्फी की मृत्यु बम फटने से हुई है। उसके कमरे में बम बनाने का सामान भी पाया गया। पुलिस ने यह निष्कर्ष निकाला कि अशर्फी का संबंध क्रांतिकारियों से था और वह बम तैयार करने के प्रयोग कर रहा था। अनुभवहीन होने के कारण ही उसके हाथ में बम विस्फोट हो गया और उसे अपने प्राणों की बलि देनी पड़ी।

कमरे की तलाशी लेने पर पुलिस को दो पुस्तकें मिलीं, जिनके शीर्षक थे—'पंजाब का हत्याकांड' और 'अंग्रेजों के खूनी कारनामे'।

इसी प्रकार का साहित्य पढ़कर अशर्फी के मन में बदले की भावना उत्पन्न हुई और वह क्रांति के मार्ग पर अकेला चल पड़ा।

□

## ★ अश्विनीकुमार गुहा

क्रांतिकारी अश्विनीकुमार गुहा को हिजली की कैंप जेल में रखा गया। हिजली की जेल क्रांतिकारियों को यातनाएँ देने के लिए बदनाम थी। जो भावुक किस्म के लोग होते थे, उनके मन पर उन यातनाओं का बुरा प्रभाव पड़ता था। अश्विनीकुमार गुहा में पागलपन के चिह्न पाए जाने लगे।

जब अश्विनीकुमार गुहा का पागलपन अधिक बढ़ गया तो उसे राँची के पागलखाने में भेज दिया गया। वहाँ भी उसपर पुलिस का पहरा रहता था। उस पागलपन में भी अश्विनी को यह ध्यान रहा कि बंदी जीवन से मुक्ति पाई जा सकती है। एक रात उसने अपना कुरता फाड़कर रस्सी तैयार की और पागलखाने की कोठरी के अंदर वह गले में फंदा डालकर झूल गया। पुलिस का पहरा उसे दूसरी दुनिया में जाने से नहीं रोक सका।

□

# ★ अश्विनी गुह ★ आशुतोष ★ करुणा राय ★ कुंजबिहारी बोस ★ कृष्णपद बनर्जी ★ गोविंदपद दत्त ★ तारकेश्वर सेन ★ तारापद गुप्त ★ नरेश सोम ★ मनोहर मुखर्जी ★ रमेश चुकी ★ शचींद्रनाथ घोष ★ शरदचंद्र दत्त ★ संतोष कुमार मित्र ★ सत्येन चौधरी ★ सविताशेखर रायचौधरी ★ सुधीर सेन ★ सुबोध चौधरी ★ सुरेश दासगुप्त ★ हेमंत तरफदार
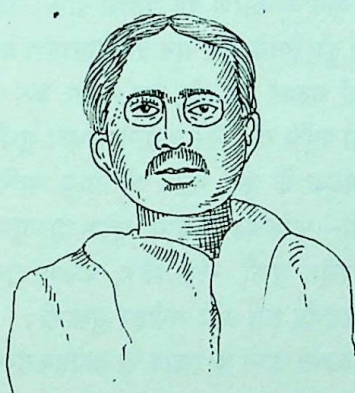
संतोष कुमार मित्र

बंगाल के क्रांतिकारियों की गिरफ्तारियाँ सरकार ने बड़े पैमाने पर की थीं और उन्हें बिना मुकदमा चलाए कई जेलों में बंद कर दिया गया। इसी प्रकार की एक जेल हिजली में बनाई गई थी, जिसमें लगभग आठ सौ बंदियों को रखा गया था।

एक दिन एक पहरेदार और एक राज़बंदी में कहा-सुनी हो गई। 'बातहिं बात करष बढ़ि आई, जुगल अतुल बल पुनि तरुनाई' की बात चरितार्थ हो गई। चुनौतियों का आदान-प्रदान हुआ और कहा-सुनी की परिणति हुई—'देख लेंगे' और 'देख लेना' की उक्तियों के साथ।

१६ सितंबर, १९३१ की रात के लगभग दस बजे जेल में खतरे की घंटी बजी और लगभग पचहत्तर पुलिसवाले लाठियों और बंदूकों से लैस होकर बंदियों के बैरकों की तरफ झपटते दिखाई दिए। बिना कोई चेतावनी दिए पुलिसवालों ने क्रांतिकारियों पर अंधाधुंध लाठियाँ बरसाना प्रारंभ कर दिया। निहत्थे बंदियों ने

लाठियों का प्रतिरोध किया। उनकी इस हरकत से अप्रसन्न होकर पुलिसवालों ने गोली चलाना प्रारंभ कर दिया। जो लोग भोजनकक्ष में भोजन कर रहे थे, उनपर भी गोलियाँ चलाई गईं। किसीने गोलियों से बचने के लिए भोजनकक्ष की रोशनी बुझा दी। पुलिसवाले अँधेरे में भी गोलियाँ चलाते रहे। इस गोलीवर्षा में कृष्णपद बनर्जी घायल हो गया। तारकेश्वर सेन भोजनकक्ष से बाहर था। वह बरामदे में यह देखने के लिए पहुँचा कि किधर क्या हो रहा है। उजाले में होने के कारण एक पुलिसवाले ने तारकेश्वर सेन को देख लिया और उसपर गोली चला दी। गोली तारकेश्वर के मस्तक पर लगी और वह गिर पड़ा। गिरते ही उसके प्राण-पखेरू उड़ गए। संतोष कुमार मित्र अपने कमरे के दरवाजे के पास खड़ा था। उसके पेट में दो गोलियाँ लगीं और उसका प्राणांत हो गया। उसी कमरे में शचींद्रनाथ घोष था। वह बाहर निकला तो एक गोली उसकी कमर के पास लगी और दूसरी टखने में। पास में ही एक अन्य क्रांतिकारी गोविंदपद दत्त था। उसके हाथ में गोली लगी और तीन स्थानों से उसकी हड्डियाँ टूट गईं।

कुछ सिपाही अन्य कमरों की तरफ दौड़ पड़े और एक सिपाही ने सविताशेखर रायचौधरी पर संगीन से आक्रमण कर दिया। सविताशेखर ने प्रतिरोध करके स्वयं को बचा तो लिया, लेकिन शरीर से रक्त बह जाने के कारण वह बेहोश होकर पड़ा रहा। एक क्रांतिकारी गोलियाँ लगने से घायल हुए तारकेश्वर सेन की देखभाल कर रहा था। वह सुधीर सेन था। उसपर गोलियाँ चलाई गईं और वह गंभीर रूप से घायल हो गया। पुलिसवाले उन लोगों के पास पहुँच गए और उन्होंने घायल सुधीर सेन और मृत पड़े हुए तारकेश्वर सेन पर बंदूक के कुंदे मारे। जो अन्य व्यक्ति लाठियों और गोलियों से घायल हुए, उनमें थे—कुंजबिहारी बोस, सुरेश दासगुप्त, तारापद गुप्त, सत्येन चौधरी, अश्विनी गुह, रमेश चुकी, नरेश सोम, करुणा राय, सुबोध चौधरी, हेमंत तरफदार, आशुतोष, शरदचंद्र दत्त और मनोहर मुखर्जी।

ब्रिटिश सरकार ने इस घटना पर खेद व्यक्त करने के स्थान पर क्रांतिकारियों पर ही दोषारोपण कर दिया। उसने वक्तव्य प्रकाशित कराया कि बंदियों के एक दल ने जब संतरियों पर आक्रमण कर दिया तो संतरियों को आत्मरक्षा में गोलियाँ चलानी पड़ीं।

इस घटना की जाँच के लिए बंगाल कांग्रेस की ओर से सुभाषचंद्र बोस और श्री जे.एम. सेनगुप्त हिजली कारागार पहुँचे; लेकिन उन्हें बंदियों से मिलने नहीं दिया गया। इसपर सुभाषचंद्र बोस ने अपना वक्तव्य समाचार-पत्रों में इस प्रकार प्रकाशित कराया—'यद्यपि हम लोगों को हिजली कैंप में नहीं जाने दिया गया, तथापि खड़गपुर के अस्पताल में पड़े घायलों और उनकी सेवा करनेवालों से

बातें करके मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि समाचार-पत्रों में इस घटना का जो वर्णन छपा है, वह एकतरफा और अपूर्ण है।'

हिजली कैंप की घटना को लेकर सारे बंगाल में स्थान-स्थान पर हड़तालें हुईं और प्रदर्शन हुए। घटना की जाँच कराने के लिए बंदियों को सामूहिक अनशन का सहारा लेना पड़ा। सरकार ने विवश होकर जाँच कमेटी बिठाई; लेकिन गोलमाल करके मामले को खत्म कर दिया।

जो क्रांतिकारी बाहर थे, उन्होंने संकल्प किया कि इस घटना का उत्तर हम लोग देंगे।

□

## ★ आधार मंडल

परिलाहाट नामक स्थान पर पुलिस को यह सूचना मिली कि आंदोलनकारियों ने पुलिस के कुछ लोगों को पकड़कर कहीं बंद कर रखा है। उनकी खोज में थानेदार काफी आदमियों को साथ लेकर चला। पुलिस दल ने दो राजवंशियों को गिरफ्तार करके उनसे यह जानना चाहा कि पुलिस के आदमियों को कहाँ बंद किया गया है। उन राजवंशियों की गिरफ्तारी का समाचार फैल गया और धनुष-बाण से सज्जित संथाल लोगों ने पुलिस दल को घेर लिया। पुलिसवालों को उन राजवंशियों को छोड़ने के लिए विवश होना पड़ा। वहाँ से पुलिस दल ने पलायन किया। लेकिन काफी दूर पहुँचकर उन्होंने गोलियाँ चलाईं। पुलिस की गोली से सत्तर वर्षीय आधार मंडल तथा दो अन्य व्यक्ति मारे गए।

□

## ★ आनंद गुप्त ★ गणेश घोष ★ जीवन घोषाल ★ लोकनाथ बल

जिस समय क्रांतिकारी सूर्यसेन और उसके साथियों का प्रमुख दल २२ अप्रैल, १९३० को जलालाबाद की पहाड़ी पर घिरा हुआ विशाल ब्रिटिश फौज के साथ आमने-सामने का युद्ध कर रहा था, ठीक उसी दिन और उसी समय उनके साथियों का एक छोटा-सा दल फैनी रेलवे स्टेशन पर एक विशाल पुलिस दल से घिरा हुआ उससे युद्ध करने में संलग्न था। आश्चर्य की बात तो यह कि इन दोनों दलों को एक-दूसरे के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं था।

अपने घायल साथी हिमांशु को अपने एक मित्र के संरक्षण में देकर गणेश

गणेश घोष

घोष और अनंतसिंह चटगाँव में ही रहकर सूर्यसेन के प्रमुख दल से संपर्क स्थापित करने का प्रयत्न करते रहे; पर इस कार्य में उन्हें सफलता नहीं मिली। जब उन्होंने देखा कि चटगाँव उनके लिए सुरक्षित स्थान नहीं रह गया है, तो उन्होंने उसे छोड़ने का निश्चय कर डाला। इस समय तक कलकत्ता के लिए रेल यातायात पुनः प्रारंभ हो गया था। उन्होंने कलकत्ता पहुँचने का ही निश्चय किया। क्रांतिकारी दूरदर्शिता के अनुसार, रेल में चटगाँव से सवार न होकर वे निकट के एक छोटे स्टेशन से सवार हुए और उन्होंने कलकत्ता का टिकट न लेकर फैनी स्टेशन का टिकट लिया। इन क्रांतिकारियों में गणेश घोष, अनंतसिंह, जीवन घोषाल और आनंद गुप्त थे। जिस स्टेशन से वे रेल में सवार हुए, उसके स्टेशन मास्टर को उनपर कुछ शक हुआ और उसने फैनी के स्टेशन मास्टर को तार द्वारा सूचना दे दी।

चार क्रांतिकारियों का यह दल जब रेल से फ़ैनी स्टेशन पहुँचा तो पुलिस का एक बहुत बड़ा दल वहाँ उनके स्वागत के लिए तैयार था। बताए हुए हुलिए के अनुसार पुलिस को उन्हें पहचानने में देर नहीं लगी। स्टेशन पर भीड़भाड़ नहीं थी। पुलिस ने उन्हें एक तरफ जाने का अवसर दिया और जब वे ऐसे स्थान पर पहुँच गए, जो एक प्रकार से सुनसान जगह थी, तो पुलिस ने उन्हें खड़ा रहने और हाथ ऊँचे करने का आदेश दिया। भला क्रांतिकारी लोग पुलिस के आदेश का पालन क्यों करने चले! उन्होंने अपने रिवॉल्वरों से पुलिस पर गोलियों की वर्षा प्रारंभ कर दी।

जब-जब पुलिस और क्रांतिकारियों के बीच मुठभेड़ हुई है, पुलिस के लोगों ने ही सदैव अपनी जान बचाने की कोशिश की है और क्रांतिकारियों ने सदैव ही अपने प्राणों की चिंता न करके युद्ध किया है। फैनी युद्ध में भी यही हुआ। क्रांतिकारियों ने बढ़-बढ़कर पुलिस दल पर हमले किए और उसे पीछे खदेड़ दिया। जब पुलिस और क्रांतिकारियों के बीच फासला अधिक हो गया, तो क्रांतिकारी लोग पुलिस को चकमा देकर भाग निकले। पहले तो वे चारों अलग-अलग दिशाओं में भागे; पर शीघ्र ही गणेश घोष अपने दो साथियों से जा मिले और अनंतसिंह ने अपना रास्ता अलग बनाया। अंततोगत्वा चारों कलकत्ता

में फिर मिल गए।

अधिक सुरक्षा की दृष्टि से चारों क्रांतिकारी कलकत्ता छोड़कर चंद्रनगर (फ्रांसीसी अधिकार-क्षेत्र) पहुँच गए। उनमें से अनंतसिंह ने पार्टी के निर्देश पर ही अपने विशेष उद्‌देश्य की पूर्ति के लिए कलकत्ता पहुँचकर पुलिस के सामने आत्मसमर्पण कर दिया। अनंतसिंह के आत्मसमर्पण के पश्चात् लोकनाथ बल चंद्रनगर में अपने दल से जा मिला।

लोकनाथ बल का व्यक्तित्व बहुत भव्य और प्रभावशाली था। उसका शरीर ऊँचा और सुगठित तथा रंग बहुत गोरा था। चटगाँव में फौज का शस्त्रागार लूटने के लिए वह फौजी ड्रेस में शस्त्रागार पहुँचा था और शस्त्रागार प्रहरी ने उसे अपने विभाग का अंग्रेज अफसर समझकर सैल्यूट मारा था। फिर तो क्रांतिकारी लोग पूरी स्थिति पर हावी हो गए थे। २२ अप्रैल को जलालाबाद पहाड़ी पर ब्रिटिश फौज के दो हजार कुशल और अनुभवी सैनिकों के साथ जिन पचास क्रांतिकारियों ने आमने-सामने का युद्ध किया था, उनका नेतृत्व लोकनाथ बल ने ही किया था। लोकनाथ का दल रात के अँधेरे का लाभ उठाकर बच निकला था। उस घटना के पश्चात् लोकनाथ बल चंद्रनगर में अपने चार क्रांतिकारी साथियों से जा मिला।

कलकत्ता पुलिस के वरिष्ठ अधिकारी सर चार्ल्स टेगार्ट ने जब यह सुना कि कुछ क्रांतिकारियों ने चंद्रनगर में प्रश्रय लिया है, तो वह उन्हें अपने जाल में फाँसने के लिए वहाँ जा पहुँचा। बहुत गुप्त रूप से उसने चंद्रनगर पुलिस के महानिरीक्षक से अपने अभियान की अनुमति ले ली थी। सर चार्ल्स टेगार्ट क्रांतिकारियों का दमन करने के लिए कुख्यात था। क्रांतिकारी लोग भी कई बार उसपर अपना दाँव आजमा चुके थे; लेकिन टेगार्ट बचता ही रहा था।

जैसे ही ३१ अगस्त, १९३० की तारीख ने रात के बारह बजे अपना स्थान १ सितंबर को दिया, सर चार्ल्स टेगार्ट अपने विशाल पुलिस दल के साथ चंद्रनगर जा पहुँचा। उसके दल में गोरे सैनिकों के अतिरिक्त एक भी भारतीय नहीं था। उसके दल के किसी भी व्यक्ति को यह मालूम नहीं था कि वे लोग कहाँ जा रहे हैं और उन्हें क्या करना है। संपूर्ण योजना एकदम गोपनीय रखी गई थी।

चंद्रनगर के जिस मकान में क्रांतिकारी ठहरे हुए थे, वह एकांत में था और उसके चारों ओर तीन फीट ऊँची कच्ची दीवार का अहाता था। अहाते के अंदर पानी से भरा हुआ एक कुंड था और अहाते के बाहर भी एक तालाब था, जिसके किनारे पर घनी झाड़ियाँ थीं। मकान दुमंजिला था और उसकी छत पर एक कोठरी थी, जिसमें बारी-बारी से क्रांतिकारी लोग जागकर पहरा देते थे।

घनी अँधेरी रात में टेगार्ट ने दल-बल सहित क्रांतिकारियों के प्रश्रय स्थल को घेर लिया। उसके दल के कुछ लोग चुपचाप दीवार फाँदकर अहाते के अंदर जा पहुँचे और कुछ बाहर ही रहे। स्वयं टेगार्ट फ्रांसीसी पुलिस अफसर से मिलने के इरादे से थोड़ी दूर गया था कि उसे गोलियाँ चलने की आवाज सुनाई दी। हुआ यह था कि उस रात ऊपर की कोठरी में लोकनाथ बल पहरा दे रहा था। उसे अँधेरे में कुछ परछाइयाँ दीवार फाँदती हुई दिखाई दीं। उसने तुरंत नीचे उतरकर, साथियों को जगाकर उन्हें खतरे की सूचना दी। बस फिर क्या था, क्रांतिकारियों ने गोलियों की बरसात प्रारंभ कर दी। भागकर टेगार्ट घटनास्थल पर पहुँचा। गोलियाँ चलाते हुए क्रांतिकारी लोग पिछले दरवाजे से बाहर निकले और अहाते की दीवार फाँदकर बाहर जा पहुँचे। जैसे ही वे दीवार के नीचे कूदे, उनपर टॉर्च की तेज रोशनी पड़ी और गोलियों की एक बौछार भी ऊपर बरस पड़ी। एक गोली जीवन घोषाल को लगी और वह बाहर तालाब में कूद पड़ा। शेष तीन क्रांतिकारी गिरफ्तार कर लिये गए। जो गिरफ्तार हुए, वे थे—गणेश घोष, लोकनाथ बल और आनंद गुप्त। तलाशी के पश्चात् जीवन घोषाल का शव तालाब से बरामद कर लिया गया।

'चटगाँव शस्त्रागार कांड' के अंतर्गत चंद्रनगर का यह कांड 'मिडनाइट ड्रामा' के नाम से मशहूर हुआ।

मुकदमा चलने पर गणेश घोष, लोकनाथ बल और आनंद गुप्त को आजीवन कारावास के दंड सुनाए गए।

□

## ★ आशित भट्टाचार्य

क्रांतिकारियों ने योजना बना डाली कि इटाखोला डाकखाने से जो डाक के थैले जाते हैं, उन्हें लूट लिया जाए। प्रतिदिन के निरीक्षण से उन्हें यह पता चल गया था कि डाक के थैलों में बीमा किए हुए लिफाफे भी जाते हैं, जिनमें काफी पैसा होता है। उन्हें यह भी मालूम था कि केवल एक निहत्था चपरासी जंगल के रास्ते से रेलवे स्टेशन तक डाक के थैले ले जाता है। योजना बना ली गई।

डाक का चपरासी डाक का एक बड़ा-सा थैला अपने कंधे पर लादकर चल दिया। वह थोड़ी दूर ही गया था कि सामने से एक नौजवान हाथ में एक बोतल लिये हुए दिखाई दिया। कुछ दूर आगे चलने पर एक नौजवान पीछे से आया और उसने डाक चपरासी को जोर से धक्का देकर उसे गिरा दिया। डाकवाला खड़ा हुआ

आशित भट्टाचार्य

तो उसके सिर पर लोहे की एक छड़ से कुछ प्रहार किए गए, जिससे वह मूर्च्छित हो गया। इसी बीच चार नौजवान झाड़ियों में से निकले और वे तथा आक्रामक—सभी मिलकर डाक का थैला लेकर चल दिए।

एक खेत में काम कर रहे कुछ किसानों ने इस लूटमार को देखा तो उन्होंने शोर मचाया और कुछ अन्य गाँववाले भी एकत्र हो गए। उन सबने मिलकर लुटेरों का पीछा किया। वे लोग उनके बिलकुल ही निकट पहुँच गए। एक क्रांतिकारी ने पकड़े जाने का खतरा देखकर गोली चला दी। एक पीछा करनेवाला मारा गया। वह रेलवे का कर्मचारी था। इतना होने पर भी गाँववालों ने उनका पीछा नहीं छोड़ा और अंततोगत्वा उन सभी को दबोच लिया। उन्हें पुलिस के हवाले कर दिया। गिरफ्तार क्रांतिकारियों में से एक सिलहट का था और शेष टिपरा के थे।

२२ जुलाई, १९३३ को उनपर मुकदमा चलाया गया। जिसने गोली चलाकर एक व्यक्ति की जान ली थी, उसका नाम आशित भट्टाचार्य था। उसे फाँसी का दंड सुनाया गया। उसके साथियों में से तीन को आजीवन कारावास के दंड दिए गए तथा शेष दो को कम समय के कारावास के दंड दिए गए। अपील भी खारिज कर दी गई।

आशित भट्टाचार्य की उम्र केवल उन्नीस वर्ष थी। उसे २ जुलाई, १९३४ को सिलहट जेल में फाँसी दे दी गई।

□

## ★ इंजीनियर पंड्या ★ परशुराम गर्गे

महाराष्ट्र और कर्नाटक में सन् १९४२ के आंदोलन ने पूरा क्रांतिकारी रूप धारण कर लिया। पूना, अहमदनगर और सतारा में भारी तोड़-फोड़ हुई। स्टेशन जलाए गए, पुलिस स्टेशनों पर हमले हुए, हथियार छीने गए और कई पुलिसवालों को मौत के घाट उतारा गया। पुलिस ने भी सभी स्थानों पर गोलियाँ चलाईं और कई आंदोलनकारी मारे गए।

'बड़ज' नामक स्थान पर जुलूस का नेतृत्व परशुराम गर्गे ने किया। वे झंडा फहराने के लिए कचहरी की तरफ गए। परशुराम गर्गे ने पुलिसवालों से कहा कि हम लोग कचहरी पर शांतिपूर्वक तिरंगा झंडा लगाकर, बिना कोई तोड़-फोड़ किए वापस चले जाएँगे। कचहरी की रक्षा के लिए नियुक्त पुलिस ने ऐसा करने की अनुमति नहीं दी। आंदोलनकारियों ने बलपूर्वक झंडा लगाना चाहा। पुलिस ने गोली चलाई और परशुराम गर्गे शहीद हो गए। इस्लामपुर नामक स्थान पर पुलिस ने आंदोलनकारी समझकर इंजीनियर पंड्या साहब को गोली से मार दिया।

□

## ★ श्रीमती इंदुमती सिंह

चटगाँव के प्रसिद्ध कार्यकर्ता गोपाललाल सिंह की पुत्री श्रीमती इंदुमती सिंह से अंग्रेज सरकार को यह भय था कि वह स्वयं तो क्रांतिकारिणी थी ही, नई लड़कियों को क्रांति की ओर उन्मुख करने में सिद्धहस्त थी। अत: श्रीमती इंदुमती सिंह को १४ दिसंबर, १९३१ को गिरफ्तार कर लिया गया। पूरे छह वर्ष जेल में रहने के पश्चात् श्रीमती इंदुमती सिंह मुक्त हुईं।

□

# ★ इंद्रगिरि गुसाँईं

इंद्रगिरी ने चौथी कक्षा उत्तीर्ण करके ही पढ़ना छोड़ दिया। पढ़ने में उसका मन नहीं लगता था। अपने विद्यालय में उसकी गिनती शरारती लड़कों में होती थी। जब उसने पढ़ना छोड़ दिया तो उसके पिता श्री तुलसीगिरि को विशेष चिंता नहीं हुई; क्योंकि वे एक मंदिर के पुजारी थे और कथा-भागवत से भी उनको अच्छी आमदनी हो जाती थी। उन्होंने अपने बेटे इंद्रगिरि को भी अपना काम सिखाना प्रारंभ कर दिया।

इंद्रगिरि का मन पंडिताई के काम में भी नहीं लगा। जब सन् १९४२ का आंदोलन छिड़ा, तो वह उसमें कूद पड़ा और विध्वंसक कामों में उसने बढ़-चढ़कर भाग लिया। गिरफ्तार करके इंद्रगिरि को नौ महीने के कठोर कारावास का दंड दिया गया। होशंगाबाद जेल में २९ मार्च, १९४३ को उसकी मृत्यु हो गई।

इंद्रगिरि का जन्म मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले के रामपुर नामक ग्राम में हुआ था।

□

# ★ उजागरसिंह ★ प्रतापसिंह

अमृतसर के एक कॉलेज के विद्यार्थियों को यह शक था कि उनके प्राचार्य महोदय पुलिस से मिले हुए हैं और वे क्रांतिकारी स्वभाव के छात्रों को गिरफ्तार कराते रहते हैं। आएदिन ही पुलिस उस कॉलेज के किसी-न-किसी विद्यार्थी को गिरफ्तार करके लै जाती थी। इस संदेह की पुष्टि होने पर निश्चित किया गया कि प्राचार्य महोदय को दंडित किया जाए। प्रतापसिंह नाम के एक विद्यार्थी ने इस काम का बीड़ा उठा लिया।

रात्रि के समय कॉलेज में कोई उत्सव चल रहा था। अपनी जेब में बम छिपाए हुए प्रतापसिंह प्रिंसिपल साहब की कुरसी के पास तक पहुँच गया। उसका एक साथी उजागरसिंह बिजली बंद कर देने के लिए नियुक्त था। ज्यों ही बिजली बंद हुई, प्रतापसिंह ने अपनी जेब से बम निकाला, उसका पिन खींचा और उसे प्रिंसिपल साहब पर फेंकने के लिए तैयार हुआ। उसने बम फेंकने में कुछ विलंब कर दिया और परिणाम यह हुआ कि बम उसके हाथ में ही फट गया। बम का विस्फोट होने पर उजागरसिंह ने समझा कि बम प्रिंसिपल साहब पर फेंक दिया गया। विस्फोट के पश्चात् उसने बिजली चालू कर दी।

पंडाल प्रकाशित हो जाने पर लोगों ने देखा कि प्रतापसिंह के आसपास खून का तालाब जैसा बन गया है और वह अचेत अवस्था में पड़ा है। थोड़ी देर पश्चात् ही उसकी जान निकल गई। बिजली चालू होने पर उजागरसिंह को बिजली के मुख्य स्विच के पास देखा गया था।

पुलिस ने उजागरसिंह को गिरफ्तार करके उसपर हत्या के षड्यंत्र का मुकदमा चलाया।

एक गद्दार को दंड देने के प्रयत्न में प्रतापसिंह ने तो अपनी जान दे ही दी, उसके साथी उजागरसिंह को भी २९ जुलाई, १९३० को फाँसी पर झुला दिया गया। ☐

# ★ उदय किरार ★ केला किरार

पुलिस सरगर्मी से उस व्यक्ति की तलाश में थी, जिसने सरकारी रिकॉर्ड में आग लगा दी थी और जिसने विद्रोही युवकों का एक ऐसा संगठन खड़ा कर लिया था, जो ब्रिटिश शासन के लिए चुनौती बन गया था। उस युवक का नाम था उदय किरार। उदय एक ग्रामीण युवक था, जिसके घर पर कृषि कार्य होता था। उसका जन्म सन् १९०७ में मध्य प्रदेश के बैतूल जिले के 'नाहिया' नामक ग्राम में हुआ था। वह पढ़ा-लिखा और राष्ट्रीय चेतना से संपन्न व्यक्ति था।

काफी आँखमिचौनी खेलने के पश्चात् आखिर पुलिस ने एक दिन उदय किरार को उसके गाँव में ही घेर लिया। पुलिस दल गाँव में पहुँच गया और चौपाल पर उसने अपना डेरा डाल दिया। एक जासूस को भेजकर यह पता लगा लिया गया कि उदय अपने घर पर ही है।

वह सन् १९४२ का अगस्त का महीना था। उस दिन नागपंचमी थी। इस त्योहार को मनाने के लिए ही सब लोग घर पर एकत्र हुए थे। उदय के अतिरिक्त घर पर उसकी पत्नी फुलसीबाई, पिता केला और भाई सदाराम भी थे। वह दोपहर का समय था। अंदर के कमरे में भोजन की तैयारी हो चुकी थी। पुरुष वर्ग के सामने थालियाँ लगा दी गई थीं। इसी समय बाहर के बरामदे में कुछ लोगों के आने की आहट सुनाई दी। उदय की पत्नी फुलसीबाई ने झाँककर देखा तो उसने बरामदे में पुलिस को पाया। इसी बीच पुलिसवालों ने भद्दे शब्दों का प्रयोग करते हुए उदय को बाहर आने और पटेल की चौपाल पर चलने के लिए कहा। उस समय उदय भोजन प्रारंभ कर चुका था। वह भोजन करते-करते ही बाहर आया और पुलिसवालों से कहा कि भोजन समाप्त करके मैं आपके साथ चलने को तैयार हूँ। उसके प्रस्ताव का उत्तर पुलिस ने अपनी गोलियों से दिया। उदय के शरीर में दो गोलियाँ समा गईं और वह बरामदे में लुढ़क गया। स्थिति जानने के लिए उसका पिता केला किरार बाहर आया और अपने तड़पते हुए पुत्र के शरीर पर लेट गया। पुलिस ने उसके पिता को भी गोलियों से भून डाला।

पिता और पुत्र देश की आजादी के लिए एक साथ अपने बलिदान दे गए।

□

# ★ उदयचंद जैन
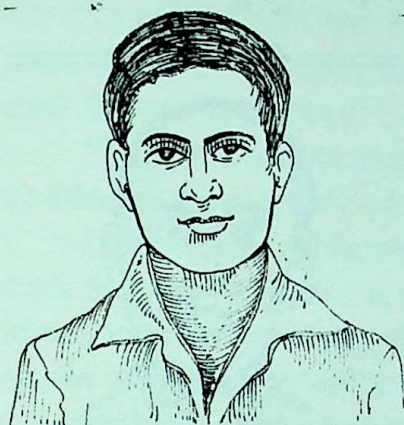
उदयचंद जैन

उदयचंद जैन बुलंद हौसलेवाला युवक था। जब वह हाथ में तिरंगा झंडा थामकर जुलूस के आगे चला तो आंदोलनकारियों में उत्साह तरंगायित होने लगा। उदयचंद बहुत तेजवंत युवक था और उस समय वह कक्षा दस में पढ़ रहा था; लेकिन अपने गुणों के कारण वह पूरे मंडला नगर में लोकप्रिय था।

उदयचंद के नेतृत्व में जब अगस्त क्रांति का जुलूस बाजार में पहुँचा तो पहले से ही तैनात पुलिस दल ने उसका रास्ता रोक दिया। थानेदार ने गर्जना की—

''अगर आप लोगों में से किसीने एक कदम भी आगे बढ़ाया, तो गोली मार दी जाएगी।''

थानेदार की यह गर्जना उदयचंद के लिए चुनौती थी; क्योंकि वही तो जुलूस का नेतृत्व कर रहा था। उसने भी गर्जना करते हुए, अपनी कमीज की बटनों को झटके के साथ तोड़ते हुए और अपनी खुली छाती दिखाते हुए कहा—

''क्रांतिकारी लोग आगे कदम बढ़ाकर पीछे हटना नहीं जानते। उदयचंद का सीना खुला हुआ है। तुम लोगों को जितनी गोलियाँ चलानी हैं, चला लो।''

उदयचंद का कथन समाप्त ही हुआ था कि सामने से दो गोलियाँ आकर उसके शरीर में समा गईं। वह गिरते ही बेहोश हो गया। बेहोशी की हालत में ही पुलिस ने उसे गिरफ्तार कर लिया। यह घटना १५ अगस्त, १९४२ की थी। अगले दिन १६ अगस्त को अस्पताल में उदयचंद ने शहादत प्राप्त कर ली।

उदयचंद का जन्म १० नवंबर, १९२२ में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री त्रिलोकचंद जैन और माता का नाम खिलौनाबाई था।

□

# ★ उपेंद्र भट्टाचार्य ★ कल्पना दत्त ★ तारकेश्वर दस्तीदार ★ सूर्यसेन

कल्पना दत्त

सूर्यसेन

क्रांतिकारी सूर्यसेन के नेतृत्व में उनके साथी क्रांतिकारियों का एक दल दिसंबर १९२८ में कलकत्ता में आयोजित भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के तैंतालीसवें अधिवेशन में सम्मिलित होने चटगाँव से कलकत्ता जा पहुँचा। गांधीजी के आह्वान पर अपनी क्रांतिकारी गतिविधियाँ बंद करके ये लोग कांग्रेस के सदस्य बन गए थे। कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन की नवीनता यह थी कि सैनिक गणवेश में सज्जित सात हजार स्वयंसेवकों के एक दल ने अपने जनरल ऑफीसर कमांडिंग सुभाषचंद्र बोस के संचालन में सैन्य प्रदर्शन किया और अध्यक्ष पं. मोतीलाल नेहरू को 'गार्ड ऑफ ऑनर' प्रदान किया। इस सैन्य दल की चुस्ती, कार्यदक्षता और अनुशासन-भावना देखते ही बनती थी। जब नगर के बाजारों से अध्यक्ष महोदय का जुलूस निकाला गया तो आकर्षण का प्रमुख केंद्र था कांग्रेस का सैन्य दल। कमांडर की वरदी में सज्जित श्रीयुत सुभाषचंद्र बोस ने एक अश्व पर आरूढ़ होकर सैन्य दल का संचालन किया और अटाटूट भीड़ इस दृश्य को देखने उमड़ पड़ी। शोभायात्रा समाप्त हो जाने के पश्चात् लोगों में सुभाष बाबू और उनके सैन्य दल की ही चर्चा थी। सूर्यसेन का अपना दल जब संध्या समय एकांत उपवन में बैठा तो चर्चा छिड़ गई—

"यार! सुभाष बाबू ने तो सचमुच ही कमाल कर दिखाया! जो लोग कांग्रेस

को ढीली धोती की संस्था कहते हैं, उनकी आँखें खुल गई होंगी और उन्हें स्पष्ट हो गया होगा कि ढीली धोतीवाले भी सैनिक बनने की दक्षता रखते हैं तथा अपना मेरुदंड सीधा करके चल सकते हैं।''

''उन लोगों की आँखें खुली हों या न खुली हों, पर हम लोगों की आँखें अवश्य खुल गई हैं और हम लोग यह अनुभव करने लगे हैं कि अपने दल का हमको सैन्यीकरण करना चाहिए।''

''हाँ, हमारे लिए अब यह आवश्यक हो गया है कि हम अपने कार्यकर्ताओं को सैनिक रूप में तैयार करें और पूर्ण सैनिक अनुशासन का पालन करें।''

''इसमें कोई संदेह नहीं कि यदि हम अपनी पार्टी को सैन्य संगठन का रूप दे सकें तो हम अपने कार्यकर्ताओं को कर्मठता, परिश्रमशीलता, कष्ट-सहिष्णुता, बलिदान-भावना तथा उत्साह आदि गुणों से विभूषित कर सकेंगे और प्रत्येक महान् उपलब्धि के लिए ये गुण अनिवार्य हैं।''

आपस में हुई इस चर्चा का परिणाम यह निकला कि चटगाँव के क्रांतिकारियों की संस्था 'साम्याश्रम' अब 'इंडियन रिपब्लिकन आर्मी' के रूप में परिणत हो गई। युवकों में इस सेना में प्रवेश की होड़ लग गई और देखते-ही-देखते सैनिकों की संख्या पाँच सौ तक पहुँच गई। सूर्यसेन इस 'इंडियन रिपब्लिकन आर्मी' के अध्यक्ष बनाए गए। आर्मी के आदर्श थे—संगठन, साहस और बलिदान।

क्रांतिक्षेत्र में उतरने के पहले वे एक लोकप्रिय अध्यापक थे। चटगाँव के एक स्कूल के अध्यापक होते हुए वे चटगाँव में रहते थे और नगर की सांस्कृतिक चेतना के भी केंद्र थे। नगर के सभी लोग उन्हें प्यार से 'मास्टर दा' कहकर पुकारते थे। कुछ दिन पश्चात् सूर्यसेन ने अपनी नौकरी छोड़ दी और क्रांतिकारी गतिविधियों का संचालन करने लगे।

'इंडियंन रिपब्लिकन आर्मी' की स्थापना के पश्चात् उसके लिए हथियार जुटाने का अभियान चल पड़ा। कई प्रकार से हथियारों की व्यवस्था की गई। सूर्यसेन की योजना के अनुसार, केवल सदस्य परिवारों से ही चालीस हजार रुपए एकत्र करके सैन्य कोष स्थापित कर लिया गया।

सैनिक तैयारियाँ पूरी हो जाने पर एक दिन चटगाँव की एक पहाड़ी सीताकुंड पर सूर्यसेन अपने साथियों में से निर्मल सेन, लोकनाथ बल, गणेश घोष, अनंतसिंह, नरेश रे एवं अंबिका चक्रवर्ती के साथ पहुँचे और वहाँ उन्होंने अपने साथियों को बताया कि उनकी योजना चटगाँव के सभी शस्त्रागारों को लूटने की है। इस योजना का सभी ने हार्दिक समर्थन किया और योजना को अंतिम रूप भी प्रदान कर दिया गया। जो कार्य उन्हें संपन्न करने थे, वे बीस सूत्रीय थे—

१. ए.एफ.आई. (ऑग्जिलियरी फोर्स ऑफ इंडिया) के शस्त्रागार को लूटना।
२. पुलिस के शस्त्रागार को लूटना।
३. यूरोपियन क्लब के सदस्यों को हताहत करके वहाँ लगनेवाले शोध संस्थान को नष्ट करना।
४. चटगाँव के निकटवर्ती रेलवे स्टेशन की पटरियाँ उखाड़ देना, जिससे कुमुक चटगाँव न पहुँच सके।
५. टेलीफोन एक्सचेंज के तार काटकर अन्य स्थानों से उसका संबंध विच्छेद करना।
६. तार व्यवस्था नष्ट करना।
७. डाक घर को अधिकार में लेना।
८. बंदरगाह की वायरलैस व्यवस्था भंग कर देना।
९. जेल तोड़कर कैदियों को मुक्त कर देना और राजनीतिक कैदियों को मुक्ति सेना में सम्मिलित करना।
१०. नगर की हथियारों की दुकान लूट लेना।
११. इंपीरियल बैंक और कोषालय लूटकर धन प्राप्त करना।
१२. नगर के उन मार्गों को नियंत्रण में लेना, जहाँ से कुमुक पहुँचाई जा सकती है।
१३. पुलिस लाइंस के कार्यालय पर अधिकार करके उसे मुक्ति सेना का कार्यालय बनाना।
१४. चटगाँव में स्वतंत्र सरकार की स्थापना करना।
१५. यूनियन जैक उतारकर उसके स्थान पर तिरंगा ध्वज फहराना।
१६. गुरिल्ला युद्ध के योग्य स्थलों की खोज करना।
१७. फ्रांस अधिकृत प्रदेश में आश्रय स्थलों की खोज करना।
१८. अंग्रेजभक्त अफसरों को दंडित करना।
१९. नागरिक क्षेत्रों में सुरक्षा की भावना उत्पन्न करके उन्हें अपने पक्ष में करना।
२०. खतरे की स्थिति में बाहर की क्रांतिकारी पार्टियों से सहायता प्राप्त करना।

सूर्यसेन ने शस्त्रागारों पर आक्रमण करने के लिए १८ अप्रैल, १९३० की तारीख तय की। उनके दो प्रतिनिधि दिल्ली पहुँचकर महान् क्रांतिकारी चंद्रशेखर आजाद से भी संपर्क स्थापित करके उनसे सामयिक सहायता का पूर्ण आश्वासन

प्राप्त कर आए। चंद्रशेखर आजाद ने अपनी पार्टी की ओर से सूर्यसेन की पार्टी को दो बढ़िया पिस्तौलें भेंट कीं।

१८ अप्रैल, १९३० को सूर्यसेन ने अपने साथी क्रांतिकारियों को निजाम पल्टन के अहाते में सैनिक गणवेश में एकत्रित किया। रात्रि के ठीक पौने दस बजे उन्होंने दल नायकों को आक्रमण का आदेश दे दिया।

एक टुकड़ी ने टेलीफोन कार्यालय पहुँचकर सारे तार काट डाले। दूसरी टुकड़ी ने तार घर पहुँचकर वहाँ की व्यवस्था भंग कर दी। रेल की पटरियाँ उखाड़नेवाला दल पहले से ही नियत स्थानों पर पहुँच गया था और ठीक पौने दस बजे उसने भी अपना काम प्रारंभ कर दिया। उन लोगों ने मालगाड़ी के डिब्बे पटरियों पर इस तरह गिरा दिए कि मार्ग अवरुद्ध हो गया।

उपेंद्र भट्टाचार्य के नेतृत्व में एक दल ने बंदरगाह पहुँचकर वायरलैस व्यवस्था भंग कर दी। वायरलैस व्यवस्था का प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए उपेंद्र भट्टाचार्य ने चार महीने पहले उस विभाग में नौकरी करके पूरी व्यवस्था को अच्छी तरह समझ लिया था। वह प्रशिक्षण उपेंद्र के बहुत काम आया।

गणेश घोष और अनंतसिंह के नेतृत्व में एक दल पुलिस शस्त्रागार जा पहुँचा। उनकी गाड़ी ठीक गार्ड रूम के पास तक पहुँच गई, जहाँ एक बंदूकधारी सिपाही घूम-फिरकर पहरा दे रहा था। उसने समझा कि हमारे विभाग के कोई बड़े अफसर निरीक्षण के लिए आए हैं। गणेश घोष और अनंतसिंह ने पुलिस के अफसरों की वरदी पहनी हुई थी। पहरेदार स्थिति को समझे, इसके पहले ही उसको गोली मार दी गई। कुछ क्रांतिकारी मालखाने में जा घुसे और अपने लिए उपयोगी सामान अपनी गाड़ी में लाद लिया तथा शेष में पेट्रोल छिड़ककर आग लगा दी। सूर्यसेन भी इसी स्थल पर मौजूद थे। उन्होंने यूनियन जैक को उतारकर भारत का तिरंगा ध्वज फहराया और संक्षिप्त भाषण दिया। पेट्रोल छिड़कते समय हिमांशु दत्त जल गया था। उसे लेकर गणेश घोष और अनंतसिंह नगर में चले गए।

जो दल फौज का शस्त्रागार लूटने गया था, उसका नेतृत्व भरे-पूरे बदन के लोकनाथ बल कर रहे थे। उनका रंग गोरा था। लोकनाथ बल मिलिट्री की वेशभूषा में हैलमेट लगाए हुए जब गाड़ी से उतरे तो शस्त्रागार के रक्षक ने उन्हें कोई बड़ा अफसर समझकर सैल्यूट मारा। उसको गोली मारकर ठंडा कर दिया गया। शस्त्रागार के पास ही अंग्रेज अफसरों का भोजनालय था। प्रतिरोध करने के लिए उधर से कुछ लोग आए तो गोलियाँ चलाकर उनको वापस कर दिया गया। गोली लगने से सारजेंट मेजर कैरल मारा गया।

फौज के शस्त्रागार पर बहुत बड़ा ताला लटक रहा था। क्रांतिकारियों ने

लोहे की जंजीर का एक सिरा ताले से बाँधा और दूसरा सिरा अपनी मोटर गाड़ी से। गाड़ी स्टार्ट करके झटके के साथ उसे बढ़ाया गया। ताला टूटकर जमीन पर आ गिरा। वहाँ के हथियार भी लूट लिये गए।

सफलतापूर्वक और बिना अपने पक्ष की जनहानि के क्रांतिकारियों ने चटगाँव के शस्त्रागार लूट लिये। आवागमन और संचार की व्यवस्थाएँ भंग हो जाने के कारण कहीं से सहायता नहीं पहुँच सकी और नगर का प्रशासन चार दिन तक क्रांतिकारियों के हाथों में रहा।

२२ अप्रैल को सारी व्यवस्थाएँ ठीक करके फौज के दो हजार जवानों ने पचास क्रांतिकारियों को जलालाबाद पहाड़ी पर घेर लिया। संध्या समय दोनों पक्षों में आमने-सामने का घमासान युद्ध हुआ, जिसमें ग्यारह क्रांतिकारी मारे गए। क्रांतिकारियों ने फौज के एक सौ साठ जवान मार गिराए।

जलालाबाद के युद्ध के बाद भी छुटपुट संघर्ष होते रहे। कुछ क्रांतिकारी गिरफ्तार भी कर लिये गए। उनमें से कुछ झड़पों में मारे भी गए।

सूर्यसेन पुलिस के हाथ नहीं लग सके। उस क्षेत्र में वे इतने अधिक लोकप्रिय थे कि शहरों और गाँवों में सब जगह लोग उन्हें प्रश्रय देने में संकोच नहीं करते थे। कभी बिसाती बनकर, कभी चूड़ी बेचनेवाला बनकर और कभी सँपेरा बनकर वे नगर में जाकर अपने साथियों की खोज-खबर भी ले आते थे। उन्हें गिरफ्तार करने या उन्हें मारने के लिए उस पूरे क्षेत्र में हर पाँच मील पर पुलिस और फौज के दस्ते तैनात किए गए थे। एक बार उनको गाँव के एक घर में घेर भी लिया गया था, पर वे गोलियाँ चलाते हुए वहाँ से निकल भागे थे।

एक दिन चटगाँव क्षेत्र के 'पातिया' नामक स्थान के थानेदार माखनलाल दीक्षित ने एक पियक्कड़ जमींदार को पटाया और उसे बहुत बढ़िया दावत दी। उस जमींदार को उसने सूर्यसेन को पकड़वाने के लिए दस हजार रुपयों का प्रलोभन भी दिया। जमींदार ने सूर्यसेन को अपने यहाँ बुलाकर पुलिस को सूचना दे दी।

वह १६ फरवरी, १९३३ की रात थी। सूर्यसेन अपने आठ साथियों के साथ 'गोइराला' गाँव के उस जमींदार के पास आतिथ्य के लिए पहुँच गए। उनके साथ कुमारी कल्पना दत्त नाम की एक लड़की भी थी।

पुलिस और फौज के लोग अभी घेरा डाल ही रहे थे कि सूर्यसेन को उनकी उपस्थिति का पता चल गया। क्रांतिकारियों ने घेरा डालनेवालों पर टॉर्च की रोशनी डाली और उनपर गोलियाँ दागने लगे। सैनिकों के एक घेरे में दरार पड़ी और सूर्यसेन ने निकल भागने के लिए छलाँग लगा दी। जिस स्थान पर सूर्यसेन कूदे, वहाँ पर तगड़ा हवलदार पहले से ही मौजूद था। उसने सूर्यसेन को दबोच लिया।

अन्य सैनिकों ने पहुँचकर सूर्यसेन को अच्छी तरह से काबू में कर लिया।

मकान के अंदर जो क्रांतिकारी घिरे हुए रह गए थे, उनमें से कुमारी कल्पना दत्त ने घेरा तोड़ने का प्रयत्न किया। उसने अपने रिवॉल्वर से फायर किए और दरार के बीच में से निकल भागी। सैनिकों ने उसपर गोलियाँ इसलिए नहीं चलाईं, क्योंकि गोलियाँ आपस में ही एक-दूसरे को लग सकती थीं। फिर भी, जब वह कुछ दूर निकल गई तो उसपर उन्होंने गोलियाँ चलाईं। उन लोगों ने 'छपाक्' की आवाज सुनी; जैसे कोई तालाब में कूदा हो।

मकान के अंदर से न तो फिर किसीने भागने का प्रयत्न किया और न गोलियाँ चलाईं। सुबह होते ही मकान के अंदर से छह क्रांतिकारियों को गिरफ्तार कर लिया गया।

जब सूर्यसेन की गिरफ्तारी का समाचार चटगाँव पहुँचा, तो शासन के खेमों में खुशियाँ मनाई गईं और नागरिक क्षेत्र में मातम जैसा छा गया। कई घरों में तो चूल्हे भी नहीं जलाए गए।

सूर्यसेन की गिरफ्तारी के तीन महीने पश्चात् कुमारी कल्पना दत्त को भी गिरफ्तार कर लिया गया। १९ मई, १९३३ को सूर्यसेन के एक लेफ्टिनेंट तारकेश्वर दस्तीदार को भी गिरफ्तार कर लिया गया।

क्रांतिकारी अपने नेता की गिरफ्तारी का बदला क्यों न चुकाते! कुछ ही दिनों में सूर्यसेन को पकड़वानेवाले गोइराला के पियक्कड़ जमींदार मित्रसेन का सिर उसके धड़ से अलग कर दिया गया और थानेदार माखनलाल दीक्षित को भी गोलियों से भून डाला गया।

सूर्यसेन पर मुकदमा चलाया गया और उन्हें तथा उनके साथी तारकेश्वर दस्तीदार को मृत्युदंड सुनाया गया। १२ जनवरी, १९३४ की रात को उन दोनों को फाँसी देने का निश्चय किया गया।

रात्रि को सूर्यसेन की कोठरी का ताला खोला गया और कड़े पहरे के बीच उनको फाँसी के तख्ते की ओर ले जाया जाने लगा। अंतिम बार मातृभूमि की वंदना करने के उद्देश्य से सूर्यसेन ने अपने कंठ की पूरी शक्ति के साथ 'वंदेमातरम्' का घोष किया।

सूर्यसेन के कंठ से निकले गगनभेदी 'वंदेमातरम्' के घोष ने जेल के अंदर के क्रांतिकारी बंदियों को जगा दिया। उन्होंने समझ लिया कि उनका नेता उनसे चिर बिदा ले रहा है। उन्होंने भी 'वंदेमातरम्' का गगनभेदी घोष किया।

जेल के वार्डर को यह स्थिति अच्छी नहीं लगी। उसने इसका दोषी सूर्यसेन को ही पाया और उन्हें चुप करने के लिए उसने उनके सिर पर डंडे का जोरदार

प्रहार किया। चुप होने के बजाय सूर्यसेन के कंठ से और अधिक तीव्रता के साथ 'वंदेमातरम्' का स्वर निकला। और सूर्यसेन पर डंडे उस समय तक बरसते रहे, जब तक क्षीण होता हुआ उसका स्वर बंद नहीं हो गया। वधस्थल पर पहुँचने के पूर्व ही निर्मम प्रहारों से आक्रांत सूर्यसेन की देह से प्राणों का विछोह हो गया। जेल के अधिकारी इस स्थिति से चिंतित हुए; लेकिन उनकी सूझबूझ काम कर गई। सूर्यसेन की निर्जीव देह को कई लोगों ने मिलकर उठाया। वे उन्हें फाँसी के तख्ते पर ले गए और उनकी लटकी हुई गरदन में फाँसी का फंदा डालकर उनकी निर्जीव देह को झुला दिया गया। चटगाँव का सूर्य अर्द्धरात्रि में अस्त हो गया।

तारकेश्वर दस्तीदार को भी उसी रात फाँसी दे दी गई। दोनों क्रांतिकारियों के शव कुछ अँधेरा रहते हुए ही एक युद्धपोत द्वारा समुद्र में ले जाए गए। शवों को ले जाने के लिए युद्धपोत! लगता है जैसे शासन भयभीत था कि कहीं उनके भूत उठ खड़े होकर युद्ध न करने लगें या उनके साथी क्रांतिकारी आक्रमण न कर बैठें। युद्धपोत द्वारा दोनों शव समुद्र में बहुत दूर ले जाए गए और भारी-भारी लौह-खंडों से बाँधकर सागर की अतल गहराइयों में उतार दिए गए।

सागर की अतल गहराइयों में डुबोए गए देशभक्तों के शव क्या अपने देशवासियों के स्मृति-पटल पर कभी उभरेंगे?

□

## ★ उमाशंकर पंड्या

उमाशंकर पंड्या उन पढ़े-लिखे और चेतनशील युवकों में से था, जिन्होंने मातृभूमि की पुकार पर अपना जीवन न्योछावर कर दिया। उसने बी.ई. परीक्षा उत्तीर्ण की थी और वह महाराष्ट्र की किर्लोस्कर फैक्टरी में इंजीनियर था। उसे बहुत अच्छा वेतन मिल रहा था और अन्य सुख-सुविधाएँ भी उसे प्राप्त थीं। उसे एक ही कसक थी कि भारत पराधीन है। इसी कसक को दूर करने के लिए वह सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो आंदोलन' में कूद पड़ा।

३ सितंबर, १९४२ को तासगाँव के आंदोलनकारियों ने गाँव के मामलतदार के कार्यालय पर तिरंगा झंडा लगाने का कार्यक्रम बना डाला। इस जुलूस का नेतृत्व उमाशंकर पंड्या ने ही किया। आंदोलनकारियों ने सफलतापूर्वक यह काम कर डाला। उनके हौसले बढ़ गए।

अपनी सफलता से उत्साहित होकर उमाशंकर पंड्या ने उस जुलूस का

नेतृत्व किया, जो ८ सितंबर, १९४२ को इस्लामपुर की कचहरी पर तिरंगा झंडा फहराने के लिए बढ़ चला। इस जुलूस में उमाशंकर के साथ किर्लोस्कर कारखाने के चार सौ श्रमिक भी थे। जुलूस झंडा लेकर कचहरी पर जा पहुँचा। वहाँ पुलिस पहले से ही आंदोलनकारियों के स्वागत के लिए खड़ी थी। इस स्वागत समिति के अध्यक्ष पुलिस सुपरिंटेंडेंट स्वयं ही थे! उन्होंने लोगों को चेतावनी दी कि वे कचहरी पर झंडा लगाने का विचार छोड़कर बिखर जाएँ। उन्होंने आज्ञा न मानने पर लोगों पर गोली चलाने की चेतावनी भी दी।

उमाशंकर पंड्या ने पुलिस सुपरिंटेंडेंट महोदय को समझाते हुए कहा—

''देखिए, हम लोग कचहरी पर केवल तिरंगा झंडा ही तो लगाना चाहते हैं। झंडा लगाकर हम लोग वापस चले जाएँगे। आप एक हिंदुस्तानी होकर भी अपने हिंदुस्तानी भाइयों पर गोलियाँ क्यों चलाना चाहते हैं?''

पुलिस सुपरिंटेंडेंट ने उमाशंकर पंड्या की बात नहीं मानी। बातचीत तेजी पकड़ गई और उसका परिणाम यह हुआ कि पुलिस अफसर ने पहली गोली उमाशंकर के ऊपर ही चला दी। वह घटनास्थल पर ही शहीद हो गया। कुछ और लोग भी शहीद हुए तथा काफी संख्या में लोग घायल हुए।

उमाशंकर पंड्या का जन्म नागपुर जिले के 'कामठी' में सितंबर १९१८ में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री रेवाशंकर पंड्या और माता का नाम गोपीबाई था।

☐

## ★ ओंकारप्रसाद बुंदेला

ओंकारप्रसाद बुंदेला का जन्म सन् १९२० के लगभग मध्य प्रदेश के नरसिंहपुर जिले के 'बम्हनी' ग्राम में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री बलदेव सिंह बुंदेला था।

ओंकारप्रसाद बुंदेला ने सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो आंदोलन' में हौसले के साथ भाग लिया। उसे गिरफ्तार करके छह महीने के कठोर कारावास का दंड सुनाया गया। उसे पहले सागर और बाद में जबलपुर जेल में रखा गया। जब वह मरणासन्न स्थिति में हो गया, तो उसे छोड़ दिया गया। शीघ्र ही उसकी मृत्यु हो गई। □

## ★ कनकलता बरुआ ★ मुकुंद काबता

असम के लोगों ने अगस्त क्रांति में खुलकर भाग लिया। पहले तो उनका आंदोलन पूर्णरूप से अहिंसक और केवल प्रदर्शन तक ही सीमित था, लेकिन जब पुलिस और फौज ने उनपर अत्याचार करना प्रारंभ किया तो असमिया लोग भी भड़क उठे और उनके सत्याग्रह आंदोलन ने क्रांतिकारी रूप धारण कर लिया।

असम के 'गोपुर' गाँव की जनता अपने गाँव के थाने पर तिरंगा झंडा लगाने के लिए बढ़ चली। लगभग पाँच हजार ग्रामीण उस जुलूस में थे। जुलूस में स्त्रियाँ और बच्चे भी थे। बढ़ता हुआ यह जुलूस थाने के सामने पहुँच गया। थाने पर पहुँचने के लिए एक नाले को पार करना पड़ता था। जुलूस दो भागों में विभक्त हो गया। दो दिशाओं से नाले को पार करके जुलूस फिर एकीकृत होकर थाने के फाटक की ओर बढ़ चला। जुलूस के आगे कनकलता बरुआ नाम की एक चौदह वर्ष की बालिका तिरंगा झंडा लेकर चल रही थी। उसे रोकने के लिए थानेदार भी अपने सिपाहियों के साथ फाटक के पास पहुँच गया। कनकलता बरुआ ने पुलिस को संबोधित करते हुए कहा—

''आप लोग तो हमारे भाई हैं। हमें रोकने के स्थान पर आप लोग भी हममें सम्मिलित हो जाइए। हम सब लोग मिलकर थाने पर राष्ट्रीय झंडा लगाएँगे।''

थानेदार एक बच्ची के मुँह से ऐसी बातें सुनने के लिए तैयार नहीं था। उसने कह दिया कि वह किसीको भी थाने के अंदर नहीं आने देगा। इसपर कनकलता ने फिर कहा—

''पुलिस स्टेशन तो जनता की संपत्ति होती है। जनता की संपत्ति के रक्षक यदि जनता का कहना नहीं मानेंगे तो जनता उन्हें हटा देगी और अपनी संपत्ति को अपने अधिकार में ले लेगी।''

यह कहते हुए कनकलता फाटक के अंदर जाने लगी। थानेदार ने उसपर गोली चला दी और कनकलता वहीं शहीद हो गई। कनकलता को गिरते देखकर

मुकुंद काबता नामक एक नौजवान ने उसके हाथ से झंडा ले लिया और वह आगे बढ़ने लगा। मुकुंद काबता को भी गोली मार दी गई और वह भी शहीद हो गया। अब जनता के धैर्य का बाँध टूट गया और कई तरफ से लोग थाने के अंदर पहुँचने लगे। पुलिसवालों ने भी अंधाधुंध गोलियाँ चलाना प्रारंभ कर दिया। लोग गोलियाँ खाकर गिरते रहे और आगे बढ़ते गए। अंततोगत्वा एक दल थाने की इमारत पर चढ़ने में सफल हो गया और वहाँ उसने शान के साथ तिरंगा झंडा लगा दिया। इस संघर्ष में साठ व्यक्ति शहीद हुए।

□

## ★ कन्हाईलाल भट्टाचार्य

न्यायमूर्ति आर.आर. गार्लिक उस ट्रिब्यूनल के अध्यक्ष थे, जिसने २ फरवरी, १९३१ को दिनेश गुप्त को फाँसी का दंड सुनाया था। दिनेश गुप्त ने कलकत्ता में पुलिस इंस्पेक्टर जनरल मि. सिंपसन को उसके कार्यालय में ही गोलियों से भून डाला था।

वही न्यायमूर्ति गार्लिक महोदय २७ जुलाई, १९३१ को अपने इजलास में एक मामले की सुनवाई में व्यस्त थे। वे यह देख नहीं पाए कि बीस वर्ष का एक दुबला-पतला युवक कब एक दरवाजे से इजलास में प्रविष्ट हुआ और गवाह के कठघरे तक पहुँच गया। वहाँ पहुँचकर उसने अपना रिवॉल्वर निकाला तथा न्यायमूर्ति गार्लिक को निशाना बनाकर दो गोलियाँ छोड़ीं। पहली गोली तो खाली चली गई, पर दूसरी गोली न्यायमूर्ति महोदय के मस्तक में लगी और वे अपनी कुरसी से लुढ़क गए। इजलास में सी.आई.डी. का एक सिपाही नागरिक वेश में उपस्थित था। उसके पास भी रिवॉल्वर था। उसने अपनी गोली उस युवक पर छोड़ी; पर निशाना चूक गया। अब युवक ने एक गोली उस सिपाही पर छोड़ी, जो उसके कंधे में लगी और वह भूमि पर गिर गया। एक सारजेंट भी अदालत में उपस्थित था। उसने अपने रिवॉल्वर से दो गोलियाँ उस युवक पर छोड़ीं। दोनों गोलियाँ उसके शरीर में ही लगीं और वह भूमि पर गिर गया। घटनास्थल पर ही उसकी मृत्यु हो गई। न्यायमूर्ति गार्लिक को अस्पताल भिजवाया गया, जहाँ उन्हें मृत घोषित कर दिया गया।

न्यायमूर्ति गार्लिक की हत्या करनेवाले युवक की जेब में एक कागज पाया गया, जिसपर लिखा था—

'दिनेश गुप्त को अन्यायपूर्वक फाँसी का दंड देने का पुरस्कार मृत्यु से प्राप्त कीजिए।

—विमल गुप्त।'

मृत युवक का चित्र अखबारों में छपवाकर उसकी सही जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न किया गया। परिणामस्वरूप मालूम हुआ कि उसका वास्तविक नाम कन्हाईलाल भट्टाचार्य था और वह चौबीस परगना के माजिलपुर का रहनेवाला था।

□

# ★ कन्हाईलाल विश्वास ★ कृष्णपद बनर्जी ★ नटवर कुंदू ★ बंगेश्वर राय ★ विनय बोस ★ शचींद्र सरकार ★ सैयद अली
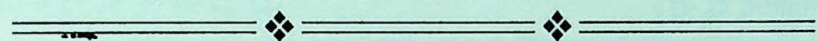
हिजली गोली कांड के अत्याचारों का बदला लेने के लिए क्रांतिकारियों के उत्साह में किसी प्रकार की कमी नहीं आई। उनके कुछ साथी डाक के थैलों की लूट में गिरफ्तार होकर सजा पा चुके थे। उन्होंने कुछ समय के लिए डाकखानों को अपने आक्रोश का लक्ष्य बनाया।

१३ अक्तूबर, १९३१ को क्रांतिकारियों के एक दल ने बड़ी तैयारी और सूझबूझ के साथ ढाका के बड़े डाकखाने पर आक्रमण किया और चौबीस हजार रुपए लूट लिये। इस आक्रमण से डाकखाने के कुछ कर्मचारी घायल हुए। बाद में बंगेश्वर राय और विनय बोस नाम के दो क्रांतिकारियों को गिरफ्तार कर लिया गया। क्रांतिकारियों को दस-दस वर्ष के कठोर कारावास के दंड मिले।

इसी प्रकार १४ अक्तूबर को ताँती बाजार की लूट के संबंध में शचींद्र सरकार तथा कृष्णपद बनर्जी को गिरफ्तार किया गया।

२७ अक्तूबर, १९३१ को दो हरकारे डाक के थैले लेकर शापुर की ओर चले, तो उचित अवसर पाकर क्रांतिकारी नटवर कुंदू, कन्हाईलाल विश्वास एवं सैयद अली ने उनपर आक्रमण कर दिया और डाक के थैले लेकर भाग गए। डाक की इस लूट में क्रांतिकारियों को सोलह सौ रुपए मिले। पकड़े जाने पर उनपर मुकदमे चले। परिणामस्वरूप नटवर कुंदू को नौ वर्ष तथा कन्हाईलाल विश्वास और सैयद अली को पाँच-पाँच वर्ष के कठोर कारावास का दंड मिला।

□

# ★ कपिलमुनि ★ गोपालराम ★ रामदास

अगस्त क्रांति के दिनों में केवल शहरी क्षेत्र ही नहीं, ग्रामीण क्षेत्रों में भी स्वातंत्र्य आंदोलन की धूम थी। प्रांत के मुख्यालय में सेक्रेटेरिएट पर झंडा लगाने का प्रयत्न किया जाता था। जिले के मुख्यालयों में कलेक्टर कार्यालय पर और तहसील के मुकामों पर तहसीलदार के कार्यालय पर तिरंगा झंडा लगाया जाता था। जहाँ तहसील नहीं होती थी, वहाँ पुलिस थाने पर तिरंगा झंडा लगाया जाता था।

१६ अगस्त को बिहार के डुमराँव नामक स्थान पर पाँच हजार लोगों का एक जुलूस तिरंगे झंडे के साथ पुलिस थाने की ओर चल पड़ा। जुलूस में स्त्रियाँ भी थीं और बच्चे भी। कपिलमुनि नाम के एक नौजवान के हाथ में झंडा था। जब यह जुलूस पुलिस स्टेशन पर पहुँच गया, तो पुलिस की ओर से आगे न बढ़ने की चेतावनी दी गई।

कपिलमुनि ने चेतावनी की चिंता नहीं की और वह आगे बढ़ चला। सामने से एक गोली आई और वह गिर पड़ा। उसके गिरते ही रामदास नाम के एक युवक ने झंडे को सँभाला और वह आगे बढ़ा। रामदास को भी गोली लगी और वह भी गिरा। उसके गिरने पर एक साठ वर्षीय वृद्ध ने झंडा सँभाला। उस वृद्ध को भी गोली से गिरा दिया गया। उस वृद्ध के पश्चात् गोपालराम नामक एक बालक ने झंडा लेकर आगे बढ़ना प्रारंभ किया। गोली मारकर गोपालराम को भी ठंडा कर दिया गया। अब भीड़ एक साथ थाने की तरफ झपटी और थाने पर झंडा लगा दिया। सन् १९४२ के आंदोलन में डुमराँव ने बहुत नाम कमाया।

□

# ★ श्रीमती कमला चटर्जी

श्रीमती कमला चटर्जी से सरकार इसलिए परेशान थी कि उनकी लेखनी नौजवानों में विद्रोह की आग भड़का रही थी। अपने छात्र जीवन से ही उन्हें लिखने का अच्छा अभ्यास हो गया था और उनके लेख पत्र-पत्रिकाओं में स्थान पाने लगे थे। बंगाल ऑर्डिनेंस के अंतर्गत १९३१ में उन्हें गिरफ्तार किया गया। वे सन् १९३७ में जेल से मुक्त हुईं।

□

## ★ कमला मिरी ★ कौशल कोनवर

असम के कौशल कोनवर ने रेलों की पटरियाँ उखाड़ने और रेल संपत्ति को नष्ट करने के कामों में भाग लिया था। उन्हें गिरफ्तार करके उनपर मुकदमा चलाया गया और उन्हें फाँसी की सजा सुना दी गई। १५ जून, १९४३ को फाँसी की तारीख निश्चित थी। फाँसी पर चढ़ने के पहले उन्होंने कहा—

''मुझे गर्व है कि एक सार्थक लक्ष्य के लिए मुझे फाँसी दी जा रही है। मुझे यह गौरव भी प्राप्त है कि ईश्वर ने इस काम के लिए मुझे चुना है।''

फाँसी की तारीख तक कौशल कोनवर हमेशा प्रसन्नचित्त रहे। वे 'गीता' का पाठ करते थे। उनका वजन भी बढ़ गया था। फाँसी के दिन जब जेलर उनको लेने पहुँचा, तो उन्होंने ईश्वर की प्रार्थना में एक भजन गाया और उठकर ऐसे चल दिए जैसे कहीं टहलने जा रहे हों।

उसी आंदोलन के एक अन्य आंदोलनकारी श्री कमला मिरी को जेल में इतनी यातनाएँ दी गईं कि उन यातनाओं के फलस्वरूप जेल में ही उनका प्राणांत हो गया।

□

## ★ श्रीमती कल्याणी देवी

श्रीमती कल्याणी देवी उच्च शिक्षा प्राप्त महिला थीं। उन्होंने एम.ए. पास किया था। अपनी पढ़ाई के दिनों में ही उनपर क्रांति का रंग चढ़ गया था। प्रकट रूप में उन्होंने सत्याग्रह आंदोलन में भाग लिया और सन् १९३१ में गिरफ्तार हुईं। उन्हें आठ महीने जेल में रहना पड़ा।

सन् १९३३ में श्रीमती कल्याणी देवी के पास से एक तमंचा बरामद किया गया। उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया; लेकिन उनके विरुद्ध कोई मुकदमा नहीं बन सका, अतः छोड़ दिया गया। बंगाल ऑर्डिनेंस के अंतर्गत उन्हें पुनः गिरफ्तार किया गया। वे कई वर्षों तक कई जेलों में रहीं।

□

## ★ कालिका किरार

कालिका किरार की गतिविधियाँ इतनी उग्र हो गई थीं कि पुलिस छाया की भाँति उसके पीछे पड़ गई थी, और एक वह था, जो पुलिस के हाथ में पड़ते-पड़ते भी खिसक जाता था। एक दिन पुलिस को पता चला कि कालिका किरार अपने घर पर ही है। पुलिस के एक बहुत बड़े दल ने उसके घर को घेर लिया और आत्मसमर्पण के लिए उसे ललकारा।

कालिका ने मकान की छत से कूदकर भागने का प्रयास किया। पुलिस दल ने उसपर गोलियाँ चला दीं। वह सख्त घायल हुआ और गिरफ्तार कर लिया गया। अगले दिन अस्पताल में उसकी मृत्यु हो गई।

कालिका किरार का जन्म मध्य प्रदेश के बैतूल जिले के 'नाहिया' ग्राम में सन् १८८७ में हुआ था। उसके पिता श्रीराम कृषक थे। कालिका ने अगस्त क्रांति को अपने जीवन की बलि दे दी।

□

## ★ कालीपद ऐश ★ चित्तरंजन मुकर्जी ★ दुर्गादास रायचौधरी ★ नंदकुमार डे ★ निरंजन बरुआ ★ नीरेंद्रमोहन मुकर्जी ★ फणिभूषण चक्रवर्ती ★ मानकुमार बसु ★ सुनीलकुमार मुकर्जी

वे द्वितीय महायुद्ध के दिन थे। अंग्रेज बुरी तरह युद्ध में उलझे हुए थे। धुरी राष्ट्रों के हाथों वे मैदान खोते जा रहे थे। भारत के सपूत सुभाषचंद्र बोस ने भी सिंगापुर में आजाद हिंद फौज को सुसंगठित कर अंग्रेजों पर चढ़ाई कर दी थी। ऐसी स्थिति में भारत में रहनेवाला हर देशभक्त यही सोचता था कि जैसे भी हो, भारत के कंधे से पराधीनता का जुआ उतर जाए। यह चिंतन केवल नागरिकों का ही नहीं, कुछ उन फौजियों का भी था, जो अंग्रेजी सेना के अंग थे।

उन दिनों अंग्रेजों ने एक दूरदर्शिता की थी कि प्रादेशिक सेनाओं को अपने

प्रदेश से हटाकर दूसरे प्रांतों में पदस्थ कर दिया था, जिससे विद्रोह के अवसर समाप्त हो जाएँ। इसी दूरदर्शिता के परिणामस्वरूप बंगाल प्रांत की सेना को मद्रास में पदस्थ किया गया था। इस सेना के कुछ सैनिकों ने मद्रास में भी विद्रोह के बीज बोने प्रारंभ कर दिए। वे अन्य प्रांतों के फौजियों के दिलों में भी विद्रोह की अग्नि प्रज्वलित करने लगे। उनकी गतिविधियों की सूचना किसी प्रकार शासन को लग गई। परिणाम यह हुआ कि १८ अप्रैल, १९४३ को नौ क्रांतिकारी सैनिक गिरफ्तार कर लिये गए और उनका कोर्ट मार्शल किया गया। ये नौ विद्रोही सैनिक थे—
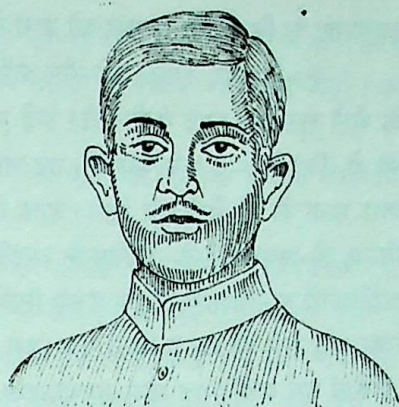
मानकुमार बसु

१. मानकुमार बसु,
२. नंदकुमार डे,
३. दुर्गादास रायचौधरी,
४. निरंजन बरुआ,
५. चित्तरंजन मुकर्जी,
६. फणिभूषण चक्रवर्ती,
७. सुनीलकुमार मुकर्जी,
८. कालीपद ऐश,
९. नीरेंद्रमोहन मुकर्जी।

इन लोगों को मृत्युदंड सुनाया गया। २७ सितंबर, १९४३ में मद्रास जेल में इन क्रांतिवीरों को फाँसी के फंदों पर झुला दिया गया। फाँसी पर झूलने के पहले उन वीरों ने एक-दूसरे का कसकर प्रगाढ़ आलिंगन किया और वंदेमातरम् के गगनभेदी नारे लगाते हुए अनुपम मुसकराहट के साथ फाँसी का वीरोचित पुरस्कार प्राप्त किया। □

# ★ कालीपद ★ कृष्णपद लहरी ★ गोपालचंद्र आचार्य ★ धीरेन ★ नरहरि सेन ★ शचींद्रनाथ बोस ★ हेमेंद्रनाथ चक्रवर्ती
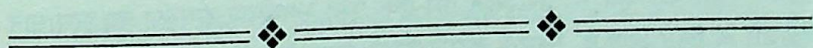
हिजली गोली कांड के गोलमाल को बंगाल के क्रांतिकारी सहन नहीं कर सके। अपने मृत और घायल साथियों का बदला चुकाने के लिए वे शासन तंत्र पर

आक्रमण के किसी भी अवसर को हाथ से नहीं जाने देना चाहते थे।

२७ सितंबर, १९३१ को तीन क्रांतिकारी साइकिलों पर सवार होकर डाक के थैले लूटने के इरादे से निकले। उन्हें मालूम था कि कुछ थैलों में बीमा पार्सल भी थे, जिनमें रुपए भेजे जाते हैं। उन लोगों ने मेमनसिंह जिले के अथराबारी के पास डाक के नौ थैले लूट लिये। डाक के थैले ले जानेवालों ने चिल्लाना प्रारंभ किया, तो अथराबारी के जमींदार के आदमियों ने क्रांतिकारियों का पीछा किया। दो क्रांतिकारी मुकाबला करते हुए पकड़ लिये गए तथा तीसरा थक जाने के कारण गिर पड़ा और उसे भी पकड़ लिया गया। इस संबंध में हेमेंद्रनाथ चक्रवर्ती, गोपालचंद्र आचार्य एवं शचींद्रनाथ बोस पर मुकदमा चला और उन्हें लंबी सजाएँ मिलीं।

इसी प्रकार २८ सितंबर और २ अक्तूबर के प्रयत्नों में कृष्णपद लहरी, कालीपद, धीरेन एवं नरहरि सेन को गिरफ्तार किया गया और मुकदमे चलाकर उनको सजाएँ दी गईं।

□

# ★ कालीपद चक्रवर्ती ★ रामकृष्ण विश्वास
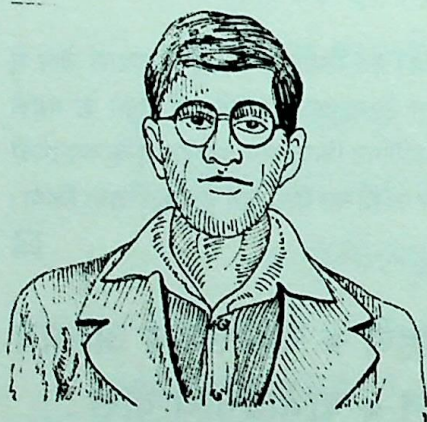
रामकृष्ण विश्वास

'चटगाँव शस्त्रागार कांड' की योजना बनाने के लिए सूर्यसेन ने अपने साथी क्रांतिकारियों को बुलाकर उनका अभिमत जानना चाहा। उस समय तक देश की आजादी के लिए महात्मा गांधी द्वारा संचालित असहयोग आंदोलन चौरीचौरा की घटना के कारण स्थगित किया जा चुका था। उसीकी ओर संकेत करते हुए सूर्यसेन ने कहा—

"साथियो! इस स्थल पर हम अनेक बार, अनेक उद्देश्यों से प्रेरित होकर एकत्र हो चुके हैं; पर आज हम एक ऐसी सामयिक समस्या का समाधान खोजने के लिए आए हैं, जिसके कारण केवल हम लोग ही नहीं, सारा देश अशांत है। हम सभी जानते हैं कि पूरे देश ने और हम लोगों ने भी गांधीजी द्वारा संचालित असहयोग आंदोलन में भरपूर सहयोग दिया; पर नतीजे के नाम पर कुछ भी हासिल

नहीं हुआ। मैं पूछता हूँ कि चौरीचौरा की एक छोटी-सी हिंसक घटना को लेकर गांधीजी द्वारा इतना संगठित और व्यापक आंदोलन स्थगित कर देना कहाँ तक उचित है?''

अपने नेता सूर्यसेन के इस विचार को आगे बढ़ाया एक तेजवंत नौजवान रामकृष्ण विश्वास ने। उसने कहा—

''मेरा तो स्पष्ट मत है कि गांधीजी द्वारा असहयोग आंदोलन स्थगित कर देना एक भयंकर ऐतिहासिक भूल है, जिसका दुष्परिणाम देश को वर्षों तक भुगतना पड़ेगा। एक बहुत बड़े जन आंदोलन में कुछ लोगों के प्राण चले जाना कोई बड़ी बात नहीं होती और केवल इसी कारण पूरे आंदोलन को हिंसक आंदोलन की संज्ञा नहीं दी जा सकती। क्या हम लोग सन् १९१९ के 'जलियाँवाला बाग हत्याकांड' की घटना को खून के घूँट की तरह पीकर नहीं रह गए?''

रामकृष्ण विश्वास की गर्मजोशी ने सभी साथियों को प्रभावित किया और निश्चय किया गया कि अब हाथ-पर-हाथ रखकर बैठने के स्थान पर कोई बड़ा क्रांतिकारी कदम उठाना चाहिए। चटगाँव शस्त्रागार कांड की योजना बन गई। उस योजना को पूर्ण करने की दिशा में चटगाँव में बम बनाने का कारखाना खोला गया, जिसके संचालन का भार रामकृष्ण विश्वास को दिया गया।

अपनी पूरी योग्यता और मनोयोग से रामकृष्ण विश्वास बम निर्माण के कार्य में जुट गया। एक दिन बम का मसाला बनाते समय मसाले में आग लग गई और रामकृष्ण विश्वास, अमरेंद्र नंदी तथा अर्धेंदु दस्तीदार जल गए। रामकृष्ण विश्वास की हालत गंभीर हो गई।

बम के मसाले से जल जाने का दुष्परिणाम यह हुआ कि शस्त्रागारों पर आक्रमण के अभियान में रामकृष्ण विश्वास को सम्मिलित नहीं किया गया। उसे इस बात का बहुत खेद रहा।

अपनी योजनानुसार क्रांतिकारियों ने चटगाँव स्थित पुलिस और फौज के शस्त्रागार लूट लिये। कुछ दिन बाद पुलिस और फौज के साथ हुए आमने-सामने के युद्ध में बहुत से क्रांतिकारी मारे गए। कुछ क्रांतिकारी गिरफ्तार भी हुए और उनपर तरह-तरह के अत्याचार किए जाने लगे। बचे हुए क्रांतिकारी भी पुलिस अधिकारियों से अपने साथियों का बदला लेने की योजनाएँ बनाने लगे।

शासन का गुप्तचर विभाग भी कार्य कर रहा था और क्रांतिकारियों के गुप्तचर भी सक्रिय थे। क्रांतिकारियों के गुप्तचर विभाग ने अपने नेताओं को सूचना दी कि पुलिस के इंस्पेक्टर जनरल मि. क्रेग का चटगाँव का दौरा होने वाला है। उसके दौरे की तारीखें भी क्रांतिकारियों के पास पहुँच गईं।

क्रांतिकारियों ने इस 'बिग गेम' अर्थात् बड़े शिकार की योजना बना डाली। उनका विचार था कि जिस समय इंस्पेक्टर जनरल महोदय अपना दौरा समाप्त करके लौटें, उस समय उनपर हमला किया जाए। उन लोगों का अनुभव था कि आते समय तो अफसर लोग बहुत सावधानी से काम लेते हैं, पर लौटते समय वे अपनी सुरक्षा के प्रति असावधान हो जाते हैं।

क्रांतिकारियों में से इस कार्य का दायित्व लिया रामकृष्ण विश्वास ने। उसे इस बात का दु:ख था कि बम बनाते समय जल जाने के कारण वह शस्त्रागार अभियान में भाग नहीं ले सका था। अब वह ठीक हो गया था और वह आई.जी. साहब पर दाँव आजमाना चाहता था। रामकृष्ण विश्वास प्रतिभा का धनी था। मैट्रिक परीक्षा में उसने प्रथम स्थान प्राप्त किया था और अपने वरिष्ठ साथियों से उसने बम बनाना भी सीख लिया था।

अपना दौरा समाप्त करके आई.जी. साहब ने लक्सम और चाँदपुर होते हुए कलकत्ता पहुँचने का कार्यक्रम बनाया। उनकी ट्रेन रात्रि के दो बजे लक्सम पहुँची। लक्सम में रेलवे पुलिस इंस्पेक्टर तारिणी मुखर्जी इस उद्देश्य से सवार हुआ कि चाँदपुर स्टेशन पर साहब का स्वागत किया जा सके। तारिणी मुखर्जी और एक पुलिस दारोगा, दोनों ही साहब के पासवाले प्रथम श्रेणी के डिब्बे में सवार हुए। साहब के डिब्बे से एक डिब्बा और आगे एक तृतीय श्रेणी का डिब्बा था, जिसमें दो क्रांतिकारी बैठे हुए थे। इनमें से एक था रामकृष्ण विश्वास और दूसरा था कालीपद चक्रवर्ती।

तारीख १ दिसंबर, १९३० थी और सुबह के चार बजे थे। जब इन सभी को ले जानेवाली ट्रेन चाँदपुर स्टेशन पर रुकी, तो इंस्पेक्टर तारिणी मुखर्जी ट्रेन से उतरकर प्लेटफॉर्म पर खड़ा हो गया। उससे कुछ दूर हटकर पुलिस दारोगा खड़ा हो गया। तारिणी मुखर्जी की पीठ इंजन की तरफ थी। उसके उतरते ही चाँदपुर के पुलिस स्टॉफ ने उसे सलामी दी। इसी समय क्रांतिकारी रामकृष्ण विश्वास और कालीपद चक्रवर्ती भी प्लेटफॉर्म पर उतरे पड़े। सर्दी का समय था। उनमें से एक लाल रंग का शॉल ओढ़े हुए था और दूसरा हरे रंग का। उनको पुलिस वरदीधारी तारिणी मुखर्जी की पीठ दिखाई दे रही थी। उन्होंने यह देख लिया था कि कुछ पुलिसवालों ने उसे सलामी दी है। उन्होंने अनुमान लगाया कि ये ही आई.जी. साहब हैं। निकट पहुँचकर उन्होंने तारिणी मुखर्जी पर गोलियाँ दाग दीं।

गोलियाँ चलते ही पुलिस के शेष लोग स्टेशन मास्टर के कमरे में जा छिपे। तारिणी मुखर्जी भी और गोलियों से बचने के इरादे से ओवर ब्रिज की सीढ़ियों की ओर भागा। क्रांतिकारियों ने वहाँ भी उसका पीछा किया और उसपर कुछ गोलियाँ

दागीं। वे तो उसे आई.जी. साहब समझकर उसे जीवित नहीं छोड़ना चाहते थे।

गोलियों की आवाज सुनकर आई.जी. साहब ने अपने डिब्बे की खिड़की खोली। उन्होंने दो युवकों को इंस्पेक्टर तारिणी मुखर्जी पर गोलियाँ चलाते हुए देखा। खिड़की में से ही उन्होंने आक्रमणकारियों पर गोलियाँ चलाईं। उनकी गोलियाँ निशाने पर नहीं लगीं। उनके अंगरक्षक ने भी गोलियाँ चलाईं; पर कोई भी गोली क्रांतिकारियों को नहीं लगी।

क्रांतिकारी लोग स्टेशन के सामने रेल की पटरियाँ पार करके भागे। स्वयं आई.जी. साहब मि. क्रेग और उनके अंगरक्षक ने उन लोगों का पीछा किया। क्रांतिकारी लोग एक खड़ी हुई मालगाड़ी के नीचे से उस पार अँधेरे में विलीन हो गए और आई.जी. साहब को निराश होकर लौटना पड़ा।

तारिणी मुखर्जी ने अस्पताल के रास्ते में दम तोड़ दिया। इस समय स्थानीय पुलिस के सभी लोग सचेत किए जा चुके थे। अतिरिक्त पुलिस अधीक्षक ने कुछ सिपाहियों को लेकर सड़क के रास्ते से क्रांतिकारियों का पीछा किया। कुछ दूर जाने पर उन्हें दो युवक जाते हुए दिखाई दिए। वे क्रांतिकारी ही थे। उन्होंने भागने के बजाय यह उचित समझा कि पुलिस का शक दूर करके निकला जाए। पुलिस अफसर ने उनसे पूछताछ की और वह उन्हें छोड़ने ही वाला था कि उसने उनकी तलाशी लेनी चाही। दोनों की तलाशी एक साथ ली गई। उनमें से प्रत्येक के पास एक-एक भरा हुआ रिवॉल्वर निकला। रामकृष्ण विश्वास के पास एक जीवित बम भी था। उनकी योजना विफल हो गई और वे गिरफ्तार कर लिये गए। गिरफ्तारी के पश्चात् उन्हें कलकत्ता भेजा गया और बाद में चटगाँव की जेल में उनके अन्य साथी क्रांतिकारियों के साथ उन्हें बंद कर दिया गया।

मुकदमे के निर्णय के द्वारा रामकृष्ण विश्वास को फाँसी और कालीपद चक्रवर्ती को आजन्म कालापानी की सजा सुनाई गई। रामकृष्ण विश्वास को अलीपुर सेंट्रल जेल में ४ अगस्त, १९३१ को फाँसी पर झुला दिया गया।

□

## ★ कालीपद मुकर्जी
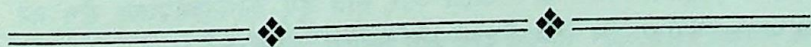
स्पेशल मजिस्ट्रेट कामाख्याप्रसाद सेन तीन महीने की छुट्टी लेकर जब ढाका गए, तो उन्होंने सोचा कि अब क्रांतिकारियों से जान बची। उन्हें क्या पता था कि क्रांतिकारी उनकी नृशंसता, उनकी अभद्रता तथा उनकी दमनकारी प्रवृत्ति का बदला
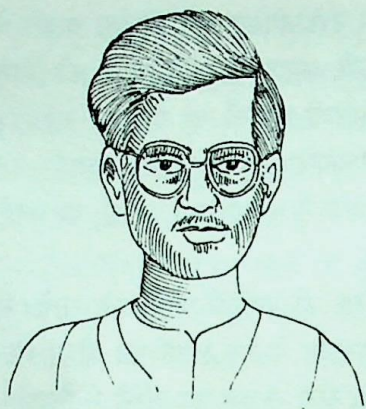
कालीपद मुकर्जी

चुकाने के लिए कृतसंकल्प थे और वे छाया की भाँति उनका पीछा कर रहे थे।

कामाख्याप्रसाद सेन की नियुक्ति शासन ने इसलिए की थी कि वे सविनय अवज्ञा आंदोलन को बुरी तरह कुचलें और आंदोलनकारियों को अच्छा सबक सिखाएँ। मि. सेन ने सरकार की अपेक्षाओं से कहीं अधिक बढ़कर काम किया। वे महिलाओं को अपमानित करने, उन्हें गालियाँ देने और उनपर बेतों के प्रहार कराने से भी नहीं चूकते थे। इच्छपुरा के क्रांतिकारियों ने यह संकल्प कर लिया कि वे स्पेशल मजिस्ट्रेट महोदय को सिखाएँगे कि नारी जाति के अपमान का क्या परिणाम होता है!

मि. कामाख्याप्रसाद सेन को क्रांतिकारियों के इरादों की गंध मिल गई और तीन महीने की छुट्टी लेकर वे ढाका जाकर रहने लगे। उन्होंने सोचा कि अब मैं क्रांतिकारियों से सुरक्षित हूँ। ढाका के वारी मोहल्ले में वे एक मकान की निचली मंजिल में रहने लगे। ऊपर की मंजिल में मकान मालिक सब-डिवीजनल ऑफीसर साहब स्वयं रहते थे। नीचे के जिस कमरे में सेन महोदय ठहरे थे। उसमें दो खिड़कियाँ थीं। उन खिड़कियों में लोहे की छड़ें लगी थीं।

कालीपद मुकर्जी नाम के एक क्रांतिकारी ने स्पेशल मजिस्ट्रेट महोदय का पीछा किया और वह ढाका जा पहुँचा। वह पटवाटोली के एक दर्जी के साथ ठहर गया।

२७ जून, १९३२ को कालीपद मुकर्जी रात में किसी समय सब-डिवीजनल ऑफीसर के मकान पर जा पहुँचा, जहाँ नीचे के कमरे में स्पेशल मजिस्ट्रेट कामाख्याप्रसाद सेन महोदय ठहरे थे। प्रातःकाल चार बजे खुली खिड़की में से कालीपद मुकर्जी ने कमरे में प्रवेश किया। उसने मच्छरदानी के अंदर बड़े इतमीनान से हाथ डाला और सोते हुए कामाख्याप्रसाद सेन को पहचानकर उसपर तीन गोलियाँ दागीं और वहाँ से चलता बना। वह अपने ठहरने के स्थान पर जा पहुँचा।

इधर गोलियों की आवाज सुनकर सब-डिवीजनल ऑफीसर नीचे उतरा और उसने देखा कि कामाख्याप्रसाद सेन अपने बिस्तर पर खून से लथपथ मरे पड़े

हैं। पुलिस बुलवाई गई और अपराधियों की खोज की गई; पर कोई भी पकड़ा नहीं गया। पुलिस ने तारघर को सूचित कर दिया कि यदि कोई संदिग्ध व्यक्ति तार करने पहुँचे, तो उसकी सूचना पुलिस को दी जाए।

दोपहर को किसी समय एक व्यक्ति तारघर पहुँचा और उसने एक तार करना चाहा। तार का मजमून था—

'कामाख्या का ऑपरेशन सफल रहा है—प्रेषक सुरेंद्रमोहन चक्रवर्ती।'

तारघरवालों ने बातों में लगाकर तार करनेवाले व्यक्ति को बिठाए रखा और इस बीच पुलिस को सूचना कर दी गई। पुलिस पहुँची और उसने तार करनेवाले व्यक्ति को गिरफ्तार कर लिया। उस व्यक्ति ने बताया कि मुझे तो यह तार एक अन्य व्यक्ति ने दिया है। उसने दर्जी की दुकान में जाकर वहाँ बैठे हुए कालीपद मुकर्जी को दिखा दिया। पुलिस ने कालीपद मुकर्जी को गिरफ्तार कर लिया। पुलिस के सामने कालीपद मुकर्जी ने बयान दिया—

"मि. कामाख्याप्रसाद सेन को मारने के लिए मैं अकेला ही जिम्मेदार हूँ। न किसीने मुझे ऐसा करने के लिए परामर्श दिया और न अन्य किसी प्रकार की सहायता। मैंने कामाख्याप्रसाद की हत्या इसलिए की, क्योंकि महिलाओं के प्रति उसका व्यवहार बहुत ही अपमानजनक, अभद्र व अशोभनीय रहा। मैं उसके इस व्यवहार को सहन नहीं कर सका और मैंने उसे मार डाला।"

कालीपद मुकर्जी को ढाका के एक विशेष जज के इजलास में पेश किया गया और उसने अदालत में भी वही वक्तव्य दिया, जो पुलिस के सामने दिया था। ८ नवंबर, १९३२ को उसे फाँसी का दंड सुना दिया गया और ढाका की सेंट्रल जेल में प्रातःकाल १६ फरवरी, १९३३ को उसे फाँसी के फंदे पर झुला दिया गया।

□

# ★ कृष्णचंद्र चौधरी ★ नित्यरंजन सेन ★ हरेंद्रनाथ चक्रवर्ती ★ हिमांशु विमल चक्रवर्ती

चटगाँव में क्रांतिकारी आंदोलन का पटाक्षेप होने वाला था। शस्त्रागार कांड के कई क्रांतिकारी आमने-सामने के युद्ध में शहीद हो चुके थे और कई जेल के अंदर थे। शस्त्रागार कांड के सूत्रधार सूर्यसेन को गिरफ्तार करके मुकदमा चलाया गया था। उन्हें तथा उनके साथी तारकेश्वर दस्तीदार को मौत की सजा सुना दी गई

थी। उन्हें निकट भविष्य में ही फंदों पर झुलाया जाने वाला था।

चटगाँव शस्त्रागार कांड के जो क्रांतिकारी बाहर रह गए थे, उन्होंने सोचा कि अपने नेता सूर्यसेन और तारकेश्वर की फाँसी के पहले कोई गुल खिलाना चाहिए। क्रांतिकारियों को पता चला कि यूरोपियन लोग एक क्रिकेट मैच खेलने जा रहे हैं। अपने लिए उन्होंने इसे उपयुक्त अवसर समझा और पूरी योजना बना ली गई।

७ जनवरी, १९३४ को पल्टन के मैदान पर यूरोपियन क्लब के सदस्यों में से ही निर्मित दो टीमों में क्रिकेट का मैच आयोजित हुआ। मैच को देखने के लिए भारी संख्या में यूरोपियन लोग वहाँ पहुँचे। इन दर्शकों में स्त्रियाँ और बच्चे भी थे। मैच समाप्त हो गया। खिलाड़ी लोग पैवेलियन में पहुँच गए और दर्शक लोग छोटे-छोटे समूहों में विभक्त होकर, मैच की समीक्षा करते हुए इधर-उधर घूमने लगे। पुलिस अधीक्षक महोदय उस मैच के प्रमुख अतिथि थे। क्लब भवन में खड़ी अपनी कार में बैठकर वे अपने घर जाने की तैयारी करने लगे। अपनी गाड़ी में बैठ जाने पर उन्होंने संदिग्धावस्था में दो मजदूर किस्म के लोगों को क्लब भवन के पास खड़ा देखा। उन लोगों पर उन्हें संदेह हुआ और कार से उतरकर उन्होंने उन दोनों लोगों को अपने पास पूछताछ के लिए बुलाया। वे उनकी तलाशी भी लेना चाहते थे। मजदूर किस्म के वे लोग दो क्रांतिकारी थे। उनमें से एक का नाम नित्यरंजन सेन था और दूसरे का हिमांशु विमल चक्रवर्ती।

नित्यरंजन सेन ने अंग्रेज पुलिस अधीक्षक को अपनी ओर आते हुए देखकर उसपर बम का प्रहार कर दिया। उसका निशाना चूक गया। पुलिस अधीक्षक और नित्यरंजन सेन गुत्थम-गुत्था हो गए। इस बीच साहब के ड्राइवर ने झपटकर बहुत निकट से नित्यरंजन सेन पर गोली दाग दी। नित्यरंजन सेन की तत्काल मृत्यु हो गई। इस हलचल को देखकर काफी लोग घटनास्थल पर पहुँच चुके थे और दूसरा क्रांतिकारी हिमांशु विमल चक्रवर्ती उनसे घिर गया था। कुछ लोगों को धक्का देता हुआ हिमांशु आगे बढ़ा। उसको भागता हुआ देखकर भीड़ं में से किसीने उसपर दो गोलियाँ चला दीं। दूसरी गोली घातक सिद्ध हुई और हिमांशु का भी प्राणांत हो गया।

जिस समय क्लब भवन के पास यह घटना हो रही थी, ठीक उसी समय अन्य दो क्रांतिकारी—हरेंद्रनाथ चक्रवर्ती और कृष्णचंद्र चौधरी पैवेलियन की ओर पहुँचे और उन्होंने बमों का संधान किया। उनके बम फूटे नहीं। हरेंद्र ने तो कुछ आगे बढ़कर अपने रिवॉल्वर से गोलियाँ भी चलाईं; लेकिन वे किसीको लगीं नहीं। वह पकड़ लिया गया।

कृष्णचंद्र चौधरी का भी पीछा किया गया और उसे भी पकड़ लिया गया। उन दोनों पर मुकदमा चला और उनपर अवैध हथियार रखने तथा हत्या करने के प्रयत्न के आरोप लगाए गए। उन्हें मृत्युदंड सुनाया गया।

कृष्णचंद्र चौधरी और हरेंद्रनाथ चक्रवर्ती को ५ जून, १९३४ को मिदनापुर जेल में फाँसी के फंदों पर झुला दिया गया।

□

## ★ केदारनाथ मालवीय ★ केशवप्रसाद सिंह ★ गणेश प्रसाद वर्मा ★ जगदेव मालवीय ★ जयदेव मिस्त्री ★ देवधारी यादव ★ प्रमथनाथ मुखर्जी ★ भगवतदास ★ मिथिलेश सिंह ★ राधा मोहन ★ विजयकुमार दासगुप्त ★ विश्वनाथ प्रसाद ★ शत्रुघ्न सिंह ★ श्यामाचरण बर्थवार ★ सहदेव सिंह तथा अन्य

❖ ❖

बंगाल और बिहार के क्रांतिकारी मिलकर इस बात का प्रयत्न कर रहे थे कि वे संयुक्त रूप से किसी व्यापक विद्रोह को कार्यान्वित करें। कई बार वे एक-दूसरे से मिले और आपस में विचार-विमर्श भी हुआ। बिहार के क्रांतिकारी चंद्रशेखर आजाद से अत्यधिक प्रभावित थे। यद्यपि उस समय तक चंद्रशेखर आजाद शहीद हो चुके थे, लेकिन बिहार के क्रांतिकारी उनकी शहादत से प्रेरणा ले रहे थे।

३० जनवरी, १९३३ को बिहार के क्रांतिकारियों ने गया के निकट एक मालगाड़ी लूट ली। उस मालगाड़ी में अन्य सामानों के अतिरिक्त हथियार भी थे।

पुलिस को इस कांड का सुराग मिल गया और क्रांतिकारियों की धर-पकड़ प्रारंभ हो गई। सत्रह क्रांतिकारी पकड़े गए और उनपर 'गया षड्यंत्र' नाम से

अभियोग चलाया गया। उन लोगों पर गवर्नर पर हमला करने तथा जेल सुपरिंटेंडेंट मि. बर्क की हत्या करने का भी आरोप था।

इन क्रांतिकारियों को दो वर्ष से लेकर सात वर्ष तक के कठोर कारावास के दंड दिए गए।

□

# ★ केशवचंद्र चक्रवर्ती ★ प्रणवेश चटर्जी ★ बनवारीलाल ★ रामप्रसाद बिस्मिल

केशवचंद्र चक्रवर्ती

रामप्रसाद बिस्मिल

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक को लानेवाली स्पेशल ट्रेन लखनऊ स्टेशन के प्लेटफॉर्म पर रुकी। हजारों लोग उस डिब्बे की तरफ झपटे, जिसके दरवाजे पर तिलकजी खड़े हुए दूर से ही दिखाई पड़ गए थे। स्थिति यह थी कि वहाँ तिलकजी का अपहरण होने वाला था और अपहरण करनेवाले दो दल अपनी-अपनी तैयारियों के साथ वहाँ पहुँचे थे। लखनऊ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन आयोजित था और एक दिन पहले ही कांग्रेस के अध्यक्ष श्री अंबिकादत्त मजूमदार का जोरदार जुलूस नगर में निकल चुका था। कांग्रेस के गरम दल के सदस्य इस बात पर तुले हुए थे कि लोकमान्य तिलक के लखनऊ पहुँचने पर उनका जुलूस भी नगर के मध्य निकाला जाएगा। वह जुलूस ऐसा होगा कि लोग देखते रह जाएँ और उसके आगे कांग्रेस के अध्यक्ष का जुलूस

फीका पड़ जाए। कांग्रेस के नरम दलवाले इस संभावना से भलीभाँति परिचित थे और इसीलिए उनकी योजना थी कि जैसे ही तिलकजी प्लेटफॉर्म पर कदम रखें, उन्हें अपने कब्जे में ले लिया जाए तथा कार में बैठाकर बाहर-बाहर के रास्ते से अधिवेशन स्थल पर ले जाया जाए। नरम दलवालों की इस योजना की खबर गरम दलवालों को भी थी और उनकी भी योजना थी कि इसके पहले कि नरम दलवाले तिलकजी को अपने कब्जे में ले सकें, हम लोग प्लेटफॉर्म पर उतरने के पहले ही उन्हें हथिया लें तथा नगर के बाजारों में से जुलूस निकालते हुए उनको ले जाएँ। तिलकजी के नाम के आकर्षण से कांग्रेस के गरम दल में तो जोश था ही, हजारों की संख्या में दूर-दूर के गाँवों और नगरों के ऐसे नौजवान भी लखनऊ पहुँचे थे, जो कांग्रेस के सदस्य नहीं थे। वे केवल तिलकजी के दर्शन करने और उनकी सिंह गर्जना सुनने ही वहाँ पहुँचे थे।

जैसे ही स्पेशल ट्रेन प्लेटफॉर्म पर रुकी, लोगों में हलचल मच गई और नरम दल व गरम दल—दोनों के ही समूह तिलकजी को अपने कब्जे में कर लेने के लिए उनके डिब्बे की तरफ झपट पड़े। नरम दल के लोग प्रतीक्षा कर रहे थे कि तिलकजी अपना पहला कदम प्लेटफॉर्म पर रखें और वे उनपर कब्जा कर लें। गरम दलवालों ने उन्हें यह अवसर ही नहीं दिया। उन लोगों ने डिब्बे के दरवाजे पर से ही तिलकजी को हाथों पर उठाकर कंधों पर बैठा लिया और उनकी जय बोलते हुए, जुलूस के रूप में प्लेटफॉर्म की भीड़ को चीरते हुए अपना रास्ता बनाने लगे। नरम दलवाले अपनी पराजय से खीज उठे तथा उनके स्वयंसेवकों ने एक तगड़ा घेरा बनाकर तिलकजी और गरम दल के लोगों को अपने बीच कर लिया। उन्होंने बलपूर्वक तिलकजी को अपने अधिकार में कर लिया और घेरे के रूप में ही उन्हें स्टेशन के बाहर ले जाकर कार में बैठा दिया। नरम दलवालों की इस हरकत से गरम दलवाले जोश खा गए और उनमें से कुछ नौजवान झपटे तो कार के सामने पहुँचकर सड़क पर लेट गए, जिससे कार आगे न बढ़ने पाए। जिस कार में तिलकजी बैठे थे, उसके एक पहिए के ठीक नीचे एक नौजवान लेट गया। वह नौजवान रोए जा रहा था और बार-बार कह रहा था—

''गाड़ी मेरे ऊपर से निकाल ले जाओ! गाड़ी मेरे ऊपर से निकाल ले जाओ।''

उस युवक की आँखों से आँसू टपक रहे थे और केवल उपर्युक्त वाक्य ही उसके मुख से बार-बार निकल रहा था। वह अपना आपा खो चुका था। उसकी यह दशा देखकर शेष तीन पहियों के नीचे तथा कार के आगे और पीछे दोनों ओर ही सैकड़ों युवक लेट गए। कार न आगे बढ़ सकती थी और न पीछे। स्थिति का लाभ

उठाकर गरम दलवालों का एक झुंड कार की ओर बढ़ा और उन्होंने तिलकजी को अपने हाथों पर उठाकर उस बग्घी में जा बिठाया, जो उनके लिए पहले से ही वहाँ तैयार रखी गई थी। बग्घी के घोड़े खोलकर अलग कर दिए गए और घोड़ों के स्थान पर नौजवान स्वयं ही जुतकर बग्घी को खींचने लगे। अब तिलकजी पूरी तरह से गरम दलवालों के अधिकार में पहुँच चुके थे और लखनऊ नगर के बाजारों में से उनका जुलूस निकाला जा रहा था। उनकी बग्घी खींचने के लिए लोगों में होड़ थी। जो कोई तनिक भी हाथ उनकी बग्घी से लगा लेता था, उसे ऐसा सुख मिलता था मानो उसे सारी दुनिया का साम्राज्य मिल गया हो। जुलूस सचमुच ही अद्‌भुत व ऐतिहासिक था और वह अपनी छाप छोड़ गया।

जिस युवक ने तिलकजी को हथियाने और उन्हें गरम दलवालों को सौंपने की वीरता दिखाई थी, वह युवक वही था जो सबसे पहले कार के अगले पहिए के नीचे लेटा था और जो रोते-रोते अपने ऊपर से कार निकाल ले जाने का पुरजोर आग्रह कर रहा था। उस युवक का नाम था रामप्रसाद बिस्मिल। वह शाहजहाँपुर से लखनऊ इसीलिए पहुँचा था कि वह तिलकजी के दर्शन कर सके और उनकी वाणी सुन सके। वह कांग्रेस का सदस्य नहीं था, वह तो क्रांति के साकार स्वरूप लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक का भक्त था। युवक रामप्रसाद की गरम भावनाओं का यह बहुत नरम विस्फोट था। आगे चलकर वह स्वयं एक उग्र क्रांतिकारी बन गया।

रामप्रसाद बिस्मिल ने जब सुना कि महान् क्रांतिकारी गेंदालाल दीक्षित को ब्रिटिश हुकूमत ने धोखे से गिरफ्तार करके ग्वालियर के किले में रखा है, तो उन्हें छुड़ाने के लिए उसका मन छटपटाने लगा। क्रांति के मार्ग पर कदम रखने की उसने अभी शुरुआत ही की थी; पर उसके हौसले बुलंद थे। प्रारंभिक झटके खाकर मरने-मारनेवाले नौजवानों का एक छोटा-सा दल खड़ा कर लेने में उसे सफलता मिली थी और अपने युवक साथियों को साथ लेकर वह गेंदालाल दीक्षित को कैद से छुड़ाने के विचार से ग्वालियर के किले पर जा पहुँचा।

रामप्रसाद बिस्मिल के दल के पास पुलिस के साथ भिड़ने योग्य हथियार नहीं थे। कुछ युवकों के पास टोपी से चलनेवाले देशी तमंचे थे, जो उन्होंने अपने कपड़ों के नीचे छिपा रखे थे। इसी प्रकार का एक तमंचा रामप्रसाद बिस्मिल के पास भी था। कुछ युवक बिलकुल खाली हाथ थे। किला देखनेवालों के दल के रूप में ये लोग किले पर पहुँचे और कैदखाने के एक रक्षक को किसी प्रकार अपनी ओर मिलाकर एक पत्र गेंदालाल दीक्षित के पास कैदखाने में भेजा। उस पत्र में लिखा था—

'पूज्य पंडितजी!

आपके गिरफ्तार हो जाने का हम सब लोगों को बहुत खेद है। हम कुछ नौजवान आपको कारागार से मुक्त कराने के लिए किला देखने के बहाने से आए हैं और इस समय आपके कारागार के पास ही हैं। यदि आप अनुमति दें तो हम पहरेदारों पर अचानक हमला करके आपको कारागार से छुड़ा लें। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस कार्य में दोनों ओर से कुछ लोगों की जानें जाएँगी; पर किसी बड़े काम को करने में कुछ कुर्बानियाँ तो देनी ही पड़ती हैं। यदि पत्र लिखने की सुविधा न हो तो संदेशवाहक के साथ 'हाँ' या 'ना' में ही उत्तर भिजवा दीजिए।'

रामप्रसाद बिस्मिल को शीघ्र ही 'ना' में उत्तर मिल गया। पत्र लानेवाले से ही गेंदालाल दीक्षित ने दल की शक्ति के विषय में जानकारी प्राप्त कर ली थी। उन्हें मालूम हो गया था कि दस-बारह युवक ही दल में हैं। दीक्षितजी ने सोचा कि यदि दस-बारह युवकों में सभी के पास पिस्तौल या रिवॉल्वर हुए, तो भी वे बंदूकों से सज्जित सैनिकों का मुकाबला कैसे कर सकेंगे। दूसरी बात यह भी थी कि कारागार से मुक्त होकर किले के बाहर निकलना भी संभव नहीं था; क्योंकि किले के दोनों फाटकों पर कड़ा पहरा रहता था। अत: उन्होंने अपने मुक्ति के प्रयास में इतने प्राणों का बलिदान उचित नहीं समझा।

रामप्रसाद बिस्मिल को कांग्रेस के अधिवेशन के समय लखनऊ पहुँचने का एक लाभ यह हुआ था कि सशस्त्र क्रांतिकारियों में से कुछ लोगों से उनका परिचय हो गया था। जब वे लोकमान्य तिलक की कार के नीचे लेटे तथा जुलूस में उन्होंने जिस जोश-खरोश का परिचय दिया, उनके इस व्यवहार से ही क्रांतिकारियों की नजर उनपर पड़ गई और धीरे-धीरे बिस्मिल क्रांतिकारी दल के एक विश्वसनीय सदस्य हो गए।

शाहजहाँपुर में रामप्रसाद बिस्मिल ने क्रांतिकारी भावनाओं से युक्त जिन युवकों का संगठन खड़ा किया, उसमें एक मुसलमान युवक भी उनके दल में सम्मिलित होने के लिए लालायित दिखाई पड़ा। इस युवक का नाम अशफाक उल्ला खाँ था। अशफाक के बड़े भाई के साथ बिस्मिल उर्दू मिडिल स्कूल में पढ़ चुके थे। परिवार उनका जाना-पहचाना था। फिर भी अच्छी तरह से प्रारंभिक परीक्षाएँ लेने के बाद अशफाक को अपने दल में सम्मिलित कर लिया।

अभी तक बिस्मिल के पास देशी तमंचे और देशी बंदूकें ही थीं। कारतूसी हथियार प्राप्त करने की उनकी तमन्ना थी। उन्हें मालूम हुआ कि ग्वालियर के एक रिटायर्ड पुलिस सुपरिंटेंडेंट महोदय अपनी राइफल बेचना चाहते हैं। रामप्रसाद बिस्मिल अशफाक को साथ लेकर ग्वालियर जा पहुँचे। उन्होंने पहले ही तय कर

लिया था कि वे स्वयं को प[illegible] जागीर का बताएँगे। एक बार हथियारों की खरीद के लिए वे पहाड़गढ़ हो [illegible] आ[illegible]ताछ के स[illegible]य वे पहाड़गढ़ के कुछ लोगों के नाम बता सकते थे। दोनों ने ठाकुरों जैसे नाम धारण कर लिये। पुलिस सुपरिंटेंडेंट (रिटायर्ड) महोदय के पास जब वे पहुँचे और उन्होंने उनकी राइफल खरीदने का विचार प्रकट किया तो सुपरिंटेंडेंट साहब ने कहा कि आप लोग अपने यहाँ के थानेदार से इस आशय का पत्र ले आइए कि वे आपको जानते हैं। बिस्मिल और अशफाक पत्र लाने के बहाने वहाँ से चले गए।

दो दिन पश्चात् रामप्रसाद बिस्मिल और अशफाक फिर उन रिटायर्ड सुपरिंटेंडेंट महोदय के पास पहुँचे और कहा कि थानेदार साहब तो दबिश पर गए हुए थे, हम वहाँ के जमींदार साहब का पत्र ले आए हैं। उन्होंने स्वयं ही पत्र लिखकर जमींदार साहब के नाम से हस्ताक्षर कर दिए थे। रिटायर्ड पुलिस अफसर ने जब वह पत्र देखा तो वे संतुष्ट तो हो गए; पर उन्होंने एक नया प्रस्ताव रख दिया और वह यह कि आप लोग मेरे साथ यहाँ के थाने तक चले चलिए। जब यह प्रस्ताव उन लोगों ने सुना तो बोले कि साहब, इस समय तो हम लोग अपने घर वापस जाने की जल्दी में हैं। यदि आप चाहें तो हम कल फिर उपस्थित होकर आपके साथ थाने भी चले चलेंगे और कल ही आपकी राइफल खरीद लेंगे। रिटायर्ड सुपरिंटेंडेंट महोदय ने सोचा कि ऐसा न हो कि आया हुआ ग्राहक हाथ से चला जाए। उन्हें पैसे की आवश्यकता थी और दाम भी उन्हें मुँहमाँगे मिल रहे थे। बिना उन्हें थाने ले जाए उन्होंने अपनी राइफल उन लोगों के हाथ बेच दी। इस दौरे में एक माउजर पिस्तौल और एक रिवॉल्वर भी उन लोगों के हाथ लग गए।

रामप्रसाद बिस्मिल और अशफाक उल्ला खाँ के सामने अब समस्या यह थी कि इतने हथियारों को वे शाहजहाँपुर तक ले कैसे जाएँ। अंग्रेजी इलाकों में बहुत छानबीन और तलाशी होती थी। इतने हथियार ले जाना खतरे से खाली नहीं था। रामप्रसाद बिस्मिल को एक युक्ति सूझी और वे हथियार अशफाक के पास छोड़कर अकेले शाहजहाँपुर गए तथा उधर से अपनी छोटी बहन शास्त्रीदेवी को अपने साथ लेकर ग्वालियर पहुँच गए।

रामप्रसाद बिस्मिल ने अपनी छोटी बहन की एक टाँग से राइफल बाँध दी और दूसरी टाँग से पिस्तौल व रिवॉल्वर। दोनों टाँगों से खपच्चियों के टुकड़े इस प्रकार बाँध दिए कि उनके सिरे टाँगों के बाहर दिखाई देते रहें। दोनों टाँगों पर वे पट्टियाँ बाँध दी गईं, जो अस्पतालों में बाँधी जाती हैं। अपनी बहन को इस प्रकार जख्मी के रूप में सज्जित करके बिस्मिल अपने साथी अशफाक की सहायता से उसे हाथों पर उठा-उठाकर, ट्रेन में लिटा-लिटाकर शाहजहाँपुर ले गए। रास्ते में

दो-चार बार उन्हें बताना पड़ा कि बहन [illegible] पड़ी है और हम लोग उसका यहाँ प्राथमिक उपचार कराके [illegible] ले जा रहे हैं, जहाँ उसका पक्का इलाज होगा। इस प्रकार का नाटक रचकर बिस्मिल और अशफाक को वे हथियार शाहजहाँपुर तक ले जाने में कोई कठिनाई नहीं हुई।

अपने प्रारंभिक क्रांतिकारी जीवन में रामप्रसाद बिस्मिल को बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। उन्हें जो साथी मिले, वे भरोसे के नहीं थे। उनमें से कुछ का उद्देश्य तो राजनीतिक डकैतियों का बहाना लेकर अपने लिए पैसा कमाना था। कुछ लोगों ने तो नोट बनाने का झाँसा देकर भी उन्हें ठगना चाहा। पोल खुल जाने पर उन्होंने बिस्मिल को मारने का प्रयत्न भी किया और उनपर गोली भी चलाई; पर वे बाल-बाल बच गए। बिस्मिल ने ऐसे साथियों को ठिकाने लगाकर उनसे बदला भी लेना चाहा; पर उनकी माताजी ने उन्हें समझा-बुझाकर रोक दिया। बिस्मिल को बनाने में उनकी माताजी का बहुत हाथ था और बिस्मिल भी उनकी हर बात मानते थे।

क्रांतिकारियों का जो वृहद् संगठन उत्तर प्रदेश में बना, उसके एक प्रभावशाली सदस्य अब रामप्रसाद बिस्मिल भी थे। उस दल का नाम 'हिंदुस्तान प्रजातंत्र संघ' था और उसके संगठक थे शचींद्रनाथ सान्याल; पर अपनी दिलेरी, सूझबूझ और अनुभवों के आधार पर इस संघ की फौजी शाखा के प्रभारी रामप्रसाद बिस्मिल थे। जो कोई भी 'एक्शन' (जुझारू कार्य) किया जाता था, वह रामप्रसाद बिस्मिल के ही नेतृत्व में संपन्न होता था।

एक राजनीतिक डकैती का आयोजन रामप्रसाद बिस्मिल के नेतृत्व में किया गया। इस दल में दस बाहरी व्यक्ति सम्मिलित हुए। वैसे रामप्रसाद बिस्मिल डाके डालने के पक्ष में नहीं रहते थे, पर दल की बिगड़ती हुई आर्थिक स्थिति ने उन्हें विवश कर दिया था। जिस व्यक्ति के घर डाका डाला गया, वह बहुत धनी तथा कंजूस था और वह समाज-विरोधी भी था। सोच-समझकर ही उस व्यक्ति को चुना गया था। क्रांतिकारियों का दल रात्रि के अँधेरे में गोलियाँ दागता हुआ गाँव में प्रवेश कर गया और सेठ को पकड़कर धन वसूल किया जाने लगा। वैसे गाँववाले उस सेठ से अप्रसन्न रहते थे; पर उसपर संकट आया हुआ देखकर उसकी सहायता करना उन्होंने अपना कर्तव्य समझा। वे लोग काफी संख्या में एकत्र होकर कुछ लाठियाँ और हथियार आदि लेकर आक्रमणकारियों का मुकाबला करने के लिए जा पहुँचे। रामप्रसाद बिस्मिल ने भरसक प्रयत्न किया कि हवा में गोलियाँ छोड़कर, गाँववालों को डरा-धमकाकर वापस होने के लिए बाध्य किया जाए; पर गाँववालों ने इसका उलटा अर्थ ही समझा। उन्हें यह भ्रम हो गया कि डाकू दल के पास

डराने-धमकानेवाले ही तमंचे हैं। इसी भ्रम में वे लोग निर्भीकता से आक्रमणकारियों पर पिल पड़े। इस संघर्ष में स्वयं बिस्मिल घायल हुए। जब उन्होंने देखा कि उनके साथी गाँववालों द्वारा पकड़े जा सकते हैं, तब उन्होंने गोली चलाने का आदेश दिया। गोलियाँ गाँववालों के पैरों में मारी गईं, जिससे वे मरें नहीं, घायल होकर ही रह जाएँ। गोलीवर्षा के कारण गाँववाले पीछे हट गए। जो कुछ धन मिला था, उसे लेकर क्रांतिकारी दल भी लौट पड़ा। गाँव के कुछ साहसी लोगों के एक दल ने उनका पीछा किया। फिर मुठभेड़ हुई और दो गाँववाले मारे गए। गाँववालों के मारे जाने का बिस्मिल को बहुत खेद हुआ और वे सोचने लगे कि दल के आर्थिक संकट को दूर करने के लिए कुछ अन्य उपाय सोचे जाएँ।

एक दिन रामप्रसाद बिस्मिल ट्रेन से सफर कर रहे थे। वे गार्ड के डिब्बे के पासवाले डिब्बे में बैठे थे। एक स्टेशन पर गाड़ी रुकी और उन्होंने देखा कि स्टेशन मास्टर रुपयों की एक थैली लेकर गार्ड के डिब्बे में पहुँचा। वहाँ संदूक खोलने-बंद होने की कुछ खटपट सुनाई दी और स्टेशन मास्टर खाली हाथ वापस हो लिया। बिस्मिल को यह समझते देर नहीं लगी कि प्रत्येक स्टेशन मास्टर अपने स्टेशन की आमदनी इसी प्रकार गार्ड के डिब्बे में रखे संदूक में डालता होगा। उन्होंने अनुमान लगाया कि गार्ड के डिब्बे में रखा संदूक लोहे की जंजीरों से इधर-उधर कसा हुआ होगा। इस बात की जाँच करने के लिए वे अगले स्टेशन पर प्लेटफॉर्म पर उतरे और उड़ती हुई नजरों से डिब्बे के अंदर झाँककर देखा। उन्होंने पाया कि लोहे का संदूक जंजीर से नहीं बँधा था। उस स्टेशन का मास्टर भी अपने स्टेशन की आमदनी का थैला उस संदूक में डाल आया। उस संदूक में रुपयों का थैला डालने की व्यवस्था कुछ इस प्रकार की थी जैसे डाक के डिब्बे में पत्र या पैकेट डालने की होती है। थैले को कुछ चपटा करके संदूक के अंदर खिसकाया जा सकता था, उसे बाहर नहीं निकाला जा सकता था। वह संदूक लखनऊ के मुख्यालय में खोला जाता था, जहाँ बड़े स्टेशन मास्टर के पास उसकी चाबी रहती थी। उसमें से सीलबंद थैले निकालकर आमदनी जमा कर दी जाती थी। रामप्रसाद बिस्मिल इस प्रक्रिया को भाँप गए। उनका अनुमान था कि संदूक के अंदर दस हजार रुपए तो अवश्य जमा होते होंगे। उनके मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि जनता पर डाका डालने के स्थान पर सरकार पर ही डाका क्यों न डाला जाए।

रामप्रसाद बिस्मिल शाहजहाँपुर के रहनेवाले थे। उनके अनुरोध पर 'हिंदुस्तान प्रजातंत्र संघ' की कार्यकारिणी की बैठक ७ अगस्त, १९२५ को शाहजहाँपुर में ही आयोजित की गई। मीटिंग में बिस्मिल के अतिरिक्त राजेंद्रनाथ लाहिड़ी, शचींद्रनाथ बख्शी, मन्मथनाथ गुप्त, मुकुंदीलाल गुप्ता, बनवारीलाल, चंद्रशेखर आजाद,

मुरारीलाल, केशव चक्रवर्ती और अशफाक उल्ला खाँ सम्मिलित हुए। मीटिंग में रामप्रसाद बिस्मिल ने अपनी उस रेल यात्रा के अनुभव सुनाए, जब उन्होंने सरकारी खजाने को ले जाते हुए देखा था। उनका प्रस्ताव था—

''अपने पिछले अनुभवों से हम देख चुके हैं कि धन प्राप्त करने के लिए डाके डालने से हमें उपलब्धि तो कुछ खास होती नहीं है, उलटे हम डाकुओं की श्रेणी में रखे जाते हैं और अपने ही भाइयों के खून से हमें अपने हाथ रँगने पड़ते हैं। इसीलिए मेरा प्रस्ताव है कि हम सरकारी खजाने पर ही हाथ साफ करें और यह काम कोई बहुत मुश्किल नहीं है।''

आजाद ने इस प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा—

''मैं पंडितजी के इस विचार का अनुमोदन करता हूँ। हम लोग जिस सरकार से भिड़ने की तैयारी में लगे हुए हैं, उसीके साथ अब हमारा सीधा टकराव होना चाहिए। आखिर उस सरकार को भी तो मालूम हो कि हिंदुस्तान की धरती से क्रांतिकारी लोग नि:शेष नहीं हो गए हैं।''

प्रस्ताव का समर्थन कुछ सदस्यों ने हाथ ऊपर उठाकर किया; पर प्रस्ताव के विरोध में अशफाक उल्ला खाँ ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा—

''मैं सरकारी खजाना लूटने के लिए ट्रेन पर डकैती डालने के पक्ष में बिलकुल नहीं हूँ। मेरे विरोध के कारणों में एक तो यह है कि जिस ट्रेन को हम लूटें, हो सकता है कि उसमें हथियार लिये हुए कई व्यक्ति हों और उनसे हमारी भिड़ंत हो जाए और इस भिड़ंत में संभव है कि दोनों ओर से कुछ जानें जाएँ। ऐसी स्थिति में हम खून-खच्चर से कहाँ बच पाएँगे! ट्रेन डकैती के विरोध का मेरा दूसरा कारण यह है कि हमारी ओर से सरकार के लिए यह खुली चुनौती हो जाएगी और सरकार अपनी पूरी शक्ति हमें कुचलने में लगा देगी। उस सूरत में हमें भी अपनी सारी शक्ति को खुद की हिफाजत के लिए लगाना पड़ेगा और हम लोग जो करना चाहते हैं, वह कुछ भी नहीं कर पाएँगे। इसीलिए मेरा अपना खयाल तो यही है कि हम लोग शांत रहकर अपनी शक्ति का संचय करते रहें और मौका पाकर आजादी की लड़ाई की शुरुआत कर दें।''

अशफाक उल्ला खाँ का विरोध कई लोगों को अच्छा लगा, क्योंकि उनके तर्क ठोस थे और वे वास्तविकता पर आधारित थे; पर फिर भी कुछ कर गुजरने के उत्साह में लोग ट्रेन डकैती का विचार छोड़ने के लिए सहमत नहीं थे। खून-खच्चर बचाने के लिए रामप्रसाद बिस्मिल ने सफाई देते हुए कहा—

''हम लोग जब गाड़ी रोकेंगे तो फायर करना शुरू कर देंगे, जिससे मुकाबले के लिए आनेवालों को अवसर ही न मिले और साथ ही हम मुसाफिरों को चेतावनी

भी देते जाएँगे कि वे बाहर न निकलें तथा बेफिक्री से अपने-अपने स्थान पर बैठे रहें। ऐसी स्थिति में न कोई मुकाबले के लिए आएगा और न खून-खच्चर होगा। साथी कुँअरजी (अशफाक का दल का नाम) की दूसरी बात विचारणीय अवश्य है कि ब्रिटिश शासन से हमारा सीधा टकराव प्रारंभ हो जाएगा; पर यदि हम इतनी सावधानी से काम करें कि पुलिस को डकैती का कोई सुराग ही न मिले तो फिर टकराव की स्थिति भी पैदा नहीं होगी।''

दल के अधिकांश सदस्यों की राय दिखी कि ट्रेन डकैती को स्थगित न किया जाए। यह स्थिति निर्मित हुई देख शचींद्रनाथ बख्शी ने प्रस्ताव का विरोध करनेवाले साथी अशफाक की ओर देखा। अशफाक का कथन था—

''जो स्वतंत्र विचार मैं रखना चाहता था, वे मैंने रखे। मैं देख रहा हूँ कि लगभग सभी लोग ट्रेन डकैती के पक्ष में हैं। ऐसी स्थिति में दल का निर्णय मुझे स्वीकार होगा। मैं यह भी स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मेरे विरोध का अर्थ यह कदापि न लगाया जाए कि मुझमें किसी निर्बलता का उदय हुआ है या मैं इस अभियान में हिस्सा नहीं लेना चाहता। यदि यह एक्शन किया जाता है तो मैं उतने ही उत्साह और उतनी ही जिम्मेदारी से उसमें भाग लूँगा, जितना दल के अन्य सदस्य इसमें अपना पार्ट अदा करेंगे।''

अशफाक के कथन से लोगों की रही-सही हिचक भी दूर हो गई और सभी में उत्साह तथा जोश का संचार हो गया। ट्रेन डकैती की तिथि ९ अगस्त, १९२५ निश्चित की गई और दो दिन के अंदर तैयारियाँ पूरी कर ली गईं। रेलवे टाइम टेबिल देखकर गाड़ी के समय का ज्ञान कर लिया गया कि वह किस स्टेशन पर कब पहुँचेगी। यह निश्चित किया गया कि सहारनपुर-लखनऊ गाड़ी के लखनऊ पहुँचते-पहुँचते ही सरकारी खजाना लूटा जाए, जिससे अधिक-से-अधिक धनराशि हाथ आ सके।

९ अगस्त, १९२५ का दिन आया। क्रांतिकारियों के दिलों में बेसब्री और अनिश्चितता की उथल-पुथल होने लगी। हजारों लोगों से भरी हुई ट्रेन को रोककर उसमें से सरकारी खजाने को लूट लेने में क्या-क्या अनुभव होंगे, इसका किसीको पता नहीं था। फिर भी निश्चय की अडिगता सभी के दिलों में थी। यह तय हुआ कि कुल दस व्यक्ति अभियान में सम्मिलित होंगे, जिनमें से सात व्यक्ति संदूक तोड़ने का सामान लेकर शाहजहाँपुर से तीसरे दर्जे के डिब्बे में सवार होंगे और शेष तीन व्यक्ति काकोरी स्टेशन से दूसरे दर्जे के डिब्बे में सवार होंगे। दूसरे दर्जे के डिब्बे में सवार होनेवालों को जंजीर खींचकर गाड़ी रोकने का काम दिया गया था।

सहारनपुर-लखनऊ पैसेंजर ट्रेन जब शाहजहाँपुर स्टेशन पर आकर रुकी तो

वे सातों क्रांतिकारी उस ट्रेन के तीसरे दर्जे के पृथक्-पृथक् डिब्बों मे इस प्रकार बैठ गएं कि आवश्यकता पड़ने पर वे खिड़कियों में से ट्रेन के दोनों ओर झाँक सकें। सभी लोगों को अभियान के नेता रामप्रसाद बिस्मिल का यह आदेश था कि वे लोग यथासंभव खिड़कियों के पास बैठें और बाहर झाँकते रहें तथा लोगों से बातचीत करने में न उलझें। ऐसा इसलिए किया गया था, जिससे वे शिनाख्तगी या पहचान से बच सकें। जो लोग शाहजहाँपुर से ट्रेन में सवार हुए, वे थे—रामप्रसाद बिस्मिल, चंद्रशेखर आजाद, मन्मथनाथ गुप्त, बनवारीलाल, मुकुंदीलाल गुप्ता, केशव चक्रवर्ती और मुरारीलाल।

हर स्टेशन पर रुकती हुई वह ट्रेन यात्रियों और खजाने को बटोरती हुई लखनऊ की तरफ बढ़ी चली जा रही थी। छह बजकर कुछ मिनट पर उसे लखनऊ के निकट काकोरी स्टेशन पर पहुँचना था। काकोरी के छोटे से स्टेशन से तीन क्रांतिकारियों को सवार होना था। ये तीन क्रांतिकारी थे—शचींद्रनाथ बख्शी, राजेंद्रनाथ लाहिड़ी और अशफाक उल्ला खाँ। ट्रेन का समय हुआ देख शचींद्रनाथ बख्शी दूसरे दर्जे के टिकट खरीदने के लिए टिकट घर के अंदर दाखिल हुए। उन दिनों प्रथम श्रेणी और द्वितीय श्रेणी के यात्रियों को यह सुविधा थी कि वे सामान्य खिड़की के बजाय टिकट घर के अंदर से टिकट ले सकते थे। शचींद्रनाथ बख्शी ने जब दूसरे दर्जे के लखनऊ के तीन टिकट माँगे तो टिकट बाबू उन्हें नीचे से ऊपर तक घूर-घूरकर देखने लगा। उसके इस प्रकार देखने का कारण यह था कि एक तो वह युवक उस स्टेशन पर पहली बार दिखा था और दूसरे, उस देहात के स्टेशन पर चार-छह महीनों में कभी कोई एक टिकट दूसरे दर्जे का बिकता होगा। टिकट बाबू को इस प्रकार घूरते हुए देखकर शचींद्रनाथ बख्शी को अच्छा नहीं लगा। उन्होंने उससे अंग्रेजी में कहा—''मैंने आपसे लखनऊ के दूसरे दर्जे के तीन टिकट माँगे हैं।'' टिकट बाबू यह सुनकर सकपका गया और उसने झट तीन टिकट दे दिए। टिकट लेकर शचींद्रनाथ बाहर आ गए और अपने दोनों साथियों को उन्होंने एक-एक टिकट दे दिया। प्लेटफॉर्म पर वे गाड़ी के आने की प्रतीक्षा करने लगे।

गाड़ी आने का संकेत हुआ, गाड़ी आई और प्लेटफॉर्म पर गाड़ी रुकते ही शचींद्रनाथ बख्शी, राजेंद्रनाथ लाहिड़ी तथा अशफाक उल्ला खाँ ने अपने साथियों की तलाश में गाड़ी के ऊपर नजरें दौड़ाईं। खिड़कियों से बाहर झाँकते हुए अपने साथियों के चेहरे देखकर वे आश्वस्त हुए और तीनों दूसरे दर्जे के डिब्बे में प्रवेश कर गए। दूसरे दर्जे के जिस डिब्बे में वे लोग बैठे, वह बिलकुल खाली था; पर एक बर्थ पर किन्हीं साहब का टोप रखा हुआ था, जो इस बात का परिचायक था कि कोई साहब उस डिब्बे में बैठे हैं, पर किसी काम से बाहर गए हुए हैं। गाड़ी चलने

का समय हुआ तो बाहर गए हुए साहब आकर अपने स्थान पर बैठ गए। उनकी बर्थ पर अशफाक उल्ला खाँ बैठे और सामनेवाली खाली बर्थ पर शचींद्रनाथ बख्शी तथा राजेंद्रनाथ लाहिड़ी बैठे। शचींद्रनाथ ने खिड़की के बाहर झाँकना प्रारंभ कर दिया। उन्होंने अपने दोनों साथियों को भी बाहर झाँकने का संकेत किया; पर वे संकेत को समझ नहीं सके। सामने बैठा हुआ व्यक्ति रेलवे विभाग का डॉक्टर था और उसका नाम चंद्रपाल गुप्त था।

गाड़ी ने सीटी दी और वह काकोरी स्टेशन का प्लेटफॉर्म छोड़कर आगे बढ़ने लगी। लखनऊ की ओर का सिगनल पार करके अभी वह लगभग दो फर्लांग आगे बढ़ी होगी कि शचींद्रनाथ बख्शी ने इधर-उधर और सामान रखने की बर्थ की ओर नजरें दौड़ाते हुए घबराहट के स्वर में राजेंद्रनाथ लाहिड़ी की ओर देखते हुए कहा—

''अरे! वह अपना जेवरोंवाला बक्सा कहाँ है?''

राजेंद्रनाथ लाहिड़ी ने भी घबराहट व्यक्त करते हुए कहा—

''वह तो कुँअरजी के हाथ में था। क्यों कुँअरजी! क्या आपने उसे डिब्बे में नहीं रखा?''

'कुँअरजी' नामधारी अशफाक ने और ज्यादा घबराहट का अभिनय करते हुए कहा—

''अरे, गजब हो गया! वह तो उसी बेंच के पास रखा रह गया, जहाँ प्लेटफॉर्म पर हम लोग बैठे थे।''

शचींद्रनाथ बख्शी ने बदहवासी का अभिनय करते हुए कहा—

''हम तो लुट गए भाई! बीस हजार रुपए के जेवरों का बक्सा प्लेटफॉर्म पर छोड़ आए। जल्दी गाड़ी की जंजीर खींचो और बक्से की खोज में भागो।''

इसके पहले कि कोई अन्य जंजीर खींचे, बख्शी स्वयं ही फुरती से उठे और जोर लगाकर गाड़ी की जंजीर खींच दी। जंजीर खिंचने के कुछ क्षण पश्चात् गाड़ी रुक गई और दूसरे दर्जे के तीन यात्री झट से डिब्बे के नीचे कूद पड़े। अन्य सात क्रांतिकारी भी अपने-अपने डिब्बों से नीचे कूद पड़े। ट्रेन का गार्ड भी फुरती से नीचे उतरा और वह दूसरे दर्जे के डिब्बे की ओर बढ़ा, जहाँ जंजीर खींची गई थी। एक क्रांतिकारी ने फौरन उसके सीने पर पिस्तौल रख दी तथा कहा कि अगर आप अपनी जान की खैर चाहते हैं तो यहीं औंधे लेट जाइए और उठने की कोशिश मत कीजिए, नहीं तो गोली मार दी जाएगी। गार्ड ने आदेश का अक्षरशः पालन किया और वहीं घास में औंधा लेट गया। दूसरे क्रांतिकारी ट्रेन के दोनों ओर अच्छी स्थिति लेकर घास में छिपे हुए गोलियाँ चलाने लगे। वे लोगों को चेतावनी देते जा रहे थे—

''यात्रियों से निवेदन है कि आप लोग खिड़कियाँ बंद करके अपने-अपने स्थान पर बैठे रहें। अगर किसीने नीचे उतरने की कोशिश की तो उसे गोली मार दी जाएगी। हम लोग किसी यात्री को कोई नुकसान नहीं पहुँचाना चाहते। हम तो गाड़ी में रखा सरकारी खजाना लूटकर चले जाएँगे।''

यात्रियों ने तत्परता से अपनी-अपनी खिड़कियाँ बंद कर लीं। गाड़ी के ड्राइवर को भी आदेश दिया गया कि वह इंजन से नीचे उतरकर घास पर लेट जाए। उस अंग्रेज ड्राइवर ने भी तत्परता से आदेश का पालन किया। गार्ड भी अंग्रेज था, वह भी लेटा हुआ था। बिस्मिल और अशफाक ने खजानेवाला संदूक धकेलकर डिब्बे से नीचे गिराया और वे छेनी-हथौड़े से उसे तोड़ने का प्रयत्न करने लगे। यत्न में सफलता न मिलते देख अशफाक उल्ला खाँ कुल्हाड़ा लेकर संदूक पर पिल पड़े। अशफाक अच्छे डील-डौलवाले और शक्तिशाली व्यक्ति थे। उन्होंने जब पूरी ताकत से संदूक पर प्रहार किए तो उसका मुँह इतना बड़ा हो गया कि हाथ डालकर उसके अंदर रखे सीलबंद थैले निकाल लिये गए। सभी थैले एक पोटली में बाँध लिये गए। जिस समय संदूक तोड़ा जा रहा था, उस समय दोनों ओर नियुक्त रक्षक क्रांतिकारी हर पाँच मिनट के अंतराल से पाँच फायर कर दिया करते थे। मुसाफिरों को ऐसा आभास हो रहा था जैसे सौ-पचास डाकुओं ने गाड़ी को घेर रखा है और वे निरंतर गोलीवर्षा कर रहे हैं। गाड़ी लूटने की क्रिया चल ही रही थी कि लखनऊ की ओर से आनेवाली किसी ट्रेन की लाइट दिखाई दी। सभी क्रांतिकारी अपने-अपने स्थान पर दुबक गए। पास की लाइन से 'देहरा एक्सप्रेस' धड़धड़ाती हुई निकल गई। जिस समय 'देहरा एक्सप्रेस' पैसेंजर गाड़ी को पार कर रही थी और क्रांतिकारी लोग दुबके हुए पड़े थे, उस स्थिति का लाभ उठाकर एक गुरखा सैनिक अपनी राइफल लेकर नीचे उतरा। उसका इरादा था कि वह नीचे उतरकर, अच्छी स्थिति लेकर लूटनेवालों को ललकारे। वह राइफल लेकर नीचे उतर रहा था कि एक क्रांतिकारी की गोली उसके सिर में लगी और वह भूमि पर गिरकर तड़पने लगा। एक अन्य मुसाफिर के पास पिस्तौल थी। यह बताने के लिए कि हमारे डिब्बे में भी हथियार हैं, कोई डाकू उधर जाने की हिम्मत न करे, उन्होंने अपना हाथ खिड़की से बाहर निकालकर एक फायर किया। उनका फायर करना था कि एक गोली उनके हाथ में लगी और उनकी पिस्तौल नीचे टपक पड़ी। लगभग बीस-पच्चीस मिनट में ही क्रांतिकारियों ने अपना काम पूरा कर लिया और वहाँ से खिसक लिये। उनके चले जाने के बहुत देर बाद तक गार्ड साहब अपनी जगह पर लेटे रहे। कुछ यात्रियों ने लूटनेवाले दल को वापस जाते हुए देख लिया था। उन्होंने नीचे उतरकर गार्ड साहब से उठने के लिए कहा। यात्रियों को अच्छी तरह पहचानकर ही गार्ड साहब अपने स्थान से उठे और इंजन की ओर ड्राइवर से

यह कहने के लिए गए कि खतरा टल चुका है और गाड़ी चलाई जाए। गाड़ी चले तो कैसे ? ड्राइवर साहब का कहीं कोई पता नहीं। बड़ी खोज के पश्चात् घास में औंधे मुँह लेटे हुए ड्राइवर साहब मिले। उन्हें भी उठाया गया। एक अंग्रेज इंजीनियर साहब को दम-दिलासा देकर संडास के अंदर से निकाला गया। फौज के दो अफसर बेंचों के नीचे लेटे पाए गए। उस पूरी गाड़ी में चौदह लोगों के पास बंदूकें थीं; पर केवल दस क्रांतिकारी अपनी योजना के अनुसार सभी लोगों को आतंकित करके गाड़ी में रखा हुआ खजाना लूट ले गए।

ट्रेन डकैती अभियान के नेता रामप्रसाद बिस्मिल ने सभी साथियों को समझा रखा था कि घटनास्थल से वापस होते समय यह अच्छी तरह देख लें कि वहाँ कोई वस्तु रह तो नहीं गई है। इतना होने पर भी एक क्रांतिकारी अपनी खादी की चादर वहीं छोड़ आया, जो पुलिस के हाथ लग गई।

घटनास्थल से कुछ दूर जाने के पश्चात् क्रांतिकारियों ने सीलबंद थैलियाँ खोलकर उनमें से सभी रुपए निकाल लिये और खाली थैलियाँ एक नाले में फेंक दीं। इस लूट से क्रांतिकारियों के हाथ आठ हजार छह सौ रुपए लगे। यह राशि अपने साथ लेकर क्रांतिकारी लोग लखनऊ पहुँच गए। उन्होंने सबसे पहले जो काम किया वह यह कि लूटे गए रुपए खजाने में जमा कराके उनके बदले नए नोट ले लिये। यह इसलिए किया गया, क्योंकि सरकार लूटे गए नोटों के नंबर घोषित कर देती तो वे सभी नोट बेकार हो जाते और उन नंबरों के आधार पर वे लोग पकड़े भी जा सकते थे। कुछ नोट खराब होने के कारण बदले नहीं जा सके थे। उन्हींमें से दो-एक नोट शाहजहाँपुर में पाए गए। इन नोटों के नंबर घोषित हो चुके थे, इस कारण सरकार को यह पता चल गया कि इस लूट में शाहजहाँपुर के लोग सम्मिलित हैं। शाहजहाँपुर में रामप्रसाद बिस्मिल तो पहले भी इस प्रकार की गतिविधियों में भाग लेने के कारण जाहिर हो चुके थे, अत: अब पुलिस उनपर निगरानी रखने लगी।

काकोरी ट्रेन डकैती कांड से सरकारी और गैर सरकारी दोनों ही क्षेत्रों में सनसनी फैल गई। यह सरकार के लिए बहुत बड़ी चुनौती थी। अपनी पूरी शक्ति के साथ पुलिस अपराधियों की खोज में लग गई। सभी प्रांतों में खुफिया पुलिस सतर्क कर दी गई।

ट्रेन डकैती द्वारा प्राप्त धन से क्रांतिकारियों का अच्छा काम चल निकला। कई केंद्रों पर कर्ज चढ़ गया था, वह पटा दिया गया। जिन केंद्रों पर धनाभाव के कारण कार्यकर्ता भूखे मर रहे थे, वहाँ धन भेज दिया गया। प्रचार कार्य के लिए धन अलग रख दिया गया और हथियारों की खरीद के लिए भी धन सुरक्षित रख दिया गया। दल के ही एक सदस्य, जो ट्रेन डकैती में सम्मिलित हुए थे, वे जर्मनी जाकर

हथियारों का सौदा कर आए थे और वे हथियार भारत पहुँचने ही वाले थे। इन हथियारों की खेप छुड़ाने के लिए धन सुरक्षित कर दिया गया। कुछ समय पश्चात् पैसा देकर ये हथियार प्राप्त भी कर लिये गए।

काकोरी ट्रेन डकैती के पश्चात् ही पुलिस एकदम सक्रिय हो गई। गिरफ्तारी के मसले को लेकर पुलिस में दो दल हो गए। एक दल का कहना था कि कुछ ठोस प्रमाण मिलने पर ही गिरफ्तारियाँ प्रारंभ की जाएँ। दूसरे दल का कहना था कि राजनीतिक चेतना रखनेवाले लोगों को तत्काल गिरफ्तार कर लिया जाए, प्रमाण भी बाद में मिल ही जाएँगे। दूसरे दलवाले लोगों की बात मानी गई और गिरफ्तारियाँ प्रारंभ कर दी गईं। पहले तो पुलिस का शक रेलवे विभाग के उन कर्मचारियों पर गया, जिन्हें सर्विस से निकाल दिया गया था। पुलिस का संदेह था कि नौकरी से निकाले जाने का असंतोष ही विद्रोह में परिणत हो गया होगा और क्षतिपूर्ति के लिए उन्हीं लोगों ने सरकारी खजाना लूटा होगा; क्योंकि रेलवे के खजाने के ले जाने की प्रक्रिया से वे वाकिफ थे। उन लोगों पर निगरानी भी रखी गई; पर संदेह की पुष्टि नहीं हो सकी। पुलिस के संदेह को आधार मिला खादी की उस चादर से, जो डकैती के स्थल पर मिली थी। चादर खादी की थी, इस कारण पुलिस इस निश्चय पर पहुँची कि डकैती करनेवाले लोग राजनीतिक चेतना के होने चाहिए। इस प्रकार के लोगों के नाम पुलिस में पहले ही दर्ज थे। उन्हींके आधार पर धड़ाधड़ गिरफ्तारियाँ प्रारंभ हो गईं। केवल एक ही दिन अर्थात् २६ सितंबर, १९२५ को बहुत सारी गिरफ्तारियाँ हुईं। ये गिरफ्तारियाँ मुख्यत: कानपुर, बनारस, इलाहाबाद और लखनऊ आदि नगरों में हुईं। काकोरी कांड के एक क्रांतिकारी बनवारीलाल की गिरफ्तारी ने क्रांतिकारियों पर संकट पैदा कर दिया। उसने पुलिस को बयान दे दिया तथा दल के उन सभी लोगों के नाम-धाम बता दिए, जो उस कांड में सम्मिलित हुए थे और जिन्होंने इस कार्य के लिए कुछ भी सहयोग दिया था। इसी प्रकार की निर्बलता दिखाई दल के एक अन्य सदस्य बनारसीलाल ने।

रामप्रसाद बिस्मिल अभी तक गिरफ्तार नहीं किए गए थे। वे शाहजहाँपुर में रह रहे थे। उनके शुभचिंतकों ने उन्हें बताया कि बहुत शीघ्र ही आपकी गिरफ्तारी होने वाली है। बिस्मिल ने इन सूचनाओं पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। उनका चिंतन था कि यदि मैं गिरफ्तार हो भी गया तो मेरे विरुद्ध कोई प्रमाण नहीं मिल सकेगा। उन्हें क्या पता था कि उनके ही कुछ साथी उनकी गिरफ्तारी का जाल बना चुके हैं।

रामप्रसाद बिस्मिल निर्भीक होकर शाहजहाँपुर में रहते रहे। एक रात ग्यारह बजे वे अपने एक मित्र से मिलकर घर लौटे और कुछ काम निबटाने के पश्चात् सो

गए। सोने से पूर्व उन्हें खयाल आया कि एक क्रांतिकारी साथी को लिखा गया पत्र उनके कुरते की जेब में पड़ा रह गया है, जिसे वे डाक के डिब्बे में नहीं डाल पाए। उन्होंने सोचा कि वह पत्र सुबह डाल देंगे। नित्य नियम के अनुसार वे प्रात: चार बजे सोकर उठे और शौच आदि से निवृत्त हुए। उसी समय उनके दरवाजे पर किसीने दस्तक दी। उन्होंने द्वार खोला तो सामने पुलिस को खड़ा पाया। पुलिस के एक अफसर ने आगे बढ़कर उनका हाथ पकड़ लिया और कहा कि आप गिरफ्तार किए जाते हैं। पुलिस ने उनके मकान की तलाशी ली; पर कोई आपत्तिजनक वस्तु नहीं पाई गई। बिस्मिल ने पुलिस के साथ चलने के पूर्व अपने कपड़े पहने। कुरता पहनने के पश्चात् उन्होंने अपना हाथ जेब में डाला और पत्र को टटोलकर वहीं पड़ा रहने दिया। पुलिस अफसर ने पूछा भी कि जेब में क्या है। बिस्मिल ने बताया कि एक पत्र लिखा था, वह पोस्ट करने से रह गया है। अफसर ने वह पत्र ले लिया और उस पत्र के आधार पर कुछ और लोगों की गिरफ्तारियाँ भी हुईं। काकोरी ट्रेन डकैती में कुल दस क्रांतिकारियों ने भाग लिया था, पर गिरफ्तारियाँ चालीस से ऊपर की गईं। क्रांतिकारियों के साथ उनके 'पोस्ट बॉक्स' भी गिरफ्तार हुए। क्रांतिकारी लोग अपने उन मित्रों को 'पोस्ट बॉक्स' कहते थे, जिनके माध्यम से वे अपने पत्र मँगाते थे। ट्रेन डकैती के तीन आरोपी गिरफ्तार नहीं किए जा सके। वे थे—शचींद्रनाथ बख्शी, अशफाक उल्ला खाँ और चंद्रशेखर आजाद। चंद्रशेखर आजाद तो कभी गिरफ्तार किए ही नहीं जा सके। बहुत बाद में शचींद्रनाथ बख्शी एवं अशफाक उल्ला खाँ गिरफ्तार किए गए और उनपर अलग से मुकदमा चला।

गिरफ्तार किए गए क्रांतिकारियों को पुलिस ने पृथक्-पृथक् जेलों में रखा। क्रांतिकारियों को पृथक्-पृथक् रखने के पीछे सरकार का यह उद्देश्य था कि उन्हें फुसलाकर, प्रलोभन देकर और डरा-धमकाकर फोड़ा जा सके। पुलिस के अफसर नियमित रूप से क्रांतिकारियों से मिलते भी रहे, जिससे ऐसे क्रांतिकारियों की तरफ से दूसरों के दिलों में शक पैदा हो जाए और उनमें आपस में फूट पड़ जाए। पुलिस को इस कार्य में कुछ सफलता भी मिली। बनारसीलाल मुख्य सरकारी गवाह और बनवारीलाल मुखबिर बन गया। इंदुभूषण मित्र भी इकबाली गवाह बन गया।

प्रारंभिक छानबीन के पश्चात् कुछ लोगों को छोड़ दिया गया और पचीस क्रांतिकारियों पर 'काकोरी षड्यंत्र कांड' नाम से मुकदमा चलाया गया। मुकदमा १६ अप्रैल, १९२६ को दायर किया गया; पर उसकी सुनवाई १ मई, १९२६ से प्रारंभ हुई। क्रांतिकारियों की ओर से मुकदमा लड़ने का उत्साह किसीमें दिखाई नहीं देता था। सरकार के दमनकारी रवैये से लोग डरे हुए थे। क्रांतिकारियों के घर के लोग भी भय के मारे सामने नहीं आ रहे थे। धीरे-धीरे लोगों में राजनीतिक चेतना जाग्रत

हुई और कुछ वरिष्ठ नेता सामने आए तो अन्य लोगों में भी उत्साह का संचार होने लगा। क्रांतिकारियों की हिमायत करनेवाले नेताओं में पं. मोतीलाल नेहरू, पं. जवाहरलाल नेहरू, गणेशशंकर विद्यार्थी, शिवप्रसाद गुप्त, श्रीप्रकाश और आचार्य नरेंद्रदेव मुख्य थे। पं. मोतीलाल नेहरू का विचार था कि क्रांतिकारियों की ओर से मुकदमा लड़ने की जिम्मेदारी लखनऊ के प्रसिद्ध वकील श्री जगतनारायण मुल्ला को दी जाए। इस प्रकार की चर्चाएँ प्रारंभ हो भी चुकी थीं; पर इसी बीच सरकार ने एक चालाकी की और वह यह कि श्री जगतनारायण मुल्ला को ऊँचे पद पर नियुक्त कर दिया तथा उनकी सेवाएँ सरकारी वकील के रूप में ले लीं। मुकदमा डेढ़ वर्ष तक चला और इस बीच सरकार श्री जगतनारायण मुल्ला को प्रतिदिन पाँच सौ रुपए तथा उनके पुत्र को प्रतिदिन ढाई सौ रुपए पारिश्रमिक के रूप में देती रही। क्रांतिकारियों की ओर से गोविंद बल्लभ पंत, चंद्रभानु गुप्त, मोहनलाल सक्सेना, अजित प्रसाद जैन, गोपीनाथ श्रीवास्तव, आर.एम. बहादुरजी तथा कलकत्ता के प्रसिद्ध बैरिस्टर बी.के. चौधरी मुकदमा लड़ रहे थे।

मुकदमे के दौरान सभी क्रांतिकारियों को लखनऊ लाकर एक ही जेल में रखा गया। शचींद्रनाथ सान्याल को भी इस मामले में घसीटा गया और १९२४ में गिरफ्तार किए गए जोगेशचंद्र चटर्जी को भी लखनऊ लाकर काकोरी षड्यंत्र कांड में सम्मिलित कर दिया गया। जेल का तो यह नियम हमेशा ही रहा है कि बिना लड़े क्रांतिकारियों को कभी कोई सुविधाएँ नहीं मिलीं। लखनऊ जेल में इन क्रांतिकारियों को भी सामान्य कैदियों की भाँति रखा जाने लगा। जेल अधिकारियों के दुर्व्यवहार से तंग आकर उन्हें अनशन का सहारा लेना पड़ा। क्रांतिकारियों द्वारा निरंतर सोलह दिन अनशन करने के उपरांत सरकार को झुकना पड़ा और उनके साथ राजनीतिक बंदियों जैसा व्यवहार किया जाने लगा। ये अधिकार देने में भी सरकार ने चालबाजी की। स्वास्थ्य के आधार पर ही क्रांतिकारियों को कुछ सुविधाएँ दी गई थीं। मुकदमा खत्म होने पर और सजाएँ सुनाने के पश्चात् वे सुविधाएँ उनसे छीन ली गईं। अनशन के कारण मुकदमे की कार्यवाही में कुछ विलंब हो गया।

लखनऊ जेल में क्रांतिकारियों को कुछ तसल्ली की बात थी तो यह कि जेलर महोदय रायबहादुर चंपालाल का व्यवहार उन सभी के प्रति बहुत अच्छा था। कुछ समय पश्चात् ही वे रिटायर होने वाले थे, इस कारण किसीकी बददुआएँ लेने के पक्ष में वे नहीं थे। वे इन क्रांतिकारियों के प्रति बच्चों जैसा स्नेह प्रदर्शित करते थे और उनके लिए सुविधाएँ भी जुटाते रहते थे। जेल में अखाड़ा खुदवा दिया गया था, जहाँ कुछ क्रांतिकारी नियमित रूप से व्यायाम करते थे और कुश्ती का अभ्यास

करते थे। कबड्डी खेलना भी उनके दैनिक क्रम में सम्मिलित हो गया था। इसके अतिरिक्त शतरंज और कैरम खेलने की सुविधाएँ उन्हें प्रदान की गई थीं। सबसे बड़ी बात तो यह थी कि गाने-बजाने का शौक पूरा करने के लिए उन्हें हारमोनियम रखने की सुविधा भी प्रदान की गई थी। क्रांतिकारियों के कारण वह जेल क्लब घर जैसी लगने लगी थी।

लखनऊ जेल में रहते हुए क्रांतिकारियों के दिमाग में यह योजना भी आई कि रामप्रसाद बिस्मिल को जेल से भगा दिया जाए। इसकी तैयारी भी उन लोगों ने कर डाली। लोहे की छड़ें काटने की आरी मँगा ली गई और बड़ी युक्तिपूर्वक छड़ें काट भी ली गईं; पर कुछ सोच-विचारकर रामप्रसाद बिस्मिल ने ही भागने से इनकार कर दिया। उन्होंने सोचा कि यदि मैं भाग जाऊँगा तो अपने उन साथियों के साथ बेईमानी होगी, जो नहीं भागेंगे। सबसे बड़ी बात तो यह थी कि उन्हें जेलर रायबहादुर चंपालाल का खयाल आ जाता था, जिनका रिटायरमेंट अत्यंत निकट था और वे बड़ी भारी मुसीबत में फँस जाते। रामप्रसाद बिस्मिल का यह सदैव ही आदर्श रहा कि जो विश्वास करे, उसके साथ कभी भी दगा नहीं करनी चाहिए। गिरफ्तार होने के बाद भागने के उन्हें कई अवसर मिले, पर वे कभी भागे नहीं।

जिस समय रामप्रसाद बिस्मिल को गिरफ्तार किया गया था, उस समय न उनके हाथों में हथकड़ियाँ डाली गईं और न उनके हाथ रस्सी से बाँधे गए। उन्हें खुले रूप में ही कोतवाली तक ले जाया गया। पुलिसवालों ने उनपर इतना विश्वास किया, इसलिए वे भी उनको दगा देकर भागे नहीं। गिरफ्तार करके जब उन्हें कोतवाली पहुँचाया गया तो वहाँ उन्हें बैठा दिया गया और उनकी निगरानी के लिए एक ही सिपाही रखा गया। रात-भर का जागा हुआ होने के कारण उस सिपाही को भी नींद आ गई। बिस्मिल उस दशा में भी वहाँ से नहीं भागे। भाग निकलने की सबसे अधिक सुविधा तो उन्हें उस समय मिली, जब अशफाक उल्ला खाँ के घर की तलाशी लेने के पश्चात् पुलिस उनके बड़े भाई की बंदूक एवं कारतूस उठा लाई और यह सामान रामप्रसाद बिस्मिल के पास ही रखकर पुलिसवाले इधर-उधर चले गए। वह सामान मुंशीजी के पास जमा करने के लिए रखा गया था। यदि बिस्मिल चाहते तो बंदूक और कारतूस उठाकर चल देते। उस समय तो पुलिस का मुकाबला करने का साधन भी उनके पास था; पर उन्होंने ऐसा नहीं किया। उन्हें बार-बार बूढ़े मुंशीजी का खयाल आ जाता था, जिन्होंने उनपर इतना विश्वास करके वे हथियार वहाँ रख छोड़े थे। जब सुपरिंटेंडेंट महोदय ने यह दृश्य देखा तो वह सामान हटवाकर उन्होंने उसे मालखाने में रखवा

दिया। एक बार बिस्मिल को शौच जाना पड़ा। सिपाही उन्हें रस्सी से बिना बाँधे ही बाहर के शौचालय में ले गया और उन्हें छोड़कर वह कुश्तियाँ देखने लगा। रामप्रसाद बिस्मिल दीवार पर हाथ रखकर उसपर चढ़ भी गए; पर सिपाही को बेफिक्री से कुश्तियाँ देखते हुए देखकर उनको उसपर दया आ गई और उसके साथ विश्वासघात करना उन्होंने उचित नहीं समझा।

लखनऊ जेल में रामप्रसाद बिस्मिल को कुछ व्यक्तिगत सुविधाएँ भी प्रदान की गईं। वे पक्के आर्यसमाजी थे और जेल में भी उन्हें प्रतिदिन हवन करने की सुविधा दी गई थी। जेल के सिपाही लोग उनका बहुत अधिक सम्मान करने लगे थे। घर पर किसीके बीमार पड़ने पर वे बिस्मिल से हवन की भभूत भी ले जाया करते थे और संयोग ऐसा होता था कि बीमार अच्छा हो जाता था। बैरक का पहरा देनेवाले सिपाही तो बिस्मिल का भरोसा करके सो भी जाया करते थे। वे जानते थे कि बिस्मिल न तो स्वयं भागेंगे और न किसी अन्य को भागने देंगे।

मुकदमा लंबा चलता रहा और लखनऊ जेल में क्रांतिकारियों के दिन निकलते रहे। कभी-कभी जेल में शिनाख्तगी की परेड भी होती थी। एक दिन रेलवे के उस डॉक्टर को शिनाख्तगी के लिए बुलाया गया, जिसके डिब्बे में शचींद्रनाथ बख्शी, राजेंद्रनाथ लाहिड़ी और अशफाक उल्ला खाँ काकोरी स्टेशन से बैठे थे। वह राजेंद्रनाथ लाहिड़ी और अशफाक उल्ला खाँ को पहचान गया। शचींद्रनाथ बख्शी को वह इसलिए नहीं पहचान सका, क्योंकि बख्शी जानबूझकर उसकी ओर से मुँह घुमाकर खिड़की के बाहर देखने लगे थे। जब शचींद्रनाथ बख्शी काकोरी स्टेशन के टिकट घर के अंदर दूसरे दर्जे के तीन टिकट लेने गए थे तो टिकट बाबू ने दो-तीन बार उन्हें नीचे से ऊपर तक देखा था। वह आसानी से इन्हें पहचान गया; पर न जाने क्या सोच-समझकर उसने कह दिया कि यह युवक टिकट लेने मेरे पास नहीं आया।

कभी-कभी कुछ फरार क्रांतिकारी भी जेल या अदालत में वेश बदलकर क्रांतिकारियों से मिल आते थे या कोर्ट की कार्यवाही देख-सुन आते थे। इसी प्रकार का खतरा मोल लिया था एक बार सरदार भगतसिंह ने। वह तो स्वयं भी काकोरी केस में फँसते-फँसते बाल-बाल बच गए। एक दिन एक राजकुमार का वेश बनाकर वे दिन-भर अदालत की कार्यवाही देखते रहे। कुछ क्रांतिकारी उसे पहचान भी गए; पर केवल मुसकानों का आदान-प्रदान होकर रह गया। फाँसी के कुछ समय पहले प्रसिद्ध क्रांतिकारी शिव वर्मा भी जेल में रामप्रसाद बिस्मिल से मिले थे।

वैसे तो क्रांतिकारियों की ओर से मुकदमा लड़नेवाले वकील उन्हें बचाने में

अपनी पूरी शक्ति लगा रहे थे, पर कभी-कभी रामप्रसाद बिस्मिल भी अपने वक्तव्यों से अपनी प्रतिभा का परिचय दे देते थे। सेशन जज की अदालत में मुकदमे के अंत में अपना वक्तव्य देते हुए रामप्रसाद बिस्मिल ने कहा था—

''जज साहब! हम जानते हैं कि आप हमें क्या दंड देंगे। हम जानते हैं कि हमें फाँसी का दंड आप देंगे और हम जानते हैं कि हमारे जो होंठ इस समय अदालत में हिल रहे हैं, वे कुछ दिन बाद बंद हो जाएँगे। हमारा बोलना, काम करना, हिलना और यहाँ तक कि हमारा जीना और साँस लेना भी सरकार के विरुद्ध समझा जाता है। न्याय के नाम पर शीघ्र ही हमारा गला घोंट दिया जाएगा। मैं जानता हूँ कि मैं मरूँगा; किंतु मैं मरने से नहीं डरता। किंतु जनाब! क्या इससे सरकार का उद्देश्य पूरा हो जाएगा? मैं तो कहता हूँ कि हमारा खून नए क्रांतिकारियों को जन्म देगा और आखिर एक दिन विदेशियों के तांडव नृत्य की यहाँ समाप्ति होगी। मैं मरूँगा, किंतु फिर जन्म लूँगा और मातृभूमि का उद्धार करूँगा।''

निरंतर अठारह महीने मुकदमा चलते-चलते और होते-करते वह दिन भी आ गया, जब क्रांतिकारियों को फैसला सुनाया जाने वाला था। यह दिन उनके जीवन का विशेष दिन था। वह ६ अप्रैल, १९२७ का दिन था। लखनऊ के रिंग थिएटर भवन में काकोरी कांड का निर्णय सुनाया जाने को था। पैदल और घुड़सवार पुलिस निरंतर गश्त लगा रही थी कि कहीं कोई उपद्रव न भड़क उठे। उस दिन देश के इन सपूतों के भाग्य का निर्णय जानने के लिए नगरवासी भी भारी संख्या में रिंग थिएटर की ओर पहुँच रहे थे। क्रांतिकारी लोग तो उस दिन बहुत ही मस्ती में थे। एक साथ रहने का वह उनका आखिरी दिन था। उस दिन सब लोग साथ-साथ ही भोजन करने बैठे। रामप्रसाद बिस्मिल स्वयंपाकी थे। जेल में भी वे स्वयं अपने लिए भोजन बनाते थे तथा वही खाते थे और किसीके हाथ का नहीं। किसीने उनके सामने प्रस्ताव रख दिया—

''पंडितजी! हम सभी जानते हैं कि आज किसी-किसीको फाँसी और किसी-किसीको लंबी-लंबी सजाओं का फैसला सुनाया जाएगा। आज के बाद हम लोगों को अलग-अलग स्थानों पर रखा जाएगा। पता नहीं, जीवन में फिर एक-दूसरे को देखने का अवसर मिले या न मिले। हम सभी की हार्दिक इच्छा है कि आज आप भी हमारे ही बीच बैठकर आनंद भोजन करें।''

रामप्रसाद बिस्मिल ने अपने साथियों का प्रस्ताव मान लिया। वे अपने भोजन की थाली उठाकर वहाँ ले गए, जहाँ सभी लोग भोज़न करने वाले थे। अपनी थाली का सामान उठाकर वे साथियों के मुँह में देने लगे। यह क्रम चल पड़ा। सभी साथियों ने भी थालियों में से एक-एक कौर भोजन बिस्मिल के मुँह में रखा। हर

क्रांतिकारी ने अपने अन्य साथियों को अपने हाथ से कुछ-न-कुछ खिलाया। पहरेदार और जेल के अन्य कर्मचारी भी विस्मय के साथ यह तमाशा देखने लगे। इस पारस्परिक प्रीतिभोज में वे भी सम्मिलित हो गए।

भोजनोपरांत बिदाई समारोह का आयोजन हुआ। सम्मान सामग्री पहले ही मँगाकर रख ली गई थी। कोई चंदन की कटोरी लेकर सभी के माथे पर चंदन लगाने लगा तो कोई इत्रदान लेकर सभी के कपड़ों पर इत्र छिड़कने लगा। कोई गुलाब जल छिड़क रहा था तो कोई पान की थाली हाथ में लिये हुए अपने ही हाथ से सभी के मुँह में पान ठूँस रहा था। इनके रोम-रोम से मस्ती फूटी पड़ रही थी और इन्हें देख-देखकर जेल के लोगों की आँखों में आँसू छलछला रहे थे।

सभी तरह से तैयार हो जाने के पश्चात् क्रांतिकारी लोग प्रतीक्षारत गाड़ियों में जाकर बैठे। रास्ते-भर वे लोग सामूहिक स्वरों में बिस्मिलजी का प्रेरणा गीत 'सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है, देखना है जोर कितना बाजुए कातिल में है' गाते रहे। अदालत में प्रवेश करने से पूर्व एक बार फिर पूरा गीत गाया गया। गीत की समाप्ति के पश्चात् 'भारत माता की जय' और 'वंदेमातरम्' का जयघोष किया गया। इस प्रकार से झूमते-इठलाते हुए देश के दीवाने अपने-अपने भाग्य का फैसला सुनने के लिए अदालत के अंदर जा पहुँचे।

अदालत के अंदर एक मनहूस खामोशी छाई हुई थी। अंग्रेज जज साहब फैसला सुनाने के लिए तैयार बैठे थे। वे अपना सामान लखनऊ स्टेशन पर भेज चुके थे। फैसला सुनाने के बाद सीधे स्टेशन पहुँचकर उन्हें झाँसी के लिए गाड़ी पकड़नी थी। वे बहुत लंबी छुट्टी पर विलायत जा रहे थे। उनका चिंतन था कि फैसला सुनने के पश्चात् क्रांतिकारियों के हिमायती लोग उनपर दाँव लगा सकते हैं। अपने फैसले में उन्होंने निम्नलिखित सजाएँ सुनाईं—

१. रामप्रसाद बिस्मिल : फाँसी
२. रोशनसिंह : फाँसी
३. राजेंद्रनाथ लाहिड़ी : फाँसी
४. शचींद्रनाथ सान्याल : आजन्म कालापानी
५. मन्मथनाथ गुप्त : चौदह वर्ष का कारावास
६. जोगेशचंद्र चटर्जी : दस वर्ष का कारावास
७. मुकुंदीलाल गुप्ता : दस वर्ष का कारावास
८. गोविंद चरण : दस वर्ष का कारावास
९. राजकुमार सिन्हा : दस वर्ष का कारावास
१०. रामकृष्ण खत्री : दस वर्ष का कारावास

| | | | |
|---|---|---|---|
| ११. | विष्णुशरण दुबलिस | : | सात वर्ष का कारावास |
| १२. | सुरेशचंद्र भट्टाचार्य | : | सात वर्ष का कारावास |
| १३. | भूपेंद्रनाथ सान्याल | : | पाँच वर्ष का कारावास |
| १४. | रामदुलारे त्रिवेदी | : | पाँच वर्ष का कारावास |
| १५. | प्रेमकृष्ण खन्ना | : | पाँच वर्ष का कारावास |
| १६. | रामनाथ पांडेय | : | पाँच वर्ष का कारावास |
| १७. | प्रणवेश चटर्जी | : | चार वर्ष का कारावास |
| १८. | बनवारीलाल | : | इकबाली गवाह होने पर भी पाँच वर्ष का कारावास |
| १९. | शचींद्रनाथ विश्वास | : | प्रमाण न मिलने से बरी |
| २०. | हरगोविंद | : | प्रमाण न मिलने से बरी |
| २१. | सेठ दामोदरस्वरूप | : | अत्यधिक बीमार होने से बरी |
| २२. | बनारसीलाल | : | मुखबिर होने के कारण बरी |
| २३. | इंदुभूषण मित्र | : | मुखबिर होने के कारण बरी |
| २४. | शचींद्रनाथ बख्शी | : | बाद में पकड़े जाने पर पूरक मुकदमे में आजन्म कालापानी |
| २५. | अशफाक उल्ला खाँ | : | बाद में पकड़े जाने पर पूरक मुकदमे में फाँसी |
| २६. | चंद्रशेखर आजाद | : | कभी पकड़े ही नहीं गए |

फैसले का कुछ-कुछ आभास क्रांतिकारियों को पहले से ही था। उन्हें आश्चर्य हुआ तो केवल रोशनसिंह की फाँसी का दंड सुनकर; क्योंकि वे 'काकोरी एक्शन' में सम्मिलित नहीं थे। अपने लिए फाँसी का दंड सुनकर रोशनसिंह ने जज साहब को धन्यवाद दिया। फैसला सुनने के साथ अदालत में ही क्रांतिकारी एक-दूसरे से गले लगकर मिलने लगे। जो छोटे थे, उन्होंने बड़ों के पैर छुए। कुछ लोग छिपाकर पुष्पहार ले गए थे। जिन्हें फाँसी की सजाएँ सुनाई गई थीं, उन्हें पुष्पहार पहनाए गए।

फैसला सुनने के पश्चात् ज्यों ही क्रांतिकारी लोग बाहर निकले, जनता उनके स्वागत के लिए झपट पड़ी। जनता ने सभी क्रांतिकारियों को हार-फूलों से लाद दिया। कुछ लोग अपने साथ मिठाइयाँ ले गए थे। क्रांतिकारियों को जी भरकर मिठाइयाँ खिलाई गईं। सब लोगों से बिदा लेकर गीत गाते हुए और 'भारत माता की जय' तथा 'वंदेमातरम्' का जयघोष करते हुए सभी क्रांतिकारी गाड़ियों में बैठकर जेल की तरफ चल दिए।

फ़ैसला दे दिए जाने के पश्चात् उसी दिन क्रांतिकारियों को पृथक्-पृथक् कोठरियों में रखा जाने लगा; किंतु सभी के आग्रह से उस दिन उन्हें एक साथ ही रहने की अनुमति मिल गई। उस रात उन्होंने जश्न मनाया और मस्ती से गीत एवं भजन गाते रहे। अगले दिन उन्हें पृथक्-पृथक् कोठरियों में रखा गया। फाँसी की सजा पाए हुए क्रांतिकारियों में से रामप्रसाद बिस्मिल को गोरखपुर, रोशनसिंह को इलाहाबाद और राजेंद्रनाथ लाहिड़ी को गोंडा जेल में भेज दिया गया। पूरक मुकदमे में फाँसी की सजा पाए हुए अशफाक उल्ला खाँ को फैजाबाद की जेल में रखा गया।

जनता की ओर से फाँसी की सजाएँ कम कराने के लिए जोरदार आंदोलन प्रारंभ किया गया। केंद्रीय असेंबली के सैकड़ों सदस्यों के हस्ताक्षरों से युक्त आवेदन-पत्र सरकार को दिए गए; पर कोई परिणाम नहीं निकला। क्रांतिकारियों की ओर से भी अपील की गई और मामला प्रिवी कौंसिल तक पहुँचाया गया; पर कोई परिणाम नहीं निकला। सरकार को दो बार फाँसी की तारीखें आगे बढ़ानी पड़ीं, पर सजाएँ कम नहीं की गईं। सरकार की ओर से भी सजाएँ बढ़ाने की अपील की गई और कुछ लोगों की सजाएँ बढ़ा दी गईं। जिन लोगों को दस-दस वर्ष की सजाएँ दी गई थीं, उनकी सजाएँ बढ़ाकर आजन्म कालापानी की सजाएँ कर दी गईं और जिनको सात-सात वर्ष की सजाएँ दी गई थीं, उनकी सजाएँ दस-दस वर्ष की कर दी गईं। मन्मथनाथ गुप्त की सजा इसलिए नहीं बढ़ाई गई, क्योंकि उस समय उनकी उम्र बहुत कम थी।

रामप्रसाद बिस्मिल को गोरखपुर जेल में रखा गया था। फाँसी के पूर्व उन्होंने एक बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य किया। कुछ मिली-भगत से और कुछ चोरी-छिपे उन्होंने फाँसी की कोठरी में अपनी आत्मकथा लिख डाली। यह आत्मकथा उन्होंने तीन बार में जेल से बाहर भेजी। आत्मकथा का अंतिम खंड फाँसी से तीन दिन पहले ही बाहर भेजा गया। गोरखपुर के पत्रकार दशरथप्रसाद द्विवेदी के पास बिस्मिल की आत्मकथा भेजी जाती थी। उनके पास से यह आत्मकथा कानपुर में गणेशशंकर विद्यार्थी के पास भेजी और वह प्रताप प्रेस में छापी गई। सरकार ने शीघ्र ही रामप्रसाद बिस्मिल की आत्मकथा की प्रतियाँ जब्त कर लीं।

रामप्रसाद बिस्मिल द्वारा लिखित उनकी आत्मकथा नौजवानों के लिए एक बहुत अच्छी मार्गदर्शिका सिद्ध हो सकती है। इसमें उन्होंने अपने अनुभवों के आधार पर बड़े विस्तार के साथ इस बात की चर्चा की है कि युवकों को अपनी दिनचर्या कैसी रखनी चाहिए। लेखन-शैली बहुत अधिक साहित्यिक न होते हुए भी प्रभावशाली है। एक अंश उद्धृत है—

'सरकार की इच्छा है कि मुझे घोंट-घोंटकर मारे। इसी कारण से इस गरमी की ऋतु में साढ़े तीन महीने बाद अपील की तारीख नियत की गई। साढ़े तीन महीने तक फाँसी की कोठरी में भूना गया। यह कोठरी पक्षी के पिंजरे से भी खराब है। गोरखपुर जेल की फाँसी की कोठरी मैदान में बनी है। किसी प्रकार की छाया निकट नहीं। प्रात:काल आठ बजे से रात्रि के आठ बजे तक सूर्य देवता की कृपा से तथा चारों ओर रेतीली जमीन होने के कारण अग्नि-वर्षण होता रहता है। नौ फीट लंबी तथा नौ फीट चौड़ी कोठरी में केवल एक छह फीट लंबा और दो फीट चौड़ा द्वार है। पीछे की ओर जमीन से आठ या नौ फीट की ऊँचाई पर एक दो फीट लंबी और एक फीट चौड़ी खिड़की है। इसी कोठरी में भोजन, स्नान, मल-मूत्र त्याग तथा शयनादि होता है। मच्छर अपनी मधुर ध्वनि रात-भर सुनाया करते हैं। बड़े प्रयत्न से रात में तीन या चार घंटे निद्रा आती है। किसी-किसी दिन एक-दो घंटे ही सोकर निर्वाह करना पड़ता है। मिट्टी के पात्रों में भोजन दिया जाता है। ओढ़ने-बिछाने को दो कंबल मिले हैं। बड़े त्याग का जीवन है। साधना के सब साधन एकत्रित हैं। प्रत्येक क्षण शिक्षा दे रहा है—अंतिम समय के लिए तैयार हो जाओ, परमात्मा का भजन करो।'

१९ अगस्त, १९२७ को रामप्रसाद बिस्मिल को फाँसी के फंदे पर झुलाया जाना था। होते-करते १८ अगस्त का दिन आ पहुँचा। बेटे से अंतिम मिलन के लिए बिस्मिल के माता-पिता गोरखपुर जेल पहुँचे। 'हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन' का एक नौजवान सदस्य शिव वर्मा भी बिस्मिल से भेंट करना चाहता था। उसके खिलाफ भी गिरफ्तारी का वारंट था। वह किसी भी मूल्य पर अपने दल के वरिष्ठ नेता के अंतिम दर्शन करना चाहता था। वह बिस्मिल की माँ के पास पहुँचा और बोला—

''माँ! मैं पार्टी का सदस्य हूँ और अपने नेता बिस्मिलजी के अंतिम दर्शन करना चाहता हूँ।''

''तो चलो न, बेटा! कोई पूछेगा तो कह दूँगी कि यह मेरी बहन का बेटा है।''

बिस्मिल की माताजी की बहन का बेटा बनकर शिव वर्मा भी गोरखपुर जेल में जा पहुँचे। माँ-बेटे का मिलन एक ऐतिहासिक मिलन था। माँ को मालूम था कि कुछ घंटे पश्चात् ही उसकी गोद उजड़ जाएगी; पर उसने धैर्य और संयम से काम लिया। वह उसी प्रकार संसार से बिदा ले रहे अपने पुत्र से मिली, जिस प्रकार कोई वीर माता अपने पुत्र को देश के शत्रुओं के साथ युद्ध करने के लिए भेज रही हो। अपनी माँ को इस प्रकार धैर्य धारण किए हुए देखकर स्वयं बिस्मिल की आँखें

सजल हो गईं। माँ ने जब अपने बेटे को इस दशा में देखा तो अपने हृदय को और भी कठोर करके ये प्रबोधन देने लगीं—

"मैं तो समझती थी कि तुमने अपने पर विजय पाई है; किंतु यहाँ तो तुम्हारी कुछ और ही दशा है। जीवनपर्यंत देश के लिए आँसू बहाकर अब अंतिम समय तुम मेरे लिए रोने बैठे हो। इस कायरता से अब क्या होगा? तुम्हें वीर की भाँति प्राण देते देखकर मैं अपने को धन्य समझूँगी। मुझे गर्व है कि इस गए-गुजरे जमाने में भी मेरा पुत्र देश के लिए प्राण दे रहा है। मेरा काम तुम्हें पालकर बड़ा करना था, इसके बाद तुम देश की संपत्ति हो गए और उसीके काम आ रहे हो। तुम्हें जाते हुए देखकर मुझे किंचित् मात्र भी संताप नहीं है।"

माँ के इन शब्दों को सुनकर रामप्रसाद बिस्मिल भी अपनी सफाई देते हुए बोले—

"माँ! तुम तो मेरे हृदय को भलीभाँति जानती हो। क्या तुम समझती हो कि मैं तुम्हारे लिए रो रहा हूँ अथवा इसलिए रो रहा हूँ कि कल मुझे फाँसी हो जाएगी! यदि ऐसा है तो मैं कहूँगा, जननी होकर भी तुम मुझे पहचान न सकीं। जैसे आग के पास पहुँचते ही घृत पिघलने लगता है, उसी प्रकार तुम्हें देखकर स्वभावत: ही मेरी आँखें सजल हो गईं। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि मैं अपनी मृत्यु से बहुत संतुष्ट हूँ। मेरी आँखों की छलछलाहट तो उस ईश्वर के प्रति कृतज्ञता और प्रार्थना के रूप में है, जिससे मैं यह माँग रहा हूँ कि जन्म-जन्मांतर तक तुम ही मुझे माँ के रूप में मिलो।"

माँ जिसे अपनी बहन का बेटा बनाकर ले गई थीं, उस नौजवान शिव वर्मा को आगे करती हुई बिस्मिल से बोलीं—"यह तुम्हारी पार्टी का आदमी है। पार्टी संबंधी जो बात करनी हो, इससे कर सकते हो।"

बिस्मिल तो सबकुछ पहले ही समझ गए थे। केवल इतना ही कहा—"अब तो पार्टी का भार इन्हीं लोगों पर है। अपनी विवेक-बुद्धि से ये लोग सबकुछ अच्छा ही करेंगे।"

इसी समय रामप्रसाद बिस्मिल के पिता भी आ पहुँचे। उनका खयाल था कि बिस्मिल की माता अपने बेटे को देखकर धाड़ मार-मारकर रो पड़ेंगी, इस कारण वे उन्हें अपने साथ नहीं ले गए थे; पर उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि वे तो अपने बेटे के पास पहले से ही मौजूद हैं और एक नारी-दुर्लभ धैर्य का परिचय देते हुए अपने बेटे से अंतिम भेंट कर रही हैं। बिस्मिल के पिता मुरलीधर स्वयं अपने आपको न सँभाल सके और रो पड़े। उन्हें रोते हुए देखकर बिस्मिल ने उन्हें समझाया—

"पिताजी! एक वीर पुरुष होकर और रामप्रसाद बिस्मिल के पिता होकर इस प्रकार रोना आपके लिए शोभा नहीं देता। आपके सामने ही माताजी इतने धैर्य और संयम का परिचय दे रही हैं। आपको इनसे सबक लेना चाहिए।"

भेंट का समय समाप्त हो गया। माता-पिता अपने पुत्र के लिए दुआएँ माँगते हुए बिदा हो गए।

१९ अगस्त, १९२७ का भोर होते ही गोरखपुर जेल की काल कोठरी से निकालकर रामप्रसाद बिस्मिल को फाँसी घर ले जाया गया। कुछ मंत्रों का जाप करते हुए वे फाँसी के तख्ते पर चढ़े और जब उनसे पूछा गया कि तुम्हारी अंतिम इच्छा क्या है? तो उन्होंने कहा—

"मैं अंग्रेजी साम्राज्य का विनाश चाहता हूँ।"

यह कहकर उन्होंने आसमान की ओर देखते हुए कहा—

"मालिक! तेरी रजा रहे और तू ही तू रहे,<br>
बाकी न मैं रहूँ, न मेरी आरजू रहे।<br>
जब तक कि तन में जान, रगों में लहू रहे,<br>
तेरा ही जिक्र या तेरी ही जुस्तजू रहे।"

फाँसी का फंदा रामप्रसाद बिस्मिल के गले में डाल दिया गया। जल्लाद ने लीवर खींचा, तख्ता नीचे गिरा और बिस्मिल का शरीर फंदे के सहारे झूलने लगा। वह जीवन-ज्योति, जो सन् १८९७ में ज्वलंत हुई थी, सन् १९२७ में देश के हित में विलीन हो गई।

वह जीवन-ज्योति कभी-कभी किसी हृदय में प्रादुर्भूत होकर उसे सन्मार्ग दिखा जाती है।

□

## ★ केशवराव ताथोडे

केशवराव ताथोडे का महाराष्ट्र के अमरावती जिले में अच्छा प्रभाव था। शासन के अत्याचारों का विरोध करने के लिए उसकी आवाज हमेशा बुलंद रहती थी। उसने एक ऐसा संगठन भी खड़ा किया था, जो शासन के अन्याय का प्रतिरोध करता रहता था।

सन् १९४२ के आंदोलन में केशवराव ने खुलकर भाग लिया। जब पुलिस

केशवराव ताथोंडे

ने उसकी गिरफ्तारी का वारंट निकाला, तो वह भूमिगत होकर कार्य करने लगा। अप्रैल १९४३ तक वह भूमिगत रहकर कार्य करता रहा। १६ अप्रैल, १९४३ को पुलिस ने उसे घेर लिया और गिरफ्तार करना चाहा। बच भागने के प्रयास में पुलिस ने केशवराव को गोली मार दी और वह शहीद हो गया।

केशवराव का जन्म सन् १९१५ में अमरावती जिले के 'बेलोरा' स्थान पर हुआ था। उसने एम.ए. और एल-एल.बी. की परीक्षाएँ भी उत्तीर्ण की थीं। मातृभूमि की पुकार पर उसने सबकुछ छोड़कर बलिदान का रास्ता अपना लिया।

□

## ★ कोकाटे ★ प्रतापराव पाटिल

प्रतापराव पाटिल का जन्म मैसूर राज्य के बेलगौम जिले के 'ब्याकुद' स्थान पर हुआ था। महाराष्ट्र के कोल्हापुर कॉलेज में इंटर में जब वह शिक्षा प्राप्त कर रहा था, तभी अगस्त क्रांति छिड़ गई। प्रतापराव ने उस क्रांति में खुलकर भाग लिया। उसने तोड़-फोड़ के कामों में भाग लिया और पुलिस ने उसकी गिरफ्तारी का वारंट निकाल दिया। वह पुलिस की गिरफ्तारी से बचकर भी सामाजिक कार्यों में भाग लेता रहा। असामाजिक तत्त्वों से उसकी हमेशा ठनी रहती थी। एक दिन प्रतापराव और उसके मित्र कोकाटे ने देखा कि कुछ गुंडे एक लड़की के साथ छेड़खानी कर रहे हैं। वे दोनों उन गुंडों के साथ भिड़ गए। जमकर युद्ध हुआ और उस युद्ध में वे दोनों शहीद हो गए।

□

## ★ कौशल्याकुमार

अगस्त क्रांति में उत्तर प्रदेश के बलिया नगर ने बहुत नाम कमाया। बलिया से ब्रिटिश हुकूमत को उखाड़कर फेंक दिया गया और वहाँ कांग्रेस का शासन कायम कर दिया गया। आंदोलनकारियों ने चीतू पांडे को बलिया का कलेक्टर नियुक्त किया। बलिया से यह आंदोलन जिले के अन्य स्थानों में भी फैल गया।

१७ अगस्त को जिले के एक आंचलिक थाने पर हमला बोलकर आंदोलनकारियों ने थाने पर तिरंगा झंडा फहराना चाहा। उस थाने का थानेदार चालाक आदमी था। उसने तिरंगा झंडा लगा लेने दिया और स्वयं गांधी टोपी पहनकर 'महात्मा गांधी की जय' बोलने लगा। जब आंदोलनकारियों ने उससे हथियार माँगे, तो उसने कहा कि आप लोग कल आ जाइए, आपको कल हथियार मिल जाएँगे।

अगले दिन जब जुलूस पुलिस थाने पर पहुँचा तो थानेदार ने लोगों से कहा कि आप लोगों में से दस-पाँच नेता लोग अंदर आकर हथियार सँभाल लें और शेष लोग बाहर रहें। जब जुलूस के नेता लोग थाने के अंदर पहुँच गए तो उन्हें एक कमरे में बंद करा दिया और शेष भीड़ पर थाने की छत से गोलियाँ चलवाईं। कौशल्याकुमार नाम का एक युवक झंडा लेकर आगे बढ़ा, तो उसे गोली मार दी गई। जब पुलिस की गोलियाँ चुक गईं तो उसने समर्पण कर दिया। अपने नेताओं को मुक्त करके जनता ने थाने में आग लगा दी।

□

## ★ क्षितीशचंद्र मुखर्जी

बम निर्माण के लिए उसने विधिवत् प्रशिक्षण नहीं लिया था, फिर भी नौजवान क्रांतिकारी क्षितीशचंद्र मुखर्जी के मन में बम निर्माण के हौसले थे। वह जानता था कि क्रांति की लहर को तेजी के साथ दबाया जा रहा है; फिर भी वह इस क्षेत्र में अपनी भूमिका का निर्वाह करना चाहता था। ढाका जिले में चटगाँव शस्त्रागार कांड के क्रांतिकारियों का जिस निर्दयता के साथ दमन किया गया था, उस कृत्य ने उसके विद्रोह को और भड़का दिया था।

ढाका जिले के इकरामपुर ग्राम के सुदूर एकांत में एक कमरे में रहता हुआ

क्षितीश बम निर्माण के प्रयोग करने लगा। उसने बम का मसाला तैयार भी कर लिया; लेकिन वह मसाला बम के खोल में भरते समय उससे कुछ असावधानी हो गई और उसके हाथ में ही बम का विस्फोट हो गया। परिणाम यह निकला कि क्षितीशचंद्र मुखर्जी गंभीर रूप से घायल हो गया। बम विस्फोट की आवाज ने लोगों का ध्यान आकर्षित किया और जब पुलिस वहाँ पहुँची तो उसने क्षितीशचंद्र को बेहोश पड़ा पाया। उसको अस्पताल ले जाया गया। इलाज की औपचारिकता-भर की गई, क्योंकि परिणाम तो सुनिश्चित था ही।

१७ अप्रैल, १९३२ को क्षितीशचंद्र मुखर्जी की अस्पताल में मृत्यु हो गई। वह देश के लिए शहीद होनेवालों की पंक्ति में जा मिला।

□

# ★ खुदीराम बेरा ★ जीवन चंद्रवंश ★ नागेंद्रनाथ सामंत ★ निरंजन ★ पुरीमाधव प्रमाणिक ★ पूर्णचंद्र माइती ★ मातंगिनी हाजरा ★ रामचंद्र बेरा ★ लक्ष्मीनारायण दास

बंगाल के मेदिनीपुर ने क्रांतिकारी गतिविधियों में भी बहुत नाम कमाया और सन् १९४२ की अगस्त क्रांति में भी। इस जिले पर ब्रिटिश सरकार की हमेशा ही कोपदृष्टि रही। सरकार ने यहाँ के लोगों की नावें एवं साइकिलें छीन लीं और ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी कि वहाँ दुर्भिक्ष पड़े तथा हजारों लोग मरें।

जिले के लोगों ने अपनी मदद आप करने के लिए 'विद्युत् वाहिनी' नाम की अपनी सेना का गठन कर लिया। इस वाहिनी की तीन शाखाएँ थीं—१. सैनिक, २. खुफिया, ३. एंबुलेंस। बाद में इस वाहिनी में ४. गुरिल्ला और ५. भगिनी सेना भी जोड़ दी गई। इस विद्युत् वाहिनी ने अगस्त क्रांति के दिनों में बहुत अच्छा कार्य किया।

मेदिनीपुर के शासकीय स्थलों पर एक साथ चार दिशाओं से भारी तैयारी के साथ आक्रमण किए गए।

२९ सितंबर को दिन के तीन बजे एक बड़ा जुलूस पश्चिम दिशा से बढ़ा। जुलूस में आठ हजार व्यक्ति थे। जब यह जुलूस पुलिस स्टेशन के निकट पहुँचा तो उसपर गोलियाँ दागी गईं और पाँच व्यक्ति शहीद हो गए। गोली-चालन से भीड़ बिखर गई; पर रामचंद्र बेरा नाम का एक व्यक्ति गोली लगने पर भी थाने तक जा पहुँचा और वहाँ गिरकर यह चिल्लाते हुए कि 'मैंने थाने पर अधिकार कर लिया है' उसने प्राण त्याग दिए।

जो जुलूस उत्तर की ओर से बढ़ रहा था, वह और भी बड़ा था। उसमें महिलाएँ भी सम्मिलित थीं। इस जुलूस का नेतृत्व मातंगिनी हाजरा नाम की एक तिहत्तर वर्षीया वृद्धा कर रही थी। वह फौजियों की लानत-मलामत करती जा रही थी और उनसे कह रही थी कि आप लोग नौकरी छोड़ दें। फौजियों ने उसके कथन पर कोई ध्यान न देकर उसके दोनों हाथों में गोलियाँ मार दीं। हाथों में गोलियाँ लगने पर भी वृद्धा ने थामा हुआ तिरंगा झंडा नहीं गिरने दिया। इसपर एक फौजी ने उसके मस्तक पर गोली मार दी और वह गिरकर शहीद हो गई। इस गोली कांड में मातंगिनी के अतिरिक्ति लक्ष्मीनारायण दास, पुरीमाधव प्रमाणिक, नागेंद्रनाथ सामंत तथा जीवन चंद्रवंश भी शहीद हुए।

आंदोलनकारियों का जो जुलूस दक्षिण दिशा की ओर से आ रहा था, उसपर भी फौजियों ने गोलियाँ चला दीं; जिसके परिणामस्वरूप निरंजन तथा पूर्णचंद्र माइती शहीद हो गए। इस जुलूस में भी महिलाएँ थीं। वे घायलों को पानी पिलाने लगीं और उनके घावों पर पट्टियाँ बाँधने लगीं। कुछ फौजियों ने उनके काम में बाधा डाली। वे स्त्रियाँ कहीं से हँसिए लेकर आ गईं और फौजियों को धमकाते हुए बोलीं कि यदि तुम हमारे पास आए, तो हम तुम्हारी गरदन काट डालेंगी। फौजियों ने फिर उनके काम में बाधा नहीं पहुँचाई। उन महिलाओं ने घायलों को उनके घरों पर या अस्पताल में भिजवाया।

दक्षिण-पश्चिम दिशा की तरफ से जो जुलूस आगे बढ़ा, उससे विद्युत् वाहिनी का दल भी आ मिला। उनपर भी गोलियाँ चलाई गईं। खुदीराम बेरा नामक एक व्यक्ति को घायल अवस्था में पुलिस गिरफ्तार करके ले गई। हवालात में खुदीराम बेरा की मृत्यु हो गई।

☐

## ★ गनपत नोनिया

उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के निवासी गनपत नोनिया ने जब सुना कि उसके जिले के कई व्यक्ति 'भारत छोड़ो आंदोलन' को अपनी जीवनाहुतियाँ दे चुके हैं, तो वह भी कुछ कर गुजरने के लिए छटपटा उठा। उस समय तक बलिया नगर के आंदोलन को ब्रिटिश सरकार दबा चुकी थी।

गनपत ने अपने जैसे ही कुछ साथियों को एकत्रित किया और अपने गाँव के थाने पर धावा बोल दिया। पुलिस ने गोलियाँ चलाईं और आगे-आगे रहनेवाला गनपत नोनिया गोलियाँ खाकर शहीद हो गया।

गनपत नोनिया का जन्म सन् १९१८ में हुआ था।

□

## ★ गुणवंत शाह ★ गोरधनदास रामी ★ पुष्पवदन मेहता ★ बसंतलाल रावल

गुजरात के औद्योगिक नगर अहमदाबाद में ९ दिसंबर, १९४२ को ब्रिटिश शासन के विरोध में एक अभूतपूर्व जुलूस निकाला गया। यह जुलूस विभिन्न बाजारों से होता हुआ कलेक्टर कार्यालय पर पहुँचने वाला था। लेकिन पुलिस दल ने बीच में ही उस जुलूस का रास्ता रोका और वहीं बिखर जाने के लिए कहा। लोगों ने पुलिस की चेतावनी पर कोई ध्यान नहीं दिया और आगे बढ़ना जारी रखा। पुलिस ने गोलियाँ चलाईं और चार युवक शहीद हो गए। वे थे—गुणवंत शाह, गोरधनदास रामी, पुष्पवदन मेहता और बसंतलाल रावल।

गुणवंत शाह का जन्म अहमदाबाद में ही सन् १९२४ में हुआ था। उसके पिता

गोरधनदास रामी

पुष्पवदन मेहता
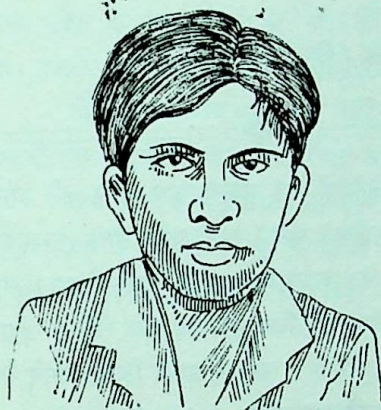
बसंतलाल रावल

का नाम श्री माणिकलाल शाह था। वह उस समय कॉलेज में पढ़ रहा था।

गोरधनदास का जन्म अहमदाबाद जिले के 'बाबरा' ग्राम में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री छगनलाल रामी था।

पुष्पवदन मेहता का जन्म सन् १९२७ में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री टीकाराम मेहता था।

बसंतलाल रावल का जन्म सन् १९२४ में अहमदाबाद नगर में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री मोहनलाल रावल था। बसंतलाल भी उस समय कॉलेज में पढ़ रहा था।

□

## ★ गुलाबसिंह (प्रथम) ★ प्रेमचंद ★ मनसाराम ★ सुखलाल

❖ ❖

मध्य प्रांत के महाकौशल क्षेत्र में पुलिस और प्रशासन ने अधिक दमन किया। जबलपुर में छात्र वर्ग ने बहुत उत्पात किया। उन्होंने कई सरकारी कार्यालयों

पर हमले किए और मदनमहल स्टेशन जला डाला। इस अभियान में पुलिस की गोली से गुलाबसिंह (प्रथम) शहीद हुआ।

एक नायब तहसीलदार मि. अग्रवाल मनसाराम नामक एक व्यक्ति को पकड़कर ले जा रहे थे। मनसाराम ने जाने से आनाकानी की, तो मि. अग्रवाल ने उसको गोली मार दी। इस हत्याकांड के विरुद्ध जोरदार हड़ताल हुई। पुलिस ने भी लोगों पर बहुत अत्याचार किए। लोगों को घरों से निकाल-निकालकर, सड़कों पर लाकर पीटा गया। पुलिस के अत्याचारों से भयभीत होकर सुखलाल और प्रेमचंद नाम के दो व्यक्ति पागल हो गए। वे चिल्लाते फिरते थे—''पुलिस आ गई, किवाड़ बंद कर लो।'' पागलपन में ही उनकी मृत्यु हो गई।

□

## ★ गुलाबसिंह (द्वितीय)
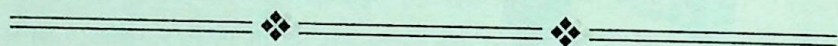
जबलपुर के घंटाघर से आंदोलनकारियों का जुलूस जब नगर की ओर चला, तो गुलाबसिंह (द्वितीय) तिरंगा झंडा लेकर सबसे आगे पहुँच गया। उसकी उम्र भी कम थी और उसका कद छोटा था। वह कक्षा सात का विद्यार्थी ही था। उस दिन वह घर से खाकी पैंट और खाकी शर्ट पहनकर निकला। वह एक सैनिक जैसा ही लग रहा था। जब जुलूस आगे बढ़ा तो पुलिस ने उसे रोककर बिखर जाने के लिए कहा। गुलाबसिंह निर्भीकता के साथ आगे बढ़ने लगा। उसका उत्साह देखकर अन्य लोग भी उसका अनुकरण करने लगे। पुलिस ने गोलियाँ चला दीं। एक गोली गुलाबसिंह को भी लगी और वह घायल होकर जमीन पर गिर पड़ा। उसे अस्पताल पहुँचाया गया। लेकिन अगले दिन ही ५ नवंबर, १९४२ को उसकी मृत्यु हो गई।

गुलाबसिंह के पिता का नाम श्री लक्ष्मणसिंह था।

□

## ★ गोंड बिरसा

मध्य प्रदेश के बैतूल जिले ने अगस्त क्रांति में अच्छा नाम कमाया। पूरे जिले-भर में राष्ट्रीय चेतना थी और लोगों में शहादत के लिए होड़ लगी हुई थी।

गोंड बिरसा घोड़ाडोंगरी के निकट 'बेहाड़ी' नाम के एक छोटे से गाँव का

रहनेवाला था। जब 'भारत छोड़ो आंदोलन' के अंतर्गत जुलूस निकला तो गोंड बिरसा उसमें उत्साह के साथ सम्मिलित हुआ और झंडा लेकर आगे-आगे चलने लगा। परिणाम वही हुआ, जो झंडा थामनेवालों का होता रहा है। एक गोली आई और वह गोंड बिरसा के प्राण ले गई। वह शहीदों की पंक्ति में पहुँच गया।

□

## ★ गोलमन सेठ

संपन्न परिवार के व्यक्ति गोलमन सेठ को देश के कार्यों में बहुत रुचि थी। मध्य प्रदेश के बैतूल जिले के 'चिचली' ग्राम में सन् १८९७ में उसका जन्म हुआ था। उसके पिता श्री रावजी सेठ व्यापार करते थे।

गोलमन का मन व्यापार में नहीं लगता था। वह अकसर बैतूल में रहता और राजनीतिक कार्यों में भाग लेता रहता था।

जब १९४२ में अगस्त 'आंदोलन छिड़ा तो गोलमन उसमें कूद पड़ा। वह तोड़-फोड़ के कामों में अग्रणी रहता था। परिणाम यह हुआ कि उसे गिरफ्तार करके नागपुर जेल में डाल दिया गया। जेल में ही गोलमन सेठ की मृत्यु हो गई।

□

## ★ गोविंद चरण कर

प्रथम महायुद्ध चल रहा था। ब्रिटेन चाहता था कि युद्ध में भारत भी ब्रिटेन की सहायता करे। सहयोग के रूप में वह भारत से धन भी खींचना चाहता था और भारतीय सेना को भी मोरचों पर भेजना चाहता था। भारतीय जनमत की उपेक्षा करके उसने भारत को महायुद्ध में घसीट लिया। जो उग्र विचारों के लोग थे, उन्होंने ब्रिटेन की इस नीति का विरोध किया।

बंगाल उस समय क्रांतिकारियों का गढ़ था। बंग-भंग के विरोध में उठी लहर भारत से अंग्रेजी साम्राज्य के उन्मूलन की लहर बन चुकी थी। बंगाल में क्रांतिकारियों की एक संस्था 'अनुशीलन समिति' इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही थी। अनुशीलन समिति का एक सदस्य गोविंद चरण कर ब्रिटिश विरोधी अभियान में बहुत सक्रिय था। पहले तो उसने युवकों के संगठन तैयार किए और

बाद में उसने साहित्य द्वारा ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध घृणा का प्रसार किया। पुलिस उसे गिरफ्तार कर लेने के लिए सक्रिय हो उठी। दोनों पक्षों के बीच लुका-छिपी का खेल चलने लगा।

एक दिन उत्तर बंगाल क्षेत्र में भारी संख्या में पुलिस के सिपाहियों ने गोविंद चरण कर को धान के एक खेत में घेर लिया। पुलिस संख्या में बहुत अधिक थी और अच्छे हथियारों से लैस वे लोग आड़ लेकर गोलियाँ भी चला रहे थे। धान के पौधे गोविंद चरण की क्या रक्षा करते! वे हिल-हिलकर यह संकेत और दे रहे थे कि वह यहाँ छिपा है। इतना होने पर भी गोविंद चरण कर ने जमकर पुलिस के साथ युद्ध किया। उसकी गोलियों ने पुलिस के कई लोगों को घायल किया। पुलिस की गोलियाँ लगने के कारण और बहुत सारा खून बह जाने के कारण वह भी अचेत होकर धान के खेत में गिर पड़ा। पुलिस ने इस दशा में उसे गिरफ्तार कर लिया।

मुकदमा चलने पर कलकत्ता के न्यायालय ने गोविंद चरण कर को आठ वर्ष के कठोर कारावास का दंड देकर कालापानी भेज दिया।

जिस समय पुलिस ने गोविंद चरण कर को घायल अवस्था में गिरफ्तार किया था, उस समय अस्पताल में उसके इलाज में बहुत लापरवाही की गई। उसके शरीर में कई गोलियाँ समा गई थीं। उनमें से कुछ निकाली गईं और कुछ उसके शरीर में ही रह गईं। एक गोली उसकी भुजा में से और दो गोलियाँ छाती में से नहीं निकाली जा सकीं। इसी दशा में आठ वर्ष के कठोर कारावास का दंड देकर उसे अंडमान भेज दिया गया।

जब गोविंद चरण कर अंडमान पहुँचा तो उसकी दशा बिगड़ने लगी। वहाँ के अस्पताल के डॉक्टर यह पता नहीं लगा सके कि उसकी दशा क्यों बिगड़ती जा रही है। जब वह मरणासन्न स्थिति तक पहुँच गया तो उसे जेल से मुक्त कर दिया गया।

कलकत्ता पहुँचने पर गोविंद चरण कर के परिवार के लोगों ने तथा उसके सहायकों ने उसका अच्छा इलाज कराया। उसका ऑपरेशन हुआ और उसके शरीर में रह गई गोलियाँ निकाल ली गईं। धीरे-धीरे वह स्वस्थ हो गया। उसे नया जीवन मिला।

गोविंद चरण कर शांत बैठ जानेवाले क्रांतिकारियों में से नहीं था। अनुशीलन समिति के क्रियाकलापों में वह फिर उसी जोश-खरोश के साथ भाग लेने लगा। अनुशीलन समिति की ओर से जोगेशचंद्र चटर्जी को संगठन कार्य के लिए उत्तर प्रदेश भेजा गया था। वे जब गिरफ्तार कर लिये गए तो उत्तर प्रदेश में क्रांतिकारी संगठन को दृढ़ करने के लिए गोविंद चरण कर को वहाँ भेजा गया। लखनऊ में जब

काकोरी ट्रेन डकैती के अंतर्गत व्यापक गिरफ्तारियाँ हुईं तो गोविंद चरण कर को भी गिरफ्तार कर लिया गया और उनपर झूठे आरोप लगाए गए।

काकोरी केस के फैसले के अनुसार गोविंद चरण कर को फिर आजन्म द्वीपांतरवास का दंड सुनाया गया। ब्रिटिश सरकार की बदले की भावना का शिकार होकर एक देशभक्त फिर काल कोठरी में डाल दिया गया।

□

## ★ गोविंदराम वर्मा
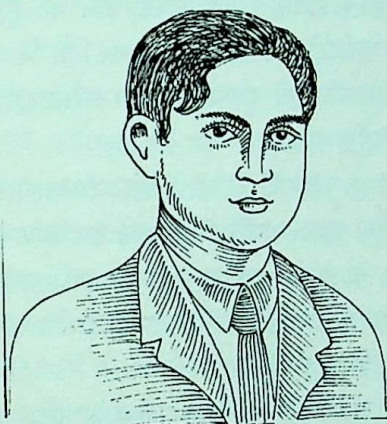
गोविंदराम वर्मा

गोविंदराम वर्मा की शादी हो चुकी थी और वह सुखी गृहस्थ जीवन व्यतीत कर रहा था। वह एक धनवान बाप का बेटा था और खुद मिलनसार होने के कारण समाज में उसका अच्छा आदर था। हुआ यह कि उन्हीं दिनों क्रांतिकारियों से उसका परिचय हो गया और वह क्रांतिकारी पार्टी का एक सदस्य भी बन गया। उसका मित्र रोशनलाल मेहरा पहले से ही क्रांतिकारी पार्टी का सदस्य था। रोशनलाल मेहरा, शंभूनाथ आजाद एवं गोविंदराम वर्मा ने मिलकर योजना बनाई कि क्रांति का प्रसार दक्षिण भारत में भी किया जाए। इस कार्य के लिए मद्रास नगर को चुना गया।

रोशनलाल मेहरा अपने पिता की तिजोरी से पाँच हजार आठ सौ रुपए लेकर फरार हो चुका था और अब बारी थी गोविंदराम वर्मा की। उसके लिए भी यही निर्देश था कि वह अपने घर से रुपए और जेवर पार करके घर छोड़ दे। उसके पिता अमृतसर के एक धनी व्यापारी थे, जिनकी फर्म ताराचंद-गोपालदास की नगर में अच्छी साख थी। गोविंदराम कई दिनों से घर से रुपए उड़ाने का प्रयत्न कर रहा था; पर उसे सफलता नहीं मिल रही थी। सच बात तो यह थी कि जब से रोशनलाल मेहरा घर से रुपए लेकर फरार हुआ था, तभी से सभी व्यापारी लोग अपने युवा पुत्रों की ओर से सतर्क हो गए थे और नकद रुपयों या जेवर रखने के स्थानों की चाबियाँ अपने पास सँभालकर रखते थे। जब गोविंदराम वर्मा ने देखा कि पैसे पर हाथ साफ

करने में उसे सफलता नहीं मिल रही है, तो बिना धन बटोरे ही उसने मद्रास जाने का फैसला कर लिया।

गोविंदराम वर्मा सन् १९३३ के अप्रैल मास के तीसरे हफ्ते में एक दिन रात के नौ बजे अंतिम रूप से अपना घर छोड़ने के लिए तैयार हो गया। कपड़े पहनकर जब वह घर से निकलने लगा तो उसकी पत्नी पूछ बैठी—

"आप कहाँ जा रहे हैं?"

"मैं बाजार जा रहा हूँ।" गोविंदराम ने संक्षिप्त-सा उत्तर दे दिया।

उसकी पत्नी ने अपनी छोटी-सी फरमाइश रख दी—

"आते समय हलवाई की दुकान से मेरे लिए डबले से दूध लेते आइएगा।"

इस फरमाइश का कोई उत्तर गोविंदराम वर्मा ने नहीं दिया। वह जानता था कि वह हमेशा के लिए अपना घर छोड़ रहा है। जाते समय अपनी पत्नी से झूठ बोलकर नहीं जाना चाहता था। उसका मन भारी हो गया और कोई उत्तर दिए बिना ही वह घर से एकदम बाहर निकल गया। उसकी पत्नी दूध की प्रतीक्षा करती रही; पर वह उसके लिए दूध लेकर कभी नहीं पहुँच सका।

मद्रास पहुँचकर गोविंदराम वर्मा अपने साथियों से जा मिला। रोशनलाल मेहरा का धन भी उनकी पार्टी को नहीं मिल सका; क्योंकि वह धन रामविलास शर्मा के पास रखा गया था और वह पुलिस के हाथों गिरफ्तार हो चुका था। सभी तरफ से निराश होकर क्रांतिकारी दल ने उटकमंड के बैंक में डाका डालने की योजना बनाई और सफलतापूर्वक उसे कार्यान्वित भी किया।

मद्रास स्थित क्रांतिकारी दल ने बमों का निर्माण भी किया। बम के परीक्षण की प्रक्रिया में साथी रोशनलाल मेहरा शहीद हो गए। गोविंदराम वर्मा के लिए यह बहुत बड़ा आघात था। वे शंभूनाथ आजाद के साथ मद्रास में क्रांतिकारी गतिविधियों में संलग्न हो गए।

बम विस्फोट की घटना और रोशनलाल मेहरा की मृत्यु से मद्रास पुलिस ने यह निष्कर्ष निकाला कि मद्रास में बाहर के क्रांतिकारी सक्रिय हैं। पुलिस अधिक सतर्क होकर क्रांतिकारियों की खोज करने लगी।

मद्रास में ये क्रांतिकारी एक दिन जब अपने मकान में बैठे हुए थे, तो किसीने जोर-जोर से कुंडी खटखटाई। इस प्रकार से कुंडी का खटखटाया जाना उन्हें कुछ अप्रत्याशित-सा लगा। मकान मालकिन भी जोर-जोर से उन्हें आवाज लगा रही थी। गोविंदराम वर्मा और शंभूनाथ आजाद ने दरवाजे के पास सीखचोंवाली खिड़की में से झाँका तो उन्हें मकान मालकिन के पीछे सशस्त्र पुलिस दिखाई दी। खिड़की में से एक फायर करके ये लोग दुमंजिले पर चढ़ गए। पुलिस गैलरी से

बाहर निकल गई और उसने दरवाजा बंद कर दिया। उस समय उस मकान में चार क्रांतिकारी घिरे हुए थे। वे थे—गोविंदराम वर्मा, शंभूनाथ आजाद, हीरालाल कपूर और इंद्रसिंह मुनि। इनमें से गोविंदराम और हीरालाल मकान की छत पर पहुँचकर पुलिस पर गोलियाँ चलाने लगे और शेष दो साथी कमरे में गोपनीय कागजों एवं उटकमंड बैंक से लूटे गए बड़े नोटों में आग लगाने लगे। बाद में ये लोग भी ऊपर पहुँचकर पुलिस के साथ युद्ध करने लगे। पुलिस और क्रांतिकारियों में मुकाबला सुबह ग्यारह बजे प्रारंभ हुआ। पुलिस का दल भी आसपास के मकानों की छत पर पहुँचकर वहाँ से क्रांतिकारियों पर गोलियाँ छोड़ने लगा। इसी बीच सशस्त्र सैनिकों की तीन भरी हुई लॉरियाँ भी क्रांतिकारियों के विरुद्ध मोरचा लेने वहाँ पहुँच गईं। उस दिन मोहर्रम का जुलूस भी उधर से निकल रहा था। जुलूस भी घटनास्थल पर पहुँच गया। पुलिसवालों ने यह घोषित कर दिया कि कुछ डाकू लोग मकान को लूट रहे हैं, अतः जनता को भी पुलिस की सहायता करनी चाहिए। यह सुनकर उत्तेजित लोग भी मकानों की छतों पर चढ़ गए और ईंट, पत्थर तथा सोडा वाटर की बोतलें क्रांतिकारियों पर फेंकने लगे। सौभाग्यवश जिस छत पर क्रांतिकारी थे, उसकी छत अपेक्षाकृत ऊँची थी और छत के चारों तरफ ढाई फीट ऊँची दीवार थी। यही दीवार क्रांतिकारियों की रक्षा कर रही थी। क्रांतिकारियों ने हिंदी और अंग्रेजी में देशभक्ति के नारे लगाकर जनता को यह बताने का प्रयास किया कि वे लोग डाकू नहीं, क्रांतिकारी हैं। कुछ हवाई फायर भी जनता की तरफ किए गए। अब जनता छतों पर से नीचे उतरकर युद्ध के निर्णय की प्रतीक्षा करने लगी।

अपराह्न तीन बजे तक दोनों पक्षों में जोरदार मुकाबला चलता रहा। कोई भी पक्ष अपना मोरचा छोड़ने के लिए तैयार न था। इसी समय अंग्रेजी सेना की एक बटालियन भी पुलिस की सहायता के लिए वहाँ पहुँच गई और उसने क्रांतिकारियों पर जोरदार हमला बोल दिया। क्रांतिकारियों के कारतूस लगभग समाप्त हो गए। उनके पास अब केवल तीन कारतूस और एक बम बचा। एक लकड़ी पर सफेद कपड़ा बाँधकर उन्होंने उसे संधि के झंडे के रूप में ऊपर उठाया। युद्ध के नियमों के अनुसार पुलिस पार्टी को युद्ध बंद कर देना चाहिए था; पर उसने क्रांतिकारियों की विवशता का लाभ उठाकर उनपर और अधिक गोलीवर्षा प्रारंभ कर दी। धीरे-धीरे क्रांतिकारियों के वे तीन कारतूस भी समाप्त हो गए। अब उनके पास केवल एक बम बचा।

युद्ध होते-होते संध्या के पाँच बज गए। पुलिस के कुछ जवान अब क्रांतिकारियों की छत पर कूदने की योजना बनाने लगे। अंतिम हथियार से क्रांतिकारियों ने पुलिस पार्टी पर अब बम का प्रहार कर दिया। पुलिस के लोग इधर-उधर भागने

लगे। चारों तरफ धुआँ-ही-धुआँ छा गया। इस स्थिति का लाभ उठाकर क्रांतिकारी लोग एक छत पर से दूसरी पर पहुँचते हुए बाहर निकलने का प्रयास करने लगे। गोविंदराम वर्मा का सड़क पर पुलिस की एक टुकड़ी ने पीछा किया, तो भागकर वह एक मकान के रसोईघर में जा छिपा। उसके अन्य साथी मुकाबला करते हुए गिरफ्तार कर लिये गए।

गोविंदराम वर्मा जहाँ छिपा था, वह स्थान पुलिस ने देख लिया था। मद्रास के डिप्टी कमिश्नर कल्याण सुंदरम् तथा अंग्रेज पुलिस कमिश्नर छिपने के स्थान के बिलकुल निकट पहुँच गए और जैसे ही गोविंदराम रसोईघर से कूदकर बाहर भागा, उन दोनों ने उसपर एक साथ गोलियाँ चला दीं। गोलियाँ गोविंदराम की छाती में लगीं और गरम खून का फव्वारा छाती से फूट पड़ा। गोविंदराम जमीन पर पड़ा हुआ था और उसकी छाती से खून का फव्वारा छूट रहा था। उसे बाहर लाकर एक चबूतरे पर डाल दिया गया। अभी उसके प्राण नहीं निकले थे। हाथ जोड़कर उसने कहा—

''मैं एक क्रांतिकारी हूँ और देश के लिए लड़ते-लड़ते मैं अपने प्राण त्याग रहा हूँ। आप लोगों का भी फर्ज है कि आप देश की आजादी की लड़ाई लड़ें।''

थोड़ी देर पश्चात् पुलिस पार्टी गोविंदराम वर्मा को उठाकर अस्पताल ले गई। बहुत पूछने पर भी न तो उसने अपना नाम-धाम बताया और न अपने साथियों का।

४ मई, १९३३ को संध्या के सात बजे गोविंदराम वर्मा ने मद्रास के जनरल अस्पताल में अंतिम साँस ली। वह अपनी पत्नी के लिए दूध न ले जा सका, पर मातृभूमि के लिए अपना खून अवश्य दे गया।

□

# ★ गौराबाई ★ मंसाराम जसाटी

'करो या मरो' का बलिदान मंत्र केवल भारत के नगरों में ही नहीं, गाँवों में भी गूँज रहा था। लोगों के दिलों में बेचैनी थी और कुछ कर गुजरने की आकांक्षा भी।

मध्य प्रदेश के नरसिंहपुर जिले के ग्राम 'चीचली' के निवासियों ने एक धार्मिक कृत्य का आयोजन इसलिए किया कि अधिक-से-अधिक लोग एकत्र हो सकें और पुलिस को भी धोखे में रखा जा सके। धार्मिक कार्य संपन्न हो जाने के

पश्चात् वही जन समुदाय राजनीतिक जुलूस के रूप में परिवर्तित हो गया और गाँव के वातावरण में नारों की गूँज होने लगी।

पुलिस पहले से ही सतर्क थी। उसने आंदोलनकारियों को अलग-थलग हो जाने के लिए कहा। पुलिस की चेतावनी का लोगों पर यह असर हुआ कि वे और अधिक जोश-खरोश के साथ नारेबाजी करने लगे। पुलिस ने लाठियाँ चलाना प्रारंभ कर दिया। लाठियों के प्रहार के फलस्वरूप आंदोलनकारी बिखरने लगे। एक महिला गौराबाई ने नृशंसता के लिए पुलिस को धिक्कारा और उसने लोगों से न भागने की अपील की। अब लोगों ने लाठियों का उत्तर पत्थरों से देना प्रारंभ कर दिया। पत्थरों की मार से विचलित होकर पुलिस ने गोलियाँ चला दीं। पहली गोली गौराबाई को ही लगी और वह धराशायी हो गई। एक महिला पर गोली चलाने के लिए एक युवक मंसाराम जसाटी ने पुलिस को प्रताड़ित किया। उसे भी गोली मार दी गई। इस प्रकार 'भारत छोड़ो आंदोलन' के अंतर्गत ग्राम 'चीचली' ने दो प्राणों का बलिदान देकर आजादी के इतिहास में अपना नाम लिखाया।

गौराबाई की उम्र उस समय पैंतालीस वर्ष की थी। उसके पति का नाम पातीराम था। गौराबाई एक पुत्री पार्वतीबाई की माँ थी।

मंसाराम जसाटी एक बरतन व्यवसायी खुशालचंद जसाटी का पुत्र था। मंसाराम का जन्म २० नवंबर, १९१३ को हुआ था। प्रारंभिक शिक्षा समाप्त कर वह अपने पिता के व्यवसाय में सहयोग देने लगा। कालांतर में वह जिले की कांग्रेस पार्टी में सम्मिलित हो गया। २३ अगस्त, १९४२ को मंसाराम जसाटी ने शहादत प्राप्त की।

□

## ★ गौरीशंकर प्रसाद

गौरीशंकर प्रसाद का जन्म क्रांतिभूमि बलिया में सन् १९२१ में 'सुखपुरा' ग्राम में हुआ था। उन्होंने १९४२ के 'भारत छोड़ो आंदोलन' में भाग लिया और पुलिस की गोली खाकर शहादत प्राप्त की।

□

## ★ घनश्याम ★ धनसुख ★ लालदास ★ शशिधर केतकर ★ शिरीषकुमार

उस दिन बालक शिरीषकुमार के नाना के श्राद्ध का दिन था। घर में ब्राह्मण भोज की तैयारी चल रही थी। शिरीष भी घर के काम में अपने पिता का हाथ बँटा रहा था। उसके छोटे-छोटे हाथ गोल-गोल लड्डू बनाने में व्यस्त थे। सहसा उसे ध्यान आया कि आज तो बहुत बड़ा काम करना है और उसके साथी विद्यालय में उसकी प्रतीक्षा कर रहे होंगे। उसने अपने पिताजी से कहा—

''पिताजी! बहुत आवश्यक काम से मुझे विद्यालय पहुँचना है। यदि आप अनुमति दें, तो चला जाऊँ?''

पिता का उत्तर था—

''बेटे! मेहमान लोग घर पर आने ही वाले हैं तथा काम में मेरा साथ देनेवाला तुम्हारे अतिरिक्त और कोई नहीं है। वे लोग भोजन कर लें, तो चले जाना।''

शिरीष अपने पिता की बात मान गया। ब्राह्मणों को भोजन कराने के पश्चात् उसने पिता से विद्यालय जाने की अनुमति फिर माँगी। पिता बोले—

''बेटे! तुमने इतना श्रम किया है, भोजन करके चले जाओ। यदि जाने की बहुत ही शीघ्रता है तो अपने हाथ का बनाया गया एक लड्डू खाते जाओ।''

शिरीष का उत्तर था—

''पिताजी, देर होने में वचनभंग का भय है। मेरे साथी मेरी अविकल प्रतीक्षा कर रहे होंगे। मुझे विश्वास है कि वहाँ कुछ खाने को अवश्य मिलेगा। मैं जाता हूँ।''

शिरीष विद्यालय पहुँच गया। उसके साथी विद्यालय के बाहर ही उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। वह ९ सितंबर, १९४२ का दिन था। उन लोगों ने तय किया था

कि विद्यालय बंद कराने के पश्चात् वे महात्मा गांधी की गिरफ्तारी के विरोध में एक विशाल जुलूस नगर में निकालेंगे। शिरीष छात्र दल का नेता था। अगस्त मास में भी वह प्रभातफेरी और रात्रि को मशाल जुलूस निकालने में सफल हुआ था। उसे गिरफ्तार भी किया गया था, पर बाद में छोड़ दिया गया था।

शिरीष ने विद्यालय के अंदर पहुँचकर छात्र-छात्राओं का आह्वान किया और सभी लोग कक्षाओं से बाहर आ गए। फाटक के बाहर पहुँचकर वे लोग जुलूस के रूप में परिवर्तित होकर नगर की तरफ बढ़ने लगे। सभी में बहुत उत्साह था और वे बढ़-चढ़कर 'भारत माता की जय' तथा 'महात्मा गांधी की जय' के नारे लगा रहे थे।

पुलिस उन लोगों का रास्ता रोकने के लिए तैनात कर दी गई थी। जुलूस के आगे लड़कियों का समूह था। पुलिसवालों ने धमकाने के लिए लड़कियों के समूह की ओर अपनी बंदूकें तान लीं। शिरीष यह सहन नहीं कर सका। गरजता हुआ वह अपनी टोली के साथ लड़कियों से आगे पहुँच गया और पुलिसवालों को ललकारते हुए बोला—

''तुम लोगों को लड़कियों पर बंदूकें तानते हुए शर्म नहीं आती! यदि मर्द के बच्चे हो तो हम लोगों पर गोलियाँ चलाओ।''

यह ललकार सुनकर पुलिस बौखला तो गई, पर उसने पहले हवा में गोलियाँ चलाईं। जुलूस पर इसका कोई असर नहीं हुआ। झंडा हाथ में लिये शिरीषकुमार पुलिसवालों की तरफ बढ़ चला। एक गोली आई और उसकी जाँघ को चीरती हुई निकल गई। गोली लगने के बाद भी शिरीष ने ललकारा—

''कैसे पुलिसवाले हो! इतना भी नहीं जानते कि गोली सीने में मारी जाती है!''

शिरीष ने अपना सीना खोल दिया। दो गोलियाँ उसके सीने में समा गईं। गिरने के पहले उसने अपने हाथ का झंडा अपने एक साथी को सँभाल दिया। पुलिस भी पागल हो गई। गोलियों पर गोलियाँ छूटने लगीं। शिरीष के अतिरिक्त उसके साथियों में से घनश्याम, लालदास, शशिधर केतकर और धनसुख भी गोलियाँ खाकर शहीद हो गए। शिरीष ने अपने पिता से ठीक ही कहा था कि मुझे विद्यालय में कुछ खाने के लिए मिल जाएगा। उसे लड्डुओं का नहीं, गोलियों का स्वाद चखना था।

महाराष्ट्र के धूलिया जिले के 'नंदुरबार' स्थान को यह गौरव प्राप्त है कि आजादी के आंदोलन में उसने भी कुछ आहुतियाँ दी हैं।

□

## ★ चंडीप्रसाद ★ बागेश्वर सिंह ★ रामकृष्ण सिंह ★ हरिहर सिंह

बलिया के अंचल में अगस्त क्रांति तेजी के साथ फैल गई। पुलिस की भारी फोर्स भी क्रांति को दबाने गाँवों में पहुँच गई। 'सुखपुरा' नामक गाँव में मि. मार्श स्मिथ विद्रोह को दबाने स्वयं पहुँचे। उन्होंने एक महंत पर भी गोली चलाई; लेकिन वह बच गया। उसके हाथी को गोली से मार दिया गया।

मि. स्मिथ ने चंडीप्रसाद नामक एक किसान को केवल इसलिए गोली मार दी कि वह गांधी टोपी पहने हुए था। 'बाँसडीह' नामक सारा गाँव लूट लिया गया और फसलों को आग लगा दी गई। रामकृष्ण सिंह और बागेश्वर सिंह नामक व्यक्तियों को इतना पिटवाया गया कि पिटते-पिटते वे दोनों मर गए।

मुजफ्फरपुर जिले के श्री हरिहर सिंह गांधी टोपी पहने हुए जा रहे थे। उनसे टोपी उतारने के लिए कहा गया। उन्होंने अपनी टोपी नहीं उतारी तो उन्हें इतना मारा गया कि उनका प्राणांत हो गया।

□

## ★ चंद्रभान

उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले के 'मारकपुर' ग्राम के युवक चंद्रभान ने अगस्त क्रांति के लिए अपने जीवन की आहुति दी। उसने शासन विरोधी जुलूस की अग्रिम पंक्ति में पहुँचकर अपने हौसले का परिचय दिया। जब पुलिस ने प्रदर्शनकारियों पर गोलियाँ चलाईं, तो चंद्रभान अपने सीने पर गोली खाकर शहीद हो गया।

चंद्रभान के पिता का नाम लाला रामस्वरूप था।

□

# ★ चंद्रसिंह गढ़वाली

चंद्रसिंह गढ़वाली

पेशावर के मुख्य बाजार में काफी सनसनी थी। कांग्रेस की ओर से आमसभा करने की पूरी तैयारी थी। आमसभा न होने देने के लिए ब्रिटिश हुकूमत ने भी पूरी तैयारी कर रखी थी। उस दिन अंग्रेज सैनिकों की टुकड़ियाँ बाजार में गश्त लगा रही थीं। कानाफूसी के रूप में कई आशंकाएँ ध्वनित हो रही थीं—

"कांग्रेस ने आमसभा को अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना रखा है।"

"हाँ, आमसभा भी होगी और दमन भी होगा।"

"लाठीचार्ज होने की पूरी-पूरी संभावना है।"

"गोलियाँ भी चल सकती हैं।"

"यदि गोलियाँ चलीं तो भीषण नरसंहार हो सकता है।"

"जो जलियाँवाला बाग में हुआ था, उसकी पुनरावृत्ति हो सकती है।"

"गोलियाँ गोरे सैनिक नहीं चलाएँगे। वे हिंदुस्तानी सैनिकों को गोलियाँ चलाने का आदेश देंगे।"

"हाँ, लगता तो बिलकुल ऐसा ही है। गढ़वाली सैनिकों की कई कंपनियाँ यहाँ आ चुकी हैं।"

"अंग्रेजों ने जानबूझकर ऐसी व्यवस्था की है। यहाँ की आबादी में ९८% मुसलमान हैं। उन्हें मारने के लिए हिंदू सैनिकों की कंपनियाँ लगाई गई हैं। जहाँ हिंदुओं की आबादी अधिक है, वहाँ मुसलमान सैनिकों की कंपनियाँ तैनात की गई हैं।"

"देखना है कि क्या हिंदुस्तानी सैनिक हिंदुस्तानी जनता पर गोलियाँ चलाएँगे!"

"क्यों नहीं चलाएँगे! क्या जलियाँवाला बाग में गोरखा पल्टन ने गोलियाँ नहीं चलाई थीं? क्या 'गढ़वाल राइफल्स' के सैनिकों ने मोपला विद्रोह नहीं कुचला था?"

"हाँ, आज भी गढ़वाली पल्टन को ही बुलाया गया है। ब्रिटिश हुकूमत की नीयत नरसंहार की ही दिखती है।"

इन्हीं आशंकाओं के बीच पेशावर के मुख्य बाजार में आमसभा की कार्यवाही प्रारंभ हो गई। पठान लोगों में उत्साह था। अपने नेता खान अब्दुल गफ्फार खाँ के नेतृत्व पर उनको भरोसा था। सीना ताने हुए वे सभास्थल पर पहुँचे और खूब गरमागरम भाषण हुए।

नागरिक वेश में गढ़वाली सैनिकों की एक टोली भी सभास्थल से कुछ दूर भाषण सुन रही थी। वे लोग एक दुकान पर कुछ खा-पी रहे थे। भाषण उनके पल्ले नहीं पड़ रहे थे। बोलनेवाले पश्तो भाषा में बोल रहे थे। उन नागरिक वेशधारियों में एक सैनिक का नाम चंद्रसिंह गढ़वाली था। उसने एक स्थानीय व्यक्ति से पूछा—

"ये लोग क्या बोल रहे हैं? हमारी कुछ समझ में नहीं आता!"

जिस व्यक्ति से पूछा गया था, उसने समझाया—

"ये लोग जो कुछ बोल रहे हैं, उसका सार यह है कि यदि विदेशी माल और शराब की बिक्री बंद न हुई तो कांग्रेसी लोग २२ अप्रैल से दुकानों पर धरना सत्याग्रह प्रारंभ कर देंगे।"

चंद्रसिंह गढ़वाली ने यह सुना और वह कुछ सोचता हुआ अपनी छावनी की तरफ चल दिया। शाम को सभी सैनिकों की गिनती परेड हुई।

चंद्रसिंह गढ़वाली ब्रिटिश सेना में हवलदार मेजर के पद पर था। २२ अप्रैल, १९३० को सुबह सात बजे जब चंद्रसिंह गढ़वाली अपनी कंपनी को ब्लैकबोर्ड पर सैनिक महत्त्व की कुछ बातें समझा रहा था, उसी समय उसका अंग्रेज अफसर वहाँ पहुँचा। चंद्रसिंह गढ़वाली ने अपने अंग्रेज अफसर को अपनी कंपनी की हाजिरी रिपोर्ट की। अंग्रेज अफसर ने उन लोगों को बैठ जाने के लिए कहा और हँसते हुए बोला—

"कंपनी 'ए' के वीर जवानो! मैं आप लोगों से पूछना चाहता हूँ कि क्या आपको मालूम है कि सरकार ने आप लोगों की गढ़वाली पल्टन को यहाँ क्यों भेजा है?"

"नहीं," सभी का एक ही उत्तर था। अंग्रेज अफसर ने फिर कहना प्रारंभ किया—

"जो कुछ मुझे मालूम है, वह मैं तुम्हें बता रहा हूँ। तुम लोग तो जानते ही हो कि पेशावर में ९८% मुसलमान और २% हिंदू हैं। मुसलमान लोग हिंदुओं को सताते रहते हैं। वे लोग हिंदुओं की दुकानें लूट लेते हैं और उनमें आग लगा देते हैं।

ब्रिटिश सरकार ने हिंदुओं की रक्षा के लिए ही हिंदू पल्टन यहाँ भेजी है। यह सवाल हो सकता है कि तुम लोगों को हिंदू दुकानदारों की रक्षा के लिए शहर में जाना पड़े और मुसलमान गुंडों पर गोली भी चलानी पड़े।''

अपनी कंपनी के कमांडर चंद्रसिंह गढ़वाली ने अंग्रेज अफसर का यह कथन सुनकर अपनी जिज्ञासा प्रकट करते हुए कहा—

''जनाब! यहाँ तो हम लोग यह भी नहीं पहचान सकते कि कौन हिंदू है और कौन मुसलमान! सभी एक जैसे कपड़े पहनते हैं और सभी पश्तो बोलते हैं। जहाँ तक दाढ़ी का सवाल है, यह हिंदू भी रखते हैं और मुसलमान भी।''

अफसर ने कहा—

''चिंता मत करो। समय आने पर तुम्हें सबकुछ बता दिया जाएगा। जिसपर गोली चलाने के लिए कहा जाए, तुम्हें उसपर गोली चलाना है।''

इतना कहकर अंग्रेज अफसर चला गया। सैनिकों ने अपने कमांडर चंद्रसिंह गढ़वाली की ओर प्रश्नवाचक दृष्टि से देखा। चंद्रसिंह ने उनके मनोभाव ताड़कर कहा—

''अपने अंग्रेज अफसर की बातें तो आपने सुन लीं। यदि आप लोग मेरी बातों को किसीसे न कहने का वादा करें तो मैं आप लोगों से कुछ कहूँ।''

अपने साथियों द्वारा गोपनीयता का आश्वासन पाकर चंद्रसिंह गढ़वाली ने कहना प्रारंभ किया—

''भाइयो! अभी हमारा अंग्रेज साहब जो कुछ कह गया है, वह सरासर झूठ है। झगड़ा हिंदू और मुसलमान का नहीं है, झगड़ा तो अंग्रेजी सरकार और कांग्रेस का है। कांग्रेस देश के लिए लड़ रही है। यहाँ कांग्रेस में मुसलमानों की संख्या अधिक है। यदि हमें उनपर गोली चलाने का हुक्म दिया जाए तो क्या उनके हुक्म का पालन करके अपने उन हिंदुस्तानी भाइयों पर गोली चलाना चाहिए, जो हमारे देश की आजादी की लड़ाई लड़ रहे हैं? ऐसा करने के पहले यदि हम खुद को ही गोली मार लें तो ज्यादा अच्छा रहेगा। अपने भाइयों पर गोली चलाना देश के प्रति गद्दारी होगी। मैं जानना चाहता हूँ कि आप लोग क्या करना चाहेंगे?''

चंद्रसिंह गढ़वाली की बात सुनकर एक सैनिक ने कहा—

''हमारे अफसर तो आप हैं। हमें जो हुक्म आप देंगे, हम उसका पालन करेंगे।''

इस कथन का सभी सैनिकों ने समर्थन किया। शाम को एक गोपनीय बैठक का आयोजन किया गया। हर कंपनी का एक-एक प्रतिनिधि वहाँ उपस्थित था। विचारणीय विषय वही था कि यदि उन लोगों को हिंदुस्तानी जनता पर गोली

चलाने का आदेश दिया जाए तो उस स्थिति में उन्हें क्या करना चाहिए? यहाँ फिर देशभक्ति की विजय हुई और निर्णय लिया गया कि उन्हें हिंदुस्तानी भाइयों पर गोली चलाने का हुक्म दिया गया तो वे उस हुक्म को नहीं मानेंगे और प्रत्येक प्रकार के परिणाम के लिए तैयार रहेंगे। हुक्म न मानने के परिणाम उन लोगों के सामने थे। ऐसी स्थिति में अंग्रेज लोग जो सजाएँ देते आए थे, वे थीं—

१. गोली से उड़ा देना।

२. फाँसी पर लटका देना।

३. कच्चे चूने के ढेर में आधी ऊँचाई तक दबाकर चूने में पानी छोड़ देना और इस प्रकार उबलते हुए चूने की गरमी से अभियुक्त को जीवित जला देना।

४. कुत्तों से नुचवा देना।

५. सारी जायदाद जब्त करके देशनिकाला दे देना आदि।

इस प्रकार की तनाव की स्थिति में रात निकल गई। २३ अप्रैल, १९३० की सुबह हो गई। हुक्म देकर चंद्रसिंह गढ़वाली की पल्टन को काबुली फाटक पर तैनात कर दिया गया। उस स्थान को 'किस्साखाना' भी कहा जाता था। किस्साखाना क्षेत्र में भी तनाव का वातावरण दृष्टिगोचर हो रहा था। पूरे पेशावर शहर को फौज ने घेर रखा था। बख्तरबंद गाड़ियाँ, सफरमैना के दस्ते और हवाई जहाज पेशावर के आसपास मँडरा रहे थे। नगर के बाहर स्थित तोपों के मुँह भी नगर की ओर कर दिए गए थे।

भारतीय देशभक्त तनाव के इस वातावरण से विचलित नहीं थे। समूहों के रूप में वे लोग पुलिस चौकी के सामने किस्साखाना बाजार में पहुँच रहे थे। चौकी के सामने ही आमसभा के लिए मंच बनाया गया था। बाजार के दोनों ओर मकानों की छतों पर स्त्रियाँ और बच्चे तमाशा देखने के उद्देश्य से जमा थे। व्यापार के लिए जो काबुली व्यापारी वहाँ थे, वे भी तमाशा देखने के उद्देश्य से इधर-उधर आसीन हो गए थे।

आमसभा की कार्यवाही प्रारंभ हुई और एक सरदारजी ने भाषण देना प्रारंभ किया। वे कभी पश्तो और कभी उर्दू में बड़े जोशीले ढंग से अपनी बात कह रहे थे। जहाँ उनकी बात लोगों को पसंद आती थी, बीच-बीच में 'अल्लाहो अकबर' और 'महात्मा गांधी की जय' के नारे आकाश को भेदने लगते थे।

इसी समय एक अंग्रेज फौजी अफसर कैप्टेन रिकेट वहाँ पहुँचा और वह लोगों से हट जाने के लिए चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगा। उसके चिल्लाने की कोई चिंता नहीं कर रहा था। इसी समय एक अर्दली ने एक पत्र लाकर कैप्टेन रिकेट के हाथ में दे दिया। उस पत्र को पढ़कर कैप्टेन रिकेट अंतिम चेतावनी देते

हुए चिल्लाया—

"तुम लोग यहाँ से चले जाओ, नहीं तो तुमपर गोलियाँ चला दी जाएँगी।"

वीर पठानों पर कैप्टेन रिकेट के चिल्लाने का कोई प्रभाव नहीं हुआ। वे लोग अपने-अपने स्थान पर जमे रहे और भाषण जारी रहा। अपनी चेतावनी को अप्रभावित होता हुआ देख कैप्टेन रिकेट गढ़वाली पल्टन की ओर देखकर आदेश देता हुआ गरज उठा—

"गढ़वाली बटालियन! तीन राउंड फायर!"

गढ़वाली सैनिकों ने आदेश का पालन नहीं किया। वे अपने हिंदुस्तानी अफसर हवलदार मेजर चंद्रसिंह गढ़वाली की ओर देखने लगे। अपने निश्चय के अनुसार चंद्रसिंह गढ़वाली ने कड़कती आवाज में हुक्म दिया—

"गढ़वाली पल्टन! सीज फायर!"

कड़म-कड़म की आवाज करती हुई सभी बंदूकें जमीन से जा टिकीं। अन्य कंपनियों के हिंदुस्तानी कमांडरों ने भी 'सीज फायर' के आदेश दिए। कुछ सैनिकों ने तो अपनी भरी हुई राइफलें हिंदुस्तानी नागरिकों के हाथों में दे दीं। क्रोध की मुद्रा में कैप्टेन रिकेट ने चंद्रसिंह गढ़वाली की ओर देखा। गढ़वाली का उत्तर था—

"अपने निहत्थे हिंदुस्तानी भाइयों पर हम गोलियाँ नहीं चलाएँगे।"

कैप्टेन रिकेट ने एक परचा लिखकर एक हरकारे के हाथ अपने बड़े अफसर के पास भेजा। वह हरकारा दौड़ता हुआ गया और दस मिनट के अंदर एक अंग्रेज पल्टन वहाँ पहुँच गई। कैप्टेन रिकेट ने गढ़वाली सैनिकों को हथियार रखने का हुक्म दिया। उनके द्वारा हथियार रख देने के बाद कैप्टेन रिकेट ने अंग्रेज पल्टन को सभा कर रही जनता पर गोलियाँ चलाने का हुक्म दिया। अंग्रेज सैनिक निर्दयतापूर्वक निहत्थे हिंदुस्तानी नागरिकों पर गोलियाँ चलाने लगे। गोलियाँ खाकर लोग गिरने लगे और खून के फव्वारे फूटने लगे। थोड़ी देर बाद सभा विसर्जित हो गई। कई लाशें वहीं पड़ी हुई थीं।

२४ अप्रैल की सुबह आदेश की अवज्ञा करनेवाले गढ़वाली सैनिकों को कतार में खड़ा करके मेजर ब्रास्किल ने डाँटने के लहजे में कहा—

"कल शहर में तुम लोगों ने अपने अंग्रेज अफसर का हुक्म न मानकर बहुत गंभीर अपराध किया है। तुम अपनी गलती सुधार सको, इसलिए तुम लोगों को आज फिर शहर में भेजा जाएगा। जो सिपाही गोली चलाने से इनकार करेगा, उसे वहीं गोली से उड़ा दिया जाएगा। तुम लोग ठीक दस बजे शहर पहुँचने की तैयारी करो।"

मेजर ब्रास्किल के वक्तव्य के पश्चात् हवलदार मेजर चंद्रसिंह गढ़वाली आगे बढ़ा और उसने अपने सैनिकों को संबोधित करते हुए कहा—

"भाइयो! आज आपको फिर शहर में ले जाया जा रहा है और आज भी आपको अपने हिंदुस्तानी भाइयों पर गोलियाँ चलाने का हुक्म मिलेगा। यदि आप लोगों ने आज गोलियाँ चलाईं तो भी कल की अवज्ञा के लिए आपको दंड मिले बिना नहीं रहेगा। मैं पूछता हूँ कि क्या आप गढ़वाल के माथे पर कलंक का टीका लगाने को तैयार हैं? आपको याद है कि जलियाँवाला बाग में ६ गोरखा बटालियन ने निहत्थी जनता पर गोलियाँ चलाई थीं। आज तक लोग उनके नाम पर थूकते हैं। मलाबार में १/१८ रॉयल गढ़वाल राइफल्स ने मोपलों पर जुल्म किए थे। आपने देखा होगा कि अस्पतालों में मोपला डॉक्टर गढ़वालियों को कैसी बुरी नजर से देखते थे। हम लोग अपनी यह गति नहीं होने देंगे। आज हम आठ सौ गढ़वाली सिपाही पेशावर की सड़कों पर कांग्रेस की प्रतिष्ठा के लिए अपने जीवन न्योछावर कर देंगे। लेकिन याद रखिए कि ऐसा करके हम लोग अमर हो जाएँगे।"

अपने कमांडर चंद्रसिंह गढ़वाली के इस संबोधन का सैनिकों पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि आदेश मिलने पर भी एक भी सैनिक शहर की तरफ नहीं गया। चंद्रसिंह गढ़वाली और उनके उनसठ साथियों को गिरफ्तार कर लिया गया। उन लोगों पर फौजी अदालत में मुकदमा चला।

पेशावर की जनता चंद्रसिंह गढ़वाली और उनके सैनिकों के साहसिक कदम पर मुग्ध थी। वे उन्हें सम्मानित करना चाहते थे; लेकिन फौज के अंग्रेज अफसरों ने इसका अवसर ही नहीं दिया। २४ अप्रैल को ही रात के दस बजे उन लोगों को 'फाल इन' होने का आदेश मिला। पंक्तिबद्ध होते ही उन्हें दौड़ने का आदेश दे दिया गया। शहर की बत्तियाँ बुझा दी गईं, जिससे शहर के लोग अपने जाते हुए राष्ट्रवीरों को न देख सकें और उनके पक्ष में कोई प्रदर्शन न कर सकें। सभी विद्रोही सैनिक अपने सामान की गठरियाँ अपने सिरों पर रखे हुए बरसते हुए पानी में दौड़ते हुए जा रहे थे। बाहर भी अँधेरा था और उन लोगों के दिमाग में भी अँधेरा छाया हुआ था। उन्हें पता नहीं था कि उनका क्या हश्र होगा।

जब विद्रोही सैनिक दौड़ते हुए पेशावर स्टेशन पर पहुँचे तो वहाँ उन्हें कोई भी भारतीय नजर नहीं आया। उन्हें एक रेलगाड़ी में बिठा दिया गया। बीच में पड़नेवाले स्टेशनों पर भी सन्नाटा था। आखिरकार उनकी गाड़ी ऐबटाबाद पहुँची। उन लोगों का सामान खच्चरों पर लाद दिया गया। उनके वहाँ पहुँचने की खबर ऐबटाबाद के नागरिकों को लग चुकी थी। हजारों नागरिक 'गढ़वाली पल्टन की जय' के नारे लगाते हुए उनके इर्द-गिर्द पहुँच गए। अंग्रेज अफसरों ने उन्हें वहाँ भी दौड़ने का हुक्म दे दिया। भयंकर वर्षा प्रारंभ हो गई। अंग्रेज अफसर घोड़ों पर बैठकर चल रहे थे और विद्रोही सैनिकों को घुटने-घुटने पानी में दौड़ना पड़ रहा

था। कई लोग तो दौड़ते-दौड़ते बेहोश होकर गिर पड़े। ऐबटाबाद नगर के लोगों में इतना उत्साह था कि वे लोग भी अपने राष्ट्रवीरों पर फूल बरसाते हुए दौड़ रहे थे।

विद्रोही गढ़वाली सैनिकों को काकुल ले जाया गया। वहाँ उनका कोर्ट मार्शल होना था। १२ जून, १९३० को फौजी अदालत ने उन लोगों को फैसला सुनाकर बहुत कड़ी सजाएँ दे दीं। विद्रोही गढ़वाली कमांडर चंद्रसिंह गढ़वाली को निम्नलिखित सजाएँ दी गईं—

१. ओहदेधरी का रैंक तोड़कर सिपाही रैंक में कर दिया गया।
२. सिपाही के रैंक से भी नाम खारिज कर दिया गया।
३. आजीवन निर्वासन दिया गया।
४. तमाम जायदाद जब्त कर ली गई।

हुक्म के सुना देने के पश्चात् सूबेदार मेजर रूपचंद्रसिंह और जमादार एडजूटेंट देवीसिंह रावत हाथों में कैंचियाँ लेकर चंद्रसिंह पर झपट पड़े। उन लोगों ने उनकी टोपी उतारकर बैज और चिन स्टाप फाड़कर अलग कर दिए। उनकी वरदी से हवलदारी का बिल्ला नोचकर अलग कर दिया गया। उनका 'गुड कंडक्ट' वाला फीता, रॉयल रस्सी और तमगे नोचकर जमीन पर पटक दिए। उनकी वरदी से फ्रांस की लड़ाई का तमगा, वजीरिस्तान की लड़ाई का तमगा और सर्विस का तमगा भी नोच लिया गया। अंत में बटन खोलकर वरदी निकालने के बजाय वे लोग कैंचियों से वरदी काटकर शरीर से अलग करने लगे। चंद्रसिंह इस अपमान को सहन नहीं कर सके। उन्होंने झटका देकर बटन तोड़ डाले और वरदी फाड़कर उसे जमीन पर पटक दी।

रात के समय सीमांत प्रांत के दो व्यक्ति कँटीले तारों की जेल में चंद्रसिंह गढ़वाली से मिलने पहुँचे। उनमें एक हिंदू था और दूसरा मुसलमान। वे लोग चंद्रसिंह को देने के लिए खुबानियों से भरा हुआ एक थाल, एक गिलास दही, एक जोड़ा धोती और एक पगड़ी ले गए थे। वह उपहार पाकर चंद्रसिंह अपनी पीड़ा भूल गए।

विद्रोही वीर चंद्रसिंह गढ़वाली ने फौजी अदालत द्वारा दी गई ग्यारह साल आठ महीने की सजा वीरतापूर्वक काटी। सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो आंदोलन' में उन्हें फिर गिरफ्तार कर लिया गया। उनपर छत्तीस कत्ल के अभियोग चलाए गए और सात वर्ष का दंड फिर दिया गया। इतनी लंबी सजाएँ काटने के बाद भी स्वाधीन भारत में उन्हें केवल तीस रुपए माहवार की पेंशन स्वीकृत हुई। वे कुछ दिन पं. जवाहरलाल नेहरू के साथ भी जेल में रहे थे।

□

# ★ चेतराम लोधी

चेतराम लोधी ने खाली बैठना नहीं सीखा था। देश की आजादी के संदर्भ में वह किसी-न-किसी राजनीतिक आंदोलन से हमेशा ही जुड़ा रहा। १९२३ में उसने झंडा आंदोलन में भाग लिया और उसके पश्चात् उसने १९३० के 'अवज्ञा आंदोलन' में भी बढ़-चढ़कर भाग लिया। जब सन् १९४२ का 'भारत छोड़ो आंदोलन' छिड़ा, तो वह उसमें भी कूद पड़ा। विध्वंसक कार्यों में उसकी विशेष रुचि थी। वह कई बार जेल गया और कई बार छूटा।

चेतराम लोधी ने उस जुलूस का नेतृत्व किया, जो बहुत बड़ी संख्या में भारतीय नेताओं की गिरफ्तारी के विरोध में आयोजित किया गया था। इस जुलूस पर पुलिस ने बेरहमी के साथ लाठियाँ चलाईं और सबसे अधिक मार चेतराम पर ही पड़ी। उसपर इतनी अधिक मार पड़ी थी कि वह पूर्णरूप से कभी स्वस्थ नहीं हो सका और २० फरवरी, १९४४ को शहादत के मार्ग पर चल पड़ा।

चेतराम लोधी मध्य प्रदेश के बालाघाट जिले के 'सलाई' ग्राम का रहनेवाला था। उसका जन्म सन् १८८४ के लगभग हुआ था। उसके पिता श्री गर्जन एक कृषक थे।

□

## ★ छगन लुहार ★ शहादू बैंदाले

महाराष्ट्र के जलगाँव जिले के 'पचोरा' नामक स्थान पर अंग्रेजी साम्राज्य को ललकारने के लिए देशभक्तों की एक आमसभा हुई। इसमें भारत की आजादी लेने का संकल्प किया गया और गरमागरम भाषण हुए। एक भाषण कृष्णपुरी के शहादू बैंदाले ने भी दिया। उसने आसपास खड़ी हुई पुलिस को ललकारा और पुलिस ने भी उसका मुँह बंद करने के लिए गोली चला दी। इस गोली कांड में शहादू बैंदाले शहीद हो गया और कई अन्य व्यक्ति गोलियों से घायल हो गए। शहीद होनेवालों में छगन लुहार भी था। उसका जन्म जलगाँव जिले के 'लोरी' गाँव में सन् १९१८ में राजाराम लुहार के घर हुआ था। वह एक कारखाने में काम करता था।

□

## ★ छत्तूसिंह यादव

बलिया जिले के क्रांतिवीरों में छत्तूसिंह यादव का नाम भी उल्लेखनीय है। उसने अपने गाँव 'बरिया' में शासन के विरोध में एक जुलूस निकाला और झंडा लेकर उसके आगे-आगे चला। पुलिस के थाने पर झंडा फहराने और उसपर अधिकार कर लेने के इरादे से यह जुलूस उस तरफ जा रहा था। पुलिस ने पहले चेतावनी दी और जब जुलूस के लोगों ने आगे बढ़ना बंद नहीं किया तो गोलियाँ चलाई गईं। छत्तूसिंह यादव घटनास्थल पर ही शहीद हो गया।

छत्तूसिंह का जन्म बलिया जिले के 'बरिया' नामक ग्राम में सन् १९२४ में हुआ था।

□

## ★ छीबाभाई पटेल

छीबाभाई पटेल सूरत जिले के 'पिंजारत' का रहनेवाला था। उसमें राजनीतिक चेतना इतनी अधिक थी कि वह सूरत पहुँचकर शासन विरोधी प्रदर्शन में सम्मिलित हुआ। वह गिरफ्तार किया जाकर जेल में रखा गया और जेल में ही उसकी मृत्यु हो गई।

□

## ★ छोटाभाई

गुजरात के 'डाकोर' नामक स्थान पर जनता और पुलिस के बीच कई झड़पें हुईं। पुलिसवालों की अच्छी पिटाई की गई। एक स्थान पर तो लोगों की भीड़ से पुलिस इस तरह घिर गई कि यदि छोटाभाई नाम के एक सज्जन हस्तक्षेप नहीं करते तो पुलिस के कई व्यक्ति मारे जाते। हुआ यह कि लोगों की क्रुद्ध भीड़ ने पुलिस के कुछ लोगों को घेर लिया और उनकी बंदूकें छीन लीं। लोग पुलिसवालों की जान लेने के लिए उतारू हो गए। रहम खाकर छोटाभाई ने पुलिसवालों की जान बचाई और उनकी बंदूकें उन्हें वापस दिलाईं। छोटाभाई के इस एहसान का बदला पुलिसवालों ने इस तरह से दिया कि जब दमन करने के लिए भारी संख्या में वे वहाँ पहुँचे, तो उन्होंने छोटाभाई को ही गोली से उड़ा दिया।

□

## ★ जंगलूजी धोरे

जब अगस्त क्रांति के अंतर्गत महात्मा गांधी और देश के प्रमुख नेताओं को ब्रिटिश सरकार ने गिरफ्तार करके जेलों में बंद कर दिया तो समस्त भारत में सरकार के इस कदम के विरुद्ध जनता भड़क उठी। वर्धा के जंगलूजी धोरे की नाराजगी कुछ अधिक ही थी। उसने तोड़-फोड़ भी प्रारंभ कर दी और उग्र प्रदर्शन में भी सम्मिलित होने लगा। एक दिन वह एक आमसभा में भाषण दे रहा था कि पुलिस ने उसपर गोली चलाकर उसे समाप्त कर दिया।

□

## ★ जंगलू ★ शंकर नागपुरी

महाराष्ट्र का आधुनिक नागपुर नगर पहले मध्य प्रांत का भाग था। मध्य प्रांत के दो भाग थे। एक भाग में मराठी बोली जाती थी और दूसरे में हिंदी। नागपुर मराठीभाषी क्षेत्र था।

नागपुर में अगस्त क्रांति ने काफी जोर पकड़ा। वहाँ फौज के साथ आंदोलनकारियों की बाकायदा झड़पें हुईं। स्थान-स्थान पर जुलूस निकले और सभाएँ हुईं। अंग्रेज अफसरों के बंगलों पर भी आक्रमण किए गए। एक समय तो ऐसा भी आया कि नागपुर नगर का प्रशासन तीन दिनों तक जनता के हाथों में रहा। बाद में फौज ने आकर बहुत तबाही मचाई। कई स्थानों पर बाजार लूटे गए और गोलियाँ चलीं। जनता ने भी लूट का जवाब लूट से दिया। यदि फौज ने बाजार लूटे तो जनता ने रामटेक ताल्लुका में सरकारी खजाना लूट लिया। इस लूट में जनता को ग्यारह लाख रुपए हाथ लगे।

फौज ने नागपुर में शंकर नागपुरी नामक व्यक्ति को पकड़कर पुलिस के

हवाले कर दिया। उसपर मुकदमा चला और उसे फाँसी हुई।

वर्धा में जंगलू नाम का व्यक्ति गोली से मारा गया।

□

## ★ जगन्नाथ पाटस्कर

जगन्नाथ पाटस्कर को जब फाँसी के तख्ते पर ले जाया गया तो वह इतना प्रसन्न था, जितना शायद वह अपने जीवन में कभी नहीं रहा हो। उसका कथन था कि मुझे देशभक्ति और राष्ट्रीयता का सच्चा पुरस्कार मिल रहा है। लेकिन यह उसका दुर्भाग्य था कि शासन ने उसे अपराधी समझा था और उसपर हत्या का अभियोग लगाकर उसे फाँसी का दंड सुनाया था।

जगन्नाथ पाटस्कर का जन्म १ जनवरी, १९१७ को महाराष्ट्र के शोलापुर जिले के 'भलवानी' नामक स्थान पर हुआ था। सातवें दर्जे तक शिक्षा प्राप्त करके उसने समाचार-पत्र बेचने का काम किया और धीरे-धीरे वह अच्छा पत्रकार भी बन गया। समाज में उसकी प्रतिष्ठा थी। वह सभी के काम आता था और सभी के प्रति उसका व्यवहार बहुत अच्छा रहता था।

राजनीतिक जीवन का प्रारंभ जगन्नाथ पाटस्कर ने सन् १९३० के नागरिक अवज्ञा आंदोलन से किया और उसके पश्चात् वह १९४२ की अगस्त क्रांति में भी गले-गले डूब गया। चूँकि वह निर्भीक पत्रकार था और सरकार की अच्छी खबर लेता था, इस कारण सरकार भी उसे फँसाने के अवसर की तलाश में थी। आंदोलन के अंतर्गत उसपर हत्या का आरोप लगाया गया और उसको फाँसी की सजा सुना दी गई।

□

## ★ जग्गूराम

हैदराबाद के पुलिस सब-इंस्पेक्टर मोहम्मद सादिक की हत्या के अपराध में पुलिस को क्रांतिकारी जग्गूराम की तलाश थी।

जग्गूराम पुलिस की आँखों में धूल झोंकता हुआ २८ जनवरी, १९३३ को लाहौर पहुँच गया। वह रणजीत सिंह समाधि-स्थल के एक कमरे में ठहरा हुआ था। १ फरवरी, १९३३ की सुबह उसके कमरे में से एक भीषण विस्फोट सुनाई दिया। क्या घटना हुई, यह देखने के लिए ग्रंथीजी उसके कमरे की तरफ लपके।

उन्होंने देखा कि जग्गूराम का शरीर रक्त से लथपथ है और वह बाहर निकलकर एक बेंच पर बैठ गया है। यह जानने के लिए कि उसके शरीर में कहाँ-कहाँ जख्म हुए हैं, ग्रंथीजी ने उससे खड़े होने के लिए कहा। वह खड़ा हुआ, लेकिन अगले ही क्षण भूमि पर गिरा और उसके प्राण-पखेरू उड़ गए।

□

## ★ जमुनाप्रसाद

उत्तर प्रदेश के मथुरा जिले के 'बेवर' नामक स्थान पर अगस्त क्रांति का विशाल जुलूस स्थानीय पुलिस स्टेशन की तरफ बढ़ रहा था। पुलिस ने उस जुलूस को बिखर जाने के लिए कहा। जुलूस के लोगों ने पुलिस को चकमा दिया। पुलिस को दिखाने के लिए जुलूस बिखर गया; लेकिन लोगों का एक समूह दूसरे रास्ते से पुलिस स्टेशन पर पहुँच गया और कुछ लोग झंडा लगाने के लिए पुलिस भवन पर चढ़ भी गए। पता लगने पर पुलिस ने नीचे से गोलियाँ चलाईं, जिनके परिणामस्वरूप दो आंदोलनकारी मारे गए। इनमें जमुनाप्रसाद एक थे। जमुनाप्रसाद का जन्म सन् १८९९ में जनवरी मास में हुआ था। उनके पिता का नाम श्री अयोध्याप्रसाद था।

□

## ★ कुमारी जयावती संघवी

कुमारी जयावती संघवी

५ अप्रैल, १९४३ को अहमदाबाद नगर में ब्रिटिश शासन के विरोध में एक विशाल जुलूस निकला। प्रमुख रूप से यह जुलूस कॉलेजों के छात्र-छात्राओं का था। इस जुलूस में प्रमुख भूमिका थी कुमारी जयावती संघवी की।

पुलिस ने जुलूस को तितर-बितर करने के लिए काफी संख्या में आँसू गैस के गोले फोड़े। कुमारी जयावती संघवी पर इस गैस का इतना

अधिक प्रभाव हो गया कि उसकी मृत्यु हो गई।

कुमारी जयावती संघवी का जन्म अहमदाबाद में सन् १९२४ में हुआ था।

□

## ★ जानकी मिश्र

बिहार के दरभंगा जिले का सत्याग्रही आंदोलन हिंसक हो उठा तथा प्रदर्शनकारियों ने सरकारी दफ्तरों को लूटा और उनमें आग लगा दी। स्टेशनों और खजानों पर आक्रमण किए गए। रेल की पटरियाँ उखाड़ी गईं और तार काट डाले गए। एक आंदोलनकारी जानकी मिश्र के नेतृत्व में उग्र भीड़ ने रेलवे स्टेशन पर आक्रमण करके उसको लूट लिया। स्टेशन मास्टर ने पुलिस को आक्रमण की सूचना पहले ही दे दी थी। जिस समय आंदोलनकारी स्टेशन को लूट रहे थे, उसी समय पुलिस वहाँ पहुँच गई। जानकी मिश्र को गिरफ्तार करके पुलिस स्टेशन ले जाया गया। वहाँ उनकी इतनी पिटाई की गई कि उनकी जान ही निकल गई। यह घटना १७ अगस्त को हुई।

□

## ★ जितेंद्र दासगुप्ता ★ त्रिपुर सेन ★ नरेश रे ★ निर्मल लाला ★ पुलिन विकास घोष ★ प्रभास बल ★ मतिलाल कानूनगो ★ मधुसूदन दत्त ★ विधुभूषण भट्टाचार्य ★ शशांक दत्त

चटगाँव के क्रांतिकारियों ने जब १८ अप्रैल, १९३० को चटगाँव स्थित ब्रिटिश आर्मी और पुलिस के शस्त्रागार लूट लिये, तो उन्होंने नगर का प्रशासन अपने हाथों में ले लिया। राजभवन से ब्रिटिश झंडा उतारकर वहाँ भारत का तिरंगा झंडा फहरा दिया गया। पूरे चार दिन तक नगर का प्रशासन क्रांतिकारियों के हाथ में रहा।
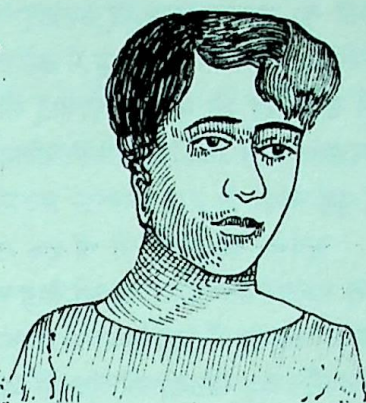
नरेश रे                                   प्रभास बल

ब्रिटिश हुकूमत ने शीघ्र ही अपनी स्थिति सँभाल ली। २२ अप्रैल को शासन पूर्ववत् प्रतिष्ठित हो गया। रेलवे लाइन ठीक हो जाने के कारण ब्रिटिश आर्मी से लदी हुई एक पूरी ट्रेन चटगाँव पहुँच गई। सुरमा वैली लाइट हॉर्स और ईस्टर्न फ्रंटियर के डेढ़ हजार शस्त्र-सज्जित फौजियों ने चटगाँव पहुँचकर क्रांतिकारियों की खोज प्रारंभ कर दी। उन्हें यह पता चल गया कि क्रांतिकारी लोग जलालाबाद की पहाड़ी पर छिपे हुए हैं।

ब्रिटिश साम्राज्य के दो हजार शस्त्र-सज्जित सैनिकों ने लगभग पचास क्रांतिकारियों को जलालाबाद की पहाड़ी पर तीन तरफ से घेर लिया। क्रांतिकारी जानते थे कि ब्रिटिश फौज के मुकाबले में उनकी संख्या नगण्य है; लेकिन उनके पास लड़ने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं था। उन्होंने निश्चय कर लिया कि भूख से तड़पते रहने के स्थान पर बंदूकों की गोलियाँ खाना अधिक श्रेयस्कर है। उन्होंने भी अपनी मोरचाबंदी कर ली। यद्यपि सूर्यसेन उन लोगों के बीच में थे; पर युद्ध के संचालन का भार उन्होंने अपने सुयोग्य लेफ्टिनेंट लोकनाथ बल को दिया। प्रमुख मोरचा सँभाला लोकनाथ बल ने और दल से थोड़ी दूर हटकर स्वयं सूर्यसेन ने अपने कुछ साथियों के साथ स्थिति ले ली।

युद्ध भयंकर रूप से प्रारंभ हो गया। पचास क्रांतिकारी ब्रिटिश सेना के दो हजार प्रशिक्षित और उत्तम शस्त्रों से सज्जित सैनिकों के साथ युद्ध कर रहे थे। लोकनाथ बल की पार्टी में उसका छोटा भाई हरिगोपाल बल उर्फ टेगरा था। वह बहुत आगे बढ़कर और क्रुद्ध होकर युद्ध करने लगा। युद्ध की पहली बलि उसीकी बंदूक ने ली। उसने ब्रिटिश आर्मी के छह जवानों को चटकाया। शत्रु सैनिकों को गोली लगने पर वह जोर से संख्या बोलकर गिनती भी करता जा रहा था। छह

सैनिकों का सफाया करने के पश्चात् एक घातक गोली लगने से वीर टेगरा ने वीरगति प्राप्त कर ली। उस युद्ध में क्रांतिकारियों की ओर से वह पहला शहीद था। अपने छोटे भाई की मृत्यु के पश्चात् लोकनाथ बल ने बहुत क्रोधांध होकर युद्ध प्रारंभ कर दिया। उनकी मार से विचलित होकर ब्रिटिश आर्मी सूर्यसेन के दल की ओर मुड़ गई।

सूर्यसेन की टुकड़ी में भी एक बालवीर था। उस बालवीर का नाम था—निर्मल लाला। उसकी उम्र केवल तेरह वर्ष की थी और टेगरा के साथ उसने भी शस्त्रागार की लूट में भाग लिया था। निर्मल लाला ने भी बहुत हौसले के साथ युद्ध किया। पाँच शत्रु सैनिकों को मौत के घाट उतारने के पश्चात् वह स्वयं भी शहीद हो गया।

निर्मल लाला के पहले त्रिपुर सेन ने भी युद्ध करते हुए वीरगति प्राप्त कर ली। गोली लगने के पश्चात् उसने जोरदार आवाज में 'अलविदा' कहा और लुढ़क गया।

लड़ाई शाम के पाँच बजे प्रारंभ हुई थी। दिन ढलने लगा था और तेजी के साथ अंधकार का प्रसार हो रहा था। दोनों ही पक्ष इस प्रयत्न में थे कि अधिक-से-अधिक अंक अर्जित कर लिये जाएँ। दोनों ओर से सैनिक दम तोड़ रहे थे। जितनी देर में फौज एक क्रांतिकारी का शिकार कर पाती थी, उतनी देर में क्रांतिकारी लोग पंद्रह फौजियों को फोड़ देते थे।

युद्ध तीव्र से तीव्रतर होता गया और संध्या के साढ़े सात बजे इतना अँधेरा हो गया कि दोनों पक्षों के लिए गोलियाँ चलाना असंभव हो गया। अत: युद्ध बंद कर देना पड़ा।

अगली सुबह जब ब्रिटिश फौज जलालाबाद पहाड़ी पर पहुँची तो उसने अपने पक्ष की एक सौ साठ लाशें बटोरीं। क्रांतिकारियों की केवल दस लाशें ही उनको मिलीं। मतिलाल कानूनगो नाम के क्रांतिकारी ने उनके सामने ही दम तोड़ा। इस प्रकार उस युद्ध में ग्यारह क्रांतिकारी खेत रहे थे—हरिगोपाल बल (टेगरा), त्रिपुर सेन, निर्मल लाला, विधुभूषण भट्टाचार्य, नरेश रे, शशांक दत्त, मधुसूदन दत्त, पुलिन विकास घोष, जितेंद्र दासगुप्ता, प्रभास बल और मतिलाल कानूनगो।

☐

## ★ जितेंद्रनाथ मल्लिक

पुलिस के साथ उसकी आँखमिचौनी निरंतर ही होती रही। पुलिस को इस बात का खेद था कि क्रांतिकारी जितेंद्रनाथ मल्लिक हाथ में आते-आते खिसक जाता है।

पुलिस के जाल को छिन्न-भिन्न करके जब जितेंद्रनाथ दिसंबर १९४१ में लखनऊ पहुँचा, तो उसे तेज बुखार हो आया और उसे बिस्तर पकड़ना पड़ा। पुलिस तो उसके पीछे थी ही। बीमारी की दशा में १३ दिसंबर, १९४१ को पुलिस ने उसे गिरफ्तार कर लिया।

पुलिस को इस बात की चिंता नहीं थी कि जितेंद्रनाथ गंभीर रूप से बीमार है। उसे तो इस बात की चिंता थी कि क्रांतिकारियों के रहस्य उससे मालूम कर लिये जाएँ। बीमारी की दशा में भी उसको बख्शा नहीं गया और अन्य क्रांतिकारियों के पते-ठिकाने पूछने के लिए उसे यातनाएँ दी गईं। इससे जितेंद्रनाथ को बड़ा मानसिक आघात पहुँचा।

बीमारी और यातनाओं के परिणामस्वरूप गिरफ्तारी के दो दिन पश्चात् ही अर्थात् १५ दिसंबर, १९४१ को जितेंद्रनाथ की मृत्यु जेल में हो गई।

उसकी लाश भी उसके रिश्तेदारों को नहीं दी गई। एक और नौजवान क्रांतिकारी देश की आजादी के लिए कुर्बान हो गया।

□

## ★ जीरा गोंड

मध्य प्रदेश के बैतूल जिले के 'सालीढाना' नामक स्थान में जीरा गोंड का जन्म सन् १९०७ में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री दुराजसिंह गोंड था। ये लोग खेती-किसानी का काम करते थे।

जीरा गोंड ने अगस्त क्रांति में खुलकर भाग लेना प्रारंभ कर दिया। विध्वंसक कार्यों में उसकी अधिक रुचि थी। तोड़-फोड़ के कामों में भाग लेते हुए ही वह गिरफ्तार किया गया था। उसे दस महीने के कठोर कारावास का दंड दिया गया।

नागपुर जेल में १६ सितंबर, १९४३ को जीरा गोंड की मृत्यु हो गई।

□

# ★ जुनेद आलम ★ विश्वनाथ

उत्तर प्रदेश के गाजीपुर जिले के नंदगंज रेलवे स्टेशन पर अगस्त क्रांति के आंदोलनकारियों ने आक्रमण कर दिया। उन्होंने रेलवे संपत्ति को नष्ट करना प्रारंभ कर दिया। उन लोगों ने स्टेशन के कागज-पत्रों में आग लगा दी और जो कुछ नकद धन मिला, उसे भी अग्नि समर्पित कर दिया। इसी बीच पुलिस को उपद्रव का पता चल गया और उसने घटनास्थल पर पहुँचकर आंदोलनकारियों पर गोलियाँ चला दीं। इस गोली कांड में जुनेद आलम नाम का आंदोलनकारी शहीद हो गया।

जुनेद आलम का जन्म सन् १९०५ में गाजीपुर जिले के 'कुरबन सराय' ग्राम में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री हिकमत अली था।

इसी कांड में 'देवरा' का युवक विश्वनाथ भी पुलिस की गोली से शहीद हुआ।

□

# ★ जोगेशचंद्र चटर्जी
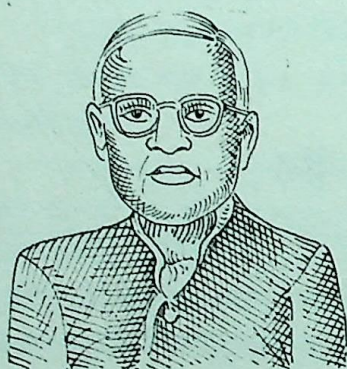
जोगेशचंद्र चटर्जी

कोमिल्ला नगर के एक मकान को सुबह-सुबह पुलिस ने घेर लिया। वे उस मकान से जोगेशचंद्र चटर्जी नाम के एक क्रांतिकारी को गिरफ्तार करना चाहते थे। पुलिस दल में पुलिस सुपरिंटेंडेंट, सब-इंस्पेक्टर तथा कुछ सिपाही थे। पुलिस दल ने पड़ोस के एक वकील साहब को गवाह के रूप में अपने साथ ले लिया। जोगेशचंद्र चटर्जी ने खिड़की में से पुलिस को देख लिया था। बचने का कोई अन्य उपाय हो नहीं सकता था। उसने अपने सारे कपड़े उतार दिए तथा केवल अंडरवीयर पहनकर एक भरा हुआ लोटा हाथ में लटकाया और बाहर निकल पड़ा। पुलिस के लोगों ने उसे रोककर नाम पूछा तो उसने अपना नाम 'अविनाशचंद्र' बता दिया।

पुलिस ने उससे दूसरा प्रश्न किया कि क्या जोगेशचंद्र चटर्जी अंदर है? उसने कह दिया कि जोगेशचंद्र चटर्जी अंदर है और वह अभी सो रहा है। पुलिस ने यह जानकर कि उसका शिकार अंदर है, उस लड़के को बाहर चले जाने दिया। अंदर पहुँचकर पुलिस ने कुछ लड़कों को पकड़ा और उनके नाम पूछे। उनमें से किसीका नाम भी जोगेशचंद्र चटर्जी नहीं था। पुलिस सुपरिंटेंडेंट ने वारंट खोलकर पढ़ा तो उसमें नाम 'जोगेशचंद्र चक्रवर्ती' लिखा हुआ था। वकील साहब ने बताया कि यहाँ जोगेशचंद्र चक्रवर्ती नामक कोई व्यक्ति नहीं रहता। पुलिस खिसियाकर रह गई। उसका शिकार उसके हाथ से छूट चुका था।

जोगेशचंद्र चटर्जी छिपता-छिपता अपने एक क्रांतिकारी मित्र तारिणीप्रसन्न मजूमदार के पास गया। वहाँ से वे दोनों कुछ दिन के लिए अन्यत्र चले गए।

कलकत्ता पहुँचकर जोगेशचंद्र पथरियाघाट के एक क्रांतिकारी अड्डे पर रहने लगा। अभी उसे कुछ दिन बाहर नहीं जाना था, अत: उसने यह काम स्वीकार कर लिया कि वहाँ आने-जानेवाले क्रांतिकारियों के लिए भोजन के नाम पर दाल-चावल बना दिया करेगा। सभी क्रांतिकारी भोजन करते और कहीं-न-कहीं एक्शन पर चले जाते। खाली समय में जोगेशचंद्र पुस्तकें पढ़ता रहता था।

९ अक्तूबर, १९१६ की शाम को जोगेशचंद्र ने देखा कि बहुत कम क्रांतिकारी भोजन करने के लिए वहाँ पहुँचे। उसने सोचा कि शायद कुछ गिरफ्तार हो गए हों या देर-अबेर आते हों। वह प्रतीक्षा करते-करते सो गया। आधी रात के पश्चात् किसीने जोर-जोर से उस घर का दरवाजा खटखटाया और जोर-जोर से आवाजें लगाईं—"जल्दी खोलो! जल्दी खोलो!" जोगेशचंद्र नींद में हड़बड़ाकर उठा और दरवाजा खटखटानेवाले को अपना साथी समझकर दरवाजा खोल दिया। दरवाजा खुलते ही उसने देखा कि कई नुकीली संगीनों के बीच वह घिर गया है। वह जैसा था वैसा ही उसे गिरफ्तार कर लिया गया और पुलिस स्टेशन भेज दिया गया। पुलिस ने घर की तलाशी ली। वहाँ उसे न तो कोई आपत्तिजनक सामान मिला और न कोई अन्य व्यक्ति। पुलिस के कुछ लोग छिपकर उस मकान के अंदर बैठ गए।

सुबह एक फरार क्रांतिकारी शिशिर कुमार दत्त वहाँ पहुँचा। उसने दरवाजा खटखटाया। दरवाजा खुलते ही वह जीना चढ़ने लगा। अलग-अलग खड़े हुए पुलिस के सिपाहियों ने उसे पकड़ लिया। उसके पास से दो रिवॉल्वर भी पुलिस के हाथ लगे। कुछ देर पश्चात् जोगेंद्रदास नाम का एक अन्य क्रांतिकारी उस मकान पर पहुँचा। इस बार दरवाजा खुला रखा गया था, पर किवाड़ भिड़वा दिए गए थे। ज्यों ही जोगेंद्रदास जीने पर चढ़ने लगा, पुलिस ने उसे दबोच लेना चाहा। उसने पुलिस पर फायर किया और नीचे कूदकर भागने लगा; पर उसे भी

गिरफ्तार कर लिया गया।

वह दिन निकल गया और रात हो गई। पुलिस फिर भी उस मकान में छिपी रही। रात को क्रांतिकारियों का एक मुखिया अतींद्रमोहन राय वहाँ पहुँचा। उसने मकान में अँधेरा देखा। वह बड़बड़ाने लगा—

''क्यों रे जोगेश! तूने अभी तक रोशनी नहीं की?''

''रोशनी हम किए देते हैं।'' एक अपरिचित स्वर उसे सुनाई दिया। रोशनी हुई और कई सिपाही उसके ऊपर झपटे। अतींद्रमोहन ने भाग निकलना चाहा; पर एक लाठी खाकर भी वह जीने से नीचे उतर सके, इसके पहले ही एक सिपाही ने उसकी कमीज का कॉलर पकड़ लिया। अतींद्रमोहन राय के भाग्य से कमीज का कपड़ा पुराना और कमजोर था। कॉलर का टुकड़ा सिपाही के हाथ में रह गया और अतींद्रमोहन कूदता-फाँदता नीचे पहुँचकर भाग निकलने में सफल हो गया।

जोगेशचंद्र चटर्जी को गिरफ्तार करके थाने पर ले जाया गया था। उसके कोट, कमीज और जूते उतरवा लिये गए। एक महीन धोती पर उसे रात-भर कोठरी में रखा गया। अगले दिन उसे केवल एक सूखी रोटी और एक उबला हुआ आलू खाने को दिया गया। यह खा-पीकर वह नंगे बदन जमीन पर लेटा रहा; क्योंकि रात-भर का जागा हुआ था। उसकी नींद अभी लगी ही थी कि पुलिस के एक अफसर ने जूते की ठोकर मारकर उसे जगाया। जोगेशचंद्र चटर्जी ने लाल-लाल आँखोंवाला एक भयानक पुलिस अफसर अपने सामने देखा। कुछ अन्य पुलिसवाले भी उसके साथ थे। उस अफसर ने जोगेशचंद्र से उसके क्रांतिकारी साथियों के नाम-धाम पूछे। जोगेशचंद्र ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसके गाल पर एक जोर का झापड़ पड़ा। उसे फिर खड़ा किया गया, फिर सवाल हुआ, फिर झापड़ पड़ा। उसके बाल खींचकर उसे घसीटा गया, नंगे बदन में ठोकरें मारी गईं, बंदूकों के कुंदे मारे गए; पर फिर भी वह चुप रहा। पुलिस अफसर ने जोगेशचंद्र को गंदी गालियाँ देते हुए सिपाहियों को आदेश दिया कि पाखाने के कमोड में इसका सिर घुसेड़ दो। सिपाहियों ने आदेश का पालन किया। बार-बार जोगेशचंद्र का मुँह पाखाने के कमोड में घुसेड़ा गया और निकाला गया। उसने फिर भी अपने साथियों के नाम नहीं बताए। पुलिस अफसर ने सिपाहियों को आदेश दिया कि पूरा कमोड इसके बदन पर उड़ेल दिया जाए और इसे तीन दिन नहाने न दिया जाए। इस आदेश का पालन भी किया गया। इतना सब होने पर भी जोगेशचंद्र ने अपने क्रांतिकारी साथियों के नाम नहीं बताए।

यातनागृह से हटाकर जोगेशचंद्र चटर्जी को कलकत्ता की प्रेसीडेंसी जेल की ४४ नं. की कोठरी में ठूँस दिया गया। दो वर्षों तक जोगेशचंद्र को प्रेसीडेंसी

जेल में सड़ाया गया। उस जेल से निकलने के लिए उसे अनशन का सहारा लेना पड़ा। एक हफ्ते तक उसने एक दाना भी नहीं खाया। जब उसकी दशा बिगड़ने लगी तो उसे राजशाही जेल में स्थानांतरित कर दिया गया।

राजशाही जेल में जोगेशचंद्र चटर्जी का समय अपेक्षाकृत अच्छा निकला। सबसे अच्छी बात जो वहाँ थी, वह यह कि उस जेल में बंगाल के लगभग सभी क्रांतिकारी कैदी आते-जाते रहे। उन लोगों को बैडमिंटन खेलने की सुविधा भी दी गई और जेल के अहाते में वे घूम-फिर भी सकते थे। उनके एक क्रांतिकारी साथी रसिक सरकार ने एक दिन अपने कपड़ों में आग लगाकर आत्महत्या कर ली। रसिक सरकार अंग्रेजी सरकार की दृष्टि में एक खतरनाक क्रांतिकारी था। उसने पुलिस को सूचनाएँ देनेवाले कोमिल्ला जिला स्कूल के हेड मास्टर शरत बोस को दिन-दहाड़े मार डाला था। मैमनसिंह में उसने खुफिया विभाग के एक अफसर की भी हत्या की थी। इन दिनों वह राजशाही जेल में रखा गया था। उसकी गिरफ्तारी के पश्चात् उसके परिवार के लोग भूखों मरने लगे थे। रसिक सरकार को यही मानसिक संताप था। उसने शासन को आवेदन-पत्र भी दिया कि उसके परिवार के लोगों को कुछ मासिक भत्ता दिया जाए; क्योंकि उनको सहारा देनेवाला कोई और नहीं है। उसका यह आवेदन-पत्र अस्वीकार कर दिया गया। तंग आकर रसिक सरकार ने एक रात कहीं से माचिस चुराकर अपने कपड़ों में आग लगा ली। उसके कपड़े जलते रहे और वह ऐसे निर्विकार बैठा रहा जैसे कुछ हो ही नहीं रहा। चीख-पुकार हुई और इसके पहले कि वार्डर चाबी लाकर उसकी कोठरी खोले, वह बहुत अधिक जल चुका था। तत्काल ही उसकी मृत्यु हो गई।

सभी क्रांतिकारियों ने अपने साथी की दुःखद मृत्यु का मातम मनाया। कुछ दिन तक उनसे अच्छी तरह खाया-पिया नहीं गया। जेल अधिकारियों ने क्रांतिकारियों का उपकार अवश्य माना और वह यह कि उन्होंने अधिकारियों को फाँसने के लिए कोई षड्यंत्र नहीं रचा। रसिक सरकार के कपड़ों में आग लगती रही और वह निर्विकार बैठा रहा। यदि क्रांतिकारी चाहते तो इस घटना को यह रूप दे सकते थे कि पुलिस ने उसे मारकर उसके कपड़ों में आग लगा दी और इसीलिए वह गतिहीन बैठा रहा। जो स्थिति थी नहीं, वह क्रांतिकारियों ने गढ़नी नहीं चाही; क्योंकि सोने के लिए जाने के पहले रसिक सरकार सभी के हाथ जोड़कर गया था, जो उसके व्यवहार में उस दिन कुछ विचित्र बात थी। इस अनुकंपा का जेल के अधिकारियों ने यह लाभ दिया कि एक कॉलेज से मँगवाकर वे पढ़ने के लिए क्रांतिकारियों को पुस्तकें देने लगे। पुस्तकें मिलते रहने के कारण उनका अध्ययन हुआ, परिचर्चाएँ हुईं और वह जेल उनके लिए आवासीय विश्वविद्यालय बन गई।

जोगेशचंद्र चटर्जी क्रांतिकारियों में सबसे कम उम्र का था। उसने सभी को आदर दिया और सभी ने उसको स्नेह दिया। अभी तक वह विचाराधीन कैदी की भाँति वहाँ रह रहा था। १ सितंबर, १९२० को उसे जेल से मुक्त कर दिया गया।

जेल से मुक्ति के पश्चात् जोगेशचंद्र ने देखा कि कलकत्ता में कांग्रेस का अधिवेशन होने वाला है। उसने वह अधिवेशन तथा नागपुर का अधिवेशन भी देखा। वह कलकत्ता के प्रसिद्ध कांग्रेसी कार्यकर्ता चित्तरंजन दास के संपर्क में भी आया।

क्रांतिकारी गतिविधियों का अच्छा अनुभव हो जाने के कारण बंगाल की अनुशीलन समिति ने जोगेशचंद्र चटर्जी को उत्तर भारत में क्रांतिकारी संगठन के लिए बनारस भेजा। अपने असहाय परिवार को विच्छिन्न अवस्था में छोड़कर जोगेशचंद्र बनारस पहुँच गया। बनारस में एक क्रांतिकारी संगठन पहले से ही था, जिसका संचालन शचींद्रनाथ सान्याल कर रहे थे। वार्त्ताओं के कई दौर चले और अंततोगत्वा दोनों संगठन मिलकर एक हो गए। इस नए संगठन का नाम 'हिंदुस्तान प्रजातंत्र संघ' रखा गया।

बनारस में खुफिया पुलिस की नजरों से जोगेशचंद्र चटर्जी बच न सका। अब वहाँ रहकर क्रांतिकारी दल का विस्तार करना संभव नहीं था। दल का कार्यभार राजेंद्रनाथ लाहिड़ी को सौंपकर वह कानपुर जा पहुँचा।

बनारस प्रवास में जोगेशचंद्र चटर्जी ने छद्म नाम धारण नहीं किया था। कानपुर में उसे यह आवश्यक लगने लगा कि वह छद्म नाम धारण कर कार्य करे। वह पी.सी. राय के नाम से सुरेश भट्टाचार्य द्वारा संचालित पटकापुर के बंगाली मैस में रहकर कार्य करने लगा। पटकापुर के आसपास के जिलों में उसने दल का अच्छा विस्तार किया। शाहजहाँपुर के पं. रामप्रसाद बिस्मिल और उनके दल से भी जोगेशचंद्र चटर्जी के अच्छे संबंध स्थापित हो गए।

उन्हीं दिनों लाहौर से अपना घर छोड़कर सरदार भगतसिंह कानपुर पहुँचे और सुरेश भट्टाचार्य तथा जोगेशचंद्र चटर्जी के साथ वे बंगाली मैस में रहने लगे। जोगेशचंद्र सरदार भगतसिंह से बहुत प्रभावित हुआ। जोगेशचंद्र के कहने से ही सरदार भगतसिंह ने अलीगढ़ जिले के एक गाँव के मिडिल स्कूल में हेड मास्टरी का पद स्वीकार किया था।

अपने दल के कार्य से जोगेशचंद्र चटर्जी को मद्रास जाना पड़ा। मद्रास से उसने कलकत्ता की यात्रा की। मद्रास से ही खुफिया पुलिस उसके पीछे पड़ गई और उसके कुछ लोग निरंतर कलकत्ता तक उसका पीछा करते रहे। जब हावड़ा पुल पार करके वह एक लोकल ट्राम पकड़ना चाहता था तो खुफिया पुलिस के

लगभग चौदह व्यक्तियों ने घेरकर उसे पकड़ लिया। एक स्थान पर ले जाकर उसकी तलाशी ली गई और बड़ा बाजार के थाने में उसे बंद कर दिया गया। अंततोगत्वा उसे कलकत्ता की प्रेसीडेंसी जेल में बंद कर दिया गया, जहाँ वह विचाराधीन कैदी की तरह पहले भी रह चुका था।

खतरनाक क्रांतिकारियों को किसी एक जेल में नहीं रखा जाता था। जोगेशचंद्र चटर्जी को भी कलकत्ता की प्रेसीडेंसी जेल से बहरामपुर जेल में रखा गया, जहाँ सुभाषचंद्र बोस बंद थे। जोगेशचंद्र चटर्जी को सुभाष बाबू से मिलने का अवसर मिला। बहरामपुर जेल में भी जोगेश बाबू का जेल के अधिकारियों के साथ झगड़ा हो गया और उन्हें बिहार की हजारीबाग जेल में भेज दिया गया।

९ अगस्त, १९२५ को काकोरी ट्रेन डकैती हुई और उसके बाद क्रांतिकारियों की गिरफ्तारियाँ हुईं तो जोगेशचंद्र चटर्जी को भी हजारीबाग जेल से लखनऊ जेल भेजकर काकोरी केस में सम्मिलित कर दिया गया।

लखनऊ के एक सिनेमा हॉल 'रिंग थिएटर' को अदालत बनाकर वहाँ काकोरी केस चलता था। सरदार भगतसिंह एक राजकुमार का वेश धारण करके अदालत में पहुँच गए और उस दिन उन्होंने अदालत की पूरी कार्यवाही देखी। लखनऊ जेल से जब जोगेशचंद्र चटर्जी को आगरा ले जाया जा रहा था तो सरदार भगतसिंह, चंद्रशेखर आजाद और उनके दल ने जोगेशचंद्र चटर्जी को छुड़ाने की योजना भी बनाई; पर वह कार्यान्वित नहीं की जा सकी; क्योंकि उसमें कई साथियों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ता। लखनऊ जेल में रहते हुए एक बार और काकोरी केस के अभियुक्तों को जेल से छुड़ाने का प्रयत्न किया गया; पर वह भी सफल नहीं हो सका। योजना यह थी कि रात के पहरेदारों को नींद की दवा मिली हुई मिठाई खिलाई जाए और जब वे सो जाएँ तो ये लोग बैरकों से बाहर निकलें तथा मुख्य दीवार को फाँदकर बाहर पहुँच जाएँ। मुख्य दीवार के बाहर छुड़ानेवाले साथियों का दल रस्से की सीढ़ी लिये तैयार था, जो संकेत पाते ही अंदर फेंक दी जाती और उसके माध्यम से ये लोग बाहर हो जाते। जो दल इन्हें छुड़ाने पहुँचा था, उसमें बंगाल के प्रसिद्ध क्रांतिकारी सूर्यसेन (मास्टर दा) भी सम्मिलित थे। कुछ पहरेदारों को तो मिठाई खाने से नींद आ गई, पर कुछ पर बिलकुल भी असर नहीं हुआ और वे जागकर पहरा देते रहे। इसी कारण यह योजना विफल हो गई।

काकोरी केस का जब निर्णय सुनाया गया तो जोगेशचंद्र चटर्जी को आजन्म कालापानी की सजा हुई। आजादी का दीवाना महान् क्रांतिकारी कालापानी की काल कोठरी में बंद कर दिया गया।

□

# ★ ज्योतिर्मय मित्र

ज्योतिर्मय मित्र

क्रांतिकारियों के एक दल को यह पता चला कि स्थानीय पुलिस ने उन लोगों के खिलाफ गंभीर रिपोर्ट तैयार करके डाक से भेजी है। डाक के थैले को लेकर गाँव का पोस्टमैन प्रस्थित भी हो चुका था। क्रांतिकारियों ने उसका पीछा किया और 'अगारिया' नामक स्थान पर वह थैला उससे छीनकर भाग निकले। पोस्टमैन ने शोर मचाकर गाँव के लोगों को इकट्ठा किया। हथियारों से लैस गाँववालों ने क्रांतिकारियों का पीछा करना प्रारंभ किया।

ज्योतिर्मय मित्र अपने अन्य साथियों से पीछे था। पीछा करनेवालों में से एक ने अपना भाला ज्योतिर्मय मित्र को लक्ष्य करके फेंका। निशाना ठीक लगा और ज्योतिर्मय घायल होकर वहीं गिर पड़ा। उसके साथ जो घटना हुई, उसका पता उसके अन्य साथियों को नहीं लग पाया। गिर जाने पर अकेले ज्योतिर्मय ने गाँववालों के साथ डटकर संघर्ष किया। इस संघर्ष में वह और ज्यादा घायल हो गया। गाँववालों ने उसे पकड़कर पुलिस के हवाले कर दिया। पुलिस ने उसे मदारीपुर के अस्पताल में भरती करा दिया।

ज्योतिर्मय मित्र का जीवन बचाया नहीं जा सका। १८ मई, १९३२ को अस्पताल में उसकी मृत्यु हो गई।

□

## ★ ठाकुर राम

मध्य प्रदेश के दुर्ग जिले के 'सैलूद' ग्राम का निवासी ठाकुर राम श्री नरेशकुमार का पुत्र था। २६ अगस्त, १९४२ को एक शासन विरोधी जुलूस में उसने भाग लिया। उसपर लाठियों की मार पड़ी। वह गिर पड़ा और गिरफ्तार कर लिया गया। रायपुर जेल में ३ अक्तूबर, १९४२ को उसकी मृत्यु हो गई।

☐

## ★ डबरी राय

उत्तर प्रदेश के देवरिया नगर का युवक डबरी राय जब अपने घर से निकला, तो उसे भरे हुए घड़े दिखाई दिए। उसके पड़ोसी ने कहा—

''शकुन अच्छा हुआ है, जिस काम के लिए जा रहे हो, अवश्य सफलता मिलेगी।''

डबरी राय ने उत्तर दिया—

''मैं 'भारत छोड़ो आंदोलन' के जुलूस में सम्मिलित होने जा रहा हूँ। मेरी सफलता तो तब मानी जाएगी, जब मैं शहीद होऊँगा।''

डबरी राय को चाही हुई सफलता मिली। पुलिस ने जुलूस पर गोलियाँ चलाईं और वह घटनास्थल पर ही शहीद हो गया।

डबरी राय के पिता का नाम श्री ईश्वरीप्रताप राय था।

☐

# ★ तईगर

तईगर के शरीर में जब गोली लगी और पुलिस उसे उठाकर अस्पताल ले जाने लगी, तो मरते-मरते भी उसने पुलिसवालों के साथ झगड़ा किया। उसका कथन था कि मैं अस्पताल में नहीं, रणभूमि में ही मरना चाहता हूँ। इस झगड़े का परिणाम यह हुआ कि घटनास्थल पर ही उसकी मृत्यु हो गई और उसे रणभूमि में प्राण-त्याग करने का गौरव मिला।

तईगर उत्तर प्रदेश के वाराणसी नगर का रहनेवाला था और सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो आंदोलन' के एक जुलूस में उसने गोली खाई थी।

□

# ★ तात्यागौदा पाटिल

तात्यागौदा पाटिल ने सन् १९४१ के व्यक्तिगत सत्याग्रह में भी भाग लिया था और चार महीने की जेल काटी थी। उसमें राजनीतिक चेतना इतनी प्रबल थी कि वह निष्क्रिय बैठ ही नहीं सकता था। जब 'भारत छोड़ो आंदोलन' छिड़ा तो वह उसमें भी कूद पड़ा। प्रदर्शनों में उसका विश्वास कम था। वह तोड़-फोड़ के ही कामों में भाग लेता था। उसने संचार-व्यवस्था भंग करने के लिए जगह-जगह तार काट डाले और जब पुलिस ने उसे गिरफ्तार करना चाहा तो वह भूमिगत हो गया। वह सात महीनों तक भूमिगत रहा। आखिर वह पकड़ा गया और जेल में ही उसकी मृत्यु हो गई।

तात्यागौदा पाटिल का जन्म मैसूर राज्य के बेलगौम जिले के 'उल्लागद्दी' नामक ग्राम में सन् १९१४ में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री सेट्टीगौदा पाटिल था। वह कृषक पुत्र था।

□

## ★ तिरकप्पा मदीवलार

मैसूर राज्य में एक बात देखी गई कि वहाँ पढ़े-लिखे लोग आंदोलन में पीछे रहे और श्रमिक लोग उस आंदोलन में सक्रिय रहे।

तिरकप्पा मदीवलार भी दैनिक मजदूरी करके अपनी रोजी-रोटी कमाता था। उसने सन् १९४२ की क्रांति में भाग लिया और प्रदर्शनकारियों पर चलाई गईं पुलिस की गोलियों से शहीद हो गया।

तिरकप्पा का जन्म सन् १९०७ के लगभग हुआ था। वह धारवाड़ जिले के 'कोगनूर' स्थान का निवासी था। उसके पिता का नाम श्री यमनप्पा था।

□

## ★ तिलक डेकाह

असम के नवगाँव जिले के 'बेकजिया' गाँव में लोगों ने अपनी स्वयं की एक शांति सेना बना रखी थी। उन लोगों ने यह व्यवस्था कर रखी थी कि किसी भी खतरे का आभास पाकर शांति सेना के कार्यालय का पहरेदार एक तुरही बजा देता था और शांति सेना तुरंत एकत्र हो जाती थी। शांति सेना का कार्यालय ऊँचे स्थान पर बनाया गया था, जहाँ से सभी दिशाओं में निगरानी रखी जा सकती थी। सरकार को इस व्यवस्था की जानकारी थी और वह चाहती थी कि अवसर हाथ लगते ही गाँव की शांति सेना को नष्ट कर दिया जाए।

एक दिन फौज का एक कप्तान अपने कुछ सैनिकों के साथ शांति सेना के कार्यालय में पहुँच गया। उसे देखते ही पहरेदार ने बजाने के लिए तुरही उठा ली। फौज के कप्तान ने उसे धमकाते हुए कहा—

''तुमने यदि तुरही में फूँक मारी तो मेरी गोली तुम्हारे सीने के पार हो जाएगी।''

शांति सेना के उस पहरेदार का नाम तिलक डेकाह था। वह अपने साथियों से प्रतिबद्ध था। उसने कप्तान की धमकी की चिंता न करके तुरही बजा दी। तुरही बजते ही फौज के कप्तान ने उसके सीने में गोली मार दी। तिलक डेकाह वहीं शहीद हो गया। तुरही बज चुकी थी। शांति सेना के सैनिक एकत्र हो गए और उन्होंने फौजी दस्ते को घेर लिया। अपने को घिरा हुआ देखकर फौज के दस्ते ने

और भी गोलियाँ चलाईं और कई अन्य लोग भी शहीद हुए।

बाद में गाँव के तीन सौ लोग गिरफ्तार किए गए। एक शांति सैनिक को जलती हुई आग में झोंककर मार डाला गया।

□

## ★ तुलसीराम पंचघरे

तुलसीराम पंचघरे का जन्म महाराष्ट्र के वर्धा जिले के 'अरवी' स्थान पर हुआ था। उसके पिता का नाम श्री सखाराम पंचघरे था। वह कृषक पुत्र था। इतिहासप्रसिद्ध स्थान 'आष्टी' में होनेवाले 'भारत छोड़ो आंदोलन' में तुलसीराम ने भाग लिया।

तुलसीराम के दल ने पुलिस स्टेशन पर हमला किया और उस संघर्ष में एक थानेदार तथा तीन सिपाही मारे गए। तुलसीराम बाद में गिरफ्तार कर लिया गया। उसकी मृत्यु सन् १९४६ में जेल में ही हुई।

□

## ★ तेजराम चौधरी

तेजराम चौधरी को राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने का अच्छा अनुभव था। वह १९३० के अवज्ञा आंदोलन में भाग लेकर छह महीने की जेल काट चुका था। सन् १९४२ के आंदोलन में भी वह उसी उत्साह के साथ कूद पड़ा। १९४४ में वह फिर एक प्रदर्शन में सम्मिलित हुआ। पुलिस ने जब जुलूस पर लाठियाँ चलाईं तो तेजराम गंभीर रूप से घायल हुआ। घायल अवस्था में ही वह कुछ दिन बाद शहीद हो गया।

तेजराम चौधरी नरसिंहपुर जिले के 'कंदेली' का निवासी था। उसका जन्म सन् १९१३ में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री मूलचंद चौधरी था।

□

# ★ त्रिलोकसिंह पांगती

चनौदा के गांधी आश्रम पर भारत का तिरंगा झंडा फहराया जा रहा था। आश्रम के ही कार्यकर्ता त्रिलोकसिंह ने झंडा फहराने की रस्म पूरी की। उस समय आश्रम में रहनेवाले व्यक्ति तथा गाँव के कुछ लोग भी वहाँ उपस्थित थे। जब त्रिलोकसिंह ने झंडा फहराया तो 'भारत माता की जय' के नारों से दिशाएँ गूँज उठीं।

अगस्त क्रांति के वीरों के कंठों से फूटा हुआ जयघोष अंग्रेज सैनिकों के कानों में पहुँचा। चनौदा आश्रम के आसपास अंग्रेज सैनिकों की कई कंपनियाँ पड़ी हुई थीं। इन अंग्रेजों को गांधी टोपी और तिरंगे झंडे से चिढ़ थी। वे लोग 'गांधी की जय' या 'भारत माता की जय' भी नहीं सुन सकते थे। आश्रमवासियों के कंठों से फूटे हुए 'भारत माता की जय' का निनाद सुनकर अंग्रेज फौजियों का एक दल गांधी आश्रम में जा पहुँचा। उस समय तक गाँववाले वापस जा चुके थे। त्रिलोकसिंह अपने कुछ आश्रमवासियों के साथ वहाँ उपस्थित था। अंग्रेज कमांडर ने त्रिलोकसिंह से पूछा—

"यह झंडा किसने फहराया है?"

त्रिलोकसिंह का निर्भीक उत्तर था—

"यह झंडा मैंने फहराया है।"

कमांडर ने आदेश देते हुए कहा—

"यह झंडा नीचे उतार लो।"

"नहीं, मैं उसे नीचे नहीं उतारूँगा।" त्रिलोकसिंह का उत्तर था।

उस अंग्रेज कमांडर ने अपने साथियों को आदेश दिया और वे सभी डंडे लेकर त्रिलोकसिंह पर टूट पड़े। सभी सैनिक उस समय तक डंडे बरसाते रहे, जब तक त्रिलोकसिंह बेहोश नहीं हो गया। बेहोशी की हालत में उसे गिरफ्तार करके पुलिस स्टेशन भिजवा दिया गया।

अल्मोड़ा के नागरिक अस्पताल में त्रिलोकसिंह को भरती किया गया। उसकी दशा बिगड़ती ही गई और २६ दिसंबर, १९४२ को अल्मोड़ा के अस्पताल में उसकी मृत्यु हो गई।

त्रिलोकसिंह का जन्म १ नवंबर, १९२० को उत्तर प्रदेश के पिथौरागढ़ के अंतर्गत 'दरकोट मल्लाजौहर' ग्राम में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री मानसिंह पांगती था। मिडिल परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् ही त्रिलोकसिंह ने राजनीतिक कार्यों में भाग लेना प्रारंभ कर दिया था। ग्रामोत्थान में उसकी रुचि थी और

अवैतनिक रूप से वह ग्राम संगठक का कार्य करता रहा। कुछ दिन पश्चात् वह चनौदा के गांधी आश्रम का कार्यकर्ता नियुक्त हो गया। अगस्त आंदोलन के दिनों में गांधी आश्रम पर तिरंगा झंडा लगाने के कारण ही उसको अपने जीवन की बलि देनी पड़ी।

□

## ★ त्रिलोकी सिंह ★ रामदेवी सिंह

बिहार में भी 'हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी' की एक शाखा थी। इस शाखा के कुछ सदस्यों ने फुलवरिया मठ पर आक्रमण कर दिया। उन लोगों ने एक बम का विस्फोट भी किया। बम विस्फोट से एक मठवाले का पैर और एक क्रांतिकारी का हाथ उड़ गया। क्रांतिकारियों के इस दल के नेता का नाम रामदेवी सिंह था।

रामदेवी सिंह और उसके साथी क्रांतिकारियों ने फुलवरिया मठ कांड के पश्चात् हाजीपुर के स्टेशन पर धावा बोलने की योजना बना डाली।

मुजफ्फरपुर जिले के हाजीपुर स्टेशन का स्टेशन मास्टर जब अपने सहायकों के साथ स्टेशन की आय का थैला ट्रेन में चढ़ाने जा रहा था तो क्रांतिकारियों ने हमला बोलकर वह खजाना लूट लिया। क्रांतिकारियों ने सहायक स्टेशन मास्टर और स्टेशन मास्टर पर गोलियाँ भी चलाईं। स्टेशन का एक कुली छुरी से घायल हुआ।

इस घटना के लगभग दो महीने पश्चात् सारन के पुलिस अधीक्षक मि. जांसटन ने क्रांतिकारी नेता रामदेवी सिंह को गिरफ्तार करने में सफलता प्राप्त की। उसका एक साथी पुलिस का मुखबिर बन गया। रामदेवी सिंह को फाँसी का दंड मिला। उसके एक साथी त्रिलोकी सिंह को सात वर्ष के कठोर कारावास का दंड मिला।

□

# ★ थानूराम ★ बालूराम ★ भोगेश्वरी ★ लक्ष्मीराम हजारिका

अगस्त क्रांति के आंदोलनकारियों ने अपनी रणनीति निश्चित करते हुए यह सोचा था कि यदि हाथ में झंडा लेकर जुलूस का नेतृत्व कोई बालक या बालिका करे, तो शायद पुलिस के लोग उसपर गोली न चलाएँ। पुलिसवालों ने इस नैतिकता का पालन नहीं किया और उन्होंने गोली चलाते समय उम्र का कोई खयाल नहीं किया। वृद्ध और वृद्धाओं को भी उन्होंने नहीं बख्शा।

असम के नवगाँव जिले के 'बहरमपुर' नामक गाँव में एक आमसभा आयोजित थी। कई गाँववाले अपने घरों से अपना-अपना झंडा भी साथ लेकर सभास्थल पर पहुँचे थे। रत्नमाला नाम की एक छोटी बच्ची भी अपने हाथ में झंडा लिये सभास्थल पर पहुँची। सभा का समाचार पाकर अंग्रेज सिपाहियों ने सभास्थल को घेर लिया और वे लोगों के हाथों से उनके तिरंगे झंडे छीनने लगे। रत्नमाला नाम की छोटी बच्ची के हाथ से भी एक अंग्रेज सिपाही ने झंडा छीन लिया और उस बच्ची को धक्का दे दिया। उस बच्ची की दादी भोगेश्वरी वहाँ मौजूद थी। वह उस सिपाही का यह उद्दंड व्यवहार सहन नहीं कर सकी। उसने वह झंडा उस सिपाही के हाथ से छीन लिया और उसकी पिटाई कर दी। वह अंग्रेज भी उसका यह व्यवहार सहन नहीं कर सका और उसने वृद्धा भोगेश्वरी देवी को गोली मार दी।

वृद्धा माँ को शहीद हुआ देखकर जनता दौड़ पड़ी और वह अंग्रेजों से अपने झंडे छीनने लगी। गोलियाँ चलीं और थानूराम तथा बालूराम नाम के दो आंदोलनकारी और शहीद हो गए। अपने शहीदों की लाशों को अपने अधिकार में लेने के उपक्रम में लक्ष्मीराम हजारिका स्वयं शहीद हो गए। जनता रात-भर शहीदों के शवों की रक्षा के लिए बैठी रही और सुबह उनका जुलूस निकाला गया।

□

# ★ दत्तू रंगारी

जब सन् १९४२ का आंदोलन छिड़ा, तो दत्तू रंगारी निरा बालक ही था। वह कक्षा छह का विद्यार्थी था। वह आंदोलन में कूद पड़ा और जब शासन-विरोधी जुलूस निकाला गया तो वह तिरंगा झंडा थामकर आगे-आगे चला। पुलिस ने गोलियाँ चलाईं और बालक दत्तू रंगारी घटनास्थल पर ही शहीद हो गया।

दत्तू रंगारी

दत्तू रंगारी का जन्म मैसूर राज्य के बेलगौम जिले के 'बेलहुंगल' स्थान पर १६ अगस्त, १९२९ को हुआ था। वह २३ अगस्त, १९४२ को शहीद हो गया।

□

# ★ दलपतराव ★ देवनारायण तिवारी ★ यशवंत सिंह

शादी के पश्चात् प्रथम मिलन के अवसर पर ही यशवंत सिंह की अपनी नवेली दुलहिन के साथ अनबन हो गई। सहज और परंपरागत रीति के अनुसार उस नवपरिणीता ने कहा था—

"आप जैसा पति प्राप्त करना मेरे लिए कितने बड़े सौभाग्य की बात है!"

इसके उत्तर में यशवंत सिंह ने जो कुछ कहा, उसने उसकी पत्नी के सारे सपनों को चकनाचूर कर दिया।

वह बोला—

''मैं कह नहीं सकता कि मुझ जैसा पति पाना तुम्हारा सौभाग्य है या दुर्भाग्य; क्योंकि मैं तुमसे छिपाना नहीं चाहता कि मेरी शादी पहले भी हो चुकी है।''

यशवंत सिंह का कथन सुनकर उस नवपरिणीता के मुख के भाव एकदम बदल गए। आश्चर्य, विषाद एवं आक्रोश की रेखाएँ उसके चेहरे पर उभर आईं और अपने स्वर में इन सभी भावों की अभिव्यक्ति करते हुए उसने प्रश्न किया—

''क्या आपकी पहली पत्नी जीवित है?''

''हाँ, है। वह इस समय मेरे साथ है। उसका और मेरा साथ कभी छूट नहीं सकता।''

यह कहते हुए यशवंत सिंह ने अपनी कमर से लटकी हुई कटार खींचकर नववधू के सामने रख दी और बोला—

''मेरी कटार ही मेरी सच्ची सहधर्मिणी है और इसका साथ निभाने के लिए मैं संकल्पित हो चुका हूँ।''

''मेरी क्या स्थिति रहेगी?'' नववधू का अगला प्रश्न था।

''मेरा सहवास तुम्हें नहीं मिलेगा; वैसे तुम इस घर में रह सकती हो। मैं तो अपनी पूर्व परिणीता इस कटार के साथ ही रहूँगा और जहाँ जाऊँगा, इसे अपने साथ ले जाऊँगा।''

''यदि मेरा साथ नहीं निभा सकते थे तो मुझसे शादी क्यों की?''

''यह तुम अपने पिताजी से पूछो। मेरी इच्छा न होते हुए भी उन्होंने मेरे साथ तुम्हारी शादी का आग्रह किया और शादी कर दी।''

''आप क्षत्रिय हैं। हथियार रखना क्षत्रिय का धर्म होता है। आप इस कटार को अपने साथ रखें, इसमें मुझे क्या आपत्ति हो सकती है! आपत्तिजनक स्थिति तो वह होगी, यदि आप मुझे अपने साथ नहीं रखेंगे।''

''हाँ, मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि हम लोग एक साथ नहीं रह सकेंगे। मैं तुम्हें यह बता देना चाहता हूँ कि मैं एक क्रांतिकारी हूँ और देश तथा धरती के दुश्मन मेरे दुश्मन हैं, जिनसे मुझे निरंतर युद्ध करते रहना है। मेरा कर्तव्य मुझे पुकार रहा है और मैं जा रहा हूँ।''

यह कहते हुए यशवंत सिंह झटके के साथ मुड़ा और घर छोड़कर चल दिया। अपनी नवपरिणीता के साथ यह उसकी पहली और अंतिम भेंट थी। वैसे अपनी पत्नी के साथ उसकी दूसरी भेंट उस समय हुई, जब अपनी पत्नी की चिता भस्म अपने हाथों में लेकर अपने संकल्प को उसने फिर दुहराया—

"तुम मुझसे अधिक सौभाग्यशाली रहीं, जो मुझसे पहले धरती माता की गोद में समा गईं। वह दिन दूर नहीं, जब मैं तुमसे आकर मिलूँगा।"

यशवंत सिंह अब रेलवे विभाग में नौकरी कर रहा था। वह भुसावल में केबिनमैन था। रेलवे की नौकरी करते हुए वह क्रांति कार्य में भरपूर सहयोग दे रहा था। देवनारायण तिवारी और दलपतराव नाम के उसके दो मित्र भी उसके क्रांति सहयोगी थे। ये तीनों मिलकर क्रांतिकारी साहित्य के वितरण का कार्य करते थे। यह सामग्री यशवंत सिंह के पास पहुँचती थी और वह उसे देवनारायण तिवारी को सौंप देता था। देवनारायण से वह सामग्री प्राप्त करके वितरण का कार्य दलपतराव करता था। जनता में क्रांति साहित्य पहुँचाकर अंग्रेजी शासन के विरुद्ध भावनाएँ भड़का रहा था। सरकार की गुप्तचर व्यवस्था इसे रोकने और पता लगाने में अक्षम सिद्ध हो रही थी।

एक दिन इन तीनों क्रांतिकारियों को सूचना मिली कि २३ जुलाई, १९३१ की रात को पंजाब मेल से ले. हैक्स नाम का एक अंग्रेजी फौजी अफसर यात्रा कर रहा होगा। उसके पास अच्छी राइफल होगी, जो योजनाबद्ध तरीके से उससे छीननी है। यशवंत सिंह ने नौकरी से कुछ दिन की छुट्टी ले ली तथा वह.अपने मित्रों के साथ खंडवा जा पहुँचा और तीनों साथियों ने मिलकर अफसर से राइफल छीनने की योजना बना डाली।

तीनों क्रांतिकारी २३ जुलाई, १९३१ को खंडवा स्टेशन पर पहुँच गए। उन्होंने प्रथम श्रेणी के टिकट खरीद रखे थे। जब पंजाब मेल खंडवा स्टेशन पर रुका तो उन्होंने देखा कि कथित फौजी अफसर अपनी राइफल के साथ प्रथम श्रेणी के डिब्बे में यात्रा कर रहा था। इस अंग्रेज अफसर का नाम ले. जी.आर. हैक्स था, जो बंबई के मार्ग से पूना के सिगनल स्कूल में जा रहा था। उसी डिब्बे में एक अन्य अंग्रेज भी यात्रा कर रहा था। उसका नाम ले. शीहन था, जो २८ फील्ड ब्रिगेड में लेफ्टिनेंट था। वह लाहौर से पूना की यात्रा कर रहा था। ले. हैक्स के साथ एक कुत्ता भी था। तीनों क्रांतिकारियों ने इसी डिब्बे में बैठकर अपनी यात्रा प्रारंभ की।

प्रात: चार बजे का समय था। मेल गाड़ी डोंगर गाँव और माँडवा स्टेशनों के बीच द्रुत गति से दौड़ती जा रही थी। दोनों अंग्रेज अफसर निद्रा में लीन थे। इसी समय यशवंत सिंह एवं देवनारायण ने अपनी-अपनी कटारों से ले. हैक्स पर हमला बोल दिया और दलपतराव शीहन के पास पहुँच गया कि यदि वह हैक्स को बचाने का प्रयत्न करे तो उसे रोका जाए। जब यशवंत सिंह और देवनारायण ले. हैक्स की तरफ बढ़े तो वह कुत्ता जोर-जोर से भौंकने लगा। कुत्ते की आवाज सुनकर दोनों

अंग्रेज अफसरों की नींद खुल गई। तब तक ले. हैक्स पर दो-तीन वार हो चुके थे। ले. शीहन जब हैक्स को बचाने के लिए लपका, तब उसपर अपनी कटार का वार किया दलपतराव ने। शीहन ने दलपतराव की कटार अपने हाथ से पकड़ ली और उसे छीन लेना चाहा। इस जोर-आजमाई में दलपतराव की कटार टूट गई। उसके हाथ में केवल मूठ रह गई और धारवाली कटार शीहन के हाथ में पहुँच गई। कटार के टूटे हुए फल से शीहन ने दलपतराव पर वार किया और इसी बीच लाइट जलाकर गाड़ी रोकने की जंजीर खींच दी। धीरे-धीरे गाड़ी रुकने लगी। वह पूरी तरह से रुके, इसके पहले ही तीनों क्रांतिकारी गाड़ी से कूदकर जंगल में विलीन हो गए। वे अपने साथ ले. हैक्स की राइफल लेते गए और गंभीर रूप से घायल स्थिति में उसे ट्रेन में छोड़ गए।

सुबह होते ही अर्थात् २४ जुलाई, १९३१ को ले. हैक्स को निकटवर्ती अस्पताल में पहुँचाया गया, जहाँ उसे बचाया नहीं जा सका। ले. शीहन से विवरण प्राप्त करके अपराधियों की खोज तत्काल प्रारंभ कर दी गई।

एक पुलिस दारोगा, जो सबसे पहले घटनास्थल पर पहुँचा, उसने अपने अंदाज से रेलवे लाइन की ओर बढ़ना प्रारंभ किया। थोड़ी दूर चलने पर उसे लाइन पर काम करनेवालों का एक समूह मिला, जिसके मुखिया ने उसे बताया कि एक व्यक्ति नेकर, काला कोट और जीन के जूते पहने हुए माँडवा स्टेशन की तरफ गया है। वे लोग बात ही कर रहे थे कि रेलवे ट्रॉली उन्हें आती हुई दिखाई दी। पुलिस दारोगा ने वह ट्रॉली रुकवाई। उस ट्रॉली में रेलवे के तीन अफसर सवार थे। उनमें से एक बंबई का डिप्टी चीफ इंजीनियर, दूसरा भुसावल डिवीजन का इंजीनियर और तीसरा व्यक्ति उसका सहायक था। पुलिस दारोगा ने उन्हें स्थिति से अवगत कराया और वे सब ट्रॉली में बैठकर माँडवा की तरफ प्रस्थित हो गए। थोड़ी दूर चलने पर उन्होंने देखा कि जो हुलिया बताया गया था वैसा ही एक व्यक्ति पटरी-पटरी जा रहा है। ट्रॉली को रुकता हुआ देखकर वह व्यक्ति पटरी छोड़कर जंगल की तरफ भागा और ट्रॉली पर सवार लोगों ने उसका पीछा किया।

पुलिस दारोगा को अपने अभियान मार्ग में जो निकटस्थ पुलिस स्टेशन मिला, वहाँ पहुँचकर उसने सहायता के लिए कुमुक माँगी। लगभग पचास जवानों ने अब जंगल के उस क्षेत्र को छानना आरंभ कर दिया। पाँच-पाँच जवानों का एक जत्था बन गया और पूरे जंगल को क्षेत्रों में विभाजित कर उन्होंने खोज प्रारंभ कर दी। कुछ समय पश्चात् बताए गए हुलिए के व्यक्ति ने फिर रेलवे लाइन पार की और वह दूसरी दिशा की तरफ भागने लगा। वह एक

खेत को पार कर रहा था कि उसमें काम करनेवाले मजदूरों ने उसे धर दबोचा और पकड़कर उसे पुलिस के एक जत्थे के हवाले कर दिया। वह देवनारायण तिवारी था। अगले दिन एक सहायक के विश्वासघात के फलस्वरूप यशवंत सिंह भी गिरफ्तार हो गया और कुछ दिन बाद दलपतराव भी पुलिस के जाल में फँस गया।

तीनों क्रांतिकारियों पर १० अगस्त, १९३१ को खंडवा की अदालत में मुकदमा चलाया गया। २१ सितंबर, १९३१ को यशवंत सिंह और देवनारायण तिवारी को फाँसी तथा दलपतराय को आजन्म द्वीपांतरवास का दंड सुना दिया गया।

जबलपुर के केंद्रीय कारागार में १२ दिसंबर, १९३१ को यशवंत सिंह और देवनारायण तिवारी को फाँसी के फंदों पर झुला दिया गया। शहीदों को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए उस दिन संपूर्ण जबलपुर नगर में पूर्ण हड़ताल रही।

यशवंत सिंह का जन्म २७ जुलाई, १९०९ को सागर में हुआ था। उनके पिता का नाम नन्हू सिंह था। यशवंत सिंह की प्रारंभिक शिक्षा दमोह के म्यूनिसिपल हाई स्कूल में हुई थी। चंद्रशेखर आजाद एवं भगतसिंह के बलिदान ने उन्हें क्रांति की ओर आकर्षित किया और रेलवे विभाग में नौकरी करते हुए उन्होंने क्रांतिकारियों का साथ दिया।

फाँसी के पूर्व उन्होंने जेल से अपने पिता को एक पत्र भेजा था, जिसमें उन्होंने लिखा था—

'आप मेरी मृत्यु से दुःखी न हों। आप यही समझें कि आप छह नहीं, पाँच पुत्रों के ही पिता थे। मैं एक वीर की मौत मरूँगा। आपको भी मुझपर गर्व होना चाहिए।'

□

## ★ दशाराम फुलमारी

फुलमारी जाति के लोग सीधे-सादे कृषक होते हैं और राजनीतिक चेतना से उनका कोई संबंध नहीं रहा; लेकिन दशाराम फुलमारी इसका अपवाद था। वह अपने नगर और अपने जिले की राजनीतिक गतिविधियों में बढ़-चढ़कर भाग लेता था।

जब उसके गृहनगर वारासिवनी में अगस्त क्रांति का जुलूस निकला तो दशाराम ने ही उसका नेतृत्व किया। पुलिस ने जुलूस पर गोलियाँ चलाईं और

दशाराम घटनास्थल पर ही शहीद हो गया।

दशाराम फुलमारी मध्य प्रदेश के बालाघाट जिले के वारासिवनी नगर का निवासी था। उसका जन्म सन् १९१७ के लगभग हुआ था। उसके पिता का नाम श्रीकिशन फुलमारी था। दशाराम को लोग 'दख्या' कहकर पुकारते थे।

□

## ★ दाऊ सुखई

उत्तर प्रदेश के हमीरपुर ज़िले के ग्राम 'पहाड़िया' के निवासी दाऊ सुखई ने 'भारत छोड़ो आंदोलन' में खुलकर भाग लिया। इस आंदोलन में तो उसको केवल लाठियों का उपहार मिला, लेकिन उसके लिए मृत्यु का उपहार भी प्रतीक्षा कर रहा था।

द्वितीय विश्वयुद्ध के दिनों में ब्रिटिश सरकार भारतीयों से बलपूर्वक धन संग्रह कर रही थी। दाऊ सुखई ने इस वसूली का घोर विरोध किया और उसे गिरफ्तार करके चार वर्ष के कठोर कारावास का दंड सुना दिया गया। जेल में उसे इतनी यातनाएँ दी गईं कि उसकी लाश ही जेल से बाहर निकली।

□

## ★ दारोगा सिंह ★ दूधनाथ सिंह ★ यमुना गिरि ★ राधिका देवी ★ रामशंकर राय ★ वीरेंद्र कुमार ★ शोभनराम

उत्तर प्रदेश के गाजीपुर जिले में अगस्त क्रांति भी उग्र रही और उतना ही उग्र रहा उसका दमन। बलिया की भाँति गाजीपुरवालों ने भी कुछ दिन के लिए अपने यहाँ से अंग्रेजी शासन समाप्त कर दिया। रेल के कई इंजन तोड़ डाले गए और मालगाड़ियों को पटरियों से उतार दिया गया। नंदगंज स्टेशन पर पुलिस ने भीड़ पर अंधाधुंध गोलियाँ चलाईं, जिसके परिणामस्वरूप अस्सी आदमी शहीद हो गए।

१५ अगस्त को गाजीपुर नगर में पुलिस की गोली से यमुना गिरि शहीद हो

गए। शेरपुर गाँव के डॉ. वीरेंद्र कुमार को तीन गोलियाँ मारी गईं और वे भी शहीद हो गए। शेरपुर के ही रामशंकर राय और शोभनराम को गोलियों से भून दिया गया तथा एक महिला राधिका देवी को कुएँ में फेंककर मार डाला गया। आसपास के गाँवों में गोलियाँ चलाने से एक सौ सड़सठ व्यक्ति मारे गए।

□

# ★ दिनेश गुप्त ★ सुधीर गुप्त

दिनेश गुप्त
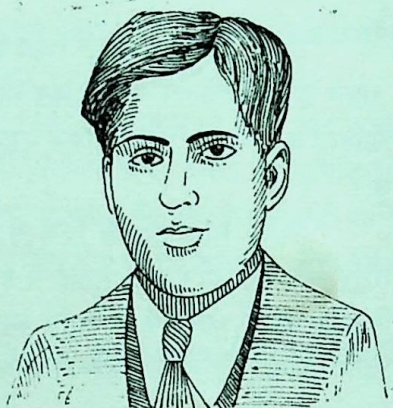
सुधीर गुप्त

तीन युवक क्रांतिकारी कलकत्ता के एक पार्क में बैठे हुए गोपनीय मंत्रणा में लीन थे। उन तीनों के बीच बिछे हुए अखबार पर चने-मुरमुरे रखे हुए थे। जिन्हें वे धीरे-धीरे फाँकते जा रहे थे। वे ऐसा इसलिए भी कर रहे थे कि यदि कोई उन्हें देखे तो यही समझे कि वे लोग समय गुजारने के लिए ही वहाँ पहुँचे हैं। वे इस बात के लिए भी सतर्क थे कि यदि कोई व्यक्ति उधर आता दिखाई दे, तो संभाषण का विषय बदल सकें। वे तीन क्रांतिकारी थे—दिनेश गुप्त, सुधीर गुप्त और विनय बोस।

सुधीर गुप्त कह रहा था—

''हथियार तो हमने जुटा लिये, अब प्रतीक्षा इस बात की है कि हम शीघ्रातिशीघ्र क्रांतिकारियों के दुश्मन जेल महानिरीक्षक कर्नल एन.एस. सिंपसन को मौत के घाट उतार दें।''

विनय बोस ने टिप्पणी की—

''कर्नल सिंपसन को मौत के घाट उतारना बहुत आवश्यक हो गया है। जेलों में वह हमारे साथी क्रांतिकारियों को बहुत यातनाएँ दिलवाता है और उसने जेलों को नारकीय जीवन का केंद्र बना रखा है।''

दिनेश गुप्त ने योजना का प्रश्न उठाते हुए प्रश्न किया—

''उसे कहाँ मारना उचित होगा, उसके बंगले पर या उसके कार्यालय में?''

इस प्रश्न का उत्तर दिया सुधीर ने—

''बंगले पर उसे मारना आसान नहीं है। वहाँ पहरा भी रहता है और वह शिकारी कुत्ते भी रखता है। ऑफिस में उसे घेरना उतना मुश्किल नहीं है; क्योंकि 'राइटर्स बिल्डिंग' में उसके कार्यालय के अतिरिक्त अन्य कार्यालय भी हैं और लोगबाग वहाँ जाते भी रहते हैं। प्रवेश द्वार पर पूछताछ अवश्य होती है; पर यदि हम अंग्रेजी लिबास में पहुँचें तो पूछताछ भी शायद न हो।''

विनय बोस का प्रश्न था—

''कर्नल सिंपसन को मारने के पश्चात् जब अन्य अंग्रेज अधिकारी हमें पकड़ने या मारने का प्रयत्न करें तो हमें क्या करना चाहिए?''

इस प्रश्न का उत्तर भी सुधीर गुप्त ने ही दिया। सुधीर गुप्त उन तीनों में अनुभवी था और इस प्रकार की कार्य-योजनाओं में वह पहले भी भाग ले चुका था। उसका उत्तर था—

''जो तनिक भी हमारा अवरोध करता दिखाई दे, हम उसपर गोलियाँ चलाकर अपना मार्ग बनाएँ और जब हमारी गोलियाँ समाप्त होने लगें तो हम अंतिम गोली से स्वयं अपनी ही जीवन लीला समाप्त कर लें।''

इस व्यवस्था को सुनकर दिनेश गुप्त कुछ विचलित-सा दिखाई दिया। वह इस क्षेत्र में नया-नया ही आया था।

उसने प्रश्न किया—

''क्या इस तरह हम लोग आत्महत्या करने का पाप मोल नहीं लेंगे?''

सुधीर ने ही दिनेश के इस प्रश्न का उत्तर दिया—

''क्रांतिकारी जब स्वयं को मारता है तो वह आत्महत्या नहीं होती। कायरता से स्वयं को मारना आत्महत्या होती है। क्रांतिकारी तो स्वयं को इसलिए मारता है कि उसके द्वारा पुलिस को उसके दल के भेद मालूम न हो जाएँ। यह ठीक है कि अनेक यातनाएँ सहकर भी हम कुछ भेद न दें; पर कभी-कभी सोते-सोते भी हम कुछ बड़बड़ाने लगते हैं और कुछ भेद अनायास ही हमारे मुँह से निकल जाते हैं। कभी-कभी कुछ लोग कमजोरी के शिकार होकर पुलिस के मुखबिर भी बन जाते हैं। इसीलिए अपने दल की सुरक्षा की दृष्टि से क्रांतिकारी जीवन में

आत्मघात क्षम्य है।''

बात दिनेश गुप्त की समझ में तो आ चुकी थी, पर वह उसके गले नहीं उतरी थी। बात बढ़ाने के बजाय उसने योजना को अंतिम रूप देना ही ठीक समझा। कर्नल सिंपसन को मारने की योजना को उन तीनों ने अंतिम रूप दे डाला।

तीनों क्रांतिकारियों ने ८ दिसंबर, १९३० को टाई सहित पूर्णरूप से अंग्रेजी लिबास धारण किया और दिन के लगभग साढ़े बारह बजे वे 'राइटर्स बिल्डिंग' जा पहुँचे, जहाँ कई विभागों के मुख्य कार्यालय थे और भारी चहल-पहल थी। उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व तथा लिबास के कारण प्रवेश द्वार पर उन्हें किसीने टोका नहीं। पश्चिमी छोर के जीने से चढ़कर वे पहली मंजिल पर स्थित जेल महानिरीक्षक कर्नल एन.एस. सिंपसन के कार्यालय के सामने जा पहुँचे और द्वारपाल से कहा—

''हम कर्नल साहब से मिलना चाहते हैं।'' द्वारपाल ने गुच्छे में से कागज की एक परची खींचकर उनकी ओर बढ़ाते हुए कहा—

''आप तीनों अपने नाम-धाम और काम लिख दीजिए। मैं यह परची साहब के पास ले जाऊँगा और जो उनका आदेश होगा, वह आपको बता दूँगा।''

क्रांतिकारियों ने परची को मसलकर फेंक दिया और द्वारपाल को धक्का देकर एक ओर ठेल दिया तथा दनदनाते हुए कर्नल सिंपसन के कमरे में जा घुसे। उनका इस प्रकार प्रवेश करने के तरीके से आशंकित होकर सिंपसन हड़बड़ाकर अपनी कुरसी से उठने का उपक्रम कर ही रहा था कि उन तीनों ने मिलकर छह गोलियाँ उसके ऊपर दाग दीं। उसे भूमि पर लुढ़कते हुए देखकर वे वापस लौट पड़े। जेल महानिरीक्षक के कार्यालय के बाहर चौड़े बरामदे में निकलकर तीनों क्रांतिकारी बरामदे के दूसरे छोर की तरफ बढ़ चले। इस बीच वे कृषि विभाग के सचिव का दफ्तर पार कर चुके थे। कृषि सचिव ने बाहर निकलकर एक कुरसी उनपर फेंककर मारी, जो एक गलत निशाना सिद्ध हुआ। भागते-भागते क्रांतिकारियों ने भी कृषि सचिव पर गोलियाँ छोड़ीं; पर कृषि सचिव ने छिपकर स्वयं को बचा लिया। अब क्रांतिकारी वित्त विभाग के कार्यालय के सामने थे। वहाँ बैठे हुए द्वारपाल से उन्होंने पूछा—

''क्या साहब अंदर हैं?''

द्वारपाल ने स्थिति को ताड़ते हुए विनीत भाव से झुककर अपनी ओर से ही उत्तर दे दिया—

''नहीं श्रीमान! इस समय हमारे साहब अंदर नहीं हैं। वे कुछ समय पहले ही किसी काम से बाहर गए हुए हैं।''

तीनों क्रांतिकारी आगे बढ़ गए। द्वारपाल ने अपनी सूझबूझ से अपने अंग्रेज

साहब को बचा लिया।

क्रांतिकारियों का समूह एक-दो दफ्तरों को पार करता हुआ आगे बढ़ गया। पुलिस महानिरीक्षक का कार्यालय भी पीछे छूट चुका था। उनको आगे बढ़ा हुआ देखकर इंस्पेक्टर जनरल पुलिस बाहर निकला और उसने अपने रिवॉल्वर से क्रांतिकारियों पर कुछ गोलियाँ छोड़ीं। उसके निशाने बेकार गए। एक सारजेंट वहाँ खड़ा हुआ था। उसने साहब के हाथ से रिवॉल्वर लेकर कुछ गोलियाँ छोड़ीं; पर उसकी गोलियाँ भी इधर-उधर जा गिरीं। अब बारी थी डिप्टी इंस्पेक्टर जनरल पुलिस की। उसने भी क्रांतिकारियों पर अपने रिवॉल्वर से गोलियाँ छोड़ीं; पर एक भी गोली, एक भी क्रांतिकारी को छू नहीं सकी। उन लोगों के निशाने इसलिए चूक रहे थे कि भागते-भागते क्रांतिकारी लोग भी उनपर गोलियाँ छोड़ रहे थे। पीछा करनेवाले पीछे छूट गए और क्रांतिकारी लोग पासपोर्ट के दफ्तर में जा घुसे। वहाँ खड़े हुए एक विदेशी यात्री तथा एक बाबू को धक्का देकर उन्होंने एक ओर कर दिया और अपने-अपने रिवॉल्वरों में कारतूस भर लिये। अब वे उसी चौड़े बरामदे में से आगे की ओर भागे। आगे न्याय विभाग का कार्यालय था। ज्यूडीशियल सेक्रेटरी यह देखने के लिए बाहर निकला कि मामला क्या है। क्रांतिकारियों में से एक ने सेक्रेटरी पर एक गोली छोड़ी, जो उसकी जाँघ में जा घुसी। वह लँगड़ाता और घिसटता हुआ बचने के लिए दूसरे कमरे की तरफ बढ़ गया।

इस समय तक तीनों क्रांतिकारी भागते-भागते बरामदे के आखिरी कमरे में पहुँच चुके थे। उस कमरे में जो लोग थे, उन्होंने अंदर भागकर दरवाजा बंद कर लिया। इस बीच लाल बाजार थाने की पुलिस भी घटनास्थल पर पहुँच चुकी थी और उसने क्रांतिकारियों को उस कमरे में घेर लिया था। दोनों ओर से गोलियाँ चल रही थीं। पुलिस ने अनुभव किया कि काफी देर से क्रांतिकारियों की ओर से गोलियाँ नहीं आ रही हैं। पुलिस दल ने एक सिपाही को यह कठिन काम दिया कि वह झुक-झुककर क्रांतिकारियों के कमरे की खिड़की के नीचे पहुँच जाए और उचककर क्रांतिकारियों को देखने का प्रयत्न करे। अपनी जान को खतरे में डालकर वह सिपाही खिड़की के नीचे तक पहुँच गया और उसने शीघ्रता से उचककर कमरे के अंदर झाँका। उसने ऐसा एक-दो बार किया और क्रांतिकारियों की ओर से गोलियाँ चलते न देख तथा उनमें से दो को कमरे के फर्श पर और एक को टेबल पर लुढ़का हुआ देखकर उसने स्थिति का ब्योरा पुलिस दल को दे दिया। हुआ यह था कि क्रांतिकारियों की गोलियाँ समाप्त हो गई थीं और योजना के अनुसार उन्होंने स्वयं को समाप्त करने का उपक्रम कर डाला था।

कुरसी पर बैठे हुए तथा टेबल पर लुढ़का हुआ क्रांतिकारी सुधीर गुप्त था।

दो रिवॉल्वर और कुछ कारतूस टेबल पर पड़े हुए थे और उसकी जान नहीं निकल पाई थी।

फर्श पर पड़े हुए क्रांतिकारियों में से एक दिनेश गुप्त था, जिसकी गरदन में गोली का घाव था। जो दूसरा क्रांतिकारी भूमि पर पड़ा था, उसकी दोनों कनपटियों पर गोली के निशान थे और वह इस समय तक भी होश में था। वह विनय बोस था।

पुलिस दल ने झपटकर कमरे के अंदर प्रवेश करके हथियारों पर अधिकार कर लिया। जो क्रांतिकारी होश में था, उससे पूछताछ की गई। विनय बोस ने अपना नाम तो ठीक बता दिया, पर उसने अपने साथियों के नाम गलत बताए। बाद में पुलिस ने छानबीन करके उनके सही नाम भी मालूम कर लिये। क्रांतिकारियों के पास तिरंगे झंडे भी निकले।

सुधीर गुप्त का प्राणांत तो घटनास्थल पर ही हो गया था। दिनेश गुप्त और विनय बोस घायल अवस्था में जेल के अस्पताल में भिजवाए गए। १० दिसंबर को विनय बोस की दशा अधिक बिगड़ गई। दोनों कनपटियों में गोलियाँ लगने के कारण दिमाग के अंदर की सामग्री बाहर उफन रही थी। विनय ने दवाई खाने से भी इनकार कर दिया। १३ दिसंबर, १९३० को प्रातः साढ़े छह बजे उसका प्राणांत हो गया।

दिनेश गुप्त का ऑपरेशन किया गया और एक गोली उसके शरीर के अंदर से निकाली गई। कभी-कभी उसकी दशा भी गंभीर हो जाती थी; पर अंततोगत्वा वह ठीक हो गया। ३१ दिसंबर को अस्पताल से छुट्टी देकर उसे हवालात में बंद कर दिया गया।

दिनेश गुप्त पर कर्नल सिंपसन की हत्या का अभियोग चलाने के लिए एक ट्रिब्यूनल की नियुक्ति की गई, जिसने २० जनवरी, १९३१ को कार्रवाई प्रारंभ कर दी। यह सिद्ध हो गया था कि कर्नल सिंपसन के शरीर में जिन गोलियों ने प्रवेश किया था, उनमें से दो गोलियाँ दिनेश गुप्त के रिवॉल्वर की थीं। २ फरवरी, १९३१ को कर्नल सिंपसन की हत्या तथा अन्य अभियोगों के उपलक्ष्य में दिनेश गुप्त को फाँसी की सजा सुना दी गई। हाई कोर्ट ने भी २७ मार्च, १९३१ को ट्रिब्यूनल के फैसले की पुष्टि कर दी।

फाँसी के फैसले के दिन से फाँसी लगने की तारीख की अवधि में दिनेश गुप्त ने अद्‌भुत साहस, धैर्य और आत्मबल का परिचय दिया। उसकी आयु बीस वर्ष की ही थी, पर पहुँचे हुए योगियों जैसी दार्शनिकता का परिचय देकर उसने सभी को मुग्ध कर दिया। वह सदा प्रसन्नचित्त रहता था और सभी से मुसकराकर बातें करता था। उसके हाव-भाव से लगता था जैसे उसे दिव्यत्व की प्राप्ति होने

वाली हो। वह जेल की काल कोठरी में बंद रहकर भी अपने माता-पिता और भाई-भाभी को पत्र लिखकर उनका प्रबोधन किया करता था। अपने एक पत्र में उसने अपनी भाभी को लिखा था—

'मेरे मन में यह बात उठती है कि हम लोग मृत्यु से बहुत भयभीत रहते हैं और इसीलिए मृत्यु के समक्ष हमें पराजित होना पड़ता है। यदि हम इस भय पर विजय प्राप्त कर लें तो मृत्यु हमें बहुत तुच्छ दिखाई पड़ेगी। हम तो हिंदू हैं, मृत्यु से भयभीत होकर तो हम धर्म की पहली सीढ़ी पर भी नहीं चढ़ सकते। हम जानते हैं कि हमारी मृत्यु नहीं होती, केवल नश्वर शरीर ही नष्ट होता है। हमारी आत्मा का नाश नहीं होता। आत्मरूप से हम वही हैं, जो स्वयं ईश्वर है।'

अपनी भाभी को ही लिखे गए एक अन्य पत्र में दिनेश गुप्त ने धर्म के संबंध में अपने स्वतंत्र विचार व्यक्त करते हुए लिखा—

'हम भारतीय बहुत धर्म-प्रवण हैं न! धर्म का नाम सुनते ही भक्ति के वशीभूत होकर हमारे पंडितों की शिखा खड़ी हो जाती है। फिर हमें मृत्यु से भय क्यों है? क्या वास्तव में हमारे देश में धर्म है? जिस देश में धर्म के नाम पर पचास वर्ष के बूढ़े के साथ दस वर्ष की अबोध बालिका ब्याही जाती हो, वहाँ धर्म कहाँ? जिस देश में मनुष्य का स्पर्श करने मात्र से मनुष्य का धर्म नष्ट हो जाता हो, वहाँ धर्म को गंगा में बहाकर निश्चिंत हो जाना चाहिए। विवेक ही मनुष्य का सबसे बड़ा धर्म है।'

नए वर्ष के आगमन के माध्यम से दिनेश गुप्त ने अपनी बड़ी बहन मणि दीदी को पत्र लिखते हुए बड़े सुंदर ढंग से पुरातनता पर कटाक्ष किया—

'नया वर्ष प्रारंभ हुआ है। नए के सामने पुराने ने अपनी पराजय स्वीकार कर ली है। वृक्षों के पुराने पत्तों ने झड़कर नव-किसलयों के लिए स्थान खाली कर दिया है। प्रकृति का यही नियम है। भगवान् का यही विधान है। परंतु हमारे सामाजिक जीवन का विधान इसके ठीक विपरीत है। यहाँ के बड़े-बूढ़ों ने सामाजिक और राष्ट्रीय क्षेत्र में अपने को अचल-अटल बनाकर रखा है। गद्दी तो ये छोड़ेंगे नहीं और समय-असमय आँखें दिखाएँगे, वह अलग। वे यह कभी नहीं विचार कर सकते कि युवकों व बूढ़ों का पथ और मत सदैव भिन्न हुआ करता है। दोनों में मतैक्य स्थापित करने के लिए या तो नौजवान को बूढ़ा होना पड़ेगा या वृद्धों को नौजवान।'

अलीपुर सेंट्रल जेल से अपने बड़े भाई को लिखे गए एक पत्र में दिनेश ने मृत्यु के संबंध में अपने विचार व्यक्त किए—

'मैं मरूँगा, इसका मुझे किंचित् भी भय नहीं है। मैं इस तथ्य से सहमत हूँ कि जीवन मधुर होता है; पर मेरा मत है कि मृत्यु जीवन से भी अधिक मधुर है। मैं

निद्रा चाहता हूँ—बहुत गहरी निद्रा। वह निद्रा, जो इस संसार के असीमित दुर्भाग्यों और वेदनाओं से पीड़ित हृदय को दुलार सके। मृत्यु मेरी मित्र है। वह मेरी बहुत बड़ी शुभचिंतक है। मृत्यु मुझे बंधनों से मुक्त कर देगी, वह मुझे मुक्ति प्रदान करेगी। मृत्यु में ही मेरी स्वतंत्रता है और मृत्यु ही मेरा शाश्वत जीवन है।'

यह स्वाभाविक था कि उसकी मृत्यु पर उसके स्वजन दुःखी होते, इसी कारण उनको आगाह करते हुए उसने लिखा—

'जब मेरी मृत्यु हो तो कोई आँसू न बहाए। यदि किसीको मुझसे प्यार है और मेरे लिए वह सचमुच ही दुःखी हो तो वह जोर-जोर से रोए नहीं। यदि किसीकी आँखों से आँसू बहे तो मेरी आत्मा को शांति नहीं मिलेगी।'

दिनेश गुप्त के इस प्रकार के विचार जानकर कोई भी यह सोचेगा कि वह बहुत पढ़ा-लिखा होगा। स्थिति इससे भिन्न थी। ढाका जिले के एक छोटे से गाँव में जन्म लेकर ढाका के ही किसी स्कूल से उसने मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण की और कॉलेज में प्रवेश ले लिया। असहयोग आंदोलन छिड़ जाने के कारण उसने कॉलेज भी छोड़ दिया। दिनेश के पास अपने चिंतन की ही धरोहर थी।

२७ मार्च, १९३१ को हाई कोर्ट द्वारा दिनेश गुप्त की फाँसी की सजा की पुष्टि की गई थी और ७ जुलाई, १९३१ को उसे फाँसी हुई। इस अवधि में उसका वजन बारह पौंड बढ़ गया। उसने वजन तौलने की मशीन के प्रति अविश्वास किया तो जेल के डॉक्टर ने बताया कि मशीन बिलकुल ठीक है।

फाँसी के एक दिन पहले दिनेश गुप्त की माताजी और उसके पिता सतीशचंद्र गुप्त उससे मिलने जेल में गए। वह दृश्य बड़ा ही कारुणिक और मार्मिक था। उसने माता-पिता की चरणधूलि अपने माथे से लगाई।

स्नेहमयी जननी अपने पुत्र के लिए कुछ फल और मिठाइयाँ ले गई थीं। दिनेश ने भूमि पर पालथी मारकर बैठकर प्रेमपूर्वक फल और मिठाइयाँ खाईं। इसके पश्चात् वह उठा और माँ की गोद में जा बैठा। माँ के अश्रु पुत्र के मस्तक पर गिर रहे थे। दिनेश ने भी बार-बार अपनी माता का मुँह चूमा और अंतिम बार उसे 'माँ' कहकर पुकारा और अपनी साध पूरी कर ली। इसी समय प्रहरी ने मिलन अवधि की समाप्ति की सूचना दी। न चाहते हुए भी उन्हें विलग होना पड़ा।

चलते समय दिनेश गुप्त के पिता ने प्रश्न किया—

''क्या तुम्हें कुछ कहना है?''

दिनेश गुप्त का उत्तर था—

''मुझे यही कहना है कि मैं बड़ी प्रसन्नता के साथ अपने सृष्टिकर्ता के पास जा रहा हूँ। मेरी एकमात्र आकांक्षा थी कि मृत्यु के पूर्व मातृभूमि को स्वतंत्र देख

लेता; पर यह साध पूरी नहीं हुई। आपसे निवेदन है कि आप माँ का प्रबोधन करते रहिए और स्वयं भी धैर्य धारण कीजिए।''

अपने माता-पिता से दिनेश गुप्त का अंतिम मिलन संपन्न हो चुका था। रात को वह निश्चिंत होकर सोया। ७ जुलाई, १९३१ को प्रातःकाल लगभग तीन बजे जेलर ने उसे जगाकर कहा—

''तुम्हारी जीवन लीला समाप्त होने का समय हो रहा है, तैयार हो जाओ।''

दिनेश हड़बड़ाकर उठ बैठा और जगाने के लिए जेलर को धन्यवाद दिया। पूर्णरूप से प्रातः कार्यों से निवृत्त हो और स्नान-ध्यान करके उसने जेलर से कहा—

''सृष्टिकर्ता से मिलने के लिए मैं तैयार हूँ।''

वह जेलर के पीछे-पीछे चल पड़ा। उसने मुड़कर एक बार उस कोठरी की ओर भी ललचाई हुई दृष्टि से देखा, जिसमें वह इतने समय बंद रहा था। मृत्यु मंच की सीढ़ियों पर वह बड़ी ठसक के साथ चढ़ गया। ७ जुलाई, १९३१ को प्रातः ठीक पौने चार बजे दिनेश गुप्त को अलीपुर सेंट्रल जेल में फाँसी पर झुला दिया गया।

दिनेश गुप्त की फाँसी की तारीख और समय की सूचना उसके परिवारवालों को नहीं दी गई थी। उसकी फाँसी के समय कोई उपद्रव न खड़ा हो, इस दृष्टि से पुलिस ने कड़ा प्रबंध किया था। जेल के आसपास काफी संख्या में पुलिस लगाई गई थी और उस ओर किसीको आने-जाने की अनुमति नहीं थी। जेल के अंदर के अन्य कैदियों को भी अलग बैरकों में बंद कर दिया गया था।

फाँसी के पश्चात् जेल के अंदर ही दिनेश गुप्त की अंत्येष्टि-क्रिया संपन्न की गई। जेल के अंदर उठते हुए धुएँ को देखकर लोगों ने अनुमान लगा लिया कि दिनेश गुप्त को फाँसी हो गई और उसका दाह-संस्कार पूरा कर दिया गया। दिनेश के बड़े भाई यतीश गुप्त जेल पहुँचे तो केवल उन्हें दाह-संस्कार देखने की अनुमति दी गई, संस्कार में सम्मिलित होने की अनुमति नहीं दी गई। कलकत्ता के नीमतल्ला श्मशान घाट के पुरोहित द्वारा अंत्येष्टि-क्रिया संपन्न कराई गई। यतीश गुप्त ने मजिस्ट्रेट के साथ अपने भाई की अंत्येष्टि-क्रिया संपन्न होते देखी और उसीके साथ वे वापस आ गए।

दिनेश गुप्त इस दुनिया से जा चुका था; पर उसके अंतिम शब्द वातावरण में गूँज रहे थे—

'भारत माता की बलिवेदी पर आत्मोत्सर्ग करने का सुयोग पाकर मैं अपने आपको धन्य समझता हूँ।'

□

## ★ दिलीपकुमार घोष ★ वैद्यनाथ सेन

वैद्यनाथ सेन कलकत्ता के निवासी थे। १३ अगस्त, १९४२ को कलकत्ता में शासन विरोधी एक विशाल प्रदर्शन का आयोजन किया गया। वैद्यनाथ सेन इस प्रदर्शन में सम्मिलित हुए और पुलिस की गोली खाकर शहीद हो गए। इसी गोलीकांड में दिलीपकुमार घोष भी शहीद हुए।

□

## ★ दुसाधसिंह ★ श्यामबिहारीलाल

बिहार में गया के अंतर्गत कुरथा थाने की तरफ तिरंगा झंडा लेकर ग्रामीणों का एक जुलूस आगे बढ़ रहा था। 'अंग्रेजो! भारत छोड़ो', 'महात्मा गांधी की जय' और 'भारत माता की जय' के नारे लगाए जा रहे थे। वैसे तो छोटे-छोटे स्थानों के पुलिस स्टेशन खाली कर दिए गए थे और पुलिस के लोग तहसीलों के मुकामों पर पहुँच गए थे, लेकिन कुरथा का थाना खाली नहीं किया गया था। पुलिसवाले प्रदर्शनकारियों का स्वागत करने के लिए तैयार थे।

जैसे ही जुलूस थाने पर पहुँचा, पुलिसवाले लाठियाँ, बल्लम और बर्छियाँ लेकर आंदोलनकारियों पर टूट पड़े। आंदोलनकारियों में से श्यामबिहारीलाल शहीद हो गए। पुलिस ने दुसाधसिंह नामक एक मास्टर साहब को थाने के अंदर ले जाकर डंडों से इतना मारा कि उनका प्राणांत हो गया। मास्टर साहब गाँव की राजनीतिक चेतना के मंत्रदाता थे।

□

## ★ दूखी कोइरी ★ महावीर कोइरी ★ रामलखन कोइरी

ये तीनों ही वीर बलिया जिले के थे। सन् १९४२ के आंदोलन में जुलूस पर जब गोलियाँ चलाई गईं, तो दूखी कोइरी और महावीर कोइरी क्रमश: 'खोरीपाकर'

और 'छाता' स्थानों पर शहीद हो गए। रामलखन कोइरी फरार हो गया; लेकिन पुलिस ने उसका पीछा किया और अंततोगत्वा वह भी गोली खाकर शहीद हो गया।

□

## ★ दूधन

उत्तर प्रदेश के बलिया जिले ने अगस्त क्रांति में सर्वाधिक नाम कमाया है। इस जिले से कुछ दिन के लिए अंग्रेजी सत्ता उखाड़ दी गई थी। दूधन भी बलिया जिले के ग्राम 'नराही' में सन् १९०६ में जनमा था। उसने शासन विरोधी आंदोलन में भाग लिया और पुलिस की गोली खाकर शहीद हो गया।

□

## ★ देवप्रसाद गुप्ता ★ मनोरंजन सेन ★ रजत सेन ★ स्वदेश रे
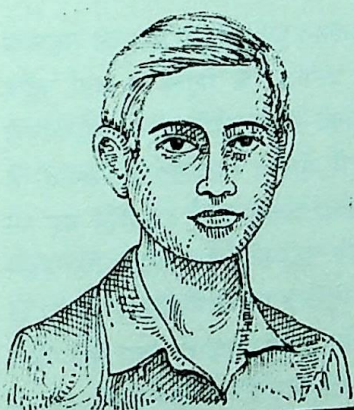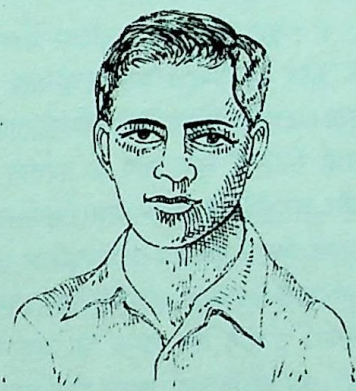
देवप्रसाद गुप्ता मनोरंजन सेन

चटगाँव शस्त्रागार कांड के नायक सूर्यसेन के प्रमुख दल से छह क्रांतिकारियों का एक छोटा दल बिछुड़ गया। इस दल के क्रांतिकारी जान बचाने के लिए केवल भागते ही रहना नहीं चाहते थे, वे अवसर पाकर अंग्रेजों पर

हमले भी करना चाहते थे। उन्होंने चटगाँव के यूरोपियन क्लब पर आक्रमण करने की योजना बना डाली। अपनी योजना को पूर्ण करने के लिए वे निकले भी, परंतु सुराग लग जाने के कारण पुलिस ने उनका पीछा किया और ग्रामीण अंचल के 'कलारपोल' नामक स्थान पर पुलिस दल तथा ग्रामीणों के समूह ने उनको घेर लिया। पुलिस ने गाँववालों को यह कहकर अपने पक्ष में कर लिया कि वे डाकुओं के एक दल का पीछा कर रहे हैं। क्रांतिकारियों के साथ हुए संघर्ष में प्रसन्न बरुआ नामक एक हवलदार और दो ग्रामीण मारे गए। दो क्रांतिकारी भी गिरफ्तार कर लिये गए। चार क्रांतिकारी पुलिस का घेरा तोड़कर बच निकलने में सफल हो गए।

कलारपोल से जो क्रांतिकारी बच निकले थे, वे थे—स्वदेश रे, रजत सेन, देवप्रसाद गुप्ता और मनोरंजन सेन। इन चारों क्रांतिकारियों ने रात-भर भागकर 'जुलडा' नामक गाँव के बाहर बाँसों के एक झुरमुट में शरण ली। पुलिस भी रात-भर उनका पीछा करती रही। सुबह होते-होते पुलिस दल और क्रांतिकारियों के बीच फिर मुठभेड़ हो गई और दोनों ओर से बहुत देर तक गोलियों का आदान-प्रदान होता रहा। क्रांतिकारी दल का नेतृत्व मनोरंजन सेन कर रहा था। जब पुलिस ने आत्मसमर्पण के लिए उसे ललकारा, तो उसने कड़ककर उत्तर दिया—

''मनोरंजन सेन समर्पण करना नहीं जानता। वह दूसरा बाघा जतीन बनना चाहता है।''

युद्ध चलता रहा। पुलिस के कई लोग हताहत हुए। पुलिस दल की सहायता के लिए एक बहुत बड़ा नया दल एक बड़े अफसर के नेतृत्व में वहाँ पहुँच गया। उधर क्रांतिकारियों की गोलियाँ चुक चुकी थीं। उन्होंने सोचा कि अपनी सभी गोलियाँ चुक जाने के पश्चात् पुलिस हमें जीवित गिरफ्तार कर सकती है और वह स्थिति हमारे लिए असम्मानजनक तथा घातक होगी। उन्होंने यह भी व्यक्त किया कि हम लोग पुलिस को यह श्रेय नहीं लेने देना चाहते कि उसने हमें मारा है। अतः उन्होंने आत्मबलिदान का विचित्र पथ अपनाने का निर्णय ले लिया। उन्होंने तय किया कि बजाय इसके कि हर क्रांतिकारी स्वयं को गोली मारे, हर क्रांतिकारी अपने दूसरे साथी को गोली मार दे और जो साथी अंत में बच जाए, वह स्वयं को गोली मार ले। इस निर्णय का पालन किया गया। मित्र के हाथ मरने का गौरव प्राप्त करने के लिए तीन क्रांतिकारियों ने एक-दूसरे को गोलियों से समाप्त कर दिया और जो चौथा शेष बचा, उसने अपनी जीवन लीला समाप्त करने के लिए स्वयं पर गोली चला दी। इसी बीच पुलिस उनपर टूट पड़ी और चौथे क्रांतिकारी को घायल अवस्था में गिरफ्तार कर लिया गया। वह

गिरफ्तारी किसी काम नहीं आई। चौथा क्रांतिकारी भी बच नहीं सका। अपनी जीवित अवस्था में उसने पुलिस दल को बताया कि हम लोग आपकी गोलियों से नहीं, अपनी ही गोलियों से मरे हैं।

एक विचित्र जौहर का उदाहरण वे चारों क्रांतिकारी छोड़ गए।

□

## ★ देवशरण सिंह

देवशरण सिंह

गोलियाँ चले हुए अधिक समय नहीं हुआ था। जिन लोगों को घातक गोलियाँ लगी थीं, वे तो दम तोड़ चुके थे। जो गंभीर रूप से घायल थे, वे भी पानी-पानी चिल्ला रहे थे। इधर-उधर लाशें बिखरी हुई थीं। आसपास की सारी भूमि खून से सनी हुई थी। ब्रिटिश हुकूमत के सैनिक अपनी बंदूकें सीधी किए हुए उन लोगों को पास न जाने की चेतावनी दे रहे थे, जो अपने प्रियजनों की लाशों के पास पहुँचना चाहते थे या जो 'पानी-पानी' चिल्लानेवालों को पिलाने के लिए पानी ले जाना चाहते थे।

नौजवान देवशरण सिंह ने भी पुलिसवालों की चेतावनी सुनी; पर उस चेतावनी का उसपर कोई असर नहीं हुआ। वह अपने हाथ में पानी से भरा हुआ एक लोटा लेकर घायलों की तरफ बढ़ चला। सैनिक दस्ते के नायक ने चेतावनी देते हुए फिर कहा—

"अगर तुमने आगे बढ़ने की कोशिश की तो तुम्हारा वही हाल होगा, जो यहाँ पड़े हुए लोगों का हुआ है।"

"मैं अपना कर्तव्य निश्चित कर चुका हूँ। तुम्हारी चेतावनी और मृत्यु का भय मुझे कर्तव्यच्युत नहीं कर सकता।"

इतना कहकर देवशरण सिंह उन लोगों के पास पहुँच गया, जो पानी-पानी चिल्ला रहे थे। उसने पानी का लोटा जमीन पर रखा और घायल वीर के

मुँह में पानी डालने के लिए एक हाथ से उसका सिर सँभाला। उसी समय सनसनाती हुई एक गोली आई और उसका एक हाथ तोड़ती हुई चली गई। उसने अपने दूसरे हाथ से पानी की कुछ बूँदें घायल के मुँह में डाली ही थीं कि दूसरी गोली आई और उसके कलेजे में समा गई। तीसरी गोली ने उसकी एक जाँघ तोड़ दी। अब देवशरण सिंह घायलों और शवों के बीच में पड़ा हुआ था। वह किसीसे पानी नहीं माँग रहा था। कर्तव्य की वेदी पर वह अपनी शहादत दे चुका था। वह अपने शहीद साथी फुलेनाप्रसाद की पंक्ति में पहुँचकर उसके साथ अपनी दोस्ती निभा रहा था।

देवशरण सिंह का जन्म बिहार के छपरा जिले के 'सिहौता बंगरा' नामक गाँव में सन् १९१६ में हुआ था। बचपन से ही वह संवेदनशील और पर-दुःख कातर था। बी.ए. पास करके उसने मुख्तियारी की परीक्षा पास की थी।

सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो आंदोलन' की एक आहुति के रूप में देवशरण सिंह ने अपने माता-पिता और धरती का ऋण चुकाया।

□

## ★ देवीदत्त बाजपेयी

११ अगस्त, १९४२ को कानपुर के नयागंज पोस्ट ऑफिस के पास से अगस्त आंदोलन का विशाल जुलूस निकल रहा था। जुलूस बहुत लंबा था और ब्रिटिश विरोधी नारे बड़े जोश के साथ लगाए जा रहे थे। इस जुलूस का नेतृत्व देवीदत्त बाजपेयी कर रहा था।

नयागंज डाकखाने के कुछ आगे पुलिस ने अपना मोरचा ले रखा था। जब जुलूस वहाँ पहुँचा तो पुलिस ने उसे ललकारा। जब आंदोलनकारी आगे बढ़ने लगे तो पुलिस ने गोलियाँ चला दीं। देवीदत्त बाजपेयी ने घटनास्थल पर ही शहादत प्राप्त कर ली।

देवीदत्त बाजपेयी उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले के 'औन' ग्राम का निवासी था; पर इस समय वह कानुपर के गड़रिया मोहल्ले में रहता था।

□

## ★ देवीदीन

देवीदीन की मृत्यु सन् १९४३ में दिल्ली जेल में हुई। उसको अठारह महीने के कठोर कारावास का दंड इसलिए दिया गया था कि उसने सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो आंदोलन' में शासन विरोधी कई कार्यक्रमों में भाग लेकर जनता को विद्रोह के लिए भड़काया था।

देवीदीन का जन्म दिल्ली में सन् १९१२ में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री नारायण सिंह था।

□

## ★ देवीपद चौधरी

पटना के सेक्रेटेरियट पर भारत का तिरंगा ध्वज फहराने की होड़ थी और मुकाबला था ब्रिटिश हुकूमत की पुलिस की बंदूकों और गोलियों से। झंडा फहराने के प्रयत्न में ग्यारह दीवाने अपने प्राणों की भेंट चढ़ा चुके थे। यह जानते हुए भी कि झंडा हाथ में लेकर बढ़ने के प्रयत्न में सनसनाती हुई गोली आएगी और सीने में लगेगी, वे लोग थमने का नाम नहीं ले रहे थे। आजादी की शमा पर परवाने अपनी बलि दे रहे थे।

इस बार झंडा सँभाला एक चौदह वर्षीय बालक देवीपद चौधरी ने। बड़ों ने टोका—''बेटे! हमारे रहते हुए तुम अपने जीवन की बलि दो, यह हमारे लिए शर्म की बात होगी। अपने घर जाओ और अपने माता-पिता की सेवा करो।''

देवीपद चौधरी का उत्तर था—''आजादी की वेदी पर यदि बड़ों को अपनी रक्तांजलि देने का अधिकार है तो छोटे इस अधिकार से क्यों वंचित रहें? दौड़ में तो बच्चे ही आगे रहते हैं। शहादत की इस दौड़ में मैं दर्शक बनकर नहीं रहना चाहता। यदि मैं अपनी माँ की सेवा करने के लिए जीवित न रह सका तो क्या, अपनी मातृभूमि की सेवा तो कर सकूँगा।''

तिरंगा ध्वज हाथ में लेकर वह कोमल किशोर आगे बढ़ गया। पहले गरजती हुई चेतावनी आई और फिर सनसनाती हुई गोली। देवीपद चौधरी गोली के प्रहार से गिरा; लेकिन उसने हाथ में थामे हुए तिरंगे झंडे को नहीं गिरने दिया। उसने अपनी आँखें उसी समय बंद कीं, जब किसी अन्य साथी ने झंडा थाम लिया।

देवीपद चौधरी का जन्म क्रांतिभूमि बंगाल के सिलहट जिले में १६ अगस्त, १९२८ को हुआ था। उसके पिता श्री देवेंद्रनाथ चौधरी पटना में एक स्कूल के अध्यापक थे। अगस्त मास में जनमे बालक देवीपद चौधरी ने ११ अगस्त, १९४२ को अपनी जीवन यात्रा पूरी की।

□

# ★ देवेंद्र विजय सेनगुप्ता

उसकी उम्र लगभग सत्रह वर्ष की थी। उसका नाम था देवेंद्र विजय सेन-गुप्ता, लेकिन उसके साथी उसे 'भोलू' कहकर पुकारते थे। वे भोलू इसलिए कहते थे कि भोलापन ही उसके चेहरे की विशेषता थी। उसके भोले चेहरे को देखकर कोई व्यक्ति अनुमान नहीं लगा सकता था कि उसके हृदय में भीषण तूफान छिपा हुआ है। वह अपने साथियों से कहता भी था—

"इस अवज्ञा आंदोलन और सत्याग्रह की निस्सारता मैं देख चुका हूँ। मुझे नहीं लगता कि बंदूकों और तोपों के बल पर टिकी हुई सरकार हमारी प्रार्थनाओं से हिल सकेगी। उसे उखाड़ने के लिए तो बमों की ही आवश्यकता पड़ेगी।"

और भोलू सचमुच ही बम के खेल खेलने लगा। बंगाल में बम के खेल खेलनेवालों की कमी नहीं थी। एक दल में वह भी सम्मिलित हो गया।

सन् १९३० के मई महीने का आखिरी सप्ताह था। भोलानगर की एक झोंपड़ी में भोलू बम बनाने में संलग्न था। बम का मसाला पहले ही तैयार किया जा चुका था और खोल भी ढलवा लिये गए थे। भोलू ने एक खोल में मसाला भरा और उसमें पिन लगाया। पिन ढीला नहीं है, वह इसका परीक्षण कर ही रहा था कि उसके हाथों में ही बम फट गया और बम फटने से रखा हुआ बम का मसाला भी भड़क गया। झोंपड़ी में आग लग गई। लोगों ने दौड़कर आग बुझाई। पुलिस भी पहुँच गई। क्षत-विक्षत और अधजली हालत में लाश निकाली गई। लोगों ने प्रस्ताव रखा—"यह आधा तो जल ही चुका है। झोंपड़ी की जलती हुई लकड़ियाँ खींचकर इसके ऊपर डाल दी जाएँ। दाह-संस्कार यहीं हो जाएगा।"

पुलिस भला यह प्रस्ताव क्यों मानने लगी। वह तो उसके शव की शल्यक्रिया कराके कुछ रिपोर्टें चाहती थी।

देश के लिए अगणित बलिदानों में एक और बलिदान सम्मिलित हो गया।

□

## ★ धीरज मरार

मध्य प्रदेश के रायपुर जिले के 'बेलार' गाँव के निवासी धीरज मरार के पिता का नाम श्री चैनसिंह था। सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो आंदोलन' में उसने रेल की पटरियाँ उखाड़ने के काम में भाग लिया और वह गिरफ्तार करके रायपुर के केंद्रीय कारागार में डाल दिया गया।

३० जनवरी, १९४३ को धीरज मरार की मृत्यु जेल में ही हो गई।

□

## ★ धीरजलाल मणिशंकर

धीरजलाल मणिशंकर का जन्म सन् १९१८ में गुजरात के केरा नगर में हुआ था। 'भारत छोड़ो आंदोलन' में सक्रिय भाग लेते हुए धीरजलाल मणिशंकर एक जुलूस में सम्मिलित हुए और पुलिस की गोली से शहीद हो गए।

□

## ★ धीरेंद्र डे

वह एक नौजवान क्रांतिकारी था। पुलिस को उसकी तलाश थी। उसका नाम धीरेंद्र डे था। वह जमालपुर का रहनेवाला था।

एक दिन धीरेंद्र डे पुलिस के कुछ लोगों को दिखाई दिया। उन लोगों ने उसका पीछा किया और लाठियों से उसकी पिटाई की। पुलिसवालों की लाठियों के प्रहार से धीरेंद्र की मृत्यु हो गई। अपने इस अपराध को छिपाने के लिए

पुलिसवालों ने उसपर कुछ गोलियाँ दागीं और उसकी लाश छोड़कर भाग गए। उन्होंने यह भ्रम पैदा करने का नाटक रचा कि मरनेवाले को उसके साथी क्रांतिकारियों ने मारा होगा।

धीरेंद्र डे के पिता ने उच्च अधिकारियों से प्रार्थना करके उसकी लाश का पोस्टमार्टम कराया। शव-परीक्षण में देखा गया कि उसके शरीर पर लाठियों के प्रहार के चिह्न थे। शासन ने मामले में हस्तक्षेप करके शव-परीक्षण की रिपोर्ट में गोलमाल करा दिया। एक क्रांतिकारी के दुःखी पिता को न्याय न मिल सका। यह घटना २३ अगस्त, १९३३ की है।

□

## ★ ध्रुव

बिहार के पूर्णिया जिले में अगस्त क्रांति का प्रारंभ १३ अगस्त को हुआ। स्थान-स्थान पर सभाएँ की गईं और जुलूस निकाले गए। एक जुलूस पर पुलिस ने गोलियाँ चलाईं और परिणामस्वरूप आठ व्यक्ति शहीद हो गए। शहीद होनेवालों में ध्रुव नाम का एक तेरह वर्षीय बालक भी था। पुलिस ने शहीद बालक के पिता को भी नहीं छोड़ा। बालक के पिता जब अपने पुत्र का दाह-संस्कार करके लौट रहे थे तो उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। इस घटना से इतनी उत्तेजना फैली कि अहिंसक आंदोलन ने हिंसक रूप धारण कर लिया और एक स्थान पर घेरकर एक थानेदार तथा तीन सिपाहियों का वध कर दिया गया।

इस हिंसक घटना का बदला पुलिस ने भी डटकर लिया। पूरे जिले में पुलिस हिंसा पर उतारू हो गई और पचास आंदोलनकारियों को मौत के घाट उतार दिया गया। दुकानों और घरों को लूटकर उनमें आग लगा दी गई। महिलाओं, बच्चों और वृद्धों पर अत्याचार किए गए।

□

## ★ नंददुलाल घोष

जब पुलिस ने बंगाल के क्रांतिकारियों की धर-पकड़ प्रारंभ की तो दो-चार या दस-बीस नहीं, सैकड़ों की संख्या में क्रांतिकारी पकड़ लिये गए और उन्हें विभिन्न जेलों में बिना मुकदमा चलाए ठूँस दिया गया।

नंददुलाल घोष भी इसी प्रकार का क्रांतिकारी था। उसे गिरफ्तार करके हिजली कैंप में बंद कर दिया गया। हिजली कैंप में नंददुलाल बीमार पड़ गया। उसे चेचक निकल आई। पुलिस ने उसे कैंप के अस्पताल में भरती कर दिया।

नंददुलाल घोष के पिता को जब अपने पुत्र की बीमारी का समाचार मिला तो वे अपने एक विश्वसनीय डॉक्टर को साथ लेकर दौड़े-दौड़े गए और अपने डॉक्टर द्वारा पुत्र की बीमारी का परीक्षण कराने की अनुमति माँगी। एक दुःखी पिता को अपने पुत्र को देखने और उसके स्वास्थ्य का परीक्षण कराने की अनुमति नहीं दी गई।

अस्पताल में २९ अप्रैल, १९३४ को नंददुलाल घोष की मृत्यु हो गई। उसका शव भी उसके पिता को नहीं दिया गया।

□

## ★ नबीसाब बादासाब पिंजार

नबीसाब बादासाब का जन्म मैसूर राज्य के धारवाड़ जिले के 'केसूर' स्थान पर हुआ था। शिक्षा-दीक्षा तो कुछ हुई नहीं, अपने पिता के व्यवसाय में हाथ बँटाने लगा। उन्हीं दिनों १९४२ का आंदोलन छिड़ गया तो उसमें कूद पड़ा। गिरफ्तार होकर जेल की सजा पाई और २१ दिसंबर, १९४२ को जेल में ही उसकी मृत्यु हो गई।

□

## ★ नरसिंहराव घवालकर

नरसिंहराव घवालकर एक लुहार का पुत्र था। उसका जन्म सन् १९०२ में मैसूर राज्य के बीदर जिले के 'हुमनाबाद' स्थान पर हुआ था। सन् १९४२ के आंदोलन में नरसिंहराव ने सक्रिय रूप से भाग लिया और एक प्रदर्शन में वह पुलिस की गोलियों से शहीद हो गया।

□

## ★ नरहरिभाई रावल
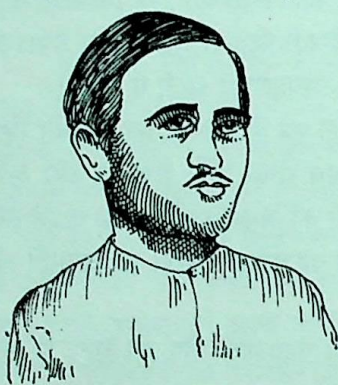
नरहरिभाई रावल

३० अक्तूबर, १९४२ को जब अहमदाबाद जेल से एक शव निकाला गया तो उसको लेने के लिए भारी भीड़ जेल के फाटक पर जमा थी। वह शव नरहरिभाई रावल का था। शव को जुलूस के रूप में नगर के प्रमुख बाजारों में से ले जाया गया।

नरहरिभाई रावल ने 'भारत छोड़ो आंदोलन' में भाग लिया था। उसे गिरफ्तार करके जेल में बंद कर दिया गया था। जेल में ही उसकी मृत्यु हुई थी। नरहरिभाई रावल का जन्म अहमदाबाद में सन् १९१४ में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री माणिकलाल रावल था।

□

## ★ नवजीवन घोष

वह प्रसिद्ध क्रांतिकारी निर्मलजीवन घोष का भाई था। उसका नाम था नवजीवन घोष। वह मिदनापुर जिले का रहनेवाला था। पुलिस की ज्यादतियों से
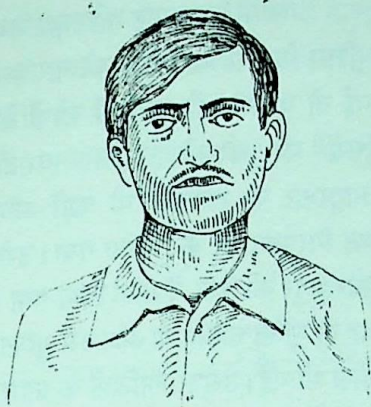
नवजीवन घोष

परेशान होकर कलकत्ता में रहने लगा था।

कलकत्ता में भी पुलिस ने नवजीवन घोष का पीछा नहीं छोड़ा। 'बंगाल क्रिमिनल लॉ संशोधन' के अंतर्गत उसे फरवरी १९३४ में गिरफ्तार करके बरहमपुर के शिविर में बंद कर दिया गया।

नवजीवन घोष की झड़पें पुलिस के थानेदार से अकसर ही हो जाया करती थीं। एक दिन २२ सितंबर, १९३६ को थानेदार ने उसे इतना पीटा कि उसकी मृत्यु हो गई। अब तो थानेदार बहुत घबराया। अपना अपराध छिपाने के लिए उसने नवजीवन के गले में रस्सी का फंदा डालकर उसके कमरे की खूँटी से लटका दिया और घोषित कर दिया कि नवजीवन ने आत्महत्या कर ली। उसने यह भी घोषित किया कि नवजीवन दो पत्र छोड़ गया है, जिनमें से एक सरकार के नाम और दूसरा उसके पिता के नाम है। बाद में उसने घोषित कर दिया कि वे पत्र किसीने चुरा लिये। नवजीवन की लाश भी उसके पिता को नहीं दी गई।

एक तरुण क्रांतिकारी पुलिस की ज्यादतियों का शिकार होकर इस दुनिया से कूच कर गया।

□

# ★ नवराती आदुरकर

यह ठीक है कि वह मेहनत-मजदूरी करके अपनी आजीविका कमाता था; पर नवराती आदुरकर में राष्ट्रीय चेतना सामान्य लोगों से अधिक ही थी। उसकी पढ़ाई भी अधिक नहीं हुई थी। वह मुश्किल से पाँचवें दर्जे तक पढ़ा था; लेकिन उसने अपनी खुली आँखों से दुनिया को पढ़ा था।

जब नवराती ने सुना कि कोल्हापुर में अगस्त क्रांति का शंखनाद करते हुए जुलूस निकल रहा है, तो वह अपना काम छोड़कर उसमें सम्मिलित हो गया और बड़े उत्साह के साथ नारे लगाता हुआ आगे-आगे चलने लगा।

नवराती आदुरकर

लोगों के उत्साह की लहर जब पुलिस के धैर्य की सीमा को पार कर गई तो पुलिस की लाठियाँ लोगों के सिरों पर बरसने लगीं। नवराती आदुरकर पर लाठियाँ भी पड़ीं और वह गिरफ्तार भी कर लिया गया। उसे कोल्हापुर की जेल में डाल दिया गया। वह तो मुक्ति चाहता था और उसे मुक्ति मिल भी गई। उसपर लाठियों के प्रहार बड़ी बेरहमी से हुए थे और इसी कारण उसने वे प्रहार सहकर जीवित रहना अपमानजनक समझा। कोल्हापुर जेल में नवराती आदुरकर की मृत्यु हो गई।

सन् १९१२ में श्री गोविंद आदुरकर के घर जनमे नवराती आदुरकर ने सन् १९४२ की क्रांति को अपनी प्राणाहुति दे दी।

□

## ★ नवीनचंद्र वैरागीवाला

नवीनचंद्र वैरागीवाला कॉलेज का एक छात्र था। वह कलकत्ता के एक कॉलेज में पढ़ रहा था। उसका जन्म सन् १९२१ में सूरत नगर में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री ईश्वरलाल वैरागीवाला था।

कलकत्ता में अपने कॉलेज के निकट नवीनचंद्र एक धरना-सत्याग्रह में सम्मिलित हुआ। उसे गिरफ्तार करके जेल में डाल दिया गया। सन् १९४३ में कोयंबटूर जेल में उसकी मृत्यु हो गई।

□

## ★ नागप्पा हल्लूर

नागप्पा हल्लूर को जब मालूम हुआ कि अगस्त क्रांति के आंदोलनकारियों का दमन करने के लिए फौज जा रही है, तो वह सड़क पर फौज का रास्ता रोकने

के लिए खड़ा हो गया। फौज के कप्तान ने उससे हट जाने के लिए कहा, पर वह अपने स्थान से नहीं हटा। इसपर उसे गोली मार दी गई और वह घटनास्थल पर ही शहीद हो गया।

नागप्पा हल्लूर मैसूर के चित्रदुर्ग जिले के 'दावनगेरे' स्थान का निवासी था।

□

## ★ नाचू दानी

नाचू दानी लोककवि और लोकगीत गायक था। उसके स्वर में जादू का प्रभाव था। उसकी विशेषता यह थी कि वह जन-जागरण और राष्ट्रीय चेतना के गीत लिखकर, पूरे क्षेत्र में घूम-घूमकर लोगों में जागृति उत्पन्न कर रहा था।

महाराष्ट्र सरकार इस ताक में थी कि वह नाचू को गिरफ्तार करके जेल में डाल दे। आखिर उसने नाचू को गिरफ्तार करके जेल में डाल ही दिया। राजद्रोह के आरोप में उसे आठ मास की सख्त कैद की सजा सुनाई गई। उसे जेल में भीषण यातनाएँ दी गईं और जेल में ही सन् १९४३ में उसकी मृत्यु हो गई।

नाचू दानी का जन्म वर्धा जिले के 'अरवी' गाँव में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री लाभाजी नाचू था।

□

## ★ नानालाल शाह

अहमदाबाद जिले के 'रामपुरा' गाँव के विद्यालय का एक सामान्य छात्र बड़े बुलंद हौसले के साथ आजादी के जुलूस में सम्मिलित हुआ। उसके वरिष्ठ साथियों ने उससे कहा भी कि तुम पिछली पंक्ति में हो जाओ, पर उसका उत्तर था—

''मैं अपने दल का अभिमन्यु हूँ। मैं पीछे कैसे रह सकता हूँ! मुझे तो शत्रु के चक्रव्यूह को तोड़ना है।''

यह कहकर बालक नानालाल शाह एक झंडा अपने हाथ में लेकर अपने बाल दल का नेतृत्व करने लगा। सामने पुलिस पार्टी बंदूकें साधे तैयार थी। गोलियाँ चलने लगीं। पुलिस ने पहले हवा में गोलियाँ दागीं। बालक नानालाल

पुलिसवालों को चकमा देकर थाने की तरफ बढ़ गया। वहाँ वह अकेला ही था। उसने थाने की इमारत पर झंडा लगाने के लिए जीने पर चढ़ना प्रारंभ ही किया था कि एक गोली ने उसे निशाना बना डाला। वह 'भारत माता की जय' बोलता हुआ जीने से नीचे लुढ़क गया। यह देखकर भीड़ को जोश आ गया और पुलिस के घेरे को तोड़कर आगे बढ़ गई। नानालाल ने गिरकर भी हाथ से झंडा नहीं छोड़ा था। एक साथी ने वह झंडा लेकर थाने पर लगा दिया। नानालाल शाह को बता दिया गया कि उसके हाथ का झंडा थाने पर लगा दिया गया है। वह संतोष के साथ प्राण त्याग सका।

नानालाल शाह

□

## ★ नानूभाई पटेल
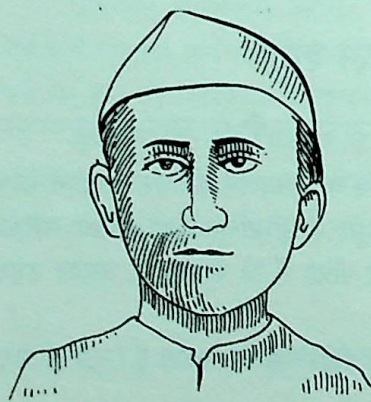
नानूभाई पटेल

नानूभाई पटेल एक कृषक पुत्र था। उसका जन्म सन् १९११ में उत्तर गुजरात के 'करजीसाल' ग्राम में हुआ था। उसमें प्रखर राजनीतिक चेतना थी। पहले तो उसने सन् १९३० के 'सविनय अवज्ञा आंदोलन' में भाग लिया और फिर सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो आंदोलन' में कूद पड़ा।

अहमदाबाद नगर में ३० सितंबर, १९४२ को जो जुलूस निकाला गया, उसमें नानूभाई पटेल सम्मिलित हुआ था। जुलूस में गोली खाकर शहीद होनेवाला वही एक वीर था।

□

## ★ नारायण दोनी

शिक्षा-दीक्षा अधिक न होने के कारण नारायण दोनी ने अपना बढ़ईगिरी का पैतृक धंधा अपना लिया। वैसे उसमें राजनीतिक चेतना काफी अधिक थी। जब सन् १९४२ का आंदोलन छिड़ा, तब उस समय नारायण की उम्र लगभग सोलह वर्ष की थी। उसने १४ अगस्त, १९४२ को हुबली पुलिस स्टेशन पर होनेवाले हमले में भाग लिया। उसे गोली लगी और वह गंभीर रूप से घायल हो गया। उसी दिन उसकी मृत्यु हो गई।

नारायण दोनी का जन्म सन् १९२६ में मैसूर के धारवाड़ जिले के 'हुबली' ग्राम में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री गोविदप्पा दोनी था। □

## ★ नारायणभाई पटेल
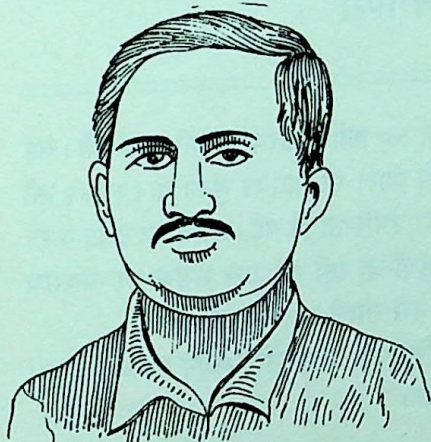
नारायणभाई पटेल

नारायणभाई पटेल बहुत सुंदर, स्वस्थ और होनहार युवक था। उसका जन्म सन् १९१४ में अहमदाबाद जिले में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री मोहनलाल पटेल था।

२५ सितंबर, १९४२ को जो शासन विरोधी जुलूस अहमदाबाद नगर में निकला, उसपर पुलिस ने गोलियाँ चलाईं और उसके परिणामस्वरूप नारायणभाई पटेल शहीद हो गया। □

## ★ निघन

असम के 'ग्वालपाड़ा' स्थान के एक गाँववाले पर सरकार ने उपद्रव करने के आरोप में सामूहिक जुर्माना किया। निघन नाम के एक किसान को जुर्माने के रूप में आठ रुपए चुकाने थे। उस समय निघन के पास नकद राशि नहीं थी। जुर्माना वसूल करनेवाले कारिंदे ने आठ रुपयों के लिए उसके दो बैल खोल लिये। किसान ने प्रतिरोध करके उसको बैल नहीं खोलने दिए। वह कारिंदा नाराज होकर चला गया और अपने साथ पुलिस से भरी हुई एक लॉरी ले आया। पुलिस को आया हुआ देख किसान ने अपने घर का दरवाजा बंद कर लिया। पुलिस ने बलपूर्वक किवाड़ तोड़ डाले और निघन को खींचकर बाहर ले आए। पुलिस के सिपाहियों ने उसे अपनी संगीनों से कोंच-कोंचकर मार डाला। केवल आठ रुपए के लिए उन लोगों ने उसकी जान ले ली।

□

## ★ निनगप्पा

निनगप्पा की गणना मैसूर राज्य के उग्र क्रांतिकारियों में की जाती थी। वह मैसूर राज्य के विरुद्ध किए गए आंदोलन में पहले भी भाग ले चुका था। १९४२ की अगस्त क्रांति तो उसके लिए त्योहार बनकर उपस्थित हो गई। क्रांति का दमन करने के लिए जिस सड़क से मिलिट्री की गाड़ियाँ जा रही थीं, उस सड़क पर अवरोध खड़े करके निनगप्पा ने उन्हें रोक दिया। उसे गोली मार दी गई।

निनगप्पा सन् १९२५ में चित्रदुर्ग जिले के 'दावनगेरे' स्थान पर जनमा था। १० अगस्त, १९४२ को वह शहीद हो गया।

□

## ★ नीरेंद्रलाल भट्टाचार्य ★ बृजेंद्रलाल चौधरी

बृजेंद्रलाल चौधरी एक क्रांतिकारी युवक था। उसे चटगाँव की जेल में न रखकर बरहमपुर की जेल में रखा गया और कई तरह की यातनाएँ दी गईं। वह

बहुत भावुक किस्म का युवक था। जेल के अधिकारियों से अकसर उसकी झड़पें हो जाया करती थीं।

जब शारीरिक यातनाएँ और मानसिक त्रास उसकी सहनशक्ति के बाहर हो गईं, तो एक दिन उसने धोती को उमेठकर उसका एक सिरा रोशनदान के सरिए से बाँधा और दूसरे सिरे का फंदा बनाकर अपने गले में डालकर अपनी जीवन लीला समाप्त कर ली।

इसी रास्ते को अपनाया हिजली कैंप में बंद नीरेंद्रलाल भट्टाचार्य ने। □

## ★ पंडित तेली

'पंडित तेली' कहकर ही लोग उसे पुकारते थे। उसका असली नाम कुछ और था। ज्ञान और विवेक की बातें करने के कारण ही लोग उसे 'पंडित तेली' कहने लगे थे। उसके पिता का नाम श्री धन्नू तेली था। वह मध्य प्रदेश के रायपुर जिले के 'संकरा' ग्राम का रहनेवाला था। अगस्त क्रांति में पंडित तेली ने तोड़-फोड़ के कामों में बढ़-चढ़कर भाग लिया और गिरफ्तारी के बाद जब उसपर मुकदमा चला तो उसे छह वर्ष के कठोर कारावास का दंड दिया गया।

रायपुर की जेल में १४ जनवरी, १९४३ को पंडित तेली की मृत्यु हो गई।

□

## ★ पायजकांत चौधरी

क्रांतिकारी युवक पायजकांत चौधरी को भोजन कराने के लिए उसकी स्नेहमयी माँ ने थाली तैयार करके बुलाने के लिए आवाज लगाई। ठीक उसी समय 'पायजकांत' के नाम की पुकार बाहर से भी हुई। माँ ने जब बाहर जाकर देखा तो उसने पाया कि पायजकांत से मिलने के लिए आनेवाला पुलिस का एक सिपाही था। उसने बताया कि पायजकांत को थानेदार साहब ने थाने पर बुलाया है।

पायजकांत की माँ ने उस सिपाही को समझाया कि पायज भोजन कर ले, फिर तुम उसे ले जाना। सिपाही ने तर्क दिया कि केवल कुछ मिनटों का काम है और पायजकांत को थाने से वापस आने में तनिक भी देर नहीं लगेगी। आखिर विवश होकर माँ को अपने पुत्र को बिदा करना पड़ा।

माँ प्रतीक्षा करती रही, लेकिन उसका पुत्र वापस नहीं आया। उसने भी भोजन नहीं किया। रात-भर उसे नींद नहीं आई। वह दरवाजे की ओर कान लगाए

बेटे की आहट के लिए अधीर रही। पूरी रात बेटे की प्रतीक्षा करते-करते बीत गई। सुबह जब माँ ने दरवाजा खोला तो पाया कि उसका पुत्र दरवाजे पर मृतावस्था में पड़ा है। उसकी मृत्यु का रहस्य सुलझ नहीं सका।

□

## ★ पुन्नेसिंह

पुन्नेसिंह की गणना अगस्त क्रांति के उग्र आंदोलनकारियों में की जाती है। उसने कई सरकारी दफ्तरों में आग लगाई थी। जब वह गिरफ्तार हुआ तो उसपर मुकदमा चलाया गया और उसे चार वर्ष के कठोर कारावास का दंड सुनाया गया। जेल की सजा काटने के लिए वह अधिक समय तक जीवित नहीं रह सका। जेल में भी वह झगड़ा करता रहता था। जेल में उसके साथ बहुत मार-पीट की गई और १ दिसंबर, १९४२ को वह चल बसा।

पुन्नेसिंह का जन्म मध्य प्रदेश के बैतूल जिले के 'महेंदवाड़ी' नामक ग्राम में सन् १९१७ में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री सामूसिंह था।

□

## ★ पुलिनबिहारी प्रधान

मिदनापुर जिले के नंदीग्राम पुलिस स्टेशन पर योजनापूर्वक आक्रमण किया गया। थाने पर रिपोर्ट लिखाने के बहाने कई व्यक्ति वहाँ पहले पहुँच गए। सामने से आंदोलनकारियों का जुलूस भी पुलिस स्टेशन पर पहुँचा। बाहर निकलकर पुलिनबिहारी प्रधान उन लोगों को कुछ संकेत देने लगे। स्थिति पुलिसवालों की समझ में आ गई। पुलिनबिहारी प्रधान के अन्य साथी तो गिरफ्तार कर लिये गए, लेकिन काबू में न आते देखकर उनको गोली मार दी गई।

पुलिनबिहारी प्रधान का जन्म सन् १९१७ में मिदनापुर जिले के ग्राम 'सोंधाखाली' में हुआ था।

□

# ★ पूर्णचंद्र ताल्लुकदार ★ मनोरंजन दास

चटगाँव शस्त्रागार कांड के कुछ शेष बचे हुए क्रांतिकारी चटगाँव के निकट 'गोहिरा' नामक गाँव में पूर्णचंद्र ताल्लुकदार के मकान में प्रश्रय पाए हुए थे। पुलिस को उनकी उपस्थिति की सूचना मिल गई और मकान को घेर लिया गया। पुलिस को यह सूचना मिली थी कि उस मकान में छिपनेवाले क्रांतिकारियों में तारकेश्वर दस्तीदार भी हैं। मकान का घेरा १९ मई, १९३३ को डाला गया।

मकान के अंदर छिपे हुए क्रांतिकारियों को जब यह पता चला कि वे पुलिस द्वारा घेर लिये गए हैं, तो उन्होंने मकान के अंदर से गोलियाँ चलाना प्रारंभ कर दिया। पुलिस ने भी गोलियाँ चलाकर क्रांतिकारियों की गोलियों का उत्तर दिया। जिस तरफ से पुलिस का घेरा कमजोर पड़ा, उस तरफ से दो क्रांतिकारी भागने में सफल हो गए। भागनेवालों में तारकेश्वर दस्तीदार भी था।

जो क्रांतिकारी मकान के अंदर रह गए थे, वे निरंतर पुलिस पर गोलियाँ चलाते रहे। कुछ देर पश्चात् उनकी गोलियाँ समाप्त हो गईं। पुलिस ने मकान के अंदर प्रवेश किया और चार क्रांतिकारियों को गिरफ्तार कर लिया गया। गोलियाँ लगने से पूर्णचंद्र ताल्लुकदार और मनोरंजन दास मारे गए थे। पुलिस उनके शव उठाकर ले गई।

□

# ★ प्रबोध मजूमदार

प्रबोध मजूमदार एक तपे हुए क्रांतिकारी थे। उनका जन्म चटगाँव में हुआ था। वे चटगाँव के क्रांतिकारी दल में सम्मिलित रहे और उन्होंने स्वयंसेवक संघ का निर्माण भी किया। जब १९४२ का 'भारत छोड़ो आंदोलन' छिड़ा तो उन्होंने उसमें भी सक्रिय भाग लिया। पुलिस को तो उनकी तलाश थी ही। वे गिरफ्तार कर लिये गए। ढाका जेल में सन् १९४३ में उनकी मृत्यु हो गई।

□

## ★ कुमारी प्रभावती

प्रभावती एक डॉक्टर पिता की डॉक्टर पुत्री थी। उसके पिता डॉ. मणिलाल गुजरात के सूरत नगर के प्रसिद्ध डॉक्टर थे। प्रभावती की ख्याति भी नगर में फैल गई थी। अपने राजनीतिक मरीजों की कहानियाँ सुनते-सुनते उसके दिल में भी राजनीति के प्रांगण में कूद पड़ने की इच्छा पैदा हो गई और जब 'भारत छोड़ो आंदोलन' छिड़ा तो वह उसमें कूद ही पड़ी। उसने स्वयं को केवल जुलूस और नारेबाजी तक सीमित नहीं रखा। उसे तोड़-फोड़ में भाग लेने में विशेष रुचि थी। यही कारण था कि पुलिस ने उसे गिरफ्तार करके जेल में डाल दिया। जेल में कुमारी प्रभावती को कष्ट दिए गए और बीमार पड़ जाने पर उसके उपचार की समुचित व्यवस्था नहीं की गई। उसे केवल उसी समय छोड़ा गया, जब उसके बचने की कोई आशा नहीं रही। जेल से मुक्त होने पर शीघ्र ही उसकी मृत्यु हो गई।

□

## ★ प्रसन्नकुमार भूमिया

मिदनापुर जिले के महिषादल पुलिस स्टेशन पर आंदोलनकारियों की एक भारी भीड़ ने हमला कर दिया। हमला करनेवाले दल में महिलाएँ भी थीं। पुलिस ने आत्मरक्षा में गोलियाँ चलाईं। कई व्यक्ति मारे गए; जिनमें प्रसन्नकुमार भूमिया भी एक था। यह आक्रमण २९ सितंबर, १९४२ को किया गया था। प्रसन्नकुमार का जन्म सन् १९१८ में पश्चिमी बंगाल के मिदनापुर जिले के 'राजारामपुर' ग्राम में हुआ था।

□

## ★ प्रह्लाद सिंह

प्रह्लाद सिंह उत्तर प्रदेश के मेरठ नगर का निवासी था। १८ अगस्त, १९४२ को 'भभोरी' में आयोजित शासन विरोधी प्रदर्शन का नेतृत्व उसने किया और पुलिस की गोली खाकर शहीद हुआ।

□

# ★ प्रीतिलता वादेदार

प्रीतिलता वादेदार

प्रीतिलता वादेदार चटगाँव के एक ऐसे परिवार की लड़की थी, जिसमें लड़कियों को उच्च शिक्षा देना अच्छा नहीं समझा जाता था। यही कारण था कि प्रीतिलता की शिक्षा की उपेक्षा की गई। उसके भाइयों को घर पर पढ़ाने के लिए एक अध्यापक की नियुक्ति की गई थी। जब अध्यापकजी उसके भाइयों को पढ़ाते तो वह बैठकर सुना करती थी। वह सुन-सुनकर ही पढ़ गई और पढ़ाई में अपने भाइयों को मात देने लगी। उसकी कुशाग्र बुद्धि देखकर उसकी शिक्षा का भी प्रबंध किया गया। देखते-ही-देखते उसने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण कर लेने के पश्चात् प्रीतिलता ने विश्वविद्यालय से ग्रेजुएशन भी कर लिया। ग्रेजुएशन कर लेने के पश्चात् प्रीतिलता वादेदार चटगाँव के नंदन कानन हाई स्कूल की प्रधानाध्यापिका बन गई। यह वह समय था, जब क्रांतिकारियों ने चटगाँव शस्त्रागार कांड संपन्न कर डाला। क्रांतिकारियों और उनके परिवारवालों पर हो रहे अत्याचारों ने प्रीतिलता को विद्रोहिनी बना दिया। कुछ दिन तो वह गोपनीय रूप से क्रांति कार्य करती रही, पर शीघ्र ही घर छोड़कर वह 'इंडियन रिपब्लिकन आर्मी' की महिला सैनिक बन गई।

जब रामकृष्ण विश्वास को फाँसी का आदेश हो चुका था, तब प्रीतिलता वादेदार उसकी रिश्तेदार बनकर, कई बार जेल में पहुँचकर उससे भेंट कर आई थी। वह अपने नेता सूर्यसेन के साथ १४ सितंबर, १९३२ को घलघाट में पुलिस द्वारा घेर ली गई थी। पुलिस के साथ हुई मुठभेड़ में उस समय निर्मल सेन और अपूर्व सेन मारे गए थे; लेकिन सूर्यसेन और प्रीतिलता वादेदार बचकर भागने में सफल हो गए थे। प्रीतिलता शहादत के लिए अधीर हो रही थी।

जब शैलेश्वर चक्रवर्ती की निष्क्रियता के कारण चटगाँव के यूरोपियन क्लब पर आक्रमण नहीं हो सका, तो प्रीतिलता ने उस योजना को पूरा करने का दायित्व अपने ऊपर लिया।

२४ सितंबर, १९३२ की रात थी। रात्रि के साढ़े दस बजे थे। यूरोपियन क्लब के चालीस सदस्य क्लब में आमोद-प्रमोद में व्यस्त थे। इसी समय प्रीतिलता वादेदार के नेतृत्व में क्रांतिकारियों का एक दल वहाँ पहुँचा। क्लब की खुली खिड़की में से एक बम फेंका गया, जिसके विस्फोट से सभी लोग आतंकित हो गए। दो बम और फेंके गए तथा गोलियाँ भी चलाई गईं। एक अंग्रेज वृद्ध की तत्काल मृत्यु हो गई और कुछ अन्य लोग घायल हो गए। वातावरण चीखों और कराहों से गूँज उठा। वहाँ अधिक देर तक ठहरने की गुंजाइश नहीं थी। कुछ देर तक धूम-धड़ाका मचाकर क्रांतिकारियों का दल नौ दो ग्यारह हो गया।

थोड़ी देर पश्चात् जब पुलिस वहाँ पहुँची तो उसने बारह घायलों को अस्पताल में पहुँचाया। आसपास खोज करने पर पाया गया कि आक्रमणकारियों में से एक की लाश वहाँ पड़ी थी। वह एक लड़की की लाश थी, जिसने सैनिक वरदी पहनी हुई थी। उसका नाम प्रीतिलता वादेदार था। उसने जहर खाकर आत्मबलिदान का पथ अपनाया था। ऐसा लगता है कि शायद प्रीतिलता को यह सदमा लगा कि आक्रमण में जो शत्रु-हानि अपेक्षित थी, वह नहीं हुई। अपनी इस विफलता के परिणामस्वरूप ही उसने अपनी जीवन लीला समाप्त कर ली।

□

## ★ प्रेमकिशन खन्ना

शाहजहाँपुर नगर के बाहर एक उद्यान में बैठे हुए दो युवक बातें कर रहे थे। उनमें से एक का नाम था रामप्रसाद बिस्मिल और दूसरे का था प्रेमकिशन खन्ना। बिस्मिल के हाथ में एक माउजर पिस्तौल थी, जिसकी कार्य-प्रणाली का अध्ययन वे अपने मित्र प्रेमकिशन खन्ना की सहायता से कर रहे थे। वह माउजर पिस्तौल प्रेमकिशन खन्ना की थी, जिसका उनके पास लाइसेंस भी था। खन्ना के पिता ईस्टर्न रेलवे में एक बड़े इंजीनियर थे। प्रेमकिशन स्वयं भी दिल्ली में ठेकेदारी के काम से अच्छा अर्थोपार्जन कर रहा था। बैठे-बैठे दोनों में बातचीत का सिलसिला चल पड़ा। बातचीत का प्रारंभ प्रेमकिशन खन्ना ने किया—"तुम्हारी कार्य-योजना शायद अंतिम रूप ले चुकी होगी। क्रांतिकारी नियमों के अनुसार, मैं यह तो नहीं पूछना चाहता कि तुम क्या काम हाथ में ले रहे हो, पर मित्र के नाते इतना अवश्य पूछना चाहता हूँ कि कहीं मेरे सहयोग की भी आवश्यकता है?"

"केवल सहयोग ही नहीं, मुझे तुम्हारा सक्रिय सहयोग चाहिए और अपनी

कार्य-योजना को पूरा करने के लिए मैं तुम्हारी इस पिस्तौल को अपने साथ रखना चाहता हूँ।''

''मेरी पिस्तौल यदि तुम्हारे काम आए तो मैं इसे अपना सौभाग्य ही समझूँगा। वैसे तो मैं स्वयं अपनी सेवाएँ देने के लिए तैयार हूँ; पर शायद अभी तुम्हें इसकी जरूरत नहीं है।''

''कुछ विश्वस्त साथियों को वक्त-जरूरत के लिए भी तो सुरक्षित रखना चाहिए। यदि सभी साथियों को एक साथ झोंक दिया जाए तो दल का काम आगे कैसे चलेगा?''

''जैसी तुम्हारी मरजी, पर इतना ध्यान रखना कि किसी काम के लिए प्रेमकिशन पीछे हटनेवाला व्यक्ति नहीं है। जिस दाँव पर यह मोहरा लगाना पड़े, कभी संकोच मत करना।''

प्रेमकिशन खन्ना के इस आश्वासन से रामप्रसाद बिस्मिल को बहुत बल मिला। उनकी कार्य-योजना ने अंतिम रूप लिया और क्रांतिकारियों ने काकोरी के निकट ट्रेन रोककर अंग्रेजी खजाना लूट लिया। कुछ दिन के पश्चात् जब धर-पकड़ हुई तो रामप्रसाद बिस्मिल के पास से वह माउजर पिस्तौल भी बरामद हुई, जो उन्होंने प्रेमकिशन खन्ना से ली थी। प्रेमकिशन खन्ना को भी गिरफ्तार कर लिया गया और उसे मुकदमे के परिणामस्वरूप पाँच वर्ष के कठोर कारावास का दंड सुनाया गया। अपना जेल जीवन प्रेमकिशन खन्ना ने बड़े धैर्य और साहस के साथ काटा। अपने मित्र रामप्रसाद बिस्मिल की फाँसी ने उसे बहुत आघात पहुँचाया। वह सोचता रहा कि मैं अपने मित्र से यहाँ पिछड़ गया।

□

## ★ प्रेमचंद

२३ अगस्त, १९४२ को मध्य प्रदेश के नरसिंहपुर जिले के 'चिचली' ग्राम में 'भारत छोड़ो आंदोलन' के अंतर्गत ग्रामीणों ने एक जुलूस निकाला, जो पुलिस थाने पर तिरंगा झंडा लगाने के लिए बढ़ रहा था। पुलिस ने आंदोलनकारियों पर गोलियाँ चलाईं और प्रेमचंद घटनास्थल पर ही शहीद हो गया। प्रेमचंद 'चिचली' ग्राम का निवासी था। उसका जन्म सन् १८९६ के लगभग हुआ था। वह प्राथमिक कक्षाओं तक ही पढ़ पाया था। उसके पिता का नाम श्री नाथूराम था।

□

## ★ फणिभूषण नंदी

फणिभूषण नंदी उस क्रांतिकारी अमरेंद्रनाथ नंदी का चचेरा भाई था, जो २४ अप्रैल, १९३० को एक पुलिया के नीचे पुलिस के साथ गोलियों के आदान-प्रदान में अपनी ही गोली से मारा गया था। फणिभूषण नंदी को पुलिस ने कलारपोल में बंदी बनाया था।

फणिभूषण नंदी पर मुकदमा चला और न्यायालय ने उसे आजीवन कारावास का दंड दिया। अलीपुर सेंट्रल जेल में रहते हुए उसे क्षय रोग हो गया और इसी बीमारी से सन् १९३७ में उसकी मृत्यु हो गई। इस प्रकार फणिभूषण नंदी ने पुलिस की यातनाओं से और पुलिस ने फणिभूषण नंदी से मुक्ति पा ली।

□

## ★ फुलेनाप्रसाद श्रीवास्तव

सारन जिले में सेवान के पुलिस स्टेशन पर भारत का तिरंगा झंडा लगाने की होड़ थी। थाने को घेरे हुए देश के दीवाने खड़े थे और उधर पुलिस के सैनिक अपनी बंदूकें ताने खड़े थे। वे चेतावनी दे रहे थे—

''यदि किसीने आगे बढ़ने की कोशिश की तो वह गोलियों से भून दिया जाएगा।''

भीड़ में से एक व्यक्ति ने गर्जना की—

''आजादी के परवाने गोले और गोलियों की चिंता नहीं करते। हम लोग थाने पर तिरंगा झंडा लगाकर ही रहेंगे।''

जिस व्यक्ति ने यह गर्जना की थी, उसका नाम फुलेनाप्रसाद श्रीवास्तव था। उसने झंडा अपने हाथ में लिया और आगे बढ़ चला। सामने से एक गोली आई और

फुलेनाप्रसाद के शरीर से खून का फव्वारा फूट पड़ा। फुलेनाप्रसाद ने दूसरा कदम बढ़ाया और दूसरी गोली उसके शरीर में लगी। फुलेनाप्रसाद के साथ और लोग भी चल रहे थे; लेकिन गोलियों का निशाना फुलेनाप्रसाद ही बन रहा था, क्योंकि झंडा उसीके हाथ में था। श्रीमती फुलेनाप्रसाद भी साथ ही थीं और वे अपने पति को गोलियाँ लगते देख रही थीं। उन्होंने झंडा अपने हाथ में लेने का प्रयत्न किया; लेकिन फुलेनाप्रसाद ने कह दिया—

फुलेनाप्रसाद श्रीवास्तव

"मेरे मरने के बाद ही तुम यह झंडा थामना।"

फुलेनाप्रसाद के शरीर में सात गोलियाँ लग चुकी थीं, लेकिन वे गिरे नहीं। आठवीं गोली उनके मस्तक में लगी और वे गिर पड़े। श्रीमती फुलेनाप्रसाद ने अपनी साड़ी फाड़कर पति के सिर पर पट्टी बाँधी और झंडा लेकर थाने की तरफ बढ़ चलीं। उन्हें बचाने के लिए कई लोग उनके सामने आ गए। इस बीच तीन और लोग गोलियाँ खाकर शहीद हो गए; लेकिन थाने पर झंडा लगा दिया गया।

झंडा लगाने के बाद जब श्रीमती तारावती अपने पति के पास पहुँचीं तो वे देश को प्यारे हो चुके थे।

□

# ★ फुलेश्वरी

फुलेश्वरी नाम की एक बारह वर्ष की बालिका थी। वह 'ढोकाईजुली' नाम के एक गाँव के जुलूस का नेतृत्व कर रही थी। ढोकाईजुली का फासला असम के तेजपुर से सोलह मील था। फुलेश्वरी के नेतृत्व में वह जुलूस अपने गाँव के पुलिस थाने पर तिरंगा झंडा लगाने जा रहा था। जब जुलूस थाने पर पहुँच गया तो थानेवालों से कहा गया कि वे लोग बिना रोक-टोक के थाने के भवन पर तिरंगा झंडा लगा लेने दें। पुलिसवाले इसके लिए तैयार नहीं हुए। जुलूस ने बलपूर्वक अंदर जाना चाहा। पुलिस की गोली से सबसे पहले हाथ में तिरंगा झंडा लिये बारह

वर्ष की बालिका फुलेश्वरी शहीद हुई। गोलियाँ भी जारी रहीं और लोगों का मरना भी जारी रहा। देखते-ही-देखते वहाँ बीस लोग शहीद हो गए।

इस घटना का समाचार पाकर समीपस्थ फौज का एक दल भी वहाँ पहुँच गया। उन फौजियों ने बर्बरतापूर्वक लोगों को मारना-पीटना और घसीटना प्रारंभ कर दिया। लोगों को संगीनों से भी भेदा गया और स्त्रियों पर अत्याचार किए गए।

घटनास्थल से कुछ फासले पर एक ग्रामीण मेला लगा हुआ था। फौज का दस्ता वहाँ भी पहुँच गया और यह समझकर कि वे लोग प्रदर्शन के लिए एकत्र हुए हैं, उनपर गोलियाँ चला दीं। उस समूह के सोलह व्यक्ति मारे गए और सौ से अधिक लोग घायल हुए। मरनेवालों में छह स्त्रियाँ थीं और उनमें से एक तो गर्भवती थी। फौज के लोगों ने आसपास घूम-घूमकर भी लोगों को मारा।

□

## ★ बच्चूभाई नाइक ★ रमनलाल मोदी

गुजरात के सूरत नगर में भी 'भारत छोड़ो आंदोलन' की बहुत धूम रही और बहुत जोश-खरोश के साथ शासन विरोधी जुलूस निकाला गया। रमनलाल मोदी ने जुलूस में तो भाग लिया ही, उसने तोड़-फोड़ में भी भाग लिया। वह गिरफ्तार करके सूरत जेल में रखा गया। जेल में ही उसकी मृत्यु हो गई। जो लोग गिरफ्तार किए गए, उनमें बच्चूभाई नाइक भी था। उसे जेल में रखा गया; लेकिन गंभीर बीमारी के कारण उसे छोड़ दिया गया। २३ जनवरी, १९४३ को उसकी मृत्यु हो गई।

□

## ★ बलवंतराव आंबेकर

बलवंतराव आंबेकर की शिक्षा-दीक्षा केवल चौथी कक्षा तक ही हुई थी और वह ग्रामीण क्षेत्र का रहनेवाला कृषक ही था; लेकिन उसमें राष्ट्रीय चेतना कूट-कूटकर भरी हुई थी।

उसने महाराष्ट्र के वर्धा जिले के 'किनाला' ग्राम में अपने पिता श्री विनोबा आंबेकर से ही शिक्षा प्राप्त की थी; फिर भी वह वर्धा आने-जाने के कारण भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में काम करनेवालों के संपर्क में आया और वह भी कांग्रेस का सदस्य बन गया।

सन् १९४२ की क्रांति ने संपूर्ण वर्धा जिले को झकझोर दिया और स्वतंत्रता की माँग करते हुए एक विशाल जुलूस निकाला गया, जिसपर पुलिस ने लाठियों से प्रहार किए। बलवंतराव ने लाठियों की मार भी खाई और वह गिरफ्तार भी कर लिया गया। जेल में भी उसके साथ दुर्व्यवहार हुआ और वह बीमार पड़

गया। उसके इलाज का कोई प्रबंध नहीं किया गया और सन् १९४३ में जेल में ही उसने दम तोड़ दिया। उसने गांधीजी के 'करो या मरो' नारे को चरितार्थ करके दिखा दिया।

□

## ★ बाबूराय कहरी

बाबूराय कहरी उत्तर प्रदेश के देवरिया जिले का निवासी था। वैसे उसे राजनीति में कोई अधिक रुचि नहीं थी, लेकिन उसके दिल में उस समय विद्रोह जाग्रत हो गया, जब ब्रिटिश हुकूमत ने भारत के सभी नेताओं को गिरफ्तार करके विभिन्न जेलों में बंद कर दिया। बाबूराय ने एक जुलूस में सम्मिलित होकर विरोध प्रदर्शन किया और पुलिस की गोली खाकर शहीद हो गया।

बाबूराय कहरी श्री ठाकुरसिंह का पुत्र था।

□

## ★ बाबूराव कोकाटे

बाबूराव कोकाटे ने सन् १९४२ की क्रांति में खुलकर भाग लिया; लेकिन जब उस क्रांति को कुचल दिया गया तो भी बाबूराव की भावना नहीं कुचली जा सकी। जिस समय वह अगस्त क्रांति में कूदा था, उस समय इंटर कक्षा में पढ़ रहा था। अपने अध्ययन को तिलांजलि देकर ही वह क्रांति के अखाड़े में कूदा था। सन् १९४२ के आंदोलन का दमन हो जाने के पश्चात् भी वह भूमिगत क्रांतिकारियों से संबंध बनाए रहा और यथासंभव उनकी सहायता करता रहा। वह उनके लिए सुरक्षित प्रश्रय स्थलों की व्यवस्था भी करता था और उनके लिए
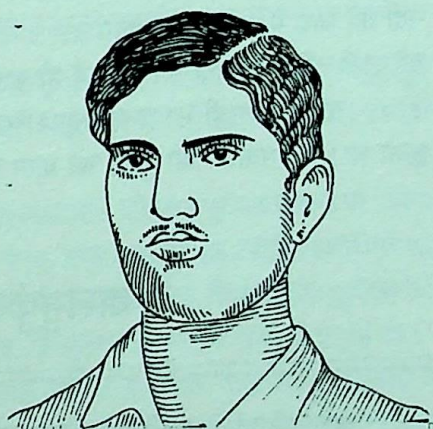
बाबूराव कोकाटे

आर्थिक व्यवस्थाएँ भी करता था।

बाबूराव कोकाटे पुलिस की नजरों में चढ़ चुका था। एक दिन जब वह साँगली के बाहर जा रहा था तो रात के अँधेरे में एक पुलिसवाले ने उसको गोली मार दी।

बाबूराव कोकाटे का जन्म १४ जुलाई, १९२० को महाराष्ट्र के साँगली जिले के 'पदवलवाड़ी' गाँव में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री धोंडी कोकाटे था।

□

## ★ बाबूराव जाधौ

बाबूराव जाधौ और उसके साथी क्रांतिकारियों ने बहुत ही साहसिक योजना बना डाली। वे सब लोग अगस्त क्रांति के अंतर्गत भयंकर तोड़-फोड़ के अपराध में गिरफ्तार किए जाकर साँगली जेल में रखे गए थे। बाबूराव जाधौ के साथियों की संख्या तेरह थी। उन लोगों ने योजना बना डाली कि जेल तोड़कर भागा जाए।

एक दिन एक सशस्त्र पहरेदार जेल का चक्कर लगा रहा था तो उन सबने उसकी बंदूक छीन ली और बंदूक के बल पर फाटक खुलवाकर वे लोग जेल से बाहर हो गए। खतरे की घंटी बजाई गई और भारी संख्या में पुलिस ने उन लोगों का पीछा किया। क्रांतिकारी लोगों के रास्ते में एक उफनती हुई नदी आ गई। वे लोग नदी की धारा में कूद पड़े। पुलिस दल ने गोलियाँ चलाईं। एक गोली बाबूराव जाधौ को लगी और वह नदी की धारा में ही शहीद हो गया।

बाबूराव जाधौ का जन्म मैसूर राज्य के बेलगौम जिले के 'शाहपुर' गाँव में हुआ था। वह मकानों की पुताई का काम करता था।

□

## ★ बालमुकुंद बिरसा

बालमुकुंद बिरसा को जेल में यातनाएँ भी दी गईं और उसके साथ अमानवीय व्यवहार भी किया गया। उसे बहुत खराब भोजन दिया जाता था और पीने को बिलकुल खारा पानी दिया जाता था। उसने अपने ऊपर होनेवाले अत्याचार तो सहन कर लिये, पर अपने साथी कैदियों पर किए जानेवाले अन्याय वह सहन नहीं कर
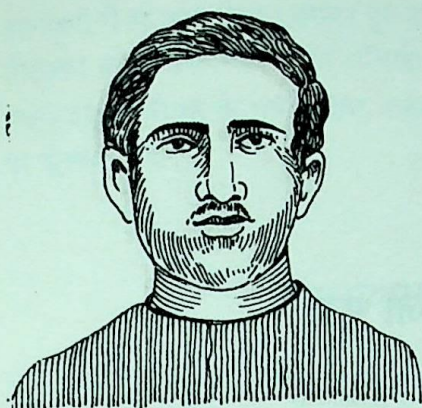
बालमुकुंद बिरसा

सका और जोधपुर जेल में उसने भूख हड़ताल प्रारंभ कर दी। अनशन के दिनों में भी जेल के अधिकारियों ने उसके साथ पाशविक व्यवहार किया। इस सबका परिणाम यह निकला कि १६ जून, १९४२ को अनशन की अवस्था में ही बालमुकुंद बिरसा की मृत्यु हो गई।

बालमुकुंद बिरसा का जन्म ५ अप्रैल, १९१० को राजस्थान के जोधपुर नगर में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री सुखदेव बिरसा था।

बालमुकुंद बिरसा 'राजस्थान प्रजा मंडल' का कार्यकर्ता था और वह एक खादी भंडार का संचालन भी कर रहा था। सन् १९४२ के आंदोलन में उसने सक्रिय भाग लिया और इसी कारण उसे गिरफ्तार किया गया था।

□

# ★ बालाजी पाराई ★ भाऊलाल परदेशी

सन् १९४२ के आंदोलन में महाराष्ट्र के आष्टी और चिमूर स्थानों ने बहुत नाम कमाया। बालाजी पाराई नागपुर जिले के चिमूर का ही रहनेवाला था। उसका जन्म सन् १९२७ में हुआ था।

अगस्त १९४२ में चिमूर के आंदोलनकारियों की भीड़ पुलिस स्टेशन पर तिरंगा झंडा लगाने के लिए बढ़ चली। पुलिस ने यह योजना बनाई कि आंदोलनकारियों को पुलिस स्टेशन पर पहुँचने के पहले ही किसी स्थान पर रोक लिया जाए। पुलिस की एक टुकड़ी डाक बंगले पर तैनात हो गई, जो पुलिस स्टेशन के रास्ते में पड़ता था।

डाक बंगले के पास आंदोलनकारियों को ललकारा गया और चेतावनी न मानने पर उनपर गोलियाँ चला दी गईं। पहली गोली बालाजी पाराई को लगी और वह शहीद हो गया। उसके साथ ही एक अन्य आंदोलनकारी भाऊलाल परदेशी को भी गोली लगी और वह भी शहीद हो गया।

□

# ★ भगवानजी भुसारी

भगवानजी भुसारी से जलगाँव की पुलिस परेशान थी। सन् १९४२ की अगस्त क्रांति में भगवानजी ने तोड़-फोड़ का बहुत काम किया था और उसके नाम से गिरफ्तारी का वारंट निकल चुका था। भगवानजी भुसारी ने पुलिस के साथ आँखमिचौनी खेलना प्रारंभ कर दिया। वह दिखाई देकर भी अदृश्य हो जाता था। वह भूमिगत होकर आंदोलन को और अधिक गति प्रदान कर रहा था।

इसी बीच महाराष्ट्र में जंगल सत्याग्रह भी छिड़ गया और भगवानजी भुसारी ने अपने गाँव 'अडगाँव' में इस सत्याग्रह का नेतृत्व किया। पुलिस ने हजारों सत्याग्रहियों पर धुआँधार गोलियाँ चलाईं। उसने भगवानजी को पहचानकर उसे गोलियों से भून डाला। भगवानजी की मृत्यु १८ अगस्त, १९४२ को पुलिस की गोलियों से हो गई। उसके दो अन्य साथी भी शहीद हुए।

भगवानजी भुसारी का जन्म सन् १९०७ में जलगाँव जिले के अडगाँव में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री सखारामजी भुसारी था। उसने मैट्रिक तक शिक्षा प्राप्त की थी।

□

# ★ भगवानदास ★ रामजी ★ रामशरण ★ रामसहाय

सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो आंदोलन' में एक ऐसा भी उदाहरण प्रस्तुत हुआ, जब एक परिवार के सभी सदस्यों को फाँसी का दंड दिया गया। यह परिवार उत्तर प्रदेश के जौनपुर जिले के 'कुरहा कसानाही' ग्राम के रामशरण का परिवार था।

रामशरण ने आंदोलन में अपना उग्र रूप दिखाया और तोड़-फोड़ तथा

आगजनी में भी भाग लिया। उसका पूरा परिवार ही इस काम में जुटा हुआ था। उसे गिरफ्तार करके उसपर हत्या का अभियोग लगाया गया। उसे फाँसी का दंड दिया गया। उसके परिवार के भगवानदास, रामसहाय और रामजी को भी फाँसी के फंदों पर झुलाया गया।

□

## ★ भगवानदीन मिश्र

उत्तर प्रदेश के हमीरपुर जिले के भगवानदीन मिश्र ने बहुत सक्रिय होकर अगस्त क्रांति में भाग लिया। उसने पूरे जिले में घूम-फिरकर लोगों में जागृति पैदा की और स्थान-स्थान पर जुलूसों का आयोजन कराया।

आखिर एक दिन पुलिस ने भगवानदीन मिश्र को गिरफ्तार कर लिया। लखनऊ कैंप जेल में उसकी मृत्यु हो गई।

भगवानदीन मिश्र हमीरपुर का निवासी था। उसके पिता का नाम श्री बिंदा मिश्र था।

□

## ★ भवनभाई पटेल उर्फ छोटाभाई पटेल

गुजरात के केरा जिले के नडियाद नगर में सन् १९२५ में जनमे भवनभाई पटेल के पिता का नाम श्री हाथीभाई पटेल था। भवनभाई ने पढ़ना छोड़कर एक प्राइवेट फर्म में काम करना प्रारंभ कर दिया था।

नडियाद नगर में जब १५ अगस्त, १९४२ को शासन विरोधी प्रदर्शन हुआ तो उसमें भवनभाई बड़े उत्साह के साथ सम्मिलित हुआ। पुलिस ने प्रदर्शनकारियों पर गोलियाँ चलाईं और उसके परिणामस्वरूप भवनभाई पटेल शहीद हो गया।

□

## ★ भवानीदयाल सिंह

भवानीदयाल सिंह अपनी पढ़ाई छोड़कर स्वतंत्रता आंदोलन में कूदा था। शासन के प्रति उसे इस कारण आक्रोश था कि उसने देश के सभी प्रमुख नेताओं को एक साथ गिरफ्तार करके जेलों में बंद कर दिया था। अपने कर्तव्य की पुकार पर भवानीदयाल सिंह अगस्त क्रांति को हवा देने लगा।

भवानीदयाल सिंह शासन विरोधी जुलूस में सम्मिलित हुआ और पुलिस की गोली खाकर वह शहीद हो गया। वह वाराणसी जिले के 'रामसिंहपुर' ग्राम का निवासी था।

□

## ★ भवानीप्रसाद

यह किसीका अनुमान नहीं था कि मध्य प्रदेश के अंतर्गत जबलपुर जिले के 'मझगवाँ' नाम के छोटे से ग्राम के धीवर परिवार का एक बगैर पढ़ा-लिखा व्यक्ति अगस्त क्रांति में अच्छा नाम कमाएगा।

भवानीप्रसाद को पता-भर लग जाए कि आज अमुक स्थान पर कोई राजनीतिक मीटिंग हो रही है, वह वहाँ अवश्य पहुँचता और सभी के विचार बहुत ध्यान से सुनता रहता था। उसे इस बात का दुःख था कि उसे भाषण करना नहीं आता। वह मन-ही-मन सोचा करता था कि क्या कभी मुझे भी कुछ करने का अवसर मिलेगा।

जब 'भारत छोड़ो आंदोलन' छिड़ा तो भवानीप्रसाद को एक अच्छा अवसर हाथ लग गया। उसने भूमिगत कार्यों में अच्छा हिस्सा लिया। एक दिन वह गिरफ्तार कर लिया गया। उसे जबलपुर जेल में रखा गया। जेल में उसे कई तरह की यातनाएँ दी गईं और इसका परिणाम यह निकला कि जब वह जेल से मुक्त किया गया तो उसमें जीवन शक्ति शेष नहीं रह गई थी। शीघ्र ही वह शहादत की राह पर चल पड़ा।

□

# ★ भवानी भट्टाचार्य

भवानी भट्टाचार्य

आयरलैंड के क्रांतिकारियों का निर्ममतापूर्वक दमन करने में ब्रिटिश ऑफीसर सर जॉन एंडरसन को खूब सफलता मिली थी। अंग्रेजों ने सोचा कि बंगाल के क्रांतिकारियों को सबक सिखाने के लिए एंडरसन को भारत बुलाया जाए। ऐसा ही किया गया। एंडरसन को बंगाल के गवर्नर की कुरसी पर बैठा दिया गया।

सर जॉन एंडरसन ने भारत में आते ही अपना दमनचक्र चलाना प्रारंभ कर दिया। कई नए ऑर्डिनेंस पास किए गए, कई कानूनों में परिवर्तन किया गया और जहाँ कुछ नहीं हो सकता था, वहाँ धाँधली को कानून के रूप में प्रयुक्त किया गया। बंगाल के क्रांतिकारी सोचने लगे कि यदि इसे अपने रास्ते से नहीं हटाया गया तो यह कोई काम नहीं बनने देगा। कई बार उसपर हाथ साफ करने के यत्न किए गए; पर सुरक्षा के कड़े प्रबंधों के कारण वे सफल नहीं हो सके।

क्रांतिकारियों ने निश्चय किया कि जब एंडरसन घोड़ों की रेस देखने दार्जिलिंग जाए तो वहाँ इसे देखा जाए। योजना बन गई। दो बार में दो-दो क्रांतिकारी दार्जिलिंग पहुँच गए। वहाँ एक पुष्प प्रदर्शनी भी लगी थी और एंडरसन उसे देखने वाला था। क्रांतिकारियों को वहाँ प्रवेश नहीं मिल सका, इस कारण वे एंडरसन पर हाथ साफ नहीं कर सके।

भवानी भट्टाचार्य और उसके एक साथी ने रेस के दो टिकट खरीदे और यूरोपियन फैशन के बढ़िया सूट पहनकर वे दर्शक दीर्घा में जा पहुँचे। वे उस स्थान तक पहुँच गए, जहाँ गवर्नर और जनता की दीर्घाओं को पृथक् करने के लिए एक नीची दीवार थी। ज्यों ही घुड़दौड़ प्रारंभ हुई और एंडरसन खड़ा हुआ कि भवानी भट्टाचार्य ने दीवार पर हाथ रखा तथा एंडरसन पर गोली दागी। उसका निशाना चूक गया। इस बीच एंडरसन के अंगरक्षकों ने भवानी भट्टाचार्य पर अपनी गोलियाँ छोड़ दीं और जैसे ही वह गिरा, उसे दबोच लिया गया।

उसके साथी ने जब एंडरसन पर गोली चलाने का प्रयत्न किया तो उसे भी काबू में कर लिया गया।

दोनों पर मुकदमा चला। भवानी भट्टाचार्य को ३ फरवरी, १९३५ को राजशाही जेल में फाँसी दे दी गई।

□

## ★ भागीरथ रथ

भागीरथ रथ का जन्म मिदनापुर जिले के 'अलिनगिरि' ग्राम में हुआ था। सन् १९४२ के आंदोलन में उन्होंने अपने ग्राम के शासन विरोधी जुलूस का नेतृत्व किया और पुलिस की गोली से शहीद हुए। वे १३ अक्तूबर, १९४२ को शहीद हुए।

□

## ★ भारतसिंह

भारतसिंह को राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने की प्रेरणा अपने पिता श्री कौरसिंह से मिली थी। वे स्वयं बहुत सक्रिय राजनेता रह चुके थे। उनका पुत्र उनसे भी आगे निकल गया।

सर्वप्रथम भारतसिंह ने १९३० के 'सविनय अवज्ञा आंदोलन' में भाग लिया। उसके पश्चात् वह सन् १९४०-४१ के व्यक्तिगत सत्याग्रह द्वारा शासन को परेशान करता रहा। १९४२ के 'भारत छोड़ो आंदोलन' में तो वह और भी अधिक सक्रिय हो उठा। उसे गिरफ्तार किया गया और छह महीने की सजा सुनाकर जेल में बंद कर दिया गया। जेल में ही भारतसिंह की मृत्यु हो गई।

भारतसिंह का जन्म उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले के 'झपकोली' नामक स्थान पर हुआ था।

□

# ★ भूपेंद्रनाथ सान्याल
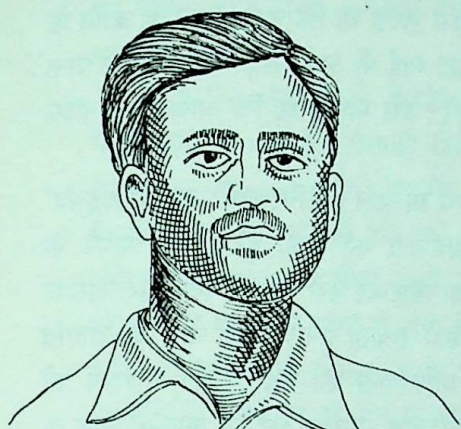
भूपेंद्रनाथ सान्याल

''माँ! तुमने मुझे यही शिक्षा तो दी है न कि हमेशा सच बोलना चाहिए?''

''हाँ, बेटे! मैंने तुमसे बार-बार यही कहा है कि हमेशा ही सच बोलना चाहिए; पर आज तुमने मेरे सामने यह प्रश्न पूछा ही क्यों?''

''माँ! यदि सच बोलने से किसीका अनिष्ट होता हो तो क्या उस दशा में भी व्यक्ति को सच बोलना चाहिए?''

माँ के चेहरे पर किसी आशंका के भाव उदित हुए। उसने अपने आठ वर्षीय पुत्र भूपेंद्र के मन को कुरेदते हुए कहा—

''तुम पहेलियाँ क्यों बुझा रहे हो? क्या बात है, साफ-साफ क्यों नहीं कहते?''

''बात यह है, माँ, कि आज सुबह कुछ पुलिसवाले मुझे एक हलवाई की दुकान पर ले गए और मुझसे मिठाइयाँ खाने के लिए आग्रह करने लगे। वे मुझसे शचींद्र दा के विषय में भी बहुत-सी बातें पूछने लगे कि वे कहाँ-कहाँ जाते हैं और किस-किसके साथ रहते हैं।''

अपने बेटे का यह कथन सुनकर माँ के चेहरे के भाव बदले। कुछ आशंका और औत्सुक्य के भाव से उसने भूपेंद्र से पूछना प्रारंभ किया—

''हाँ, बेटे! तुमने अपने बड़े भाई के विषय में उन लोगों को क्या बताया और तुमने कौन-कौन-सी मिठाइयाँ खाईं?''

''माँ! मैंने कोई मिठाई नहीं खाई। मैं किसी दूसरे के द्वारा दी गई वस्तुएँ थोड़े ही खाता हूँ! और हाँ, मैंने उन पुलिसवालों से कह दिया कि आप लोगों को मेरे बड़े भाई के बारे में जो कुछ जानना है, वह उन्हींसे पूछ लेना। वे आपको सबकुछ सच-सच बता देंगे, क्योंकि हमारी माँ ने हम सभी भाइयों को यही सिखाया है कि हमेशा सच बोलना चाहिए।''

''तुमने बहुत अच्छा किया, बेटे। यदि वे लोग फिर कभी तुमसे पूछताछ

करें तो तुम उन्हें मेरे पास आने के लिए कह देना।''

माँ ने अपने बेटे से जब ये बातें सुनीं तो अनिष्ट की एक अव्यक्त आशंका से उसका हृदय भयभीत हो गया। अपने ज्येष्ठ पुत्र शचींद्रनाथ सान्याल की गतिविधियों पर उसे पहले से ही संदेह हो रहा था। उसे संदेह था कि उसका शचींद्र क्रांति के पथ पर जा रहा है। उसे भय हुआ कि छोटा भाई भी अपने बड़े भाई से प्रेरणा प्राप्त करके कहीं उसी पथ का अनुसरण न करे। उसे मालूम था कि आजकल बनारस क्रांतिकारियों का गढ़ बना हुआ है।

हुआ वही, जो होना था। शचींद्रनाथ सान्याल की गिरफ्तारी 'बनारस षड्यंत्र' के अंतर्गत हुई और उसे आजन्म कालापानी की सजा हुई। आम माफी के फलस्वरूप कुछ वर्ष कालापानी की सजा काटकर उसे मुक्ति मिली; पर जिसपर क्रांति का रंग चढ़ गया हो, वह उतर कैसे सकता है। काकोरी केस के अंतर्गत शचींद्रनाथ सान्याल को फिर आजन्म कालापानी का दंड मिला। आश्चर्य की बात तो यह थी कि उसके छोटे भाई भूपेंद्रनाथ सान्याल को भी काकोरी केस के अंतर्गत पाँच वर्ष के कठोर कारावास का दंड मिला। एक अन्य भाई जितेंद्रनाथ सान्याल भी उसी पथ पर चल पड़ा।

□

## ★ भैयाजी खराबे
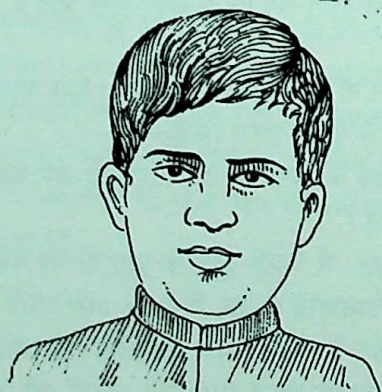
भैयाजी खराबे

महाराष्ट्र के नागपुर जिले के 'बरोडा' स्थान पर सन् १९२४ में जब एक सामान्य परिवार में एक बालक का जन्म हुआ, तो परिवार में बहुत खुशियाँ मनाई गईं। परिवार के पुरोहित ने जन्मपत्रिका बनाते हुए कहा कि यह बालक देश-भर में अपना नाम करेगा। बालक के माता-पिता को यह सुनकर आश्चर्य भी हुआ और हर्ष भी। वे लोग बड़े चाव से उसका लालन-पालन करने लगे और उसकी पढ़ाई में अपनी हैसियत से अधिक खर्च करने लगे। बालक को 'भैयाजी' कहकर पुकारा जाता था।

यही उसका नाम पड़ गया। बालक पढ़ने में बहुत कुशाग्र बुद्धि का था। सभी कक्षाओं की पढ़ाई में वह अच्छे अंकों से उत्तीर्ण होने लगा। माता-पिता को विश्वास हो गया कि उनका पुत्र अवश्य ही देश में नाम कमाएगा। उसने हाई स्कूल की परीक्षा बहुत अच्छे अंकों से उत्तीर्ण की और उच्च शिक्षा के लिए कॉलेज में भरती हो गया।

वे दिन आजादी के आंदोलन के थे। सन् १९४२ की क्रांति पूरे देश में फैल चुकी थी। बालक भैयाजी खराबे भी उसमें कूद पड़ा। वह अपने दल का नेतृत्व कर रहा था। पुलिस सारजेंट ने उसे आगे बढ़ने से रोका; पर वह युवक किसी अंग्रेज की धमकी को क्यों मानने लगा। झंडा हाथ में लेकर वह आगे बढ़ा। उसी समय एक गोली उसके सीने में समा गई। गिरने के पहले उसने झंडा अपने एक साथी के हाथों में थमा दिया। उसे संतोष था कि उसने राष्ट्रीय झंडा भूमि पर नहीं गिरने दिया। उसके इस साहस के चर्चे सभी अखबारों में हुए। सचमुच ही उसने देश में नाम कमाया

□

# ★ मंशासिंह

प्रथम विश्वयुद्ध के समय सन् १९१४ में मंशासिंह फौज में भरती होकर जर्मनी के मोरचे पर अंग्रेजों की तरफ से लड़ा था। उसके डीलडौल और मुखाकृति से ही उसके बल-विक्रम का अनुमान लगाया जा सकता था। लगभग साढ़े छह फीट का उसका कद और भरा हुआ बदन था। उसकी छाती शिला के समान चौड़ी थी। उसके कंधों को वृषभ-स्कंध की संज्ञा दी जा सकती थी। जब वह मोरचे पर जमकर अपनी बंदूक से आग उगलता था तो उसके साथ मीठे और रंगीन सपने भी देखा करता था। वह सोचता रहता था कि लड़ाई जीतने के बाद अंग्रेज हिंदुस्तान को आजाद कर देंगे। उसका एक सपना यह भी था कि वह पटियाला जिले के अपने गाँव में विशाल पैमाने पर खेती करेगा और गिन-गिनकर अपने उन रिश्तेदारों से बदला लेगा, जिन्होंने उसके पिता की मृत्यु के पश्चात् उसकी जमीन छीनकर उसे तथा उसकी माता को अनेक कष्ट दिए थे। इन्हीं सपनों में रंग भरने के लिए वह बहुत बहादुरी के साथ लड़ा। अंग्रेज जंग में जीत भी गए।

लड़ाई में अंग्रेजों की जीत के पश्चात् मंशासिंह के सपने साकार नहीं हुए। अंग्रेज अपने वादे से साफ मुकर गए। आजादी तो दूर की चीज थी, कुछ सुविधाएँ और अधिकार माँगनेवालों पर फिरंगी सरकार तरह-तरह के अत्याचार करने लगी। पंजाब खासतौर से उसके दमन का शिकार हुआ।

मंशासिंह का सीधा-सच्चा मन विद्रोही बन बैठा। उसने सोचा कि एक लड़ाई तो हमने अंग्रेजों की तरफ से लड़ी और अब दूसरी लड़ाई अपने देश के लिए अंग्रेजों से लड़नी है। वह अमृतसर की 'नौजवान भारत सभा' का सदस्य बन गया और गोपनीय क्रांतिकारी संगठन में भी उत्साह के साथ भाग लेने लगा। उस समय अमृतसर में जो क्रांतिकारी सक्रिय थे, उनमें दयानंदजी पटेल का नाम प्रमुख था। दयानंद का असली नाम दयाराम था। वे सूरत के रहनेवाले थे और बंगाल की अनुशीलन समिति की ओर से संगठन कार्य के लिए पंजाब भेजे गए थे।

दल के विस्तार और हथियारों की खरीद के लिए जब पैसे की समस्या सामने आई, तो मंशासिंह अपने घर गए और अपनी माँ के सारे जेवर बेचकर जो कुछ धन मिला, वह पार्टी को दे दिया। अभी पैसे की और भी जरूरत थी। राजनीतिक डकैतियों की योजना बनाई गई।

मंशासिंह ने 'मनोली' गाँव के जमींदार पूरनसिंह के घर डाका डालने की योजना बना डाली। उसी गाँव के एक व्यक्ति छज्जासिंह ने सारा भेद मंशासिंह को दे दिया। पूरनसिंह अंग्रेजों का पिट्ठू जमींदार था, जो किसानों पर तरह-तरह के अत्याचार करके खूब पैसा कमा रहा था। मंशासिंह ने डाके की योजना दयानंद पटेल के सामने रखी और कहा कि आप मुझे तीन साथी दे दीजिए, बाकी सब प्रबंध मैं कर लूँगा। दयानंद पटेल ने जो तीन साथी दिए, वे थे—भवानदत्त पांडेय, नरेंद्रनाथ पाठक और रामचंद्र भट्ट। एक व्यक्ति चंदनसिंह को मंशासिंह ने अपनी जिम्मेदारी से अपने साथ ले लिया।

सन् १९३० की दीपावली के पूर्व मंशासिंह के नेतृत्व में इस दल ने मनोली गाँव के जमींदार पूरनसिंह के घर डाका डाला। संघर्ष में पूरनसिंह मारा गया। माल-असबाब लेकर यह दल चंपत हो गया तथा रातोरात चालीस मील चलकर अंबाला कैंट की तरफ जा निकला। डाके की सूचना अंबाला पहुँच गई थी और वहाँ पुलिस की काफी सरगर्मी दिखाई दी। डाके का माल झाड़ियों में छिपाकर किसी प्रकार दल के सदस्य अमृतसर जा पहुँचे और दयानंद पटेल को पूरा ब्योरा सुना दिया। अगली रात मुसलिम वेश में दयानंद पटेल अंबाला कैंट पहुँचे और जिन झाड़ियों में लूट का माल छिपाया था, वह सावधानीपूर्वक निकाल लाए।

पुलिस ने जब मनोली डाके की जाँच-पड़ताल की तो उसने उसी छज्जा सिंह को पकड़ लिया, जिसने मंशासिंह को भेद दिया था। छज्जासिंह ने पुलिस को भी बता दिया कि क्रांतिकारियों के नेतृत्व में डाका डाला गया है। पुलिस मंशासिंह को नहीं पकड़ सकी। वह भागकर दिल्ली जा पहुँचा।

दिल्ली में मंशासिंह की भेंट शंभूनाथ आजाद से हुई। शंभूनाथ आजाद के निर्देशन में मंशासिंह ने राजस्थान से हथियार लाने और ले जाने का काम अच्छा किया। इसी समय मनोली डकैती का एक आरोपी चंदनसिंह गिरफ्तार हो गया और वह पुलिस का मुखबिर बन गया। उसने दिल्ली में ही रात को सोते हुए मंशासिंह को गिरफ्तार करा दिया।

गिरफ्तारी के पश्चात् मंशासिंह को अंबाला भेजा गया। उसपर तथा अन्य क्रांतिकारियों पर मुकदमा चलाया गया। फैसले में मंशासिंह को फाँसी तथा उसके साथियों में से नरेंद्रनाथ पाठक तथा रामचंद्र भट्ट को दस-दस वर्ष की सजा सुनाई

गई। शंभूनाथ आजाद को रिहाई दे दी गई।

चलते समय शंभूनाथ आजाद ने मंशासिंह से अंतिम भेंट की। फाँसी की सजा सुनाई जाने के बाद भी मंशासिंह को कोई दुःख नहीं था। वह स्वयं शंभूनाथ आजाद को समझाते हुए कहने लगा—

''मुझे फाँसी होगी, इस बात से आप दुःखी क्यों हो रहे हैं? मातृभूमि की आजादी के लिए कुर्बानियों का सिलसिला तब तक चलना चाहिए, जब तक कि आजादी हासिल न हो जाए। मुझे खुशी है कि मेरी जिंदगी देश के काम आ रही है। देशवासियों से कहना, वे मुझे भूल न जाएँ।''

मंशासिंह को अंबाला से दिल्ली पहुँचाया गया और दिल्ली की सेंट्रल जेल में ६ अप्रैल, १९३२ को सुबह पाँच बजे उस क्रांतिकारी को फाँसी के फंदे पर झुला दिया गया।

क्या हम लोग मंशासिंह की मंशा पूरी कर सके हैं? कितने लोग हैं, जिन्हें मंशासिंह की कुर्बानी मालूम है?

□

## ★ मगनलाल जैन

मगनलाल जैन की शिक्षा-दीक्षा अधिक नहीं हुई थी। मिडिल परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् वह अपने पिता श्री हीराचंद जैन के साथ दुकान पर बैठने लगा था। ये लोग वैसे रतलाम जिले के 'जावरा' नामक स्थान के रहनेवाले थे, लेकिन उनकी दुकान इंदौर में थी।

मगनलाल जैन का जन्म जावरा में सन् १९०६ में हुआ था। जिस समय अगस्त क्रांति छिड़ी, उस समय तक मगनलाल अपना परिवार बसा चुका था। परिवार की जिम्मेदारियों की चिंता न करते हुए वह आंदोलन में कूद पड़ा। पुलिस ने जब आंदोलनकारियों पर गोलियाँ चलाईं तो मगनलाल जैन घायल हो गया। घायल अवस्था में उसे गिरफ्तार कर लिया गया और मुकदमा चलने पर उसे जेल की हवा खानी पड़ी। जेल में ही मगनलाल जैन की मृत्यु हो गई।

□

# ★ मणींद्रनाथ बनर्जी

मणींद्रनाथ बनर्जी

महाभारत के युद्ध में श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को दिए गए उपदेश का पालन किया आधुनिक युग में एक क्रांतिकारी ने, जिसको आज लोग मणींद्रनाथ बनर्जी के नाम से जानते हैं। युद्ध के आदर्शों का पालन करते हुए अर्जुन ने अपने ही भाइयों पर बाण वर्षा की थी। उसी प्रकार मणींद्रनाथ बनर्जी ने भी अपने मामा पर गोली चलाकर यह दिखा दिया कि सत्य का पक्ष लेकर अपने किसी भी आत्मीय को युद्ध के लिए ललकारा जा सकता है।

मणींद्र एक खूबसूरत नौजवान था। उसके चेहरे पर बड़ी-बड़ी आँखें देखनेवाले की दृष्टि को बाँध लेती थीं। उसके सिर पर बहुत घने और घुँघराले बाल थे। उसकी वाणी में विनम्रता, मधुरता और प्रभावशीलता थी।

मणींद्र का जन्म बंगाल में हुआ था, पर उसकी शिक्षा-दीक्षा बनारस में हुई। जिस समय वह पढ़ रहा था, बनारस क्रांतिकारियों का गढ़ था। उसके दिल में क्रांतिकारियों के प्रति बहुत आदरभाव था। विशेष रूप से वह अपने सहपाठी क्रांतिकारी राजेंद्रनाथ लाहिड़ी से बहुत प्रभावित था।

यह वह समय था, जब कुछ क्रांतिकारियों ने काकोरी के निकट ट्रेन रोककर उसमें रखा अंग्रेजी खजाना लूट लिया। शासन ने भी क्रांतिकारियों को गिरफ्तार करने में पूरी तत्परता दिखाई। उनमें से चार क्रांतिकारियों को फाँसी और शेष को आजीवन द्वीपांतरवास तथा अन्य सजाएँ मिलीं। सरकार की ओर से क्रांतिकारियों को सजाएँ दिलाने में मुख्य भूमिका का निर्वाह किया था सी.आई.डी. विभाग के डिप्टी सुपरिटेंडेंट रायबहादुर बनर्जी ने, जो मणींद्रनाथ बनर्जी के मामा थे। क्रांतिकारियों का पक्ष लेकर मणींद्रनाथ बनर्जी अपने मामा को देशद्रोह का पुरस्कार देने के लिए कटिबद्ध हो गया।

उन्हीं दिनों बंगाल की एक प्रसिद्ध महिला ललिता देवी बनारस में विद्याध्ययन कर रही थीं। वे क्रांतिकारियों की हर प्रकार से सहायता करती रहती

थीं। बातचीत में मणींद्रनाथ बनर्जी के विचारों को वे ताड़ गईं और उसके संकल्प की पूर्ति के लिए उन्होंने उसे एक रिवॉल्वर दे दिया। मणींद्रनाथ बनर्जी को बस इसीकी तो आवश्यकता थी।

वह १२ जनवरी, १९२८ का दिन था। वह भारत के एक प्रसिद्ध कर्मयोगी स्वामी विवेकानंद का जन्मदिन भी था। उसी दिन अपने संकल्प की पूर्ति की मणींद्रनाथ बनर्जी ने। दिन-दोपहरी को जब उसके मामाजी रायबहादुर बनर्जी बाजार में से होकर जा रहे थे तो मणींद्रनाथ ने उन्हें टोककर कहा—

''मामाजी! काकोरी केस के क्रांतिकारियों को लंबी-लंबी सजाएँ और फाँसी का दंड दिलाने का पुरस्कार तो लेते जाइए।''

यह कहकर मणींद्रनाथ ने उनपर दो गोलियाँ चला दीं। उस समय उसके रिवॉल्वर में केवल दो ही गोलियाँ थीं। गोलियाँ रायबहादुर बनर्जी के पेट में लगीं। उन्हें तत्काल अस्पताल पहुँचाया गया। उनके पेट में से गोलियाँ निकाल ली गईं। वे बच गए।

मणींद्रनाथ बनर्जी घटनास्थल पर ही गिरफ्तार कर लिया गया। उसके रिवॉल्वर का पता नहीं चला। उसपर मुकदमा चला और उसे बारह वर्ष के कठोर कारावास का दंड देकर फतहगढ़ की सेंट्रल जेल में रखा गया।

मणींद्रनाथ बनर्जी की जेल की कहानी संघर्ष और बलिदान की कहानी है। फतहगढ़ की जिस जेल में मणींद्रनाथ को रखा गया था, उसमें काकोरी केस के मन्मथनाथ गुप्त और लाहौर केस के यशपाल भी थे। जेल की सजा भुगतते हुए मणींद्रनाथ को छह वर्ष हो चुके थे। इस बीच उसने कई प्रकार की जेल की आंतरिक सजाएँ भी भोगी थीं। जेल के नियमों का उल्लंघन करने पर कुछ अन्य सजाएँ भी कैदियों को मिलती हैं, जो बहुत कष्टदायक होती हैं।

मणींद्रनाथ बनर्जी, मन्मथनाथ गुप्त और यशपाल को जेल में 'बी' क्लास मिला हुआ था; अन्य राजनीतिक कैदियों को 'सी' क्लास। स्थिति का निर्माण इस प्रकार हुआ कि 'बी' क्लास के कैदियों को अनशन का सहारा लेना पड़ा। अनशन का मुख्य कारण यह था कि वे अपने 'सी' क्लास के साथियों को 'बी' क्लास दिलाना चाहते थे।

मणींद्रनाथ बनर्जी ने बड़े उत्साह के साथ अनशनकारियों का नेतृत्व किया। अनशन १४ मई, १९३४ को प्रारंभ किया गया था। गरमी के दिन थे। अनशन के कारण कई क्रांतिकारियों की हालत बिगड़ने लगी। यही तय हुआ कि अनशन स्थगित कर दिया जाए। २३ मई को अनशन स्थगित कर दिया गया।

अनशन स्थगित कर देने पर भी मणींद्रनाथ बनर्जी की हालत दिन-ब-दिन

खराब होती गई। उसे निमोनिया हो गया। जेल के अधिकारियों ने उसके इलाज में बहुत लापरवाही दिखाई। २० जून, १९३४ को उसकी हालत बहुत खराब हो गई। मन्मथनाथ गुप्त और यशपाल को उसकी कोठरी में पहुँचाया गया। अंतिम समय की दौड़-धूप हुई और आखिर उस महान् क्रांतिकारी मणींद्रनाथ बनर्जी ने अपने क्रांतिकारी साथी मन्मथनाथ गुप्त के वक्षस्थल पर अपना सिर रखकर इस दुनिया से बिदा ले ली। अपने साथियों के हितों के लिए जूझता हुआ वह क्रांतिवीर शहीदों की पंक्ति में जा खड़ा हुआ।

□

# ★ मतिलाल मल्लिक
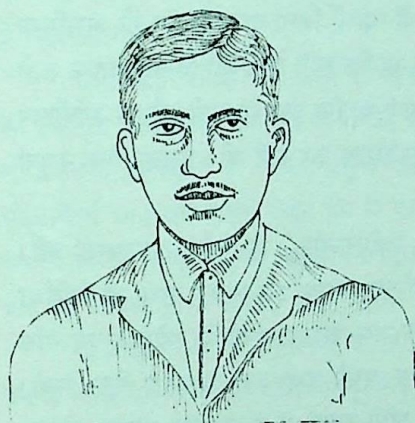
मतिलाल मल्लिक

तीन क्रांतिकारी बंगाल के 'देवभोग' गाँव के पास से रात्रि के समय जा रहे थे। गाँव के कुछ लोगों ने उन्हें देखा और उन्हें टोका। दो क्रांतिकारी तो आगे बढ़ते गए, लेकिन तीसरा व्यक्ति मतिलाल मल्लिक ठहर गया और उसने गाँववालों को समझाने का प्रयत्न किया। मतिलाल के समझाने का उनपर कोई असर नहीं हुआ तथा उन लोगों का संदेह और दृढ़ हो गया। गाँववालों ने उन तीनों को पकड़ने का प्रयत्न किया और उन्हें पकड़ भी लिया। एक क्रांतिकारी ने अपना हाथ मुक्त करके अपना रिवॉल्वर निकाल लिया और दो गोलियाँ छोड़ीं। मतिलाल मल्लिक ने भी चाकू निकालकर एक गाँववाले को घायल कर दिया। ग्रामीणों ने शोर मचाना प्रारंभ कर दिया। और भी गाँववाले निकल आए तथा क्रांतिकारियों का पीछा किया जाने लगा। मतिलाल मल्लिक पकड़ा गया; लेकिन उसके दो साथी भागने में सफल हो गए। क्रांतिकारियों की गोलियों से एक व्यक्ति घटनास्थल पर ही मर गया और दूसरा गंभीर रूप से घायल हो गया।

गाँववालों ने मतिलाल मल्लिक को खूब मारा-पीटा और उसे पुलिस के हवाले कर दिया। पुलिसवालों ने भी उसकी धुनाई की।

मतिलाल मल्लिक पर मुकदमा चला। कई दफाएँ उसपर लगाई गईं। उसे मृत्युदंड सुनाया गया। उसके द्वारा की गई अपील भी खारिज कर दी गई।

१५ दिसंबर, १९३४ को ढाका जेल में मतिलाल मल्लिक को फाँसी दे दी गई।

□

## ★ मदनचंद्र बर्मन ★ रामरतन दास

ब्रिटिश सरकार का प्रयत्न यह रहा कि अगस्त क्रांति असम के क्षेत्रों में न पहुँच सके। असम में उस समय काफी सेना पड़ी हुई थी और उस सेना की आपूर्ति नागरिक क्षेत्र से ही होती थी। सेना की खाद्य व्यवस्था के लिए बकरे-बकरियाँ और मुरगे-मुरगियाँ बड़े सस्ते दामों पर और कभी-कभी बिना दाम चुकाए ही असमिया लोगों से ले ली जाती थीं। सरकार को भय था कि यदि वहाँ की जनता भड़क उठी तो सेना को सहयोग नहीं मिलेगा। यही कारण था कि उस क्षेत्र की पुलिस आंदोलन को दबाने के लिए नए-नए हथकंडों का इस्तेमाल कर रही थी। उसका एक नमूना प्रस्तुत है।

पारचारकूची के लोगों ने ग्राम 'जोलाछोट' में एक आमसभा की। पुलिसवालों को इस आमसभा का पता नहीं चल पाया, इस कारण सभा तो निर्विघ्न समाप्त हो गई, लेकिन सभा समाप्त करके जब पारचारकूची के लोग अपने गाँव लौट रहे थे तो रास्ते में उन्हें पुलिस दारोगा अपने दल-बल के साथ मिल गया। पुलिस दारोगा ने उन्हें धमकाया कि आप लोग समूह में न चलकर अलग-अलग चलें। लोगों ने दारोगा की बात नहीं मानी और समूह बनाकर ही चलते रहे। दारोगा को क्रोध आ गया और उसने गोली चला दी। चौथी श्रेणी में पढ़नेवाला एक छोटा बालक मदनचंद्र बर्मन मारा गया। मरनेवाले दूसरे व्यक्ति थे 'सदारी' गाँव के रामरतन दास।

दारोगा को केवल इतने से ही संतोष नहीं हुआ। उसने काफी दूर तक गाँववालों का पीछा किया और अपनी गोलियों से कई व्यक्तियों को घायल किया। उसे इस बात का अफसोस था कि वह सभास्थल पर पहुँचकर अधिक लोगों को क्यों नहीं मार सका।

□

# ★ मनोरंजन भट्टाचार्य

बम निर्माण कार्य के लिए क्रांतिकारियों को धन की आवश्यकता हुई। विचार हुआ कि यह धन कहाँ से आए। निश्चित हुआ कि सरकार के खिलाफ लड़ने के लिए सरकार से ही पैसा छीना जाए।

पाँच नौजवान क्रांतिकारियों ने चारमुगुरिया पोस्ट ऑफिस पर आक्रमण कर दिया। उस समय पोस्ट मास्टर और उसके साथी लोग एक टेबल के आसपास बैठे हुए रुपए गिन रहे थे। उन क्रांतिकारियों ने पिस्तौल दिखाकर उन लोगों को पीछे हट जाने की चेतावनी दी। जब वे लोग पीछे हट गए तो बहुत फुरती से उन लोगों ने टेबल पर रखी हुई सिल्क उठा ली। उन्होंने बीमा किए हुए लिफाफे भी उठा लिये। सबकुछ समेटकर और बिना एक भी गोली चलाए वे लोग वहाँ से खिसक गए।

क्रांतिकारियों के चले जाने के पश्चात् पोस्ट ऑफिस के लोगों ने गाँववालों को इकट्ठा किया और क्रांतिकारियों का पीछा करना प्रारंभ किया। पीछा करनेवाले लोग उनके बिलकुल ही निकट पहुँच गए। क्रांतिकारियों में सबसे पीछे मनोरंजन भट्टाचार्य था। जब उसने देखा कि मैं पकड़ा जाने वाला हूँ, तो उसने एक पीछा करनेवाले को चाकू मारकर खत्म कर दिया और अन्य को घायल कर दिया। इसके बाद भी गाँववालों ने उनका पीछा करना नहीं छोड़ा।

क्रांतिकारियों की गोलियाँ समाप्त हो चुकी थीं। वे पाँचों गाँववालों द्वारा पकड़ लिये गए और जो माल वे लूटकर भागे थे, वह भी उनसे छीन लिया गया। उन्हें पुलिस के हवाले कर दिया गया।

क्रांतिकारियों पर मुकदमा चला। मनोरंजन भट्टाचार्य को फाँसी की सजा सुनाई गई। उसके अन्य चार साथियों में से प्रत्येक को सात वर्ष के कठोर कारावास का दंड दिया गया।

२२ अगस्त, १९३२ को बंगाल की बारीसाल जेल में मनोरंजन भट्टाचार्य को फाँसी दे दी गई। वह फरीदपुर जिले के 'ईदिलपुर' गाँव का रहनेवाला था। □

# ★ मन्मथनाथ गुप्त

मन्मथनाथ गुप्त

उस दिन बनारस में गंगा किनारे जब दो युवक मिले तो दोनों ने एक-दूसरे को तुरंत पहचान लिया। भला वे एक-दूसरे को क्यों न पहचानते! उन्होंने काम ही ऐसे किए थे कि सारा नगर उनको पहचानने लगा था। इन युवकों में एक का नाम था मन्मथनाथ गुप्त और दूसरे का नाम था चंद्रशेखर तिवारी, जो अब बनारस में 'चंद्रशेखर आजाद' के नाम से अधिक लोकप्रिय था। सन् १९२१ के असहयोग आंदोलन में ही दोनों ने वीरता दिखाई थी। आंदोलन में भाग लेने के परिणामस्वरूप चंद्रशेखर को चौदह बेंतों की सजा दी गई थी। जल्लाद का हर बेंत चंद्रशेखर के नंगे बदन पर इतने जोर से पड़ा था कि निशान बनने के साथ-साथ बदन की खाल भी उधड़ गई थी। इतना होने पर भी चंद्रशेखर ने कोई कमजोरी प्रदर्शित नहीं की थी। वह हर बेंत के प्रहार के पश्चात् 'महात्मा गांधी की जय' बोलता जा रहा था। बनारस के ज्ञानवापी मोहल्ले में बालक चंद्रशेखर आजाद का सार्वजनिक अभिनंदन हुआ था।

दूसरे युवक मन्मथनाथ गुप्त ने भी असहयोग आंदोलन में नाम कमाया था। जब वह एक जुलूस का नेतृत्व करने के लिए घर से चलने लगा तो उसके पिता श्री वीरेश्वर गुप्त ने कहा था—"जा तो रहे हो, पर क्या पुलिस के दुर्व्यवहार और उसकी यातनाओं को सह सकोगे?"

बालक मन्मथनाथ ने उत्तर दिया था—"पिताजी! आपके द्वारा दी गई राष्ट्रीय शिक्षा किस दिन काम में आएगी! आप विश्वास रखिए, मैं आपके नाम को बट्टा नहीं लगने दूँगा।"

असहयोग आंदोलन के जुलूस का नेतृत्व करने के कारण मन्मथनाथ गुप्त को तीन मास के कारावास का दंड मिला था।

उस दिन गंगा के किनारे जब वे दोनों नवयुवक मिले तो बड़े आत्मीय भाव से मिले। बातें करते हुए वे दूर तक निकल गए और एक-दूसरे के साथ काफी हद

तक खुल गए। आजाद ने अपने बदन पर पड़े बेंतों के निशान मन्मथनाथ गुप्त को दिखाते हुए कहा—

"मेरे बदन पर पड़े हुए बेंतों के ये निशान चीख-चीखकर कह रहे हैं कि इस वहशी सरकार पर प्रार्थनाओं और याचनाओं का कोई प्रभाव पड़ने वाला नहीं है; और जो सरकार बंदूकों, तोपों एवं संगीनों के बल पर भारत में टिकी हुई है, उसे आंदोलन तथा सत्याग्रह नहीं उखाड़ सकते।"

बात की पुष्टि करते हुए मन्मथनाथ गुप्त ने कहा—

"मैं स्वयं भी बहुत पहले इस नतीजे पर पहुँच चुका हूँ कि ईंट का जवाब पत्थर से दिए बिना हमारा उद्धार नहीं है। भारत की मुक्ति के लिए अहिंसात्मक तरीकों पर से मेरा विश्वास उठ गया है और मैंने तो किसी क्रांतिकारी संगठन में सम्मिलित होने का फैसला कर लिया है।"

"मित्र! ऐसा लगता है जैसे तुमने मेरे दिल की बात अपने मुँह से कह दी है। मैं स्वयं भी अपने लिए यह फैसला कर चुका हूँ।" आजाद ने इस प्रकार अपने मन की बात कह दी।

वे दोनों जाने कितनी देर तक वहाँ बातें करते; पर उन्हें अपनी भेंट इसलिए समाप्त कर देनी पड़ी कि उधर लोगों का आवागमन बढ़ने लगा और उस वातावरण में इस प्रकार की बातें नहीं की जा सकती थीं।

यह भी विचित्र ही संयोग था कि वे दोनों कुछ समय पश्चात् एक ही क्रांतिकारी दल के सदस्य के रूप में मिले। यह दल था शचींद्रनाथ सान्याल द्वारा गठित 'हिंदुस्तान प्रजातंत्र संघ', जिसके सैनिक विभाग के नेता रामप्रसाद बिस्मिल थे। रामप्रसाद बिस्मिल के नेतृत्व में चंद्रशेखर आजाद और मन्मथनाथ गुप्त ने कई साहसिक अभियानों में भाग लिया। वे दोनों ही दल के इतने भरोसेमंद और वीर सैनिक माने जाते थे कि जब रामप्रसाद बिस्मिल ने काकोरी ट्रेन डकैती की योजना बनाई तो उसमें मन्मथनाथ गुप्त और चंद्रशेखर आजाद को भी अनिवार्य रूप से सम्मिलित किया गया।

काकोरी ट्रेन डकैती के पश्चात् मन्मथनाथ गुप्त और चंद्रशेखर आजाद एक-दूसरे से अलग हो गए। मन्मथनाथ गुप्त २६ दिसंबर, १९२५ को पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लिये गए और चंद्रशेखर आजाद को पुलिस कभी गिरफ्तार नहीं कर सकी। काकोरी ट्रेन डकैती के समय अपने एक साथी को छोड़कर मन्मथनाथ गुप्त सबसे कम उम्र के थे। उनका जन्म बनारस में ७ फरवरी, १९०८ को हुआ था।

गिरफ्तारियों के पश्चात् काकोरी ट्रेन डकैती के अभियुक्तों को लखनऊ जेल में रखकर उनपर मुकदमा चलाया गया। सभी लोगों का अनुमान था कि जिन लोगों

को फाँसी की सजाएँ मिलेंगी, उनमें मन्मथनाथ गुप्त भी एक होंगे। लोगों के अनुमान का आधार यह था कि मन्मथनाथ गुप्त ने दल द्वारा आयोजित सभी अभियानों में बढ़-चढ़कर भाग लिया था और दल की रीति-नीति के निर्धारण में भी उनकी प्रमुख भूमिका रहती थी। जब काकोरी केस का फैसला सुनाया गया तो अल्पायु के कारण ही मन्मथनाथ गुप्त को चौदह वर्षों के कठोर कारावास का दंड दिया गया था। इस फैसले को सुनकर पुलिस भी बौखला गई और उसने मन्मथनाथ गुप्त की सजा बढ़वाने के लिए ऊपर की अदालत में अपील भी की; पर उसे मुँह की खानी पड़ी।

जेल जीवन का उपयोग मन्मथनाथ गुप्त ने गहन अध्ययन और नई भाषाएँ सीखने में किया। गंभीर स्वभाव का होने के कारण उनके क्रांतिकारी साथी उनका बहुत सम्मान करते थे। लिखने का अच्छा अभ्यास उन्हें विद्यार्थी जीवन से ही था। उनका गांधीजी के साथ पत्र व्यवहार भी हो चुका था, जिसे गांधीजी ने 'यंग इंडिया' पत्र में प्रकाशित किया था।

मन्मथनाथ गुप्त ने जेल में छियालीस दिन का लंबा अनशन भी किया और गणेशशंकर विद्यार्थी के विशेष अनुरोध से ही उन्होंने अपना अनशन तोड़ा। सन् १९३७ में जेल जीवन से मन्मथनाथ गुप्त को मुक्ति मिली; पर सन् १९३९ में युद्ध विरोधी व्याख्यान के कारण उन्हें फिर गिरफ्तार कर लिया गया और १९४६ में ही उन्हें फिर मुक्ति मिली। कुल मिलाकर अपने जीवन के बहुमूल्य बीस वर्ष मन्मथनाथ गुप्त ने जेल के अंदर व्यतीत किए।

मन्मथनाथ गुप्त की दर्जनों पुस्तकें विभिन्न विषयों पर छप चुकी हैं। क्रांति के संदर्भ में उनके ग्रंथ बहुत प्रामाणिक माने जाते हैं।

□

## ★ मल्लप्पा इत्तनवार
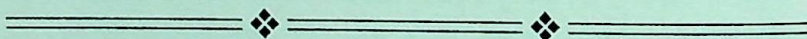
मल्लप्पा इत्तनवार को अगस्त क्रांति में सक्रिय रूप से भाग लेने के कारण १९४३ के अप्रैल मास में गिरफ्तार किया गया। वह भूमिगत हो गया था। उसे छह महीने के कारावास का दंड सुनाया गया। २२ जुलाई, १९४३ को जेल में ही उसकी मृत्यु हो गई।

मल्लप्पा इत्तनवार का जन्म मैसूर राज्य के बेलगौम जिले के 'हीरेकुंबी' स्थान पर हुआ था। वह एक कृषक पुत्र था।

□

## ★ महादेव तेली

मध्य प्रदेश का बैतूल जिला अगस्त क्रांति में अग्रणी रहा। इस जिले के कई व्यक्ति 'भारत छोड़ो आंदोलन' में शहीद हुए। महादेव तेली भी इसी जिले का रहनेवाला था। वह 'प्रभातपट्टन' ग्राम का निवासी था। अगस्त क्रांति का जो जुलूस निकला, उसमें महादेव ने बड़े उत्साह के साथ भाग लिया। जब पुलिस ने गोली चलाने की धमकी दी, तो वह जानबूझकर अग्रिम पंक्ति में पहुँच गया। उसपर गोलियों की बौछार पड़ी और वह घटनास्थल पर ही शहीद हो गया।

□

## ★ महादेव रैवतकर

महादेव रैवतकर भी बैतूल जिले के 'प्रभातपट्टन' ग्राम का निवासी था। उसके पिता का नाम श्री गोट्या रैवतकर था। खेती-किसानी और तेल बेचने का काम वे करते थे।

महादेव ने 'भारत छोड़ो आंदोलन' में भाग लिया और १७ अगस्त, १९४२ को पुलिस की गोलियों का शिकार होकर शहादत प्राप्त कर ली।

□

## ★ महेंद्र गोप

बिहार के भागलपुर जिले में सत्याग्रही आंदोलन ने पूरा क्रांतिकारी रूप धारण कर लिया। उस क्रांतिकारी दल का नेतृत्व परशुराम बाबू कर रहे थे। उनके पश्चात् उस दल का नेतृत्व सियाराम बाबू के हाथों में पहुँच गया। महेंद्र गोप का दल भी सियाराम बाबू के दल में मिल गया। अब तक दल बहुत प्रचंड हो गया। पुलिसवाले इस दल का नाम सुनकर काँपने लगते थे। वे लोग पुलिस के हथियार छीन लेते थे और उनकी पिटाई भी करते थे।

पुलिस ने किसी प्रकार महेंद्र गोप को गिरफ्तार कर लिया। अदालत में मुकदमा चला और महेंद्र गोप को फाँसी का दंड सुनाया गया। महेंद्र गोप पहले भी

जेल की सजा काट चुका था।

बिहार के प्रसिद्ध कांग्रेसी नेता बाबू राजेंद्रप्रसाद ने भी महेंद्र गोप को फाँसी से बचाने का बहुत प्रयत्न किया; लेकिन उनके प्रयत्न सफल नहीं हो सके। महेंद्र गोप को फाँसी दे दी गई।

□

## ★ मिश्रीलाल जंबर

महाराष्ट्र के जलगाँव जिले में मिश्रीलाल जंबर ने ब्रिटिश हुकूमत को चुनौती दे दी। उसने कह दिया कि मेरे जिले में लोगों पर कहीं भी अत्याचार हुआ तो मैं उसका प्रतिरोध करूँगा। अपने गाँव 'शेंदुरनी' में तो उसकी सेवाएँ सभी को हमेशा ही उपलब्ध रहती थीं।

जब सन् १९४२ की अगस्त क्रांति प्रारंभ हुई तो मिश्रीलाल को अपनी क्षमताओं के उपयोग के लिए अच्छा अवसर हाथ लग गया। उसने भारत की आजादी की माँग के लिए लोगों को उकसाया और एक दिन प्रभावशाली प्रदर्शन किया।

पुलिस ने प्रदर्शनकारियों पर गोलियाँ चलाईं और घायल हो जाने के कारण मिश्रीलाल को गिरफ्तार कर लिया गया। अदालत में मुकदमा चला और उसे तेरह महीने के कठोर कारावास का दंड दे दिया गया।

मिश्रीलाल जंबर ने सन् १९४३ में जेल में ही दम तोड़ दिया।

□

## ★ मुंशी गोंड

मुंशी गोंड एक मजदूर का बेटा था। उसके पिता का नाम श्री चब्बी था। मुंशी का जन्म सन् १९२२ में मध्य प्रदेश के बैतूल जिले के 'सीताखेड़ा' ग्राम में हुआ था।

मुंशी गोंड ने 'भारत छोड़ो आंदोलन' में स्वयं को केवल नारेबाजी तक सीमित नहीं रखा। वह पटरियाँ उखाड़ने और तार काटने में दक्ष माना जाता था। पुलिस उसे बहुत खतरनाक व्यक्ति मानती थी। आखिर एक दिन वह गिरफ्तार कर

लिया गया और उसे चार वर्ष के कठोर कारावास का दंड सुना दिया गया।

मुंशी गोंड इतनी लंबी अवधि तक जेल में रहने के लिए वहाँ नहीं पहुँचा था। छिंदवाड़ा की जेल में यातनाओं के फलस्वरूप सन् १९४३ में ही उसकी मृत्यु हो गई।

□

# ★ मुकुंदीलाल गुप्ता

इटावा जिले के 'औरैया' नामक स्थान पर एक युवक अपना अच्छा व्यापार चला रहा था। उसका नाम था मुकुंदीलाल गुप्ता। मुकुंदीलाल गुप्ता का छोटा भाई उसी नगर में एक विद्यालय में कक्षा छह में पढ़ रहा था। एक दिन उसने अपने भाई मुकुंदीलाल गुप्ता से कहा—

"दादा! हमारे मास्टरजी कह रहे थे कि अंग्रेजी राज के विरुद्ध शीघ्र ही भारतवासी लड़ाई छेड़ने वाले हैं।"

"और क्या कह रहे थे मास्टरजी?"

"वे कह रहे थे कि अंग्रेजों के खिलाफ छिड़नेवाली लड़ाई में हर भारतवासी को कुछ-न-कुछ सहयोग देना चाहिए। जो खुद लड़ सकते हों, वे लड़ें और जो नहीं लड़ सकते, वे रुपए-पैसे देकर देश की सहायता करें।"

"क्या सचमुच वे ऐसा कह रहे थे?"

"हाँ, दादा, वे बहुत जोर देकर यह बात कह रहे थे। अच्छा, आप बताइए कि इस लड़ाई में आप किस प्रकार देश की सहायता करेंगे?"

"यह बात मैं तेरे मास्टरजी से पूछ लूँगा।"

"क्या आप हमारे मास्टरजी से मिलने आएँगे?"

"हाँ, मैं कल ही उनसे मिलने पहुँचूँगा।"

और सचमुच ही मुकुंदीलाल गुप्ता अगले दिन उस विद्यालय के प्रधानाध्यापक पं. गेंदालाल दीक्षित से मिलने जा पहुँचे। परिचय हुआ और बातचीत चल पड़ी—

"मास्टरजी, क्या भारतीय लोग अंग्रेजों के विरुद्ध कोई लड़ाई छेड़ने वाले हैं?"

"आपको यह किसने बताया?"

"यह बात मेरे छोटे भाई ने मुझसे कही, जो आपका विद्यार्थी है। उसने यह भी कहा कि यह बात हमारे मास्टरजी कह रहे थे।"

''हाँ, मैं कक्षा में विद्यार्थियों को बता रहा था कि जब से अंग्रेजों ने भारत पर अधिकार जमाया है, तब से उन्हें हटाने के लिए भारतवासी कोई-न-कोई आंदोलन या लड़ाई छेड़ते ही रहे हैं।''

''आप बच्चों से इस प्रकार की बातें करते हैं, क्या आप यह नहीं सोचते कि बच्चे ये बातें अपने घरवालों से कहेंगे और बात फैलेगी? अगर कुछ बच्चे पुलिसवालों के हुए तो यह बात पुलिस के कानों तक भी पहुँच सकती है। क्या पुलिस तंग नहीं करेगी?''

''यह बात मैं नहीं सोच पाया था, मुकुंदीलालजी, कि बच्चों के माध्यम से बात पुलिस तक पहुँच सकती है; पर यह बात आपके दिमाग में कैसे आई?''

''मैं कुछ इस प्रकार का साहित्य पढ़ा करता हूँ। इसीलिए मैंने सोचा कि क्रांतिकारियों को इतनी सावधानी तो रखनी ही चाहिए कि वे बच्चों के सामने इस प्रकार की बातें न करें।''

''तो क्या आप क्रांतिकारी आंदोलन में कुछ रुचि रखते हैं?''

''रुचि तो क्या रखूँगा, पर इस प्रकार का साहित्य पढ़ने में कुछ आनंद आता है। अच्छा मास्टरजी, अब मैं चलता हूँ। आप भी कभी मेरे घर आने की कृपा कीजिए।''

मुकुंदीलाल गुप्ता पं. गेंदालाल दीक्षित से मिलकर चले गए। वे एक-दूसरे से मिलते रहे और वे एक-दूसरे से खुल भी गए। वे दोनों ही एक ऐसे दल के क्रांतिकारी थे, जिसका संबंध किसी अन्य क्रांतिकारी दल के साथ नहीं था। इस दल ने स्वयं अपना कार्यक्रम बनाया और अंग्रेजी साम्राज्य के विरुद्ध कोई बड़ा कदम उठाने के पहले कुछ राजनीतिक डकैतियों का आयोजन किया। दल के एक सदस्य को एक धनिक व्यक्ति के विषय में जानकारी लाने के लिए भेजा गया। योजना यह थी कि जानकारी मिलने पर उस धनी व्यक्ति के घर डाका डाला जाएगा। जो व्यक्ति यह जानकारी लाने के लिए नियुक्त किया गया था वह पुलिस से जाकर मिल गया और उसने डाके की योजना पुलिस को बता दी। पुलिस ने गिरफ्तारियाँ प्रारंभ कर दीं और सन् १९१८ में क्रांतिकारियों के विरुद्ध जो मुकदमा चला, वह 'मैनपुरी षड्यंत्र कांड' कहलाया। मैनपुरी षड्यंत्र कांड में मुकुंदीलाल गुप्ता को छह वर्ष के कठोर कारावास का दंड मिला। बड़े हौसले के साथ मुकुंदीलाल गुप्ता ने छह वर्ष की सजा काटी।

जब छह वर्ष के कठोर कारावास की सजा मुकुंदीलाल गुप्ता ने काट ली तो उन्होंने सोचा कि अपने नगर से दूर जाकर कहीं रहना चाहिए और नए सिरे से जीवन प्रारंभ करना चाहिए। व्यापार का अनुभव तो था ही, झाँसी पहुँचकर मुकुंदीलाल

गुप्ता ने अपना स्वतंत्र व्यापार स्थापित कर लिया।

मुकुंदीलाल गुप्ता यह सोचकर झाँसी पहुँचे थे कि क्रांतिकारी गतिविधियों से दूर रहेंगे; पर उन्हें क्या पता था कि झाँसी उस समय क्रांतिकारियों का गढ़ बना हुआ था। और किसीको मालूम हो, न हो, पर क्रांतिकारियों को तो मालूम था कि मुकुंदीलाल गुप्ता 'मैनपुरी षड्यंत्र कांड' में छह वर्ष के कठोर कारावास का दंड भुगत चुके हैं। उत्तर प्रदेश के क्रांतिकारी संगठन की ओर से उस समय झाँसी में इस प्रकार के युवकों की तलाश के लिए शचींद्रनाथ बख्शी को नियुक्त किया गया था। तेजवंत नौजवान शचींद्रनाथ बख्शी की पैनी दृष्टि से बचकर नहीं रह सकते थे। वे स्वयं उस समय झाँसी में नगरपालिका कार्यालय में नौकरी कर रहे थे और एक व्यायामशाला भी चला रहे थे। भगवानदास माहौर, सदाशिवराव मलकापुरकर और विश्वनाथ वैशंपायन उनके दल में सम्मिलित हो चुके थे। मुकुंदीलाल गुप्ता को भी 'हिंदुस्तान प्रजातंत्र संघ' का सदस्य बना लेने में शचींद्रनाथ बख्शी को कोई कठिनाई नहीं हुई।

'हिंदुस्तान प्रजातंत्र संघ' की कार्यकारिणी की एक बैठक ७ अगस्त, १९२५ को शाहजहाँपुर में आयोजित की गई। जो क्रांतिकारी इस बैठक में सम्मिलित हुए, उसमें मुकुंदीलाल गुप्ता भी एक थे। दल के निर्णय के अनुसार ९ अगस्त, १९२५ को रामप्रसाद बिस्मिल के साथ मुकुंदीलाल गुप्ता डाउन ट्रेन सहारनपुर-लखनऊ पैसेंजर में सवार हुए। उनके कुछ साथियों ने लखनऊ के निकट काकोरी और आलमपुर स्टेशन के बीच जंजीर खींचकर ट्रेन रोक दी। मुकुंदीलाल गुप्ता को यह काम दिया गया कि वे अपने अन्य साथियों के साथ फायर करते रहें और मुसाफिरों को गाड़ी से नीचे उतरने से रोकते रहें। क्रांतिकारी लोग लोहे का संदूक तोड़कर अंग्रेजी खजाना लूट ले गए। ब्रिटिश सरकार के सामने काकोरी ट्रेन डकैती की घटना एक बहुत बड़ी चुनौती बन गई। खुफिया विभाग के अफसर मि. हर्टन ने संदिग्ध लोगों की एक सूची बना डाली और सरकार के सामने प्रस्ताव रखा कि उन सभी व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया जाए। कुछ विवाद के पश्चात् मि. हर्टन की बात मान ली गई और संदिग्ध व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया गया। मि. हर्टन का अनुमान सही निकला कि गिरफ्तारी के पश्चात् कुछ प्रमाण हमें अपने आप मिल जाएँगे और तब उन प्रमाणों के आधार पर ही हम असली अपराधियों को भी गिरफ्तार कर सकेंगे।

गिरफ्तार व्यक्तियों में से वीरभद्र तिवारी मुखबिर बन गया। उसके द्वारा तथा बनवारीलाल के द्वारा दी गई सूचनाओं के आधार पर २६ सितंबर, १९२५ को एक साथ सभी स्थानों पर छापे मारकर बहुत से क्रांतिकारियों को गिरफ्तार कर लिया

गया। केवल तीन व्यक्ति गिरफ्तार नहीं हो सके। वे थे—शचींद्रनाथ बख्शी, अशफाक उल्ला खाँ और चंद्रशेखर आजाद। जब काकोरी केस का फैसला सुना दिया गया तो उसके बाद शचींद्रनाथ बख्शी बिहार में भागलपुर से और अशफाक उल्ला खाँ दिल्ली से गिरफ्तार किए गए। चंद्रशेखर आजाद कभी गिरफ्तार नहीं किए जा सके। वे २७ फरवरी, १९३१ को इलाहाबाद के अल्फ्रेड पार्क में पुलिस के साथ युद्ध करते हुए शहीद हो गए।

मुख्य काकोरी केस अठारह महीने चला। उसका फैसला सेशन कोर्ट के जज मि. हेमिल्टन द्वारा ६ अप्रैल, १९२७ को सुनाया गया। इस फैसले के अनुसार मुकुंदीलाल गुप्ता को आजीवन कालापानी का दंड दिया गया। आजीवन कारावास की अवधि समाप्त होने पर जब मुकुंदीलाल गुप्ता मुक्त हुए तो फिर वे अपने पूरे उत्साह के साथ सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो आंदोलन' में कूद पड़े। इस आंदोलन में भाग लेने के फलस्वरूप उन्हें फिर सात वर्ष के कठोर कारावास का दंड दिया गया। जीवन-भर यातनाएँ झेलने और संघर्ष करने के पश्चात् भी वह महान् क्रांतिकारी झुका नहीं। जेल जीवन ने उसके शरीर को तो तोड़ दिया, पर वह उसके मन को नहीं तोड़ सका। उसके बाद उसे अपने जीवनयापन के लिए संघर्ष करना पड़ा।

□

## ★ मेंहगूसिंह

आंदोलनकारियों की एक उग्र भीड़ ने वाराणसी जिले के थानपुर पुलिस स्टेशन पर हमला बोल दिया। वे लोग उस थाने के हथियारों को लूटकर कैदियों को छुड़ाना चाहते थे। पुलिस ने आंदोलनकारियों पर गोलियाँ चला दीं। मेंहगूसिंह घटनास्थल पर ही शहीद हो गया।

मेंहगूसिंह वाराणसी का निवासी था।

□

## ★ मोकल भावसार

महाराष्ट्र के जलगाँव जिले के 'अमलनेर' नामक स्थान पर 'प्रताप मिल' के मजदूरों ने २७ अगस्त को एक आमसभा की। इस आमसभा में भारी संख्या में मिल

के श्रमिक सम्मिलित हुए। वातावरण इतना उत्तेजक बन गया कि पुलिस को यह आशंका हुई कि आंदोलनकारी मिल पर आक्रमण करके तोड़-फोड़ करने वाले हैं। वे ऐसा कर सकें, इसके पहले ही पुलिस ने श्रमिकों की भीड़ पर अंधाधुंध गोलियाँ चलाना प्रारंभ कर दिया। वहाँ जलियाँवाला बाग का दृश्य उपस्थित कर दिया गया। पुलिस की गोलियों से सत्तर व्यक्ति घायल हुए और आठ मारे गए। मरनेवालों में मोकल भावसार भी था।

मोकल भावसार का जन्म 'अमलनेर' में सन् १८८७ को हुआ था। उसके पिता का नाम श्री जानकीराम था। चौथी कक्षा से पढ़ाई छोड़कर मोकल ने मिल में काम करना प्रारंभ कर दिया था।

□

## ★ मोहन

उत्तर प्रदेश के गाजीपुर जिले के नंदपुर रेलवे स्टेशन पर जिन आंदोलनकारियों ने आक्रमण किया, उनमें मोहन भी एक था। उसने सक्रिय भूमिका का निर्वाह किया था। पुलिस ने आंदोलनकारियों पर गोलियाँ चलाईं और मोहन घटनास्थल पर ही शहीद हो गया। मोहन 'सर्वंदो' ग्राम का निवासी था।

□

## ★ मोहनकिशोर नामदास ★ मोहित मैत्रेय

सभी क्रांतिकारी बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे थे कि मटके में से किन दो नामों की परचियाँ निकलती हैं। हर क्रांतिकारी चाह रहा था कि मेरे नाम की परची निकल आए। परचियों पर अपने नाम देखने के लिए बड़ी प्रतिस्पर्द्धा थी उन चौरासी क्रांतिकारियों में, जिनके नामों की परचियाँ बनाकर एक मटके में डाल दी गई थीं और मटके को अच्छी तरह से हिलाया जा रहा था। निष्पक्षता का निर्वाह करने के लिए अंडमान की सैलुलर जेल के एक वार्डर को बुलाकर उससे अनुरोध किया गया कि वह मटके में से दो परचियाँ उठा दे।

उन लोगों की उत्सुकता और अधीरता से तो ऐसा लगता था जैसे दो परचियों पर जिनके नाम निकलेंगे, उन्हें रुपयों की लॉटरी मिलेगी या उनके अंडमान

कारावास की सजा माफ कर दी जाएगी। बात इसके विपरीत थी। परचियाँ उठाकर दो ऐसे क्रांतिवीरों का चयन होना था, जिन्हें जेल प्रशासन के विरोध में अनशन करके अपने प्राणों का त्याग करना था; अर्थात् मृत्यु का चुनाव करने के लिए परचियाँ निकाली जा रही थीं। लॉटरी से मरनेवालों के नाम तय किए जा रहे थे।

वार्डर ने मटके में से पहले एक परची उठाई और क्रांतिकारी महावीरसिंह के हाथ में थमा दी; फिर उसने दूसरी परची निकालकर महावीरसिंह को ही दे दी। महावीरसिंह ने नाम पढ़े। एक परची पर साथी 'मोहनकिशोर नामदास' का और दूसरी पर 'मोहित मैत्रेय' का नाम था। अपने नाम निकले हुए देखकर वे दोनों साथी खुशी के साथ उछल पड़े। उन्होंने इतनी खुशी जाहिर की जैसे उन्हें स्वर्ग का साम्राज्य मिल गया हो। देश के लिए शहीद होने का अवसर उन्हें मिल रहा है, यह तथ्य ही उनकी खुशी का कारण था।

अनशन महायज्ञ प्रारंभ हो गया। जेल प्रशासन के प्रति विरोध प्रकट करके अन्य साथियों को जेलों में सुविधाएँ दिलाने के लिए आत्मबलिदान देना था केवल दो क्रांतिवीरों को। महावीरसिंह अपनी जिद पर अड़ गए कि इन साथियों के पहले मैं अपना बलिदान दूँगा। मोहनकिशोर नामदास और मोहित मैत्रेय—दोनों ही बहुत कम उम्र के क्रांतिकारी थे और उनकी सजाएँ भी बहुत लंबी नहीं थीं। महावीरसिंह को यह सहन नहीं हुआ कि उनके रहते हुए दो अल्प वयस्क और कोमल बालक अपना बलिदान दें। आत्मबलिदान की योजना महावीरसिंह ने ही प्रस्तुत की थी, इस कारण वे अपना नैतिक दायित्व समझ रहे थे कि अपना ही बलिदान दें। मरण महायज्ञ की अगुआई करने के लिए वे भी अनशन पर बैठ गए।

यह पहले ही निश्चित हो चुका था कि जब बलात्पान कराने के लिए नाक के नथुने द्वारा रबड़ की नली पेट के अंदर पहुँचाई जाए तो अनशनकारी थोड़ा तिरछा होकर अपने शरीर को झटका दे दें। इस प्रकार झटका देने का स्वाभाविक परिणाम होता है कि नली पेट में न जाकर फेफड़ों के अंदर चली जाती और दूध भी फेफड़ों में ही पहुँचता। मरने का यह नुस्खा पहले से प्रचारित हो चुका था।

बलात्पान का प्रबल प्रतिरोध किया महावीरसिंह ने। बलात्पान के लिए आए आठ-दस लोगों के साथ उन्होंने घोर युद्ध किया और कइयों के साथ उठा-पटक की। जब काबू में कर लिये गए तो उन्होंने गले के माध्यम से युद्ध किया। परिणाम वही हुआ कि डॉक्टर काफी मात्रा में दूध उनके फेफड़ों के अंदर उड़ेलकर चला गया। साथियों ने महावीरसिंह की बिगड़ती हुई दशा देखकर हाय-तौबा मचाना प्रारंभ किया। अस्पताल ले जाते समय महावीरसिंह ने दम तोड़ दिया। उन्होंने आत्मबलिदान देकर अपने दायित्व का पूरा निर्वाह किया।

मोहनकिशोर नामदास एक तरुण बंगाली था। उसका जन्म जिला मैमनसिंह में हुआ था। अल्पायु में ही वह क्रांतिकारी बन गया। ब्रिटिश शासन ने उसे सात वर्ष का कठोर कारावास देकर अंडमान भेज दिया। मोहनकिशोर नामदास ने भी बलात्पान का सार्थक प्रतिरोध किया। फेफड़ों में दूध भर जाने के कारण उसे १९ मई, १९३३ को अस्पताल में भरती किया गया। २६ मई, १९३३ को उसने मृत्यु का चुनाव कर लिया।

मोहित मैत्रेय का जन्म भी बंगाल के एक हरिजन परिवार में हुआ था। वह भी अपने विद्यार्थी जीवन से ही क्रांतिकारी बन गया और अवैध हथियार रखने के अपराध में गिरफ्तार हुआ। उसे पाँच वर्ष के कठोर कारावास का दंड देकर अंडमान भेज दिया गया। अंडमान के साथियों में मोहित मैत्रेय ही सबसे कम आयु का क्रांतिकारी था।

योजनानुसार मोहित मैत्रेय ने भी बलात्पान का प्रतिरोध किया तथा शरीर को झटका देने के परिणामस्वरूप उसके फेफड़ों में भी दूध पहुँच गया और हालत बिगड़ जाने के कारण उसे भी अस्पताल भेजा गया। मोहित मैत्रेय की मृत्यु २८ मई, १९३३ को हुई।

जेल के अधिकारियों ने इन आत्मबलिदानियों का दाह-संस्कार न करके उनकी लाशें समुद्र में फिंकवा दीं। उनके बलिदान व्यर्थ नहीं गए। जेलों में सुधार करने के लिए शासन को झुकना पड़ा; पर उन सुधारों की कीमत भी प्राणों से चुकाई गई।

□

## ★ मोहम्मद हबीब

विद्रोही वीर चंद्रसिंह गढ़वाली और उनकी गढ़वाली पल्टन के सैनिकों को ब्रिटिश हुकूमत ने कड़ी सजाएँ देकर जेल में डाल दिया; लेकिन उन लोगों ने अपनी वीरता, देशभक्ति और हिंदू-मुसलिम भाईचारे की अमिट छाप पेशावर के निवासियों पर छोड़ दी। अंग्रेज अफसरों ने गढ़वाली पल्टन को गोली चलाने का हुक्म देकर सोचा यह था कि हिंदू पल्टन ९८% मुसलिम आबादीवाले नगर के नागरिकों पर गोलियाँ अवश्य चलाएगी; लेकिन चंद्रसिंह गढ़वाली और उनके सैनिकों ने निहत्थे नागरिकों पर गोलियाँ चलाने से इनकार कर दिया। इस घटना के बाद पेशावर और ऐबटाबाद के नागरिकों ने चंद्रसिंह गढ़वाली और उनकी पल्टन

को शाबाशियाँ दीं और उनके पक्ष में जोरदार प्रदर्शन किए।

पेशावर कांड के पश्चात् पेशावर निवासी अंग्रेजों को अपना दुश्मन मानने लगे। इसी दुश्मनी का परिणाम भुगतना पड़ा पेशावर के असिस्टेंट कमिश्नर बार्न्स को, जिसे मोहम्मद हबीब नाम के एक नागरिक ने गोली से उड़ा दिया।

मोहम्मद हबीब को १७ फरवरी, १९३१ को पेशावर में फाँसी दे दी गई। हिंदू-मुसलिम भाईचारे को कायम रखने के लिए मोहम्मद हबीब ने अपनी कुर्बानी दी।

□

# ★ यतींद्रनाथ दत्त

बंगाल की पुलिस ने क्रांतिकारी यतींद्रनाथ दत्त को गिरफ्तार तो कर लिया, लेकिन वह उसके विरुद्ध कोई मामला तैयार न कर सकी। पहले विचार हुआ कि उसके विरुद्ध अवैध हथियार रखने का मामला चलाया जाए; लेकिन उसके पास से कोई अवैध हथियार बरामद नहीं हुआ था और न कोई ऐसा गवाह मिला, जो यह कहता कि वह अवैध हथियार रखता था। विवश होकर मैमनसिंह जेल से पुलिस को उसे छोड़ना पड़ा।

यतींद्रनाथ दत्त मैमनसिंह जिले के जमालपुर सब-डिवीजन के 'बगबेद' गाँव का रहनेवाला था। मैमनसिंह जेल से छूटकर वह स्वतंत्र जीवन नहीं बिता सका। उसे क्रिमिनल प्रोसीजर कोड के अंतर्गत फिर गिरफ्तार कर लिया गया।

इस बार यतींद्रनाथ दत्त को जेल में बहुत यातनाएँ दी गईं। भयंकर रूप से बीमार पड़कर वह मरणासन्न स्थिति तक पहुँच गया। उसकी मृत्यु की जिम्मेदारी से बचने के लिए पुलिस ने उसके परिवारवालों को उसकी बीमारी की सूचना दे दी। अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट ने पाँच-पाँच सौ रुपयों की दो जमानतों पर उसे रिहा करना स्वीकार कर लिया। उसके परिवारवालों ने दो जमानतों का प्रबंध तत्काल कर लिया। अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट ने उन जमानतों की जाँच का काम पुलिस को सौंपा।

पुलिस ने जाँच करके यह रिपोर्ट दी कि वे जमानतें स्वीकार करने के योग्य हैं। असली कारण यह था कि यतींद्रनाथ दत्त की मृत्यु जेल में ९ अप्रैल, १९३४ को पहले ही हो चुकी थी। जमानतें अस्वीकार कर दी गईं; लेकिन यतींद्रनाथ दत्त बिना जमानतों के ही जेल से तो क्या, दुनिया से भी मुक्त हो गया।

☐

# ★ यशवंत गुलाने
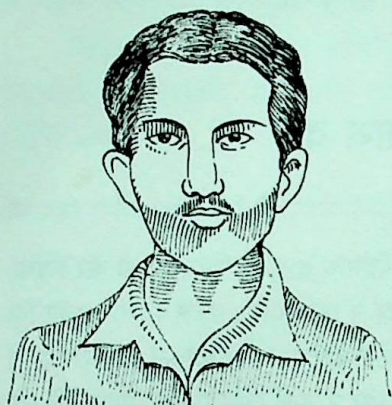
यशवत गुलाने

'यशवंत गुलाने को जेल के अधिकारी जेल से मुक्त कर देने के लिए मना रहे थे, पर वह था जो मुक्त होने को तैयार नहीं था। इसका कारण यह था कि अगस्त क्रांति में यशवंत गुलाने को गिरफ्तार करके उसे एक वर्ष के कठोर कारावास का दंड दिया गया था और उससे सख्त काम लेने के साथ-ही-साथ उसके साथ पाशविक व्यवहार किया जा रहा था। जेल के अधिकारियों के क्रूर व्यवहार के कारण यशवंत गुलाने बीमार रहने लगा। उसकी बीमारी इतनी अधिक बढ़ गई कि उसके जीवित रहने की संभावनाएँ भी क्षीण होने लगीं। यही कारण था कि जेल के अधिकारियों ने यशवंत गुलाने के परिवारवालों को मनाकर उसे मुक्त कर दिया। हुआ वही, जो होना था। जेल से मुक्त होने के कुछ दिन पश्चात् ही यशवंत गुलाने की मृत्यु हो गई और जेल के अधिकारी उसकी मृत्यु के कलंक से बाल-बाल बच गए।

यशवंत गुलाने का जन्म सन् १९२० में महाराष्ट्र के अमरावती जिले के 'वरूद' नामक स्थान पर हुआ था। उसके पिता का नाम श्री तात्याजी गुलाने था। यशवंत कृषक पुत्र था। उसने सन् १९४२ के आंदोलन में खुलकर भाग लिया था। यही कारण था कि उसे गिरफ्तार करके उसके ऊपर मुकदमा चलाया गया और अदालत ने उसे एक वर्ष के कठोर कारावास का दंड दिया।

□

## ★ रंजन मैती ★ राधाकांत दास

राधाकांत दास एक विद्यालय में अध्यापक थे। समाज पर उनका अच्छा प्रभाव था। अपने क्षेत्र के लोगों में उन्होंने अच्छी राष्ट्रीय चेतना जाग्रत की। अपने क्षेत्र में स्थित भगवानपुर पुलिस स्टेशन पर आक्रमण की योजना बनाई गई और आक्रमणकारी दल में राधाकांत दास स्वयं भी सम्मिलित हुए। वे पुलिस की गोली से घटनास्थल पर ही शहीद हो गए। वे मिदनापुर जिले के 'कालाबारिया' ग्राम के निवासी थे। इसी गोली कांड में 'खजुराई' ग्राम के रंजन मैती भी शहीद हुए।

□

## ★ रघुपति राय

नगर-नगर और गाँव-गाँव में इस बात की होड़ थी कि आजादी के प्रयत्नों में हम किसीसे पीछे न रहें। यही होड़ व्यक्ति-व्यक्ति में भी थी।

उत्तर प्रदेश के देवरिया जिले के रघुपति राय को शासन विरोधी जुलूस में सब लोगों ने तिरंगा झंडा थामे हुए अग्रिम पंक्ति में देखा। उन लोगों ने यह भी देखा कि पुलिस की चेतावनी का उसपर कोई असर नहीं हुआ और पीछे हटने के बजाय वह आगे ही बढ़ता गया। उन लोगों ने यह भी देखा कि पुलिस दल की कई गोलियाँ रघुपति राय के शरीर में समा गईं और देश की आजादी का चिंतन करता हुआ वह शहीद हो गया।

रघुपति राय के पिता का नाम श्री ईश्वरीप्रताप राय था।

□

## ★ रघुवीरसिंह

उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले के 'पिलाना' ग्राम के युवक रघुवीरसिंह ने जब सुना कि मेरठ नगर में 'भारत छोड़ो आंदोलन' के अंतर्गत एक विशाल जुलूस निकाला जा रहा है, तो उसका मन उस जुलूस में सम्मिलित होने के लिए छटपटा उठा। वह कांग्रेस का सदस्य भी था और राजनीतिक गतिविधियों में अग्रणी बनकर हिस्सा लेता था।

रघुवीरसिंह ने उस जुलूस में कुछ ज्यादा उत्साह दिखाया और वह गिरफ्तार कर लिया गया। उसे सात महीने के कठोर कारावास का दंड मिला। जेल में ही उसकी मृत्यु हो गई।

□

## ★ रजनी घोष ★ वीणाचरण दास महापात्र

वीणाचरण दास महापात्र मिदनापुर जिले के 'लालपुर' ग्राम के निवासी थे। २७ सितंबर, १९४२ को बेलवानी में आयोजित एक शासन विरोधी जुलूस का नेतृत्व वीणाचरण दास ने किया और वे पुलिस की गोली से घटनास्थल पर ही शहीद हो गए। इसी कांड में एक महिला आंदोलनकारी रजनी घोष भी गोली लगने से शहीद हुईं।

□

## ★ रतनसिंह

बब्बर अकाली दल के क्रांतिकारियों का एक जत्था ट्रेन द्वारा किसी अन्य जेल में स्थानांतरित किया जा रहा था। इस जत्थे में ग्यारह क्रांतिकारी थे। उनका नेता रतनसिंह था। ये क्रांतिकारी पुलिस पार्टी की निगरानी में ले जाए जा रहे थे।

क्रांतिकारियों को ले जानेवाली ट्रेन जब भटिंडा पहुँची तो क्रांतिकारियों ने पुलिस के साथ बाकायदा युद्ध प्रारंभ कर दिया। पुलिसवालों की संख्या केवल पाँच थी। उन्हें बेफिक्री इसलिए थी कि क्रांतिकारियों के हाथों में हथकड़ियाँ पड़ी हुई

थीं। पुलिसवालों के पास बंदूकें भी थीं। जिस डिब्बे में वे लोग बैठे हुए थे, उसमें नागरिक यात्री भी थे। जब पुलिस और क्रांतिकारी कैदियों के बीच युद्ध प्रारंभ हो गया तो नागरिकों की सहानुभूति क्रांतिकारियों के साथ हो गई, इस कारण नागरिक यात्रियों ने पुलिस पार्टी की सहायता नहीं की। पुलिसवाले डिब्बे के अंदर गोली भी नहीं चला सकते थे। संघर्ष का परिणाम यह निकला कि पुलिस का हेड कांस्टेबिल मारा गया। क्रांतिकारी पुलिसवालों की बंदूकें छीनकर भाग निकले।
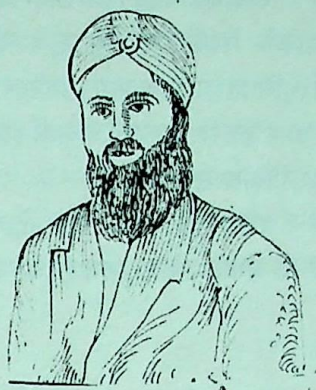
रतनसिंह

पुलिस ने सरगर्मी के साथ क्रांतिकारियों की तलाश प्रारंभ कर दी। रतन सिंह की गिरफ्तारी के लिए तीन हजार रुपए का पुरस्कार घोषित किया गया।

१५ जुलाई, १९३२ को रतनसिंह होशियारपुर जिले के 'रुड़की' ग्राम में एक झोंपड़ी में बैठा हुआ था कि किसी मुखबिर ने उसकी उपस्थिति की सूचना पुलिस को दे दी। पुलिस ने उस झोंपड़ी को घेर लिया और शाम के समय बाकायदा युद्ध प्रारंभ हो गया।

एक तरफ अकेला रतनसिंह था और दूसरी तरफ पुलिस एवं गाँववालों का भारी दल। रतनसिंह ने अपने अचूक निशाने के बल पर अपने चार शत्रुओं को मार गिराया। आख़िर उसको भी एक घातक गोली लगी और उस युद्ध में उसने वीरगति प्राप्त कर ली। समर्पण करने के स्थान पर उसने मृत्यु का चुनाव करना श्रेयस्कर समझा।

□

## ★ रमेशचंद्र आर्य

दिल्ली की पुलिस 'दैनिक अर्जुन' के सहायक संपादक रमेशचंद्र आर्य से बहुत परेशान थी। पुलिस के कारनामों का भंडाफोड़ 'दैनिक अर्जुन' में आएदिन होता रहता था और इसके पीछे श्री आर्य का ही हाथ रहता था। वे स्पष्टवादी और निर्भीक पत्रकार थे। कोई प्रलोभन या भय उन्हें कर्तव्य-विमुख नहीं कर पाता था।

रमेशचंद्र आर्य ने व्यक्तिगत रूप से सन् १९४१ के सत्याग्रह का नेतृत्व किया और स्थिति यहाँ तक पहुँच गई कि सन् १९४२ के अगस्त आंदोलन के समय उन्हें भूमिगत हो जाना पड़ा। आखिर १७ जून, १९४३ को दिल्ली की पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। उन्हें जेल में इतनी यातनाएँ दी गईं कि उनकी लाश ही जेल से बाहर निकल सकी।

रमेशचंद्र आर्य का जन्म दिल्ली में सन् १९१० में हुआ था। उनके पिता का नाम श्री बेनीराम था। आजादी की बलिवेदी पर श्री आर्य ने अपनी आहुति दे दी।

□

## ★ रसिकलाल जानी

सोलह वर्षीय युवक रसिकलाल जानी ने कॉलेज में पढ़ना प्रारंभ ही किया था कि सन् १९४२ का आंदोलन छिड़ गया। रसिकलाल पूरे मन से उसमें कूद पड़ा। वह अपने नगर अहमदाबाद के छात्र जगत् में बहुत लोकप्रिय था। नागरिकों के किसी कार्यक्रम में सम्मिलित न होकर उसने स्वयं ही एक जुलूस का गठन किया, जिसमें अधिकांश संख्या छात्रों की ही थी। जुलूस निकलता हुआ देखकर उसमें कुछ नागरिक भी सम्मिलित हो गए। पुलिस ने आंदोलनकारियों पर गोलियाँ चलाईं और रसिकलाल जानी ने अपनी जान दे दी।

रसिकलाल जानी का जन्म सन् १९२६ में अहमदाबाद में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री ठाकुरलाल जानी था।

□

## ★ राजकुमार दुसाध

वैसे तो कई उदाहरण मिलते हैं कि बहुत कम उम्र के बालकों ने आजादी के आंदोलन में अपने बलिदान दिए हैं, लेकिन ऐसे उदाहरण दुर्लभ हैं कि बहुत अधिक वृद्ध लोगों ने अपने जीवन की आहुतियाँ दी हों। राजकुमार दुसाध का उदाहरण ऐसा ही विरला उदाहरण है। नब्बे वर्ष की अवस्था में राजकुमार दुसाध ने बलिया जेल में शहादत का चुनाव किया।

राजकुमार दुसाध बलिया जिले के 'सिसोतर' ग्राम के निवासी थे। जीवन-

भर उनका एक पैर जेल के अंदर और दूसरा पैर बाहर रहा। सबसे पहले उन्होंने सन् १९३० के 'सविनय अवज्ञा आंदोलन' में भाग लिया और जेल की सजा पाई। १९४१ के व्यक्तिगत सत्याग्रह में भी श्री दुसाध ने भाग लिया और जेल का उपहार प्राप्त किया। अपने जीवन के अंतिम चरण में राजकुमार दुसाध ने सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो आंदोलन' में भाग लिया और जेल जीवन के साथ एकाकार हुए। इसी जेल जीवन में, नब्बे वर्ष की आयु में, बलिया की जेल में उनका प्राणांत हुआ।

राजकुमार दुसाध का जन्म सन् १८५३ के लगभग हुआ था। उनके पिता का नाम श्री रामवृक्ष दुसाध था।

□

# ★ राजकुमार सिन्हा

राजकुमार सिन्हा

बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के एक हरे-भरे लॉन में बैठे हुए कुछ छात्र अपने ही एक साथी से गीत सुनाने का अनुरोध कर रहे थे। जिस छात्र से अनुरोध किया जा रहा था, उसका नाम राजकुमार सिन्हा था। राजकुमार अध्ययन के लिए कानपुर से बनारस पहुँचा था और उस समय वह एंट्रेस में पढ़ रहा था। उसे गाने का अच्छा अभ्यास था और उसके स्वर में कुछ ऐसा दर्द था, जो सुननेवालों के दिलों को छुए बगैर नहीं रहता था। गाने से इनकार करते हुए उसने कहा—

"जब देखो, तुम लोग गाना सुनाने की फरमाइश कर देते हो! तुम लोग यह नहीं समझते कि गाना मन की प्रेरणा से गाया जाता है। इस समय मेरा मन गाने को बिलकुल नहीं है और मैं नहीं गाऊँगा।"

छात्रों के दल में से एक ने, जिसका नाम राजेंद्रनाथ लाहिड़ी था, विशेष अनुनय करते हुए कहा—

"देखिए राजकुमारजी, हम इस अवसर को एक विशिष्ट समारोह ही मानकर चल रहे हैं। आपने जो निबंध लिखा था—'भारत में राष्ट्रीय आंदोलन और छात्रों का

कर्तव्य'—वह सभी के द्वारा प्रशंसित हुआ है और सार्वजनिक रूप से उसका वाचन भी हुआ है। इस सफलता के लिए हम सब आपको बधाई देते हैं और आपसे पुन: अनुरोध करते हैं कि यदि आप अपने साथियों को मिठाई नहीं खिलाना चाहते तो कम-से-कम एक मीठा गाना तो अवश्य सुना दीजिए।''

अन्य सभी छात्रों ने तालियाँ पीटकर राजेंद्रनाथ लाहिड़ी के प्रस्ताव का जोरदार समर्थन किया और हर एक ने गीत सुनाने के लिए राजकुमार सिन्हा को उकसाया।

राजकुमार सिन्हा ने बचने के यत्न तो बहुत किए, पर अंत में विवश होकर एक गीत सुनाना ही पड़ा। गीत की ध्रुव पंक्ति थी—

'मातृभूमि माँ! तेरी जय हो'।

वह गीत दर्द-भरा था और उसमें भारत माता की दयनीय दशा का वर्णन करते हुए उसे आश्वासन दिया गया था कि अब वह दिन दूर नहीं, जब हम तेरे दु:ख दूर करने के लिए बड़े-से-बड़ा बलिदान करने के लिए तैयार रहेंगे। इस गीत ने राजकुमार सिन्हा का सम्मान अपने साथियों में और बढ़ा दिया।

अध्ययन के अनंतर राजकुमार सिन्हा ने जब जीवन के क्षेत्र में प्रवेश किया तो उसके भावुक मन को यथार्थ के कई झटके लगे। कानपुर नगर के चमड़े के एक कारखाने में उसे सपारिश्रमिक काम सीखने का अवसर मिला। 'कर्म ही पूजा है' की उक्ति को महत्त्व देते हुए उसने मन लगाकर काम सीखना प्रारंभ किया और अपनी कर्मनिष्ठा एवं व्यवहार से कारखाने के मालिक को अपना प्रशंसक बना लिया।

वे दिन राष्ट्रीय आंदोलन के दिन थे। लोगों को गांधी लहर ने प्रभावित कर रखा था। गांधी टोपी उन दिनों अपना विशेष महत्त्व रखती थी। उन दिनों गांधी टोपी लगानेवाले को सरकार विरोधी मानना स्वाभाविक ही था। जिस कारखाने में राजकुमार सिन्हा काम कर रहे थे, उसके मालिक ने एक आदेश निकालकर अपने कर्मचारियों को गांधी टोपी लगाने से मना कर दिया। राजकुमार सिन्हा को इस आदेश से कुछ लेना-देना नहीं था; क्योंकि बंगाली होने के नाते वह नंगे सिर ही रहता था; पर फिर भी मालिक का आदेश उसे चुनौती जैसा लगा। उसका विद्रोही और देशभक्त मन उस चुनौती को चुनौती दे उठा। नंगे सिर रहनेवाला युवक राजकुमार सिन्हा अगले दिन गांधी टोपी लगाकर फैक्टरी में पहुँचा। मालिक के सामने उसकी पेशी हुई और उसे गांधी टोपी या नौकरी में से किसी एक को चुनने के लिए कहा गया। गांधी टोपी को चुनकर राजकुमार सिन्हा ने नौकरी को ठुकरा दिया।

गांधी टोपी की ओट में विद्रोही युवक राजकुमार सिन्हा ने क्रांतिकारियों के

साथ कब गठबंधन कर लिया, यह किसीको ज्ञात नहीं; पर सभी को उस दिन अवश्य आश्चर्य हुआ, जब ३० अक्तूबर, १९२५ को पुलिस ने उसके कमरे की तलाशी ली और एक बड़े संदूक में से दो राइफलें बरामद कीं। इनमें से एक विंचेस्टर राइफल तथा दूसरी शेरउड राइफल थी। इन दो आग्नेयास्त्रों के अतिरिक्त संदूक में से पुलिस दारोगा का एक झब्बा और पगड़ी भी मिली। ये चीजें क्रांतिकारियों के साथ उसका संबंध स्थापित करने के लिए पर्याप्त थीं।

कानपुर की पुलिस ने राजकुमार सिन्हा को गिरफ्तार कर लिया और उसे कानपुर की जेल में रखा गया। क्रांतिकारियों के भेद पूछने के लिए उसे तरह-तरह की यातनाएँ दी गईं; पर पुलिस उसका मुँह खोलने में असमर्थ रही।

कानपुर के हवालाती जीवन में पुलिस के दुर्व्यवहार के विरुद्ध राजकुमार सिन्हा ने इकतीस दिन तक अनशन करके अपने दृढ़ आत्मबल का परिचय दिया। ५ दिसंबर, १९२५ को काकोरी केस में सम्मिलित करने के लिए उसे लखनऊ जेल भेजा गया। उन्हीं दिनों उसके पिता बाबू मार्कंडेय दास सिन्हा का देहावसान हो गया। ज्येष्ठ पुत्र होने के नाते राजकुमार सिन्हा ने अपने पिता का श्राद्ध करने की अनुमति माँगी; पर उसे अनुमति नहीं मिली।

यद्यपि राजकुमार सिन्हा का काकोरी ट्रेन डकैती से कोई संबंध नहीं था, पर फिर भी उस मुकदमे में सरकार ने उसे घसीटकर दस वर्ष के कठोर कारावास का दंड सुना ही दिया। उसे बरेली जेल भेजा गया। बरेली जेल में भी राजकुमार सिन्हा ने अड़तीस दिनों का लंबा अनशन करके जेल के अधिकारियों को झुकाया। अपने जेल जीवन को राजकुमार सिन्हा ने विश्वविद्यालय की भाँति स्वीकार किया और वहाँ रहते हुए उसने कई भाषाएँ सीखीं, जिनमें फ्रेंच तथा रूसी भाषाएँ प्रमुख हैं।

जेल से छूटने के पश्चात् राजकुमार सिन्हा ने कानपुर में लोगों को रूसी भाषा सिखाकर अपनी जीविका का उपार्जन किया।

□

## ★ राजनारायण मिश्र

क्रांतिकारी राजनारायण मिश्र को इस बात का दुःख नहीं था कि उन्हें फाँसी की सजा हो रही है। उन्हें इस बात की आशंका थी कि कहीं ऐसा न हो कि क्रांतिकारियों के त्याग एवं बलिदान का दुरुपयोग वे लोग करें, जिन्हें न समाजवाद में आस्था है और न इस देश-धरती से ही प्रेम है। फाँसी के कुछ दिन पूर्व लिखे गए

उनके कुछ पत्रों से यह आशंका स्पष्ट झलकती है। अपने एक साथी केशवप्रसाद शर्मा को उन्होंने लिखा—

'शर्माजी,

गरीबी, शोषण और गुलामी से मानवता को मुक्त करने के लिए मैं फाँसी का रस्सा चूमने जा रहा हूँ। मेरी एकमात्र आकांक्षा है कि मेरे बलिदान से देश में मजदूर-किसान राज्य कायम हो। ऐसा न हो कि राष्ट्रीय कांग्रेस के सुधारवादी, पूँजीवादी नेता मेरे बलिदान का उपयोग पूँजीपतियों का राज्य कायम करने के लिए करें।'

अपने बड़े भाई को पत्र में राजनारायण मिश्र ने लिखा—

'बड़े भ्राता,

मेरे निधन पर शोक मत करना। संसार में जितने दिन रहना था, रहे और जो कुछ करना था, किया। शोषित-पीड़ित मानवता को मुक्त करने के लिए हँसते-हँसते फाँसी की रस्सी को ९ दिसंबर के प्रात:काल चूमूँगा। आशा करता हूँ कि आप मेरे निधन पर शोक न करके हर्ष मनाएँगे।'

मजदूर-किसानों के मसीहा राजनारायण मिश्र ने ९ दिसंबर, १९४४ को केवल चौबीस वर्ष की भरी जवानी में फाँसी का फंदा चूम लिया।

राजनारायण मिश्र का जन्म उत्तर प्रदेश के खीरी-लखीमपुर के अंतर्गत 'भीखमपुर' ग्राम में सन् १९१९ में हुआ था। अभी उन्होंने बचपन के प्रांगण में प्रवेश ही किया था कि उनके सिर से माता-पिता का साया उठ गया। बड़ी बहन रमा देवी ने उनका पालन-पोषण किया। कुछ और बड़े होने पर शिक्षा-दीक्षा का प्रबंध किया गया। राजनारायण की शिक्षा-दीक्षा सुचारु रूप से इसलिए नहीं चल सकी कि जिस स्कूल में वे जाते, वहाँ से निकाल दिए जाते थे। बचपन से ही शहीद भगतसिंह को उन्होंने अपना आदर्श मान लिया था और शहीदों के तराने ही वे गाते थे। मार-पीट करने और झगड़ा करने में उन्हें विशेष आनंद आता था।

जब सन् १९३० का आंदोलन छिड़ा तो राजनारायण के गाँव के लोगों पर पुलिस ने बहुत अत्याचार किए। राजनारायण का मन विद्रोही हो उठा। उन्होंने अपने बाल साथियों का एक संगठन बना डाला और राजनीति में भाग लेना प्रारंभ कर दिया। जब सन् १९४२ की अगस्त क्रांति फूट पड़ी तो राजनारायण ने उसमें खुलकर भाग लिया। उस समय तक उनकी शादी हो चुकी थी और पिता बनने का सौभाग्य भी उन्हें प्राप्त हो गया था; पर अपने परिवार की चिंता न करके वे अगस्त क्रांति के अखाड़े में कूद पड़े।

राजनारायण मिश्र ने साथी नवयुवकों की एक सेना गठित कर डाली और

विचार हुआ कि सरकार के पिट्ठुओं के हथियार छीने जाएँ और पुलिस स्टेशनों पर हमले बोले जाएँ। राजनारायण मिश्र तथा रामशिरोमणि दुबे के नेतृत्व में सुजानगंज के थाने पर हमला किया गया और थाने की तमाम राइफलें छीन ली गईं तथा थाने पर अधिकार कर लिया गया। वे जिलेदार की बंदूक भी छीन लेना चाहते थे। उसे घेर लिया गया और उससे बंदूक माँगी गई। जिलेदार बंदूक देने को तैयार नहीं हुआ और उसने क्रांतिकारियों की ओर अपनी बंदूक की नाल सीधी कर ली। वह अपनी गोली चला भी न सका कि एक क्रांतिकारी की गोली उसके सीने में लगी और वह भूमि पर गिर पड़ा। राजनारायण मिश्र का दल उसकी बंदूक लेकर चला गया।

राजनारायण मिश्र पर जिलेदार की हत्या और हथियारों की लूट के आरोप में गिरफ्तारी का वारंट जारी हो गया। उन्हें फरारी जीवन बिताने के लिए विवश होना पड़ा। अपने फरारी जीवन में उन्होंने नाम बदलकर कांग्रेस के आंदोलन में हिस्सा लिया और दो बार जेल की सजा भी काट आए। जब वे दूसरी बार जेल से मुक्त हुए तो उन्होंने खादी भंडार के एक संचालक श्यामवीर सिंह को अपनी कहानी कह सुनाई। श्यामवीर सिंह ने उन्हें पुलिस के हाथों गिरफ्तार करा दिया।

राजनारायण मिश्र पर मुकदमा चला और उन्हें फाँसी की सजा सुना दी गई। ९ दिसंबर, १९४४ को लखनऊ जेल में उन्होंने हँसते-हँसते फाँसी का फंदा चूमा।

□

## ★ राजेंद्रनाथ लाहिड़ी

राजेंद्रनाथ लाहिड़ी

एक बाईस वर्षीय नौजवान क्रांतिकारी राजेंद्रनाथ लाहिड़ी को जब दादा क्रांतिकारियों का दादा अर्थात् बनारस जिले का मुख्य संगठक नियुक्त कर दिया गया तो दादा क्रांतिकारियों ने सोचा कि चलो अच्छा है, लड़कियों जैसी कोमलता लिये हुए लड़का अपनी अयोग्यता के कारण खुद ही मैदान से हट जाएगा और फिर हममें से किसीको दादागिरी का मौका मिलेगा; पर ऐसा हुआ नहीं। राजेंद्रनाथ लाहिड़ी ने इतनी

योग्यता के साथ संगठन का काम किया तथा राजनीतिक सूझबूझ एवं साहस का परिचय दिया कि उसके आलोचक ही धीरे-धीरे उसके प्रशंसक बनते गए और एक दिन तो वह उन सबसे बहुत ऊपर उठ गया।

राजेंद्रनाथ लाहिड़ी मूल रूप से बंगाल के पबना जिले के रहनेवाले थे, जहाँ २३ जून, १९२१ को उनका जन्म 'मोहनपुर' ग्राम में हुआ था। उनके पिता श्री क्षितिमोहन लाहिड़ी स्वयं अच्छे देशभक्त थे और बंग-भंग आंदोलन में वे जेल काट चुके थे। जब राजेंद्रनाथ की आयु केवल नौ वर्ष की ही थी, तभी से अपने बड़े भाई के साथ उन्हें बनारस भेज दिया गया था। बनारस में ही उनकी शिक्षा-दीक्षा संपन्न हुई और क्रांतिकारियों के संपर्क में भी वह वहीं आए।

बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में पढ़ते हुए ही राजेंद्रनाथ लाहिड़ी उस क्रांतिकारी दल के सदस्य हो गए, जिसके मुख्य संगठक शचींद्रनाथ सान्याल थे। अपने उत्साही स्वभाव और साहित्यिक अभिरुचि के कारण राजेंद्रनाथ लाहिड़ी को 'बंग साहित्य परिषद्' का सचिव चुना गया था। उनके लेख 'बंगवाणी' और 'शंख' पत्रिकाओं में छपते रहते थे। वे क्रांतिकारी विचारधारा के एक हस्तलिखित मासिक 'अग्रदूत' का संपादन भी करते थे।

बंगाल की क्रांतिकारी संस्था 'अनुशीलन समिति' अपनी एक शाखा उत्तर प्रदेश में भी कायम करना चाहती थी। उस समय उत्तर प्रदेश में बनारस नगर क्रांतिकारियों का गढ़ था। वहाँ बंगालियों की संख्या भी बहुत थी। बंगाल की अनुशीलन समिति की ओर से कुछ प्रतिनिधियों को बनारस भेजा गया; पर वे अधिक सफल नहीं हुए। अंततोगत्वा जोगेशचंद्र चटर्जी को अनुशीलन समिति की ओर से बनारस भेजा गया, जहाँ उन्होंने समिति की शाखा कायम की। बनारस में शचींद्रनाथ सान्याल की क्रांतिकारी पार्टी पहले से ही काम कर रही थी। एक ही नगर में दो क्रांतिकारी संस्थाएँ काम करें, इतनी गुंजाइश वहाँ नहीं थी। परिणाम यह हुआ कि दोनों पार्टियों के एकीकरण की पहल होने लगी। इस एकीकरण में शचींद्रनाथ सान्याल के दल की प्रमुखता रही और दोनों पार्टियों का संयुक्त नाम 'हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन' रखा गया। एकीकरण की शर्तों के अनुसार बनारस जिले का संगठक राजेंद्रनाथ लाहिड़ी को नियुक्त किया गया।

राजेंद्रनाथ लाहिड़ी के व्यक्तित्व की रेखाएँ कुछ इस प्रकार थीं—उनका कद औसत दर्जे का उभरता हुआ था। उनका रंग साफ और खिला हुआ था। उनका चेहरा गोल और नारी-सुलभ सुकुमारता से संपन्न था। उनकी आँखों में चमक थी और चेहरे पर मुसकान बिखरी रहती थी। उनकी देह कसरत से कमाई हुई सुदृढ़ थी।

जिले का संगठक नियुक्त हो जाने के पश्चात् राजेंद्रनाथ लाहिड़ी ने योग्यता के साथ कार्य का संचालन किया। उन्होंने सेंट्रल हिंदू स्कूल के एक विद्यार्थी रामनारायण पांडेय को अपना 'पोस्ट बॉक्स' बनाया। 'पोस्ट बॉक्स' उसे कहा जाता था, जिसकी मार्फत क्रांतिकारी लोग अपने पत्र मँगाते थे। पुलिस की निगाहों से बचने के लिए यह तरीका अपनाया गया था।

राजेंद्रनाथ को जो भी काम दिया गया, वह उन्होंने योग्यता के साथ संपन्न किया। प्रारंभ में तो वे राजनीतिक डकैतियों में भाग नहीं लेते थे, पर बाद में वे उनमें भाग लेने लगे और दल के लिए एक उपयोगी सदस्य सिद्ध हुए। शीघ्र ही उन्हें उस दल में भी सम्मिलित किया गया, जो रामप्रसाद बिस्मिल के नेतृत्व में ट्रेन डकैती के लिए बनाया गया था। इस दल की बैठक ७ अगस्त, १९२५ को शाहजहाँपुर में हुई। राजेंद्रनाथ लाहिड़ी उस बैठक में उपस्थित थे।

९ अगस्त, १९२५ की शाम को सहारनपुर से लखनऊ जानेवाली पैसेंजर गाड़ी को काकोरी स्टेशन से कुछ आगे क्रांतिकारी दल ने जंजीर खींचकर रोक लिया था। सात क्रांतिकारी उस गाड़ी में शाहजहाँपुर से सवार हुए थे और राजेंद्रनाथ लाहिड़ी, शचींद्रनाथ बख्शी एवं अशफाक उल्ला खाँ काकोरी स्टेशन से उस गाड़ी के दूसरे दर्जे के डिब्बे में सवार हुए। जब गाड़ी काकोरी स्टेशन से चलकर कुछ दूर पहुँच गई तो राजेंद्रनाथ लाहिड़ी ने जंजीर खींचकर उसे रोक दिया। गाड़ी खड़ी होने पर सभी क्रांतिकारी गाड़ी से नीचे कूद पड़े और फायर करने लगे। गार्ड और ड्राइवर को पेट के बल जमीन पर लेटे रहने के लिए कहा गया। यात्रियों को बाहर न निकलने की चेतावनी दी गई। रुपयों से भरे संदूक को नीचे गिराकर तोड़ा गया और उसमें भरे सारे रुपए निकालकर क्रांतिकारी नौ दो ग्यारह हो गए।

पुलिस ने बड़ी तत्परता के साथ गिरफ्तारियाँ प्रारंभ कीं। लगभग सभी लोग गिरफ्तार हो गए। जो लोग गिरफ्तार नहीं हो सके, वे थे—शचींद्रनाथ बख्शी, अशफाक उल्ला खाँ और चंद्रशेखर आजाद। इनमें से दो क्रांतिकारी काफी समय बाद गिरफ्तार हुए; पर चंद्रशेखर आजाद तो कभी गिरफ्तार हुए ही नहीं।

काकोरी की ट्रेन डकैती के पश्चात् राजेंद्रनाथ लाहिड़ी कलकत्ता चले गए। वे वहाँ दक्षिणेश्वर में बम बनाना सीखने लगे। बम बनाने का हुनर सीखने के पश्चात् उनका उत्तर प्रदेश में बम निर्माण के अनेक कारखाने खोलने का निश्चय था। दक्षिणेश्वर के बम कारखाने में वे बम निर्माण कला में पारंगत हो गए।

दक्षिणेश्वर के बम के कारखाने में १० नवंबर, १९२५ को बंगाल की पुलिस ने छापा मारा। वहाँ जो क्रांतिकारी पकड़े गए, उनमें राजेंद्रनाथ लाहिड़ी भी

थे। उन्हें दस वर्ष के कारावास का दंड दिया गया।

बाद में यह पता चलने पर कि राजेंद्रनाथ लाहिड़ी काकोरी ट्रेन डकैती में भी सम्मिलित थे, उन्हें कलकत्ता से लखनऊ लाया गया। उस समय उन्हें दस वर्ष के कारावास का दंड पहले ही हो चुका था। इस प्रकार वे अपने सभी साथियों से वरिष्ठ हो गए। प्रारंभ में राजेंद्रनाथ लाहिड़ी को काकोरी केस के अन्य अभियुक्तों से पृथक् रखा गया। अन्य अभियुक्तों को यह सुविधा दी गई कि वे अपने ही कपड़े पहने हुए अदालत जा सकते थे; पर राजेंद्रनाथ लाहिड़ी को कैदियों के कपड़ों में और पैरों में बेड़ियाँ डालकर जेल ले जाया जाता था। बाद में उन्हें जिला जेल में ही अपने अन्य साथियों के साथ रखा गया।

क्रांतिकारियों को जब जेल से अदालत ले जाया जाता था तो वे मस्ती के साथ गीत गाते हुए जाते थे। इसी प्रकार अदालत से बाहर निकलकर भी वे गीत गाने लगते थे। एक दिन क्रांतिकारियों को अदालत लाने-ले जाने की ड्यूटी सूबेदार बरबंडसिंह की लगी। अदालत से बाहर निकलते ही क्रांतिकारी लोग अपनी आदत के अनुसार रामप्रसाद बिस्मिल का लिखा गीत 'सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है' गाने लगे। सूबेदार बरबंडसिंह को यह सहन नहीं हुआ। उसने चीखकर आदेश दिया—

"बंद करो यह गाना-बजाना! मेरे रहते हुए यह कुछ नहीं चलेगा।"

भला क्रांतिकारी उसके आदेश को क्यों मानते! उन्होंने गाना बंद नहीं किया। राजेंद्रनाथ लाहिड़ी सभी से आगे-आगे गाते हुए चल रहे थे। सूबेदार बरबंडसिंह ने आगे बढ़कर उसका गला पकड़ लिया। स्वाभिमानी राजेंद्रनाथ लाहिड़ी के शरीर में जैसे बिजली कौंध गई। उसने एक भरपूर झापड़ सूबेदार बरबंडसिंह के गाल पर दे मारा। सूबेदार की आँखों के सामने अँधेरा छा गया। उसके दूसरे साथी जब राजेंद्रनाथ की ओर लपके तो क्रांतिकारियों में से मन्मथनाथ गुप्त, शचींद्रनाथ विश्वास, राजकुमार सिन्हा और रामनाथ पांडेय मुक्के तानकर खड़े हो गए। शोरगुल सुनकर जज साहब बाहर आए और मामले को शांत किया। पुलिस ने अदालत में यह मुकदमा भी चलाया; पर वापस ले लिया गया।

जेल में रहते हुए राजेंद्रनाथ लाहिड़ी के दो शौक थे और वे थे—व्यायाम करना तथा पुस्तकें पढ़ना। अखाड़े में ठाकुर रोशनसिंह के साथ उनकी कुश्ती हुआ करती थी। पुस्तकें पढ़ने का शौक भी वैसे कई लोगों को था; पर राजेंद्रनाथ लाहिड़ी उन सभी से अधिक पढ़ते थे।

६ अप्रैल, १९२७ को काकोरी केस का फैसला सुनाया गया। किसको क्या सजा मिलने वाली है, सभी को इसका अनुमान था। सभी क्रांतिकारियों का

अनुमान था कि रामप्रसाद बिस्मिल और राजेंद्रनाथ लाहिड़ी को फाँसी की सजा मिलेगी। दंड का पूर्वाभास होने के कारण जब राजेंद्रनाथ लाहिड़ी को फाँसी का दंड सुनाया गया तो उनके आत्मविश्वास में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। उनके चेहरे पर वही मोहिनी मुसकान थी, जो हमेशा रहा करती थी। फैसले पर उनकी प्रतिक्रिया थी—

''मेरी तो थोड़े दिनों की तकलीफ है, महीने-दो महीने में खत्म हो जाएगी; पर मुझे उन लोगों की चिंता हो रही है, जिन्हें चौदह-चौदह और बीस-बीस साल जेल में सड़ना है।''

फैसला सुनाने के पश्चात् क्रांतिकारियों को पृथक्-पृथक् जेलों में भेजा गया। राजेंद्रनाथ लाहिड़ी को गोंडा जेल भेजा गया। क्रांतिकारियों ने फैसले के विरुद्ध हाई कोर्ट में अपीलें भी कीं; पर कोई सुपरिणाम नहीं निकला। घटने के स्थान पर कुछ की सजाएँ बढ़ गईं। प्रिवी कौंसिल में भी अपील की गई; पर वहाँ भी अस्वीकार कर दी गई।

फाँसी से तीन दिन पूर्व राजेंद्रनाथ लाहिड़ी ने अपने एक मित्र को पत्र लिखा था। उसका कुछ अंश इस प्रकार है—

'कल मुझे यह समाचार मिला कि प्रिवी कौंसिल ने हमारी अपील को अस्वीकार कर दिया है। आप लोगों ने हमारे जीवन बचाने का बहुत प्रयत्न किया। सभी यत्न निष्फल होने का यह अर्थ निकलता है कि देश को हमारे बलिदानों की आवश्यकता है। मृत्यु क्या है? यह जीवन का ही दूसरा पहलू है। जीवन क्या है? यह भी मृत्यु के दूसरे पहलू के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। फिर व्यक्ति को मृत्यु से भयभीत क्यों होना चाहिए? मृत्यु उतनी ही अवश्यंभावी है, जितना सूर्योदय। यदि यह सत्य है कि इतिहास की पुनरावृत्ति होती है, तो मेरा विश्वास है कि हमारी मृत्यु व्यर्थ नहीं जाएगी। सभी को मेरा अंतिम नमस्कार।'

१७ दिसंबर, १९२७ की सुबह गोंडा जेल में राजेंद्रनाथ लाहिड़ी को फाँसी दी गई। यह एक रहस्य बनकर रह गया कि जब काकोरी केस में फाँसी पानेवाले चारों अभियुक्तों की फाँसी की तिथि १९ दिसंबर घोषित हुई थी तो राजेंद्रनाथ लाहिड़ी को दो दिन पूर्व फाँसी क्यों दे दी गई?

१७ दिसंबर, १९२७ को राजेंद्रनाथ नित्य के नियमानुसार उठे। नित्य कर्मों से निवृत्त हो उन्होंने व्यायाम किया। वह प्रतिदिन पाँच सौ दंड और पाँच सौ बैठकें लगाते थे। उस सुबह भी उन्होंने इतनी ही बैठकें और दंड लगाए। उन्होंने नहा-धोकर ईश्वर की प्रार्थना भी की। फिर वह खुशी-खुशी जेलर के साथ चल दिए। जेलर ने यह सबकुछ अंग्रेज जज को सुनाया। अंग्रेज जज ने राजेंद्रनाथ लाहिड़ी से

प्रश्न किया—

"तुमने फाँसी के पूर्व ईश्वर की प्रार्थना की, यह बात समझ में आती है, क्योंकि प्रार्थना वैसे भी की जाती है और अंतिम समय तो अवश्य ही की जाती है; पर एक बात मेरी समझ में नहीं आई कि तुमने फाँसी के पूर्व इतनी भारी कसरत क्यों की?"

राजेंद्रनाथ लाहिड़ी ने बड़े भोलेपन से उत्तर दिया—

"जज साहब! व्यायाम करना मेरा नित्य का नियम रहा है। मैंने व्यायाम करने में कभी नागा नहीं किया। फिर जीवन के आखिरी दिन मृत्यु के भय से मैं अपना नित्य नियम क्यों छोड़ता! व्यायाम करने का एक दूसरा कारण भी है और वह यह कि हम हिंदू लोग पुनर्जन्म के सिद्धांत में विश्वास करते हैं। मैंने जीवन के आखिरी दिन भी व्यायाम इसीलिए किया कि मैं तगड़ा ही जाऊँ और जब मुझे दूसरा जन्म मिले तो मैं तगड़ा ही आऊँ, जिससे ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध फिर युद्ध कर सकूँ।"

एक मरनेवाले के मुँह से यह करारा उत्तर सुनकर अंग्रेज जज सहमकर रह गया।

फाँसी के तख्ते पर खड़े होकर राजेंद्रनाथ लाहिड़ी ने 'भारत माता की जय' और 'वंदेमातरम्' के घोष किए। जल्लाद ने लीवर खींचा और राजेंद्रनाथ का शरीर रस्से पर झूल गया।

गोंडा निवासियों ने राजेंद्रनाथ लाहिड़ी का शव प्राप्त करके बड़े समारोह के साथ उनका अंतिम संस्कार संपन्न किया।

एक वीर की बलि से आजादी के आंदोलन को और बल मिला।

□

## ★ रामकृष्ण खत्री

लखनऊ जेल की एक बैरक में काकोरी ट्रेन डकैती के आरोप में गिरफ्तार क्रांतिकारियों को बंद कर दिया गया था। एक दिन तय हुआ कि क्रांतिकारी लोग जेल की बैरक में अपनी अदालत अलग स्थापित करें, उनकी सुनवाई हो और उस मुकदमे का फैसला सुनाया जाए। दो-तीन दिनों तक उन्होंने न्याय का नाटक बड़ी सफलतापूर्वक खेला। बाकायदा अभियुक्त लोग कठघरे में खड़े होते थे, सरकारी वकील उनपर आरोप लगाता और सफाई का वकील उन तर्कों को काटता था।

रामकृष्ण खत्री

न्यायाधीश के स्थान पर बैठाया जाता था रामकृष्ण खत्री को।

जिस दिन क्रांतिकारी अदालत ने अपना निर्णय सुनाया, उस दिन सभी के दिलों में यह जानने की उत्सुकता थी कि न्यायाधीश महोदय किसको कितना दंड सुनाते हैं। जज के रूप में रामकृष्ण खत्री ने अपना आसन ग्रहण किया। कुछ कागजों को उन्होंने उलटा-पलटा और खाँस-खूँसकर अपना निर्णय सुनाना प्रारंभ किया। पहले उन्होंने उन लोगों के नाम पढ़े, जिन्हें कम सजाएँ दी गई थीं; अर्थात् उन्होंने कुछ को पाँच वर्ष, कुछ को दस वर्ष और कुछ को आजन्म कारावास की सजाएँ सुनाईं। जब उन्होंने अभियुक्त ठाकुर रोशनसिंह को पाँच वर्ष के कारावास की सजा सुनाई तो रोशनसिंह अपनी सजा सुनकर चीख पड़े—

''इतनी कम सजा मेरा अपमान है! इतनी कम सजा मेरी ठकुरास के लिए कलंक है।''

जज महोदय ने धरती पर अपना मुक्का पटकते हुए कहा—

''ऑर्डर! ऑर्डर!''

यह 'ऑर्डर-ऑर्डर' सुनकर और न्यायाधीश महोदय को धरती पर मुक्का पटकते हुए देखकर ठाकुर साहब ताव खा गए। वे भी अपना मुक्का तानकर न्यायाधीश की ओर लपके। न्यायाधीश महोदय ने सोचा कि ठाकुर का क्या ठिकाना, कहीं सचमुच न मार बैठे, वे अपने कागज-पत्तर उठाकर भाग खड़े हुए। अन्य लोगों ने ठाकुर साहब को रोका और उन्हें शांत किया। यद्यपि वह न्याय का नाटक मात्र था, पर उन्हें सचमुच ही क्रोध आ गया था। क्रोध शांत होने पर अगले ही क्षण उन्होंने रामकृष्ण खत्री के गले में हाथ डाला और कहने लगे—

''क्या तेरा अनुमान है कि सचमुच ही मुझे पाँच वर्ष के कारावास की सजा होगी?''

''हाँ, ठाकुर साहब! मेरा तो यही अनुमान है।''

''तेरे इस अनुमान का आधार क्या है?''

''मेरे इस अनुमान का आधार यह है कि एक तो आप ट्रेन लूटनेवालों में सम्मिलित नहीं थे और फिर आपके विरुद्ध कोई गंभीर आरोप भी तो नहीं है।''

"पर यार, सचमुच ही अगर ऐसा हुआ तो बुरा होगा। मुझसे कम उम्र के लड़कों को लंबी सजाएँ हों, उम्र कैद हों और फाँसियाँ लगें तो यह मेरा अपमान होगा।"

"ठाकुर साहब! सजाएँ उम्र के आधार पर नहीं, जुर्म के आधार पर दी जाती हैं।"

"चलो खैर देखा जाएगा; पर तू आज मेरे हाथ नहीं आया, यह अच्छा ही हुआ।"

"हाँ, सचमुच अच्छा ही हुआ। आपका गुस्सा नकली था तो क्या, हाथ तो मुझपर असली पड़ जाते।"

क्रांतिकारियों के बीच उस दिन का मनोविनोद इस प्रकार समाप्त हो गया। रामकृष्ण खत्री भी काकोरी केस के एक अभियुक्त थे। यद्यपि वे भी काकोरी ट्रेन डकैती में सम्मिलित नहीं थे, पर वे अपने दल के साथ अन्य अभियानों में सम्मिलित हो चुके थे। वे क्रांतिकारी दल में किस प्रकार सम्मिलित हुए, यह कहानी भी रोचक है।

रामकृष्ण खत्री महाराष्ट्र के चाँदा जिले के अंतर्गत 'चिखली' गाँव के रहनेवाले थे। अपने विद्यार्थी काल में वे उग्र विचारों के थे और डॉ. मुंजे तथा बाल गंगाधर तिलक से विशेष रूप से प्रभावित थे। परिस्थितियों के कारण उन्होंने अपनी युवावस्था में ही संन्यास ले लिया और 'उदासी साधु संप्रदाय' के सचिव बन गए। अब वे स्वामी गोविंद प्रकाश के नाम से साधना कर रहे थे।

संयोग ऐसा हुआ कि एक बार स्वामी गोविंद प्रकाश की भेंट चंद्रशेखर आजाद से हो गई। चंद्रशेखर आजाद भी उन दिनों एक साधु के वेश में रह रहे थे। एक आश्रम का महंत मरने वाला था। मरने के पहले वह किसी ब्राह्मण वंश के बालक को गोद लेना चाहता था, जो उसके पश्चात् आश्रम और उसकी संपत्ति का उत्तराधिकारी बन सके। क्रांतिकारियों ने सोचा कि किसी क्रांतिकारी को उस साधु का शिष्य बना दिया जाए, जिससे साधु की मृत्यु के उपरांत उसकी जायदाद क्रांतिकारियों के हाथ लग जाए। सबने निश्चय करके चंद्रशेखर आजाद को उसका शिष्य बना दिया। आजाद ने सोचा कि गुरुजी मरने वाले हैं ही, इनकी अच्छी सेवा कर ली जाए। आजाद की सेवा से वह साधु स्वस्थ होने लगा।

स्वामी गोविंद प्रकाश से आजाद का पूर्व परिचय था। दोनों एक दिन साधु वेश में मिले। उन्होंने एक-दूसरे को अपने अनुभव सुनाए। आजाद ने बताया कि हमारे महंतजी तो मरने के बजाए अब और तगड़े हो गए हैं तथा जिस लालच से मैं उनका शिष्य बना था वह उद्देश्य दूर होता जा रहा है, अतः मैं तो उसे छोड़-

छाड़कर भागने वाला हूँ। स्वामी गोविंद प्रकाश ने बताया कि अपनी स्थिति से संतुष्ट तो मैं भी नहीं हूँ, क्योंकि मैंने बहुत गहराई में उतरकर देख लिया है कि केवल कुछ पहुँचे हुए साधुओं को छोड़कर शेष स्वार्थी और चरित्रहीन हैं तथा उनके साथ मेरी निभती नहीं है। आजाद ने गोविंद प्रकाशजी को फुसलाया—

"कहाँ इस उम्र में संन्यासी बनने चले हो! सारी जिंदगी ऐसे लोगों के बीच कैसे निकालोगे? अच्छा है कि इन लोगों द्वारा पतित किए जाने के पहले क्रांतिकारी दल में आ जाओ और बंदिनी भारत माता की कुछ सेवा कर लो।"

बात स्वामी गोविंद प्रकाश की समझ में आ गई। वे आजाद के कहने से क्रांतिकारी दल में सम्मिलित होने के लिए राजी हो गए। आजाद तो पहले से ही क्रांतिकारी थे। दोनों ने अपने-अपने रँगे हुए कपड़े उतार फेंके और सुमरनी के स्थान पर रिवॉल्वर अपना लिये। अब वे स्वामी गोविंद प्रकाश नहीं, क्रांतिकारी दल के रामकृष्ण खत्री थे।

रामकृष्ण खत्री के पास यौवन था, बलिष्ठ देह थी, सूझबूझ थी और दल के प्रति निष्ठा थी। वे क्रांतिकारी दल की सभी योजनाओं और अभियानों में सम्मिलित होने लगे।

उन्हीं दिनों ९ अगस्त, १९२५ को रामप्रसाद बिस्मिल के नेतृत्व में क्रांतिकारियों ने सहारनपुर-लखनऊ डाउन पैसेंजर गाड़ी रोककर उसमें रखा अंग्रेजी खजाना लूट लिया। इस ट्रेन डकैती के फलस्वरूप जो व्यापक धर-पकड़ हुई, उसके अंतर्गत बहुत से क्रांतिकारी गिरफ्तार कर लिये गए। बहुत से ऐसे क्रांतिकारी भी गिरफ्तार कर लिये गए, जो ट्रेन डकैती में सम्मिलित नहीं थे। रामकृष्ण खत्री भी इसी प्रकार गिरफ्तार कर लिये गए। उन्हें सभी क्रांतिकारियों के साथ लखनऊ जेल में रखा गया।

जेल अधिकारियों के साथ प्रारंभिक झगड़ों और अनशनों के परिणाम स्वरूप क्रांतिकारियों को जेल में कुछ सुविधाएँ मिलीं। वे एक साथ मिल सकते थे, गपशप कर सकते थे और खेलकूद में भाग ले सकते थे। उनका मुकदमा खिंचते-खिंचते बहुत समय हो गया था। सभी लोग अपनी और दूसरों की सजाओं के विषय में अटकलें लगाया करते थे। एक दिन तय हुआ कि हम लोग स्वयं अपनी अदालत स्थापित करें और सभी के भाग्य का फैसला सुनाएँ। फलतः जेल के अंदर न्याय का नाटक रचा गया। रामकृष्ण खत्री स्वस्थ और रंग से गोरे थे। उन्हें न्यायाधीश के आसन पर बैठाया गया। अपनी विवेक-बुद्धि के आधार पर न्यायाधीश रामकृष्ण खत्री ने फैसला सुनाया। जब उन्होंने ठाकुर रोशनसिंह को पाँच वर्ष के कारावास का दंड सुनाया तो ठाकुर साहब बिगड़ पड़े। बाद में, जब जज मि. हेमिल्टन ने उनका फैसला सुनाया तो ठाकुर रोशनसिंह को उन्होंने फाँसी के दंड की तजवीज की।

विचित्र बात् यह है कि रामकृष्ण खत्री द्वारा सुनाया गया फैसला हेमिल्टन द्वारा सुनाए गए फैसले से बहुत अधिक मिलता था। जो दंड उन्होंने स्वयं के लिए सुनाया था, वह बिलकुल ठीक निकला।

६ अप्रैल, १९२७ को लखनऊ की अदालत ने काकोरी केस का निर्णय दिया। इस निर्णय के अनुसार रामकृष्ण खत्री को दस वर्ष के कठोर कारावास का दंड मिला।

क्रांतिकारियों का न्यायाधीश सीखचों के अंदर बंद कर दिया गया।

□

## ★ रामकृष्ण चक्रवर्ती

सावित्री देवी ने अपने मकान में सूर्यसेन और उनके साथी क्रांतिकारियों को प्रश्रय दिया था। उसके दुमंजिला मकान पर जब घेरा डाला गया तो सूर्यसेन और प्रीतिलता वादेदार तो भाग निकलने में सफल हो गए, लेकिन पुलिस के साथ हुई मुठभेड़ में क्रांतिकारी निर्मल सेन और अपूर्व सेन मारे गए। सावित्री देवी एवं उनके पुत्र रामकृष्ण चक्रवर्ती को गिरफ्तार करके मुकदमा चलाया गया और उन दोनों को चार-चार वर्ष के कठोर कारावास का दंड मिला।

रामकृष्ण चक्रवर्ती को जब गिरफ्तार किया गया था, उस समय उसे क्षय की बीमारी की प्रारंभिक अवस्था थी। मिदनापुर जेल की अँधेरी कोठरी में रहने, पैरों में निरंतर बेड़ियाँ पड़ी रहने के कारण उसकी बीमारी बढ़ती चली गई। मिदनापुर जेल में ही रामकृष्ण चक्रवर्ती की माँ सावित्री देवी को रखा गया था। माँ और पुत्र को कभी मिलने या एक-दूसरे को देखने का अवसर नहीं दिया जाता था। माँ को केवल इतना संतोष था कि उसका पुत्र उसके निकट ही है। वह जेल के सेवकों से उसके विषय में पूछ लिया करती थी।

रामकृष्ण चक्रवर्ती उन स्वाभिमानी व्यक्तियों में से था, जो टूट जाते हैं, लेकिन झुकने को तैयार नहीं होते। उसने जेल के अधिकारियों के अनुचित आदेशों की हमेशा ही अवहेलना की और परिणाम यह हुआ कि उसे दंडस्वरूप जंजीर में बाँधकर जेल की कोठरी में रखा जाने लगा।

भीषण यातनाओं, मानसिक त्रास और बीमारी की पराकाष्ठा ने रामकृष्ण चक्रवर्ती को मजबूर कर दिया कि वह सारे बंधन तोड़कर मुक्त हो जाए। एक दिन (सन् १९३६) वह अपनी कोठरी में जंजीरों में जकड़ा हुआ मरा पाया गया।

रामकृष्ण चक्रवर्ती की माँ सावित्री देवी के साथ जो सबसे बड़ी कृपा की गई, वह यह थी कि अपने मृत पुत्र की एक झलक भर उसे मिल सकी। जिस कोठरी में रामकृष्ण का शव पड़ा हुआ था, उसके लौह सीखचों के बाहर से केवल कुछ क्षणों के लिए उसकी माँ को अपने मृत पुत्र की झलक पाने का अवसर दिया गया। वह अपने पुत्र के शव का न तो स्पर्श कर सकी और न उसपर आँसू गिरा सकी।

मातृभूमि के उपासकों को ऐसी यातनाओं के उपहार भी दिए गए हैं। □

# ★ रामदुलारे त्रिवेदी

कानपुर के पटकापुर मैस में सामान्यत: बंगाली लोग ही रहते थे, पर कभी-कभी उस शहर में नए आए इतर बंगाली लोग भी कुछ दिन के लिए प्रश्रय पा जाते थे। इसी प्रकार के लोगों में एक नौजवान रामदुलारे त्रिवेदी जब वहाँ पहुँचा तो वहाँ के निवासियों के कान खड़े नहीं हुए; क्योंकि वे जानते थे कि यह कोई क्रांतिकारी होगा, जो गणेशशंकर विद्यार्थी द्वारा वहाँ भेजा गया होगा। सचमुच ही रामदुलारे त्रिवेदी के प्रति विद्यार्थीजी की गहरी सहानुभूति थी; क्योंकि त्रिवेदी उस धातु का बना हुआ नौजवान था, जिसे झुकना नहीं आता। कानपुर जिले में जनमे इस नौजवान का जीवन बड़ा संघर्षपूर्ण रहा था; क्योंकि अल्पायु में ही पिता की मृत्यु के पश्चात् उसने स्वयं की, अपनी माता की तथा अपने छोटे भाई की जिम्मेदारी अपने बाल कंधों पर सँभाली थी और वह भी बंबई जैसे महानगर में रहते हुए। सन् १९२१ के 'असहयोग आंदोलन' में सक्रिय भाग लेने के कारण उसे छह मास के कठोर कारावास का दंड दिया गया था। उसे बरेली जेल में रखा गया था और जेल के अधिकारी लोग उसका लोहा मानते थे।

श्री गणेशशंकर विद्यार्थी के सहयोग से कानपुर में रामदुलारे त्रिवेदी को एक विद्यालय में स्काउट मास्टर का कार्य मिल गया और आजीविका का काम चल निकला।

रामदुलारे त्रिवेदी जैसे उग्र विचार का व्यक्ति चुपचाप नहीं बैठ सकता था। पटकापुर के बंगाली मैस में सुरेशचंद्र भट्टाचार्य की प्रेरणा से वह क्रांतिकारी दल में सम्मिलित हो गया। क्रांतिकारी साथी जोगेशचंद्र चटर्जी से उसकी अच्छी पटती थी। इन दोनों ने क्रांतिकारी संगठन के उद्देश्य से शाहजहाँपुर, अलीगढ़ तथा झाँसी

आदि स्थानों का सघन दौरा किया।

परिणाम वही हुआ, जो होना था। काकोरी ट्रेन डकैती के परिणामस्वरूप पुलिस ने रामदुलारे त्रिवेदी को भी गिरफ्तार कर लिया। उस मुकदमे में उसे पाँच वर्ष के कठोर कारावास का दंड मिला। अपनी कारावास अवधि रामदुलारे ने बहुत बहादुरी के साथ पूरी की और जेल के अधिकारियों के लिए वह सिरदर्द बना रहा।

मुक्ति के पश्चात् भी रामदुलारे त्रिवेदी को फिर एक बार गिरफ्तार किया गया; क्योंकि पुलिस को संदेह था कि उसने पुलिस के एक मुखबिर की हत्या की थी। आरोप सिद्ध नहीं हो सका और मुक्ति के पश्चात् पत्रकारिता अपनाकर फिर रामदुलारे त्रिवेदी ने सरकार की खबर लेना प्रारंभ कर दिया।

□

# ★ रामनाथ पांडे

रामनाथ पांडे की उम्र उस समय लगभग सोलह वर्ष की ही रही होगी, जब वह क्रांति के पथ पर चल पड़ा। अभी वह किसी क्रांतिकारी दल का नियमित सदस्य नहीं बना था। उसे राजेंद्रनाथ लाहिड़ी का 'पोस्ट बॉक्स' बनाया गया था। अपने क्रांतिकारी साथियों से जो सूचनाएँ राजेंद्रनाथ लाहिड़ी को मँगानी होती थीं, उन सूचनाओं के सभी पत्र रामनाथ पांडे के पते पर ही पहुँचते थे। समय-समय पर राजेंद्रनाथ लाहिड़ी रामनाथ पांडे के पास पहुँचकर वे पत्र प्राप्त कर लिया करते थे। यह व्यवस्था इसलिए करनी पड़ी थी, क्योंकि पुलिस को राजेंद्रनाथ लाहिड़ी की गतिविधियों पर संदेह था और उनके नाम से पहुँचानेवाले पत्र खुफिया पुलिस के लोग डाकखाने के अधिकारियों से मिलकर पढ़ लिया करते थे।

रामनाथ पांडे को अपना पोस्ट बॉक्स बना लेने के कारण राजेंद्रनाथ लाहिड़ी का काम सुचारु रूप से चल रहा था। पर फिर भी कभी-कभी तो अपने पत्र लेने के लिए उन्हें पांडे के पास जाना पड़ता था। दोनों के मेल-मिलाप से पुलिस को संदेह हो गया और अब खुफिया पुलिस ने डाकखाने के अधिकारियों से मिलकर रामनाथ पांडे के नाम आनेवाले पत्र भी पढ़ने प्रारंभ कर दिए। यह निश्चित हो जाने पर कि रामनाथ पांडे राजेंद्रनाथ लाहिड़ी का पोस्ट बॉक्स है, एक दिन पुलिस ने उसे उसके कमरे पर उस समय गिरफ्तार कर लिया, जब डाकिया उसकी डाक देकर लौट रहा था। पुलिस वह डाक पहले ही देख चुकी थी।

तलाशी लेने पर रामनाथ पांडे के पास से गोविंद चरण कर तथा इंदुभूषण के

पत्र मिले। ये दोनों ही क्रांतिकारी थे। उसके पास से कुछ ऐसे परचे भी बरामद हुए, जिनमें कुछ छावनियों और नदियों तथा उनपर बने हुए पुलों के ब्योरे थे। यह सारी जानकारी किसी व्यापक षड्यंत्र के संदर्भ में एकत्रित की जा रही थी।

गिरफ्तारी के पश्चात् रामनाथ पांडे को काकोरी ट्रेन डकैती के मुकदमे में सम्मिलित कर लिया गया। इसके परिणाम के अनुसार राजेंद्रनाथ लाहिड़ी को फाँसी का दंड सुनाया गया और अल्पायु को देखते हुए रामनाथ पांडे को पाँच वर्ष के कठोर कारावास का दंड दिया गया।

यद्यपि रामनाथ पांडे को काकोरी केस में केवल पाँच वर्ष के कारावास का ही दंड दिया गया था, पर इस दंड का फल उसके परिवारवालों को भी भुगतना पड़ा; क्योंकि अल्पायु में भी रामनाथ पांडे विद्याध्ययन करने के साथ-साथ अपने परिवार का भरण-पोषण भी करता था।

रामनाथ पांडे का जन्म बनारस के एक संभ्रांत ब्राह्मण परिवार में सन् १९१० में हुआ था। जब वह छोटा ही था तभी उसके सिर पर से पिता की छाया उठ गई। स्वावलंबन के पथ पर चलकर रामनाथ पांडे ने परिवार की जिम्मेदारियाँ अपने कंधों पर ले लीं।

हवालाती जीवन में रामनाथ पांडे को भाँति-भाँति के कष्ट दिए गए; पर उसने कोई कमजोरी नहीं दिखाई तथा एक भी भेद पुलिस को नहीं दिया। वह अपने शरीर और मन दोनों से ही बलिष्ठ था। व्यायाम करना उसका नित्य का नियम था, जिसका पालन वह जेल में भी करता रहा। उसकी गिरफ्तारी के पश्चात् उसकी माँ को अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा। पर वह कहा करता था कि भारत माता के कष्ट दूर करने के लिए यदि मेरी अपनी माता कष्ट पा रही है तो कोई बड़ी बात नहीं है।

□

## ★ रामनारायण सिंह

उसने मृत्यु का सहर्ष वरण कर लिया, लेकिन राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेने के कारण क्षमा-याचना करने से इनकार कर दिया। रामनारायण सिंह को 'भारत छोड़ो आंदोलन' के अंतर्गत गिरफ्तार किया गया था। जेल के अधिकारी उसे क्षमा-याचना के लिए विवश कर रहे थे; लेकिन वह दृढ़ था कि राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेना अपराध नहीं है और इसके लिए मैं क्षमा-याचना नहीं करूँगा। अब जेल के

अधिकारियों ने उसे दंड देने की ठान ली।

बारीक पिसा हुआ काँच दूध में मिलाया गया और वह रामनारायण सिंह को पीने के लिए दिया गया। उसने दूध पीने से इनकार कर दिया। जेल अधिकारियों ने वह दूध उसे बलपूर्वक पिला दिया। उसकी तबीयत खराब हो गई और उसे खून की उलटियाँ होने लगीं। उसे जेल से मुक्त कर दिया गया; क्योंकि जेल के अधिकारी उसकी मृत्यु का कलंक अपने ऊपर नहीं लेना चाहते थे।

घर पहुँचकर उसी दिन रामनारायण सिंह की मृत्यु हो गई।

रामनारायण सिंह का जन्म मिर्जापुर के 'नाकाहारा' नामक ग्राम में सन् १९११ में हुआ था। वह कृषक पुत्र था। उसके पिता का नाम श्री महादेव सिंह था।

□

## ★ रामबाबू ★ सूरजनाथ चौबे

पटना सिटी पुलिस स्टेशन का थानेदार रामनारायण सिंह इस अर्थ में कुख्यात था कि वह क्रांतिकारियों को गिरफ्तार करने में बहुत तत्परता दिखाता था। उनको मुकदमे के दौरान फाँसने में भी उसकी बुद्धि बहुत चलती थी।

सूरजनाथ चौबे और रामबाबू नाम के क्रांतिकारियों ने निश्चय किया कि अपने रास्ते के इस काँटे को हटाना चाहिए। एक दिन योजना बनाकर उन दोनों ने रामनारायण सिंह पर काँकरबाग रोड पर हमला कर दिया और उसे मौत के घाट उतार दिया। इस मामले में सूरजनाथ चौबे पकड़ा गया। रामबाबू पुलिस के हाथ नहीं लग सका। सूरजनाथ चौबे पर मुकदमा चला और उसको फाँसी की सजा सुना दी गई। १८ अप्रैल, १९३२ को उसको फाँसी दे दी गई।

अपने साथी का बदला लेने के उपाय रामबाबू सोचने लगा। वह एक बम लेकर पटना कोतवाली के निकट धर्मशाला में ठहर गया। एक दिन वह अलमारी में से बम को निकाल रहा था कि बम उसके हाथ से छूटकर भूमि पर गिर पड़ा। बम विस्फोट से रामबाबू सख्त घायल हो गया। उसे अस्पताल भिजवाया गया, जहाँ वह ७ अगस्त, १९३२ को दिवंगत हो गया।

□

# ★ रामस्वरूप शर्मा

उत्तर प्रदेश के मेरठ नगर के रामस्वरूप शर्मा की गणना नगर के उग्र क्रांतिकारियों में की जाती थी। जोखिम के किसी भी काम में वह युवक आगे-आगे ही रहता था। वह कहा करता था कि लंबी आयु नहीं, सार्थक आयु अच्छी होती है। उसे अपनी आयु को सार्थक करने का अवसर भी उस समय मिल गया, जब 'भारत छोड़ो आंदोलन' के अंतर्गत मेरठ नगर में विशाल जुलूस निकाला गया। पुलिस ने जुलूस पर गोलियाँ चलाईं और रामस्वरूप शर्मा ने शहादत प्राप्त करके अपने जीवन को सार्थक किया।

□

# ★ रामू गोंड

रामू गोंड ने भी मध्य प्रदेश के बैतूल जिले का नाम उजागर किया। वह 'बारंगबाड़ी' ग्राम का निवासी था। सन् १९४२ के आंदोलन में उसने हौसले के साथ भाग लिया और जब पुलिस ने जुलूस पर गोलियाँ चलाईं तो रामू घटनास्थल पर ही शहीद हो गया।

□

# ★ रुक्मिणी बाई

रुक्मिणी बाई यद्यपि एक महिला थी; लेकिन अगस्त क्रांति में उसने जिस तरह से भाग लिया, वह आश्चर्यजनक ही कहा जाएगा। वह पुरुषों के साथ तोड़-फोड़ के काम में भी हौसले के साथ भाग लेती थी। पुलिस मुश्किल से ही उसे गिरफ्तार कर सकी। उसपर मुकदमा चलाया गया और उसे छह महीने के कठोर कारावास का दंड दिया गया। उसकी मृत्यु जेल में ही हुई।

रुक्मिणी बाई का जन्म मध्य प्रदेश के रायपुर जिले के 'तमोरा' ग्राम में हुआ था। उसका विवाह बिझवार काशीवाड़ा के श्री महाराजी क्षेत्रपाल के साथ हुआ था।

□

# ★ ठाकुर रुद्रप्रताप सिंह

'भारत छोड़ो आंदोलन' की लहर थी। वर्तमान मध्य प्रदेश के नरसिंहपुर जिले में यह आंदोलन उग्र हो उठा था। जिले के ग्राम 'चीचली' में दो आंदोलनकारी शहीद हो चुके थे।

मानेगाँव के ठाकुर रुद्रप्रताप सिंह ने अपने जिले नरसिंहपुर में आंदोलन को और अधिक उग्र करने का संकल्प कर लिया। यद्यपि उनके पिता और पितामह को ब्रिटिश शासन ने उपाधियों से विभूषित किया था, लेकिन ठाकुर रुद्रप्रताप सिंह इन प्रलोभनों से दूर रहे। उन्होंने संकल्पशील युवकों का संगठन खड़ा कर लिया। कार्यक्रम के अंतर्गत ठाकुर साहब ने निर्णय लिया कि गोटेगाँव के निकट एक रेलवे पुलिया उड़ाना है। उनकी इस योजना की गंध पुलिस को भी लग गई। पुलिस के पहरे के बावजूद रेल की पुलिया उड़ा दी गई। संदेह पर पुलिस ने मानेगाँव स्थित ठाकुर रुद्रप्रताप सिंह के घर पर छापा मारा। थोड़ी देर पहले ही वहाँ से विस्फोटक सामग्री हटा दी गई थी। कुछ प्रमाण नहीं मिला और ठाकुर साहब गिरफ्तारी से बच गए।

कुछ समय पश्चात् ठाकुर रुद्रप्रताप सिंह को ब्रिटिश विरोधी कार्यों के अंतर्गत गिरफ्तार करके जबलपुर की सेंट्रल जेल में डाल दिया गया। उनके साथियों के पते-ठिकाने पूछने के लिए पुलिस ने उन्हें घोर यातनाएँ दीं; लेकिन वह उनसे कुछ नहीं उगलवा सकी। जेल में ही उन्हें चेचक निकल आई। पुलिस तो उनसे हमेशा के लिए छुट्टी पाना ही चाहती थी। उनके इलाज में घोर उपेक्षा की गई। परिणाम यह हुआ कि २९ मार्च, १९४५ को जेल के अंदर ही ठाकुर रुद्रप्रताप सिंह ने शहादत प्राप्त कर ली।

ठाकुर रुद्रप्रताप सिंह का जन्म सन् १९१६ में राजपूत परिवार में हुआ था। आपके पिता का नाम ठाकुर शिवराम सिंह था।

□

# ★ श्रीमती रेणुका सेन

श्रीमती रेणुका सेन की गिरफ्तारी २० दिसंबर, १९३१ को श्रीमती लीला नाग के साथ ही हुई; पर जेल से उनकी मुक्ति उसी वर्ष हो गई। वे श्रीमती नाग की

शिष्या थीं। श्रीमती सेन को इस बात का खेद रहा कि वे पूरा समय अपनी दीदी के साथ जेल में नहीं रह सकीं। जेल मुक्ति के समय उनका कथन था—

"हाई स्कूल में पढ़ते हुए मैं अपनी प्राचार्या-दीदी से उतना नहीं सीख सकी, जितना जेल में। उनके साथ जेल में रहते हुए मैंने ऐसा अनुभव किया जैसे मैं विश्वविद्यालय में उनके सान्निध्य में पढ़ रही हूँ।"

श्रीमती लीला नाग के बालिका विद्यालय से मैट्रिक पास करने के पश्चात् रेणुका सेन ने बी.ए. पास किया और फिर वे कलकत्ता चली गईं। कलकत्ता में उन्होंने अर्थशास्त्र विषय में एम.ए. पास किया।

श्रीमती रेणुका सेन की गिरफ्तारी 'डलहौजी स्क्वायर बम कांड' में हुई। एक महीना तक वे प्रेसीडेंसी जेल में रहकर छूटीं। २० दिसंबर, १९३१ को वे श्रीमती लीला नाग के साथ फिर गिरफ्तार हुईं; पर १९३१ में ही छोड़ दी गईं।

□

## ★ रोशनलाल मेहरा

"अच्छा बेटे! तुम यह बताओ कि कल जिन-जिन क्रांतिवीरों की कहानियाँ तुम्हें सुनाई थीं, उनके नाम क्या हैं?"

"माँ! कल तुमने मुझे खुदीराम बोस और कन्हाईलाल दत्त की कहानियाँ सुनाई थीं।"

"इन लोगों के जीवन से हम लोगों को क्या प्रेरणा मिलती है?"

"माँ! हमें इन लोगों के जीवन से प्रेरणा मिलती है कि अपने देश और देशवासियों के हित के लिए हमें हँसते-हँसते अपने जीवन की कुर्बानी दे देनी चाहिए।"

"मेरे अच्छे बेटे! क्या तुम भी इन लोगों जैसे बनना चाहोगे?"

"हाँ, माँ! मैं अवश्य ही इन लोगों जैसा बनूँगा और लोगों को बता दूँगा कि मुझे माँ ने ही ऐसी शिक्षा दी थी।"
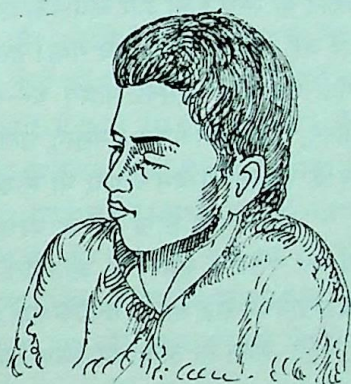
अपने बेटे के मुँह से यह बात सुनकर श्रीमती ललिता मेहरा का हृदय फूला नहीं समाया। वे क्रांतिकारी विचारों की विदुषी थीं और भारत के क्रांतिकारियों के साथ वे केवल सहानुभूति ही नहीं रखती थीं, सक्रिय रूप से भी उनकी सहायता करती रहती थीं। पार्टी के काम को आगे बढ़ाने में वे आर्थिक सहयोग भी देती थीं। अमृतसर में रहते हुए भी बंगाल की 'अनुशीलन समिति' के क्रांतिकारियों से उनका संपर्क था।

श्रीमती ललिता देवी मेहरा के पति श्री धनीराम मेहरा कपड़ों के थोक व्यापारी थे। अमृतसर की गली नैनसुख में उनका मकान था। धनीराम का ज्येष्ठ पुत्र वस्त्र व्यवसाय में अपने पिता का हाथ बँटाने लगा था। छोटा पुत्र रोशनलाल अभी पढ़ रहा था। माँ ललिता देवी उसे क्रांतिकारी विचारों में ढाल रही थीं।

कुछ समय पश्चात् धनीराम मेहरा की पत्नी ललिता देवी का देहांत हो गया। धनीराम मेहरा ने नई शादी कर ली। कालांतर में नई पत्नी से भी उन्हें दो पुत्र प्राप्त हुए।

माँ द्वारा दी गई शिक्षा-दीक्षा का प्रभाव रोशनलाल पर था और वह उसी दिशा में आगे बढ़ रहा था, जो दिशा उसकी माँ ललिता देवी ने उसके लिए सुझाई थी। सन् १९३० में उसका संपर्क उत्तर प्रदेश के एक प्रसिद्ध क्रांतिकारी शंभूनाथ आजाद के साथ हुआ और केवल सत्रह वर्ष की आयु में ही रोशनलाल क्रांतिकारी पार्टी का सक्रिय सदस्य बन गया। उस समय अमृतसर में क्रांतिकारियों का एक संगीत दल था, जिसके सदस्य थे—शंभूनाथ आजाद, सूरत के दयाशंकर उर्फ दयानंद, रोशनलाल मेहरा, रामसरन, उमाशंकर, गोविंदराम वर्मा और सरदार बंतासिंह। दल के सदस्यों ने बम बनाना भी सीख लिया था।

बम बनाना सीख लेने के पश्चात् क्रांतिकारियों का विचार हुआ कि पहले बम का परीक्षण शहर की कोतवाली पर किया जाए। वे लोग कोतवाली को बूचड़खाने की संज्ञा देते थे; क्योंकि वहाँ असहयोग आंदोलनकारियों और क्रांतिकारियों पर भाँति-भाँति के अत्याचार किए जाते थे। रोशनलाल मेहरा ने ही कोतवाली पर बम फेंका। बम का विस्फोट सफल रहा और कोतवाली का कुछ हिस्सा धराशायी हो गया। कुछ लोग घायल हुए। अमृतसर और पूरे पंजाब की पुलिस सतर्क हो गई। बहुत खोज करने पर भी अपराधियों का पता नहीं लग सका।

कोतवाली पर बम विस्फोट के पश्चात् क्रांतिकारियों के हौसले बढ़ गए। वे अधिक संख्या में बम बनाना चाहते थे; पर इस काम के लिए अधिक धन की आवश्यकता थी। विचार सामने आया कि राजनीतिक डकैतियाँ डाली जाएँ। रोशनलाल मेहरा ने इस प्रस्ताव का विरोध किया। उसने एक मौलिक प्रस्ताव

पार्टी के सामने रखा। उसने कहा कि हम लोग पंजाब को छोड़कर मद्रास प्रांत को अपना कार्यक्षेत्र बनाएँ, क्योंकि वहाँ का अंग्रेज गवर्नर यह शेखी बघारा करता है कि उसके प्रांत की जनता राजभक्त है और वहाँ क्रांतिकारी गतिविधियाँ नहीं पनप सकतीं। रोशनलाल ने कहा कि हम उस गवर्नर को बताएँ कि सारे भारतवर्ष में क्रांतिकारी लोग कहीं भी अपना काम कर सकते हैं। विचार अच्छा था, पर इसे पूर्ण करने के लिए भी काफी पैसे की आवश्यकता थी। पैसा जुटाने का दायित्व रोशनलाल ने अपने ऊपर लिया।

राजनीतिक डकैतियाँ डालने और खून-खच्चर करने के बजाय रोशनलाल मेहरा ने पैसा अपने ही घर से उड़ाना श्रेयस्कर समझा। उसे मालूम था कि उसके पिताजी की तिजोरी में काफी धन रहता है और सोते समय वे तिजोरी की चाबी भी उस कुरते की जेब में डाल देते हैं, जो खूँटी पर टँगा रहता है।

रोशनलाल मौके की तलाश में रहने लगा। एक रात जब सब लोग सो गए तो रोशनलाल ने पिताजी के कुरते की जेब से चाबियों का गुच्छा निकाला और तिजोरी खोल ली। नोटों की गड्डियाँ भी उसने तिजोरी के बाहर भूमि पर रख लीं। इसी समय एक दुर्घटना घटित हो गई। एक टाँड़ पर कुछ खाली कनस्तर रखे हुए थे। उनके पीछे चूहों का बसेरा रहा करता था। चूहों में आपस में धमाचौकड़ी हुई और टीन के कुछ कनस्तर भारी आवाज करते हुए नीचे आ गिरे। रोशनलाल फुरती से रजाई में दुबक गया। उसके पिता उठे और उन्होंने स्थिति का जायजा लिया। उन्होंने देखा कि तिजोरी खुली हुई है और नोटों की गड्डियाँ फर्श पर बिखरी पड़ी हैं। चोरी हो जानें की आशंका से उस कमरे में सोए हुए सब लोग उठ बैठे। रोशनलाल भी कच्ची नींद में से जागने का अभिनय करता हुआ उठ बैठा। सब लोगों ने पूरे मकान की अच्छी तरह से जाँच-पड़ताल की। सभी खिड़की-दरवाजे यथापूर्व बंद पाए गए। निष्कर्ष निकाला गया कि चोर बाहर का नहीं, घर का होना चाहिए। धनीराम का शक अपने दोनों वयस्क पुत्रों—अर्थात् रोशनलाल मेहरा और उसके बड़े भाई पर गया। वे बड़बड़ाकर रह गए और स्पष्ट रूप से किसी पर आरोप नहीं लगा सके।

स्वयं को निर्दोष सिद्ध करने के लिए रोशनलाल मेहरा ने पिता के शक के विरोध में अगले दिन से अनशन प्रारंभ कर दिया। चार दिन तक उसने अन्न ग्रहण नहीं किया। उसके दादा-दादी ने उसका पक्ष लिया। उसके पिता का उसपर से शक दूर हो गया। बात आई-गई हो गई।

इस घटना के तीन हफ्ते बाद रोशनलाल को फिर एक अवसर मिला। उसके पिताजी और उसकी सौतेली माँ—दोनों बाहर गए हुए थे। रोशनलाल को मालूम था

कि बाहर जाते समय उसके पिता तिजोरी की चाबियाँ कहाँ रख जाते हैं। नियत स्थान से उसने चाबियाँ उठाईं और तिजोरी खाली कर ली। उस समय उसमें पाँच हजार आठ सौ रुपए निकले। ये रुपए लेकर रोशनलाल चंपत हो गया। पाँच हजार रुपए तो उसने अपनी पार्टी के उपयोग के लिए अपने क्रांतिकारी साथी शंभूनाथ आजाद को दे दिए और खर्च के लिए आठ सौ रुपए अपने पास रख लिये। इस घटना के पश्चात् हमेशा के लिए उसने अपना घर छोड़ दिया।

घर आने पर जब रोशनलाल के पिता को घटना मालूम हुई तो उन्होंने पुलिस में रिपोर्ट दर्ज करा दी। उन्होंने उसके कुछ साथियों के नाम भी लिखवाए। पुलिस कोतवाली पर बम फेंकने की घटना के पश्चात् से पुलिस को भी कुछ क्रांतिकारियों की तलाश थी। रोशनलाल मेहरा के नाम गिरफ्तारी का वारंट निकाला गया और इनाम की घोषणा के साथ स्थान-स्थान पर उसके फोटो के साथ इश्तहार चिपका दिए गए।

शंभूनाथ आजाद ने रोशनलाल से पाँच हजार रुपए लेकर अपने ही दल के एक साथी लाहौर निवासी रामविलास शर्मा के पास रख दिए और उसे निर्देशित कर दिया कि हम जिस पते पर जितने रुपए मँगाएँ, तुम भेजते जाना। यह प्रबंध करके क्रांतिकारियों का यह दल उटकमंड होता हुआ मद्रास पहुँच गया। मद्रास के रामपुरम् क्षेत्र में किराए का एक मकान लेकर ये लोग उसमें रहने लगे। उस समय वहाँ शंभूनाथ आजाद, रोशनलाल मेहरा, सीतानाथ डे, सरदार बंतासिंह, इंद्रसिंह मुनि, खुशीराम मेहता, हीरालाल कपूर, नित्यानंद वात्स्यायन और गोविंदराम वर्मा रह रहे थे। कुछ समय पश्चात् सीतानाथ डे बंगाल चला गया।

इस दल के अमृतसर छोड़ने के पश्चात् पुलिस ने उस स्थान पर छापा मारा, जहाँ रामविलास शर्मा और अन्य क्रांतिकारी रहते थे। वे सब लोग गिरफ्तार कर लिये गए और पुलिस के हाथ वह धन भी लग गया, जो आजाद एवं रोशनलाल वहाँ छोड़ आए थे। पैसे के अभाव में मद्रास का क्रांतिकारी दल संकट में पड़ गया। कुछ लोगों ने योजना बनाई कि उटकमंड के बैंक पर डाका डालकर उसे लूटा जाए। रोशनलाल मेहरा ने इस योजना का विरोध किया और वह उसमें सम्मिलित नहीं हुआ। जिन साथियों ने उटकमंड बैंक पर डाका डाला, वे अपने कार्य में सफल तो हुए, पर शंभूनाथ आजाद को छोड़कर बाकी सबके सब गिरफ्तार कर लिये गए। जो साथी बचे, उनको लेकर शंभूनाथ आजाद एवं रोशनलाल ने रामपुरम् क्षेत्रवाला मकान छोड़कर तंबूचट्टी स्ट्रीट में एक नया मकान ले लिया और वहाँ रहने लगे।

पहले इन लोगों ने मद्रास के गवर्नर पर बम का प्रहार करने की योजना बनाई थी, उस योजना को किन्हीं कारणोंवश स्थगित करना पड़ा था। अब यह

निश्चित हुआ कि बम विस्फोट करके गिरफ्तार साथियों को जेल से छुड़ाया जाए। इस कार्य के लिए बम बनाना आवश्यक हो गया। बम निर्माण में काम आनेवाले पदार्थ जुटा लिये गए। समस्या आ गई बम के खोल ढलवाने की। पकड़े जाने के भय से एक अपरिचित स्थान पर इच्छानुसार खोल नहीं ढलवाए जा सकते थे। मद्रास में ढक्कनदार पीतल के लोटे मिलते थे। परीक्षण के लिए इसी प्रकार का एक लोटा लेकर उसके अंदर विस्फोटक पदार्थ भरा गया और पेंचदार ढक्कन से लोटा बंद कर दिया गया। योजना थी कि बम को चलाकर देखा जाए और यदि प्रयोग सफल रहता है तो अन्य बमों का निर्माण किया जाए। बम के परीक्षण का काम रोशनलाल मेहरा ने स्वयं अपने ऊपर लिया।

बम का परीक्षण समुद्र के किनारे उस स्थान पर करना था, जहाँ समुद्र के पानी को रोकने के लिए बड़े-बड़े पत्थरों की एक लंबी दीवार बना दी गई थी। १ मई, १९३३ की रात को चार क्रांतिकारी नियत स्थल पर पहुँच गए। अपने हाथ में बम लेकर रोशनलाल मेहरा निर्दिष्ट स्थान की ओर बढ़ने लगा। निर्दिष्ट स्थल से काफी दूर एक ओर शंभूनाथ आजाद ने अपना मोरचा जमाया और दूसरी ओर इंद्रसिंह मुनि तथा गोविंदराम वर्मा ने। यह निश्चित हो चुका था कि बम संधान के पश्चात् जिस दल के पास सुविधानुसार रोशनलाल मेहरा पहुँचे, वह दल सुरक्षापूर्वक उसे अपने निवास स्थान तक पहुँचाए।

दोनों ओर के दल उत्सुकतापूर्वक विस्फोट की प्रतीक्षा करने लगे। उधर बम हाथ में लेकर रोशनलाल निर्दिष्ट स्थान की तरफ बढ़ने लगा। मार्ग में अँधेरा था और ऊँची-नीची चट्टानों के कारण वह ऊबड़-खाबड़ था। एक चट्टान पर से रोशनलाल का पैर फिसला और वह धड़ाम से नीचे आ गिरा। ऊँचाई से गिरने के कारण उसके हाथ का बम भी नीचे की चट्टान से जोर से जा टकराया।

चट्टान से टकरा जाने के कारण बम का विस्फोट हो गया। एक प्रचंड धमाके के साथ उस पूरे क्षेत्र में बिजली जैसी कौंध गई और धुएँ के बादल उठने लगे। साथियों ने सोचा कि बम का विस्फोट सफल रहा और वे रोशनलाल मेहरा के आने की प्रतीक्षा करने लगे। काफी देर तक रोशनलाल मेहरा किसी ओर नहीं पहुँचा। शंभूनाथ आजाद ने सोचा कि वह इंद्रसिंह मुनि और गोविंदराम वर्मा के पास पहुँच गया होगा। इंद्रसिंह मुनि तथा गोविंदराम वर्मा ने सोचा कि वह शंभूनाथ आजाद के पास पहुँच गया होगा। अधिक देर तक वहाँ प्रतीक्षा नहीं की जा सकती थी, क्योंकि घटनास्थल की ओर पुलिस पहुँचने लगी थी और लोगों की उत्सुक भीड़ भी वहाँ जमा होने लगी थी। दोनों ही समूह अपने निवास स्थान पर पहुँच गए। रोशनलाल मेहरा किसी भी समूह के साथ न था। उसका पता लगाना आवश्यक था।

इंद्रसिंह मुनि ने मद्रासी ढंग के कपड़े पहने और वह घटनास्थल की ओर चल दिया। वहाँ जाकर जो उसने देखा, वह हृदयविदारक दृश्य था। उसने देखा कि गिरजाघर के सामने साथी रोशनलाल मेहरा का क्षत-विक्षत और लहूलुहान शव पड़ा हुआ है। उसका एक हाथ धड़ से लगभग अलग हो गया था और बम के टुकड़े पूरे शरीर में गहरे घुस जाने के कारण शरीर के चिथड़े बिखर गए थे। अपने साथी की इस दशा की सूचना देने के लिए इंद्रसिंह मुनि अपने अन्य साथियों की ओर लौट पड़ा।

मद्रास के लोग क्रांतिकारियों से सहानुभूति रखने लगे थे। भीड़-की-भीड़ शहीद के अंतिम दर्शन के लिए उमड़ पड़ी। पुलिस लाठियाँ चलाकर भीड़ को रोकने का प्रयास कर रही थी; पर लोग थे, जो कुछ लाठियाँ भले ही खा लें, एक शहीद के दर्शन किए बिना लौटने के लिए तैयार न थे।

रोशनलाल मेहरा देश के लिए अपना बलिदान दे गया। उसने अपनी माँ को दिया हुआ वचन पूरा कर दिखाया।

□

## ★ रोशनसिंह
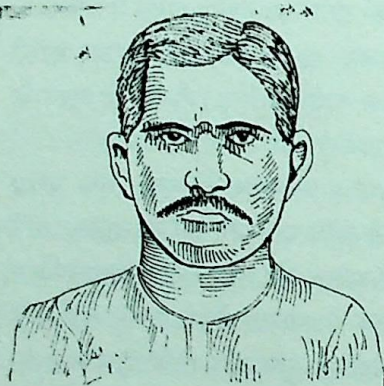
रोशनसिंह

ठाकुर रोशनसिंह में ठकुरास की ठसक थी। वे इरादों के पक्के और बात के धनी थे। कद उन्होंने अच्छा पाया था और शरीर उनका कसरत द्वारा गठा हुआ था। उनका शरीर बहुत अधिक मोटा-तगड़ा तो नहीं था, पर था वह ठोस और गठीला। उनकी मांसपेशियाँ इतनी अधिक कसी हुई थीं कि यदि उनके शरीर पर कोई लाठी दे मारे तो मारनेवाले का हाथ ही झन्ना जाए।

ठाकुर रोशनसिंह को लाठी चलाना, तलवार चलाना और बंदूक चलाना बखूबी आता था। वे हरफनमौला व्यक्ति थे। अपनी इन खूबियों के कारण उनमें एक दुर्व्यसन भी पैदा हो गया था और वह यह कि वे कभी-कभी डाके डालने चले

जाते थे। वे डाके इसलिए नहीं डालते थे कि उन्हें पैसों की जरूरत होती थी; उनकी माली हालत अच्छी थी और एक गाँव में सुख-सुविधा के जो साधन हो सकते हैं, वे सभी उनके पास थे। शाहजहाँपुर के पास 'नवादा' गाँव में उनकी अच्छी खेतीबाड़ी थी और उनके पास पशुधन भी प्रचुर मात्रा में था। उनका मकान बड़ा और हवादार था तथा मकान के साथ ही एक बगीचा भी लगा हुआ था, जो उन्हें बारहों महीने फल-फूल देता था। इतना सबकुछ होने पर भी ठाकुर रोशनसिंह कभी-कभी डकैती के लिए भी चले जाते थे। डकैती उनके लिए एक शौक था, ठीक उसी प्रकार जैसे उन्हें शिकार का शौक था। डकैती के द्वारा उनकी साहसिक प्रवृत्ति की तुष्टि हो जाया करती थी।

यह वह समय था, जब देश-भर में ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध 'असहयोग आंदोलन' की लहर चल रही थी। एक सरकश गाँव के ठाकुरों के नेता होने के कारण ठाकुर रोशनसिंह 'असहयोग आंदोलन' से अछूते कैसे रह सकते थे! वे भी उसमें कूद पड़े। धरने दिए और डंडे खाए। जो व्यक्ति डंडा चलाने में माहिर हो, उसे डंडे खाना रास नहीं आया। वे कुछ दिन और भी डंडे खा सकते थे, पर चौरीचौरा की हिंसक घटना के कारण गांधीजी ने 'सत्याग्रह आंदोलन' स्थगित कर दिया। जब देश-भर में गांधीजी के इस निर्णय के विरोध में तीव्र प्रतिक्रिया हुई तो ठाकुर रोशनसिंह भी भुनभुना उठे। उन्होंने हमेशा के लिए अहिंसावादी आंदोलन से अपना नाता तोड़ लिया।

ठाकुर रोशनसिंह खाली बैठनेवाले प्राणी नहीं थे। इधर उन्होंने गांधीवादी आंदोलन से अपना नाता तोड़ा तो उधर लगे हाथ वे सशस्त्र क्रांतिकारी आंदोलन से अपना नाता जोड़ बैठे। शाहजहाँपुर के रामप्रसाद बिस्मिल उनके परिचित थे। आर्यसमाज के कार्यक्रमों में दोनों ही उत्साह के साथ भाग लेते थे। रामप्रसाद बिस्मिल क्रांतिकारी गतिविधियों में संलग्न थे। उन्हें ठाकुर रोशनसिंह जैसे व्यक्ति की जरूरत भी थी। कभी-कभी उन्हें राजनीतिक दृष्टि से डाके डालने की जरूरत पड़ती थी। बिस्मिल का खयाल था कि डकैती जैसे अभियान में क्रांतिकारी बने हुए कॉलेज के लड़के शायद अच्छा काम न कर पाएँ, इसलिए किसी एकाध पेशेवर डाकू को साथ लेने का उन्होंने प्रयोग किया; एक-दो अभियानों में उन्होंने ठाकुर रोशनसिंह को अपने साथ रखा। बाद में राजनीतिक डाके डालने का विचार ही रामप्रसाद बिस्मिल ने छोड़ दिया। ठाकुर रोशनसिंह रामप्रसाद बिस्मिल से बहुत प्रभावित थे। रामप्रसाद बिस्मिल के संपर्क में आकर उन्होंने डकैतियों के अपने शौक को तिलांजलि दे दी। अब वे एक सशस्त्र क्रांतिकारी के रूप में रामप्रसाद बिस्मिल के दल में कार्य करने लगे। जिस प्रकार सप्तऋषियों के सत्परामर्श से

डाकू वाल्मीकि को सद्बुद्धि मिली, उसी प्रकार क्रांतिकारियों के संपर्क में आकर ठाकुर रोशनसिंह उग्र देशभक्ति में लीन हो गए।

क्रांतिकारियों को हथियार खरीदने के लिए तथा दल का खर्च चलाने के लिए धन की आवश्यकता होती ही थी। रामप्रसाद बिस्मिल के दल ने सब व्यक्तिगत डकैतियाँ बंद कर दीं तो उन्होंने विचारा कि अंग्रेजी खजाना लूटा जाए। ९ अगस्त, १९२५ को रामप्रसाद बिस्मिल के दल ने सहारनपुर से लखनऊ जानेवाली पैसेंजर गाड़ी को रोककर उसमें रखा हुआ अंग्रेजी खजाना लूट लिया। यह घटना लखनऊ से कुछ दूर काकोरी स्टेशन के पास हुई थी, इस कारण इसे 'काकोरी षड्यंत्र कांड' कहा गया। इस ट्रेन डकैती के परिणामस्वरूप सरकारी और गैर सरकारी क्षेत्रों में सनसनी फैल गई। एक महीने पश्चात् ही अर्थात् २६ सितंबर, १९२५ को बहुत से क्रांतिकारी गिरफ्तार कर लिये गए। यद्यपि ठाकुर रोशनसिंह काकोरी ट्रेन डकैती में सम्मिलित नहीं हुए थे, पर फिर भी वे रामप्रसाद बिस्मिल के दल के क्रांतिकारी होने के नाते गिरफ्तार कर लिये गए।

लखनऊ में 'काकोरी षड्यंत्र कांड' नाम से मुकदमा चला। यह मुकदमा डेढ़ साल तक चलता रहा। राजनीतिक कैदियों का दर्जा पाने के लिए प्रारंभ में ही क्रांतिकारियों को अनशन का सहारा भी लेना पड़ा। ठाकुर रोशनसिंह ने यहाँ भी अपना पराक्रम दिखाया। बिना बलात्पान के उन्होंने सोलह दिन निराहार रहकर निकाल दिए। अंत में सरकार तथा क्रांतिकारियों के बीच समझौता हो गया और क्रांतिकारियों ने अनशन त्याग दिया।

क्रांतिकारियों के भाग्य से उस समय लखनऊ जेल के जेलर रायबहादुर चंपालाल थे। वे मन-ही-मन क्रांतिकारियों के प्रति अनुराग-भाव रखते थे। वे क्रांतिकारियों को बहुत अपनापन देते थे। ठाकुर रोशनसिंह ने माँग रख दी कि जेल के अंदर अखाड़ा खुदवाया जाए। बस फिर क्या था, अखाड़ा भी तैयार हो गया। अखाड़ेबाजी जोरों से चलने लगी। ठाकुर रोशनसिंह उस्ताद बन गए। वे सभी को कुश्ती लड़ना सिखाने लगे। उन्हें स्वयं कुश्ती लड़ने का इतना अभ्यास था और उनमें इतना दमखम था कि एक-एक करके निरंतर छह व्यक्तियों के साथ कुश्ती लड़कर भी वे थकते नहीं थे। जेल के अंदर उन्होंने नए पहलवान भी पैदा कर दिए।

ठाकुर रोशनसिंह यद्यपि बहुत पढ़े-लिखे व्यक्ति नहीं थे, पर वे कुशाग्र बुद्धि थे और अत्यंत व्यवहार-कुशल भी थे। हिंदी और उर्दू का ज्ञान उन्हें पहले से ही था। अपने बंगाली मित्रों से वे जेल में बँगला भाषा भी सीखने लगे। अभ्यास करते-करते वे बँगला भाषा की पुस्तकें पढ़ने लगे। बँगला भाषा सीख लेने के

पश्चात् उन्हें धुन सवार हुई कि अंग्रेजी भी सीख ली जाए। अपने क्रांतिकारी साथियों से वे अंग्रेजी भी सीखने लगे। उनकी यह धुन देखकर रामप्रसाद बिस्मिल उन्हें छेड़ते—

"ठाकुर साहब! क्या फाँसी से बचने के लिए अंग्रेजी सीख रहे हैं?"

ठाकुर रोशनसिंह तपाक से उत्तर देते—

"नहीं-नहीं, मैं फाँसी पर चढ़ने के लिए अंग्रेजी सीख रहा हूँ। मैं उस अंग्रेज जज को अंग्रेजी में गाली दूँगा तो वह चिढ़कर मुझे फाँसी का दंड देगा।"

जेल में रहते हुए क्रांतिकारी लोग यह अनुमान तो लगा ही लेते थे कि किसको कितनी सजा मिलेगी। सभी क्रांतिकारियों का यह अनुमान था कि ठाकुर रोशनसिंह को पाँच वर्ष के कारावास से अधिक सजा नहीं मिलेगी। उन्होंने ट्रेन डकैती में हिस्सा नहीं लिया था और उनके विरुद्ध कोई संगीन जुर्म नहीं बन रहा था।

होते-करते वह दिन भी आ गया, जब 'काकोरी षड्यंत्र कांड' के मुकदमे का फैसला ६ अप्रैल, १९२७ को सेशन जज मि. हेमिल्टन ने लखनऊ के 'रिंग थिएटर' में सुनाया। जब ठाकुर रोशनसिंह का क्रम आया तो जज महोदय ने किसी एक धारा में उन्हें पाँच वर्ष के कारावास की सजा सुनाई और एक अन्य धारा में 'टु बी हैंग्ड टिल डैथ' कहा। ठाकुर रोशनसिंह ने अपने पास खड़े हुए रामकृष्ण खत्री के कान में कहा—

"यार खत्री! फाइव ईयर्सवाली बात तो मेरी समझ में आ गई; पर बाद में यह साला जज हैंग-हैंग क्या कह गया, यह बात मेरी समझ में नहीं आई?"

रामकृष्ण खत्री ने अपना दिल बहुत ही कठोर करके उनके कान में कहा—

"ठाकुर साहब! जज ने आपको फाँसी की सजा सुनाई है।"

अपने लिए फाँसी की सजा सुनकर ठाकुर रोशनसिंह खुशी के मारे अदालत में उछल पड़े और अपने अंग्रेजी के अल्प ज्ञान के आधार पर उन्होंने जज की तरफ देखते हुए 'थैंक यू जज साहब!' कहा। फिर दो बार उन्होंने 'ओ३म्' का जोरदार उच्चारण किया और दूसरे लोगों की सजाएँ सुनने लगे।

फाँसी की सजा सुनने के बाद जब ठाकुर रोशनसिंह अदालत से बाहर निकले तो उनका सीना फूला हुआ था और आँखों में चमक थी। वे रामप्रसाद बिस्मिल से कहते जा रहे थे—

"यार पंडितजी! मुझे छोड़कर अकेले ही फाँसी पर चढ़ने की योजना बना रहे थे; पर भगवान् ने मेरी सुन ही ली। अब ब्राह्मण-ठाकुर की जोड़ी एक साथ फाँसी के तख्ते पर चढ़ेगी।"

वैसे तो फाँसी की सजा पाए हुए कैदियों को अन्य कैदियों से तुरंत अलग कर दिया जाता है; पर इन लोगों को जेल में एक दिन और साथ रहने का अवसर दिया गया। अगले दिन उन्हें पृथक्-पृथक् जेलों में भेजा गया।

ठाकुर रोशनसिंह को इलाहाबाद की नैनी जेल भेजा गया। उनके साथियों ने उनसे दया-याचिका प्राप्त करने को कहा। ठाकुर रोशनसिंह का उत्तर था—

''यार, बड़ी मुश्किल से तो मनचाही सजा मिली है, फिर दया-याचना क्यों करूँ! अगर मेरी फाँसी की सजा रद्द हो गई तो क्या मेरी ठकुरास में बट्टा नहीं लग जाएगा? ठाकुर होकर हम गिड़गिड़ाएँ, यह हमसे नहीं होने का।''

ठाकुर साहब बाल-बच्चेदार आदमी थे। जब जेल में उनका पुत्र उनसे मिलने आया तो किसीने उससे कह दिया कि तुम्हारे पिताजी ने तो अंग्रेज सरकार से माफी माँग ली। वह भी ठाकुर का लड़का था, यह सुनकर उसे बहुत बुरा लगा। अपने पिता से मुलाकात करते समय उसने पहला सवाल यही किया—

''आपने माफी माँगकर हमारे कुल की कीर्ति पर धब्बा क्यों लगाया?''

ठाकुर रोशनसिंह इस आरोप को सुनकर चीख पड़े—

''तुम्हारा बाप दोगला नहीं है! उसके शरीर में असली खून है। उसने सरकार के आगे हाथ नहीं पसारे हैं।''

१९ दिसंबर, १९२७ को ठाकुर रोशनसिंह को फाँसी पर चढ़ना था। जल्दी उठकर उन्होंने सभी काम पूरे किए। स्नान करके उन्होंने ईश वंदना भी की। जेलर के आने पर वे 'गीता' हाथ में लिये हुए खुशी-खुशी उसके साथ चल दिए। फाँसी के तख्ते पर खड़े होकर उन्होंने अपनी पूरी शक्ति के साथ 'वंदेमातरम्' का घोष किया। फिर उतनी ही शक्ति के साथ उन्होंने 'ओ३म्' का उच्चारण किया। उनका मुख टोप से ढक दिया गया और उनके गले में फाँसी का फंदा डाल दिया गया। अगले ही क्षण उनका शरीर फाँसी के रस्से पर झुल रहा था।

ठाकुर रोशनसिंह का शव प्राप्त करने के लिए जेल के बाहर अपार भीड़ पहले ही मौजूद थी। वे लोग जुलूस के रूप में उनके शव को ले जाना चाहते थे। शासन ने उनको ऐसा करने की अनुमति नहीं दी। लोगों ने शांतिपूर्वक गंगा किनारे उनका अंतिम संस्कार संपन्न किया।

एक चटकदार फूल भारत माता के चरणों पर अर्पित हो गया।

□

# ★ रोहिणी बरुआ

रोहिणी बरुआ को जेल में इतनी यातनाएँ दी गईं कि वह सोचने लगा कि क्या मैं आत्महत्या कर लूँ। आत्महत्या का विचार उसके मन में उठा अवश्य, पर वह विचार टिक न सका। जो विचार उसके मन में स्थिर हुआ, वह यह कि आत्महत्या करने के स्थान पर उसकी हत्या क्यों न की जाए, जिसने केवल संदेह पर ही मुझे गिरफ्तार करके जेल में डाल रखा है और निहायत गंदे स्थान पर रखकर जो मुझे प्रतिदिन नई-नई यातनाएँ दे रहा है।

पुलिस के जो लोग क्रांतिकारियों के दमन के लिए बदनाम थे, उनमें सैयद इरशाद अली प्रमुख था। इरशाद अली फरीदपुर के ग्वालंदा थाने का थानेदार था। उसने ही केवल संदेह मात्र पर अठारह वर्ष के किशोर रोहिणी बरुआ को गिरफ्तार करके बहुत ही गंदे स्थान पर रखा हुआ था और उसे तंग करने के लिए नई-नई यातनाओं का आविष्कार करता रहता था।

इस बीच बरुआ की माँ का देहावसान हुआ। उसकी भाभी का भी देहावसान हो गया; पर थानेदार इरशाद अली ने रोहिणी बरुआ को घर नहीं जाने दिया और न उसके रिश्तेदारों से उसे मिलने दिया।

एक दिन हवालातियों को थानेदार सफाई का कुछ काम बता रहा था। मिट्टी इधर से उधर पटकने के लिए रोहिणी बरुआ को भी एक बेलचा दिया गया। रोहिणी बरुआ ने बेलचे का अच्छा उपयोग किया। उसने बहुत ही फुरती से कस-कसकर बेलचे के तीन प्रहार थानेदार की गरदन पर किए और इरशाद अली की गरदन उसके धड़ से लगभग अलग हो गई। यह घटना १५ जून, १९३५ को सुबह आठ बजे हुई। इरशाद अली केवल कुछ क्षण ही जी सका।

विशेष ट्रिब्यूनल के समक्ष रोहिणी बरुआ का मुकदमा पेश किया गया। १८ दिसंबर, १९३५ को फरीदपुर जेल में रोहिणी बरुआ को फाँसी के फंदे पर झुला दिया गया। उसकी लाश उसके आत्मीय जनों को नहीं दी गई। □

# ★ लक्ष्मीकांत शुक्ल

लक्ष्मीकांत शुक्ल

झाँसी के कमिश्नर मि. फ्लावर्स के सामने गिरफ्तार होकर जब महिला सत्याग्रहियों का जत्था पहुँचा तो कमिश्नर महोदय ने शिष्टता का परिचय देने के स्थान पर उनके साथ अभद्रता का व्यवहार किया। उन्होंने यहाँ तक कह दिया—

"मैं आप लोगों को परिवार की प्रतिष्ठित महिलाओं के रूप में कैसे मान्यता प्रदान करूँ! जब आप लोग घर की मर्यादा छोड़कर सड़कों पर निकल पड़ी हैं तो आप लोगों के साथ वही व्यवहार किया जाएगा, जो बाजारू औरतों के साथ किया जाता है।"

कमिश्नर महोदय का यह कथन भारतीय देवियों की गरिमा के लिए घोर अपमान के रूप में था। सभी जगह इसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई। एक क्रांतिकारी युवक लक्ष्मीकांत शुक्ल ने तो यह संकल्प कर लिया कि वह कमिश्नर को मौत के घाट उतारकर महिलाओं के इस अपमान का बदला लेगा।

वह ८ अगस्त, १९३० का दिन था। लक्ष्मीकांत शुक्ल अपनी जेब में एक बम रखकर कमिश्नर मि. फ्लावर्स के बंगले पर पहुँच गया। दरबान ने जब युवक का हुलिया और उसके हाव-भाव का वर्णन साहब के सामने किया तो साहब ने फोन करके पुलिस को बुला लिया। लक्ष्मीकांत शुक्ल बम सहित गिरफ्तार कर लिया गया। वास्तविकता यह थी कि कमिश्नर महोदय उसके आगमन की प्रतीक्षा ही कर रहे थे। लक्ष्मीकांत शुक्ल के एक गद्दार साथी ने उसकी योजना की सूचना

कमिश्नर साहब को पहले से ही दे दी थी। यद्यपि उन दिनों चंद्रशेखर आजाद झाँसी में ही थे; लेकिन लक्ष्मीकांत शुक्ल ने उनसे परामर्श किए बिना ही यह कांड करने का निश्चय कर डाला।

लक्ष्मीकांत शुक्ल को आजीवन कालापानी की सजा हुई। उनकी पत्नी भी अपनी इच्छा से अपने पति के साथ अंडमान चली गईं।

□

## ★ लटूरसिंह

उत्तर प्रदेश के मेरठ नगर के लटूरसिंह ने मेरठ नगर में ही एक जुलूस का नेतृत्व किया। पुलिस लटूरसिंह से बहुत परेशान थी। वह राजनीतिक आंदोलन में दो बार जेल की सजा काट चुका था। जेल के अंदर भी वह झगड़ा करता रहता था।

मेरठ की पुलिस ने आंदोलनकारियों पर गोलियाँ चलाने का प्रदर्शन करते हुए कुछ गोलियाँ हवा में चलाईं; लेकिन लटूरसिंह को निशाना बनाकर गोली से उड़ा दिया गया।

□

## ★ लाल पद्मधर सिंह

देश के दीवाने देश को आजाद कराने के लिए कृतसंकल्प थे। इन्हीं दीवानों में से एक थे लाल पद्मधर सिंह। वे बी.एस-सी. के छात्र थे और इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्ययन कर रहे थे। वे विश्वविद्यालय के हिंदू बोर्डिंग हाउस में रहते थे।

महात्मा गांधी और देश के बड़े-बड़े नेताओं को गिरफ्तार करके ब्रिटिश सरकार ने जेलों में डाल दिया था। अपने नेताओं के साथ यह दुर्व्यवहार देखकर देश का तरुण वर्ग जोश खा गया। वह मरने-मारने पर उतारू होकर आजादी के आंदोलन में कूद पड़ा।

१२ अगस्त, १९४२ का दिन था। इलाहाबाद के छात्र वर्ग ने एक विशाल जुलूस का आयोजन किया था। इस जुलूस का नेतृत्व सँभाला था एक तेजवंत नौजवान लाल पद्मधर सिंह ने। यह जुलूस इलाहाबाद हाई कोर्ट से प्रारंभ होकर

नगर के प्रमुख मार्गों पर जाने वाला था। इस जुलूस में छात्राएँ भी बहुत बड़ी संख्या में सम्मिलित हुई थीं। लड़कियों के आग्रह पर जुलूस में सबसे आगे उन्हींको खड़ा किया गया था। उनमें से कुछ के हाथों में बैनर्स थे।

पुलिस भी उस दिन विशेष रूप से तैयार होकर पहुँची थी। जुलूस के दोनों ओर घुड़सवार पुलिस थी। लाठीधारी पुलिस पंक्तियाँ भी विद्यार्थियों से सटकर चल रही थीं।

जब जुलूस ने चलना प्रारंभ किया तो जोरदार नारे जोश का संचार करने लगे। 'महात्मा गांधी की जय', 'भारत माता की जय' और 'अंग्रेजो! भारत छोड़ो' के गगनभेदी नारे माहौल को गरमाने लगे। तरंगायित छात्र समूह सड़कों को खूँदने लगा।

पुलिस दल ने छात्र दल को आगे न बढ़ने की चेतावनी दी। छात्र दल पर इस चेतावनी का कोई असर नहीं हुआ। उसने आगे बढ़ना ज़ारी रखा। इतने में एक पुलिस अफसर ने आगे बढ़कर नयनतारा सहगल के हाथों से तिरंगा झंडा छीनने का प्रयत्न किया। दोनों में झूमा-झटकी होने लगी। जुलूस का नेता लाल पद्मधर सिंह इसे बरदाश्त नहीं कर सका। उसने कड़कती हुई आवाज में पुलिस अफसर को ललकारा—

''एक लड़की के साथ जोर-आजमाई करते हुए तुझे शर्म नहीं आती! अगर मर्द का बच्चा है, तो आ मेरे साथ जोर-आजमाई कर।''

यह कहकर लाल पद्मधर सिंह ने नयनतारा सहगल के हाथ से तिरंगा झंडा अपने हाथ में ले लिया और आगे बढ़ना प्रारंभ किया। वह अभी कुछ कदम ही बढ़ा होगा कि एक सनसनाती हुई गोली आकर उसके सीने में समा गई। लाल पद्मधर सिंह देश की आजादी के लिए अपना बलिदान दे गया।

लाल पद्मधर सिंह ने अपने जीवन की तैयारी बलिदान के लिए ही की थी। उसका चिंतन और प्रत्येक कार्य देश की आजादी के लिए ही होता था।

लाल पद्मधर सिंह के पिता का नाम लाल प्रद्युम्न सिंह था। वे वर्तमान मध्य प्रदेश के रीवा राज्य के जागीरदार थे। लाल पद्मधर सिंह का जन्म १४ अक्तूबर, १९१४ को 'कृपालपुर' नामक गाँव में हुआ था। वे चार भाई थे। चारों भाइयों के नाम विष्णु भगवान् द्वारा धारण किए जानेवाली वस्तुओं पर रखे गए थे। उन चारों के नाम थे—शंखधर सिंह, चक्रधर सिंह, गदाधर सिंह और पद्मधर सिंह। जाहिर है कि लाल पद्मधर सिंह सबसे छोटे भाई थे।

लाल पद्मधर सिंह की प्रारंभिक शिक्षा 'माधवपुर' ग्राम की पाठशाला में हुई। हाई स्कूल की शिक्षा के लिए उन्हें रीवा के दरबार हाई स्कूल में भरती होना पड़ा। रीवा में वे छात्रावास में रहते थे। उन्हें बंदूक रखने और निशानेबाजी का भी शौक था। एक दिन उनके साथ एक विचित्र घटना घटित हो गई। हाई स्कूल की

प्रयोगशाला से एक प्रिज्म की चोरी हो गई। न जाने क्यों, हाई स्कूल के प्राचार्य मि. टोपे को लाल पद्मधर सिंह पर संदेह हुआ और वे उनके कमरे की तलाशी लेने छात्रावास जा पहुँचे। लाल पद्मधर सिंह ने अपने कमरे में आए हुए अपने प्राचार्य का स्वागत किया; लेकिन जब प्राचार्य महोदय ने उन्हें बताया कि प्रिज्म की चोरी के संबंध में वे उनके कमरे की तलाशी लेना चाहते हैं, तो लाल पद्मधर सिंह को यह बरदाश्त नहीं हुआ। उसने प्राचार्य से कहा—

''सर! हम राजवंश के लोगों पर चोरी का आरोप लगाते हुए आपको सोचना चाहिए था। भगवान् ने हमको इतना पैसा दिया है कि मैं दस प्रिज्म खरीद सकता हूँ। आप मेरे ऊपर चोरी का इलजाम न लगाइए। यदि आप आज्ञा दें तो मैं नया प्रिज्म खरीदकर विद्यालय को दान में दे सकता हूँ।''

प्राचार्य महोदय ने लाल पद्मधर सिंह के कथन का दूसरा ही अर्थ लगाया। वे बोले—

''इसका मतलब यह है कि प्रिज्म तुमने ही चुराया है। अपनी चोरी छिपाने के लिए ही तुम दान देने की बात कह रहे हो।''

लाल पद्मधर सिंह ताव खा गया। वह बोला—

''हम लोग राजपूत हैं। हम बंदूक और तलवार के धर्म को माननेवाले होते हैं। जो वस्तु हमें पसंद आ जाए, उसे हम छीन भी सकते हैं। चोरी जैसा निकृष्ट काम कोई राजपूत कभी नहीं करेगा।''

मि. टोपे का संदेह पक्का हो गया। वे बोले, ''मुझे अपने कमरे की तलाशी ले लेने दो। यह अभी सिद्ध हो जाएगा कि तुमने चोरी की है या नहीं। मैं तुम्हारी अलमारी में से प्रिज्म निकाल सकता हूँ।''

लाल पद्मधर सिंह ने भी चुनौती देते हुए कह दिया—

''आप शौक के साथ जिस तरह से भी चाहें, मेरे कमरे की तलाशी ले सकते हैं। शर्त यह है कि अगर प्रिज्म मेरे कमरे में नहीं निकला तो मैं आपको गोली मार दूँगा।''

''यह शर्त मुझे स्वीकार है।'' मि. टोपे ने कहा। उन्हें अपनी सूचना का पूरा भरोसा था। लाल पद्मधर सिंह एक कोने में खड़ा हो गया। मि. टोपे ने अलमारियाँ और कमरे का कोना-कोना छान मारा। उन्होंने लाल पद्मधर सिंह के सूटकेस की भी तलाशी ली। उन्होंने खूँटी पर टँगे हुए कपड़ों की भी तलाशी ली। संदेह न रह जाए, इस कारण लाल पद्मधर सिंह ने पहने हुए कपड़ों की तलाशी भी उन्हें दे दी। प्रिज्म नाम का वह काँच का तिकोना टुकड़ा उस कमरे में उन्हें नहीं मिला। हताश होकर उन्होंने कहा—

"इसका मतलब यह है कि चुराया हुआ वह प्रिज्म तुमने अपने किसी साथी को दे रखा है।"

लाल पद्मधर सिंह को अपमान की यह पराकाष्ठा सहन नहीं हुई। उसने आव देखा न ताव, खूँटी पर से अपनी बंदूक उतारकर मि. टोपे के ऊपर एक गोली छोड़ दी। गोली मि. टोपे के कंधे को तोड़ती हुई निकल गई। वे मरे नहीं। गंभीर रूप से घायल होकर जमीन पर लुढ़क गए। एक राजपूत ने गिरे हुए शत्रु पर वार करना ठीक नहीं समझा। फिर उसने गोली मार देने की बात कही थी, गोलियाँ मार देने की बात नहीं।

पुलिस लाल पद्मधर सिंह को गिरफ्तार कर ले गई। उसपर मुकदमा चला और सात वर्ष के कारावास का दंड उसे सुना दिया गया।

अपने अच्छे चाल-चलन के कारण लाल पद्मधर सिंह के कारावास की अवधि में कमी कर दी गई। जेल में रहते हुए उसे परीक्षा देने की अनुमति भी दी गई। परीक्षा उत्तीर्ण करके तथा समय के पूर्व ही जेल से छूट जाने के कारण उच्च शिक्षा के लिए लाल पद्मधर सिंह ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रवेश ले लिया और १२ अगस्त, १९४२ में आंदोलनकारी जुलूस का नेतृत्व करते हुए अपने सीने पर गोली खाकर वह भारत माता की गोद में सो गया।

□

## ★ लिंगिह

लिंगिह मैसूर राज्य के मंड्या जिले के 'सीगेहल्ली' स्थान का निवासी था। वह भद्रावती में एक लोहे के कारखाने का श्रमिक था। उसने सन् १९४२ के आंदोलन में भाग लिया और पुलिस ने जब प्रदर्शनकारियों पर गोलियाँ चलाईं तो वह शहीद हो गया।

□

## ★ श्रीमती लीला नाग

जेल की एक कोठरी में बंद श्रीमती लीला नाग एक पुस्तक में डूबी हुई थीं। उसी समय जेल अधीक्षक अपने निरीक्षण दौरे पर निकला। वह अंग्रेज था। श्रीमती

लीला नाग ने खड़े होकर उसका अभिवादन किया। जेल सुपरिंटेंडेंट उनके इस व्यवहार से बहुत प्रसन्न हुआ। वह बोला—

''मिसेज नाग! आप जैसी विदुषी को जेल में देखकर मुझे बहुत दुःख होता है। समझ में नहीं आता कि आप इन क्रांतिकारियों के चक्कर में कैसे पड़ गईं!''

श्रीमती लीला नाग ने उत्तर दिया—

''देश के प्रति अपने फर्ज के तकाजे ने ही मुझे क्रांतिकारी आंदोलन से जोड़ा है। विदुषी होने का अर्थ यह तो नहीं कि मुझे अपने देश की भलाई का चिंतन नहीं करना चाहिए! देश-मुक्ति का आंदोलन केवल अनपढ़ और जाहिल लोगों का आंदोलन नहीं है। वह प्रत्येक भारतवासी का आंदोलन है। उसके प्रति पढ़े-लिखे लोगों की जिम्मेदारी और भी अधिक है।''

जेल अधीक्षक ने जाते-जाते कहा—

''ईश्वर का धन्यवाद है कि इस आंदोलन में आप जैसे लोगों का प्रतिशत अधिक नहीं है। जिस समय यह प्रतिशत बढ़ जाएगा, हम लोगों का भारत में टिके रहना असंभव हो जाएगा।''

श्रीमती लीला नाग उसके कथन पर चिंतन करती रहीं। जेल में आने के पहले वे कई विद्यालय चला रही थीं। 'दीपावली संघ' नाम की एक नारी संस्था भी उन्होंने खोली थी। उन्होंने 'नारी शिक्षा मंदिर' नामक एक हाई स्कूल भी खोला। उन्होंने 'जयश्री' नाम की एक मासिक पत्रिका का प्रकाशन भी किया।

श्रीमती लीला नाग को 'क्रिमिनल लॉ एमेंडमेंट एक्ट' के अंतर्गत २० दिसंबर, १९३१ को गिरफ़्तार किया गया। १९३८ में वे मुक्त हुईं।

□

# ★ वासुदेव बलवंत गोगटे
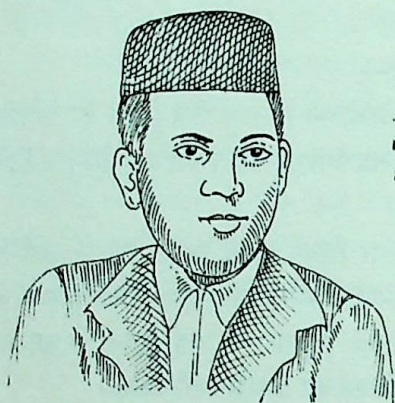
वासुदेव बलवंत गोगटे

महाराष्ट्र के शोलापुर नगर के निवासी एक विचित्र सत्याग्रह के द्वारा शासन की नीति का विरोध कर रहे थे। उन लोगों ने अपने सत्याग्रह को 'जंगल सत्याग्रह' नाम दिया था। झुंड-के-झुंड लोग नगर-सीमा के बाहर जाते और जंगल से वृक्ष काटकर जुलूस के रूप में नगर भ्रमण करते थे। इसी प्रकार का एक प्रदर्शन १ मई, १९३० को किया गया।

अंग्रेज सरकार अपना अपमान सहन नहीं कर सकी और उसने जंगल सत्याग्रहियों पर गोली चलाने का आदेश दे दिया। कुछ सत्याग्रही गोलियों से मारे गए। जनता और अधिक भड़क उठी। न्यायालय के भवन पर आक्रमण करके उसमें आग लगा दी गई और न्यायालय के अभिलेख जलाकर भस्म कर दिए गए।

शोलापुर से अंग्रेज जिलाधीश मि. नाईट ने महाराष्ट्र के गृह सचिव और प्रभारी गवर्नर सर अरनेस्ट हॉटसन से अनुरोध किया कि शोलापुर में मार्शल लॉ लागू कर दिया जाए।

सर अरनेस्ट हॉटसन ने शोलापुर में तुरंत मार्शल लॉ लागू कर दिया। सरकार को दमन करने की खुली छूट मिल गई। जनता पर भाँति-भाँति के अत्याचार किए जाने लगे।

पूना के फर्ग्यूसन कॉलेज में पढ़नेवाला एक युवक वासुदेव बलवंत गोगटे ब्रिटिश सरकार के इन अत्याचारों की कथाएँ सुनकर विचलित हो उठा। वह सोचने

लगा कि शोलापुर में लगाए गए मार्शल लॉ का विरोध किस प्रकार करे। वह इस परिणाम पर पहुँचा कि मार्शल लॉ लगानेवाले अधिकारी सर अरनेस्ट हॉटसन को दंडित किया जाए।

अपने निश्चय को कार्यरूप में परिणत करने के विचार से वासुदेव बलवंत गोगटे निजाम हैदराबाद के राज्य में जा पहुँचा। हैदराबाद में उसका भाई डॉक्टर था। गोगटे ने हैदराबाद की एक दुकान से दो रिवॉल्वर और कुछ कारतूस खरीदे। जंगल में जाकर वह निशानेबाजी का अभ्यास करने लगा। शीघ्र ही वह अच्छा निशानेबाज हो गया। लौटकर वह पूना पहुँच गया और सर अरनेस्ट हॉटसन को मारने के उपयुक्त अवसर की तलाश में रहने लगा।

गोगटे को मालूम हुआ कि सर अरनेस्ट हॉटसन २० जुलाई, १९३१ को बंबई विधान परिषद् के सत्र का शुभारंभ करेंगे। उन्हें मारने का यह उपयुक्त अवसर समझकर वह बंबई पहुँचा और एक प्रवेश पत्र का प्रबंध करके वह परिषद् में पहुँच गया। उसे यह जानकर बहुत निराशा हुई कि हॉटसन महोदय उस दिन वहाँ नहीं पहुँचे। निराश होकर वह पूना लौट गया।

गोगटे कभी सोच भी नहीं सकता था कि हॉटसन महोदय पर हाथ,साफ करने का अप्रत्याशित अवसर उसे बहुत शीघ्र हाथ लग जाएगा और वह भी पूना में। २२ जुलाई, १९३१ को उसने फर्ग्यूसन कॉलेज के फाटक पर एक अंग्रेज सारजेंट को खड़ा हुआ देखा। वह जानना चाहता था कि सारजेंट वहाँ क्यों खड़ा है। उसने अपने साथियों से पूछा भी; लेकिन कोई भी उसे सारजेंट की उपस्थिति का कारण नहीं बता सका। वह स्वयं उस गोरे सारजेंट के पास पहुँच गया और विनम्रता के साथ उससे बातें करने लगा। गोरे सारजेंट ने बताया कि आज ही बंबई प्रांत के प्रभारी गवर्नर सर अरनेस्ट हॉटसन फर्ग्यूसन कॉलेज का निरीक्षण करने वाले हैं। गोगटे की बाँछें खिल गईं। वह दौड़ा-दौड़ा अपने घर पहुँचा और अपने दोनों रिवॉल्वर भरकर, उन्हें कोट की जेब में रखकर फर्ग्यूसन कॉलेज जा पहुँचा। सर हॉटसन की रुचियों के विषय में उसे मालूम था कि वे पुस्तक-प्रेमी हैं और पुस्तकालयों का निरीक्षण अवश्य करते हैं। उसने कॉलेज के वाडिया पुस्तकालय में गवर्नर पर गोली चलाने का निश्चय कर लिया।

वाडिया पुस्तकालय की पहली सीट पर बैठकर गोगटे अध्ययन करने का अभिनय करने लगा। उसकी निगाहें दरवाजे की ओर ही थीं। उसने अपने कोट की बाहरी जेब में हॉटसन महोदय का एक फोटो भी इसलिए रख लिया, जिससे वह गलत आदमी पर गोली न चला दे। कई क्रांतिकारी गलत आदमियों पर गोलियाँ चला चुके हैं, यह तथ्य उसे मालूम था।

गोगटे को अपना प्रतीक्षित अवसर शीघ्र ही हाथ लग गया। पुस्तकालय भवन के निरीक्षण क्रम में गवर्नर महोदय उसके बिलकुल पास पहुँच गए। उनके साथ वाडिया बंधु भी थे, जिनके दान से पुस्तकालय का निर्माण हुआ था। गोगटे गवर्नर महोदय को आदर दिखाने के लिए अपनी कुरसी से उठ खड़ा हुआ। वह उनके बिलकुल सामने था। अवसर का लाभ उठाने की दृष्टि से उसने कोट के अंदर की जेब से अपना रिवॉल्वर निकाला और एक गोली सर हॉटसन की छाती को लक्ष्य करके छोड़ दी। निशाना बिलकुल ठीक लगा। लेकिन उसे यह जानकर बहुत आश्चर्य हुआ कि न तो खून की एक बूँद निकली और न हॉटसन महोदय के मुँह से कोई चीख। गोली खाकर हॉटसन महोदय गोगटे पर झपट पड़े और उसे नीचे गिराकर उसपर लेट गए। नीचे पड़े-पड़े भी उसने एक गोली और उनकी छाती पर छोड़ दी। इतने पास से छोड़ी गई गोली का भी कोई असर नहीं हुआ। अब तो कई लोग दौड़ पड़े और गोगटे को काबू में करके उससे दोनों रिवॉल्वर छीन लिये गए।

गोगटे और हॉटसन फिर आमने-सामने खड़े थे। हॉटसन ने पूछा—

''आपने मुझपर गोलियाँ क्यों चलाईं?''

गोगटे का उत्तर था—

''शोलापुर में मार्शल लॉ लगाकर आपने भारतीय जनता पर जो अत्याचार किए हैं, उन्हींके प्रतिरोध में मैंने आप पर गोलियाँ चलाईं।''

गिरफ्तार करके गोगटे को पुलिस स्टेशन ले जाया गया और उससे पूछताछ प्रारंभ हो गई। उसने कुछ अन्य बातें तो बताईं, लेकिन यह नहीं बताया कि उसने रिवॉल्वर कहाँ से खरीदे थे।

प्रारंभिक जाँच करके खानबहादुर कोठाला ने गोगटे को सेशन सुपुर्द कर दिया। न्यायमूर्ति एन.जे. वाडिया की अदालत में गोगटे का मुकदमा प्रारंभ हो गया। बचाव पक्ष की ओर से प्रसिद्ध वकील एल.बी. भोपटकर थे। इस घटना से देश-भर में सनसनी फैल गई थी और अदालत में तो अच्छी-खासी भीड़ रहती थी।

मुकदमे के निर्णय के दिन ज्यूरी ने अपना मत प्रकट करते हुए कहा—

''ऐसा लगता है कि अभियुक्त ने हिज एक्सीलेंसी पर दो गोलियाँ चलाईं और अपनी खुशकिस्मती या गोलियों के कमजोर होने के कारण हिज एक्सीलेंसी की जान बच गई।''

इस वक्तव्य पर गोगटे के वकील श्री भोपटकर ने अस्पष्टता का आरोप लगाया। सेशन जज महोदय ने ज्यूरी से स्पष्ट कथन के लिए कहा। थोड़ी देर के लिए ज्यूरी के सदस्य फिर उठकर चले गए और उन्होंने स्पष्ट वक्तव्य देते हुए कहा—

"अभियुक्त गोगटे स्पष्ट रूप से अपराधी है। उसने हिज एक्सीलेंसी सर अरनेस्ट हॉटसन की हत्या का प्रयत्न किया है। चूँकि वह विद्यार्थी है और उसकी उम्र कम है, इसलिए हम उसे कम सजा दिए जाने की सिफारिश करते हैं।"

गोगटे को भारतीय दंड विधान की धारा ३०७ के अंतर्गत आठ वर्ष के कठोर कारावास का निर्णय सुनाया गया। अवैध रूप से हथियार रखने के अपराध में भी उसे दो वर्ष के कठोर कारावास का दंड सुनाया गया। उसके पक्ष में यह निर्णय भी दिया गया कि दोनों सजाएँ एक साथ चलेंगी। सजा भुगतने के लिए गोगटे को पूना के निकट यरवदा के केंद्रीय कारागार में भेज दिया गया।

वासुदेव बलवंत गोगटे का जन्म ११ अगस्त, १९१९ को सतारा जिले के 'मिराज' नामक स्थान पर हुआ था। उसके पिता मिराज हाई स्कूल के प्रधानाध्यापक थे। मिराज से हाई स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् गोगटे फर्ग्यूसन कॉलेज में पढ़ने पूना चला गया।

गोगटे वीर सावरकर के जीवन दर्शन से अत्यंत प्रभावित था। वह शहीद भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु का भी भक्त था, जिन्हें २३ मार्च, १९३१ को लाहौर में फाँसी के फंदों पर झुला दिया गया था।

मुकदमे के क्रम में गोगटे को बताया गया कि उसकी दोनों गोलियाँ हॉटसन महोदय के सीने में लगी थीं, लेकिन हॉटसन महोदय अपनी शर्ट के नीचे रुपए रखने का चमड़े का बटुआ रखे हुए थे, जिसमें स्टील के बटन लगे हुए थे। स्टील के बटनों में ही गोलियाँ लगने के कारण हॉटसन महोदय की जान बच गई। गोगटे को इस कथन पर विश्वास नहीं हुआ। उसका अनुमान था कि हॉटसन महोदय कपड़ों के अंदर स्टील का जिरहबख्तर पहनकर कॉलेज गए थे, क्योंकि खतरे के उन दिनों में अपने बचाव की सावधानी रखना उनके लिए बिलकुल ही स्वाभाविक था।

गोगटे को यरवदा जेल में रखा गया। उसी जेल में कुछ दिन बाद महात्मा गांधी को भी रखा गया। जेल के अधिकारियों ने यह ध्यान रखा कि गोगटे और गांधीजी की भेंट नहीं हो सके।

गोगटे की जेल से मुक्ति सन् १९३७ में हुई। कहा जाता है कि स्वयं सर अरनेस्ट हॉटसन ने गोगटे की मुक्ति के लिए प्रयत्न किया था।

जेल से मुक्ति के पश्चात् गोगटे ने महात्मा गांधी को एक पत्र लिखा। गांधीजी ने २४ सितंबर, १९३७ को वर्धा से गोगटे के पत्र का उत्तर इस प्रकार दिया—

'प्रिय श्री गोगटे,

आपका पत्र पाकर मुझे बहुत हर्ष हुआ। मुझे इस बात का भी हर्ष है कि

आप जेल से मुक्त हो गए हैं। यदि आप वर्धा आकर मुझसे मिलेंगे तो मुझे और अधिक हर्ष होगा। जब आप जेल में थे तो मैंने आपसे मिलने का प्रयत्न किया था; लेकिन मैं अपने प्रयत्न में सफल नहीं हो सका था।

आपका शुभाकांक्षी
मोहनदास करमचंद गांधी।'

जेल से मुक्त होने के पश्चात् गोगटे ने सर अरनेस्ट हॉटसन को भी एक पत्र लिखा था। हॉटसन महोदय ने गोगटे के पत्र का उत्तर दिया और एक सौ रुपए का एक चेक भी गोगटे के पास भेजा और उस उपहार को स्वीकार करने का अनुरोध किया। गोगटे ने उपहार को स्वीकार करते हुए सर अरनेस्ट हॉटसन को धन्यवाद का पत्र लिखते हुए लिखा—

'प्रिय सर हॉटसन महोदय,

आपने जो मेरे पास उपहारस्वरूप एक सौ रुपए का चेक भेजा है, उसके लिए मेरा धन्यवाद स्वीकार करें। मेरा कथन है कि आपने मेरे लिए सौ रुपए के रूप में सौ आशीर्वाद भेजे हैं। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आपके प्रति मेरे दिल में कोई दुर्भावना नहीं है। वह तो उस समय की बात थी, जब विशेष परिस्थितियों के कारण मैंने आपको दंड देना चाहा था। वह अध्याय समाप्त हो चुका है और अच्छा यही है कि उस घटना पर परदा डालकर हम लोग शेष जीवन में अच्छे मित्रों की भाँति रहें।

आपके प्रति समस्त शुभकामनाओं के साथ—

आपका
वासुदेव बलवंत गोगटे।'

अपने शेष जीवन के लिए वासुदेव बलवंत गोगटे ने वकालत का धंधा चुन लिया।

□

## ★ विनय बोस

कलकत्ता की 'राइटर्स बिल्डिंग' में ८ दिसंबर, १९३० को दिन के साढ़े बारह बजे अपने साथी सुधीर गुप्त और दिनेश गुप्त के साथ जेल महानिरीक्षक कर्नल एन.एस. सिंपसन को मौत के घाट उतारने के पश्चात् विनय बोस घायल अवस्था में पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया। जेल के अस्पताल में रखकर

उसका इलाज किया गया; पर कोई परिणाम नहीं निकला। १३ दिसंबर, १९३० को प्रात: साढ़े छह बजे विनय बोस ने अपनी अंतिम साँस ली। मृत्यु के पूर्व मजिस्ट्रेट के सामने उसका बयान लिया गया। उसने अपने मृत्यु प्रतिवेदन में एक ऐसा रहस्य उजागर कर दिया, जिसे वह अभी तक छिपाए हुए था। मृत्यु के समय वह रहस्य उसने इसलिए प्रकट किया, क्योंकि उससे उसके किसी साथी पर आँच आने वाली नहीं थी। उसने स्वीकार किया कि २९ अगस्त, १९३० को बंगाल के पुलिस महानिरीक्षक एफ.जे. लोमैन पर आक्रमण उसीने किया था।
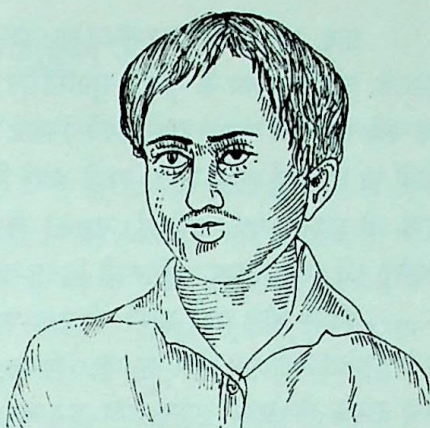
विनय बोस

जिस रहस्य को पाने के लिए पुलिस ने क्या-क्या नहीं किया था, वह रहस्य अनायास ही उसके सामने खुल गया। फिर भी पुलिस विनय बोस का कुछ बिगाड़ नहीं सकी; क्योंकि वह तो इस दुनिया को छोड़कर दूसरी दुनिया में जा ही रहा था।

पुलिस ने लोमैन की हत्या की फाइल निकाली और उसपर हत्यारे के नाम के स्थान पर विनय बोस का नाम लिखकर उसे बंद कर दिया।

बंगाल के पुलिस महानिरीक्षक पर आक्रमण २९ अगस्त, १९३० को प्रात: सवा नौ बजे हुआ था। ढाका के क्रांतिकारियों को सूचना मिली कि पुलिस महानिरीक्षक एफ.जे. लोमैन २९ अगस्त को ढाका पहुँच रहा है। इस समाचार ने क्रांतिकारियों को सक्रिय कर दिया। यह कैसे हो सकता था कि पुलिस महानिरीक्षक उनके नगर में पहुँचे और वे उसका स्वागत न करें! एफ.जे. लोमैन उन लोगों के बीच बहुत चर्चित व्यक्ति था। वह क्रांतिकारियों के दिलों में रहा करता था—फूल की तरह नहीं, एक चुभते हुए काँटे की तरह। वे काँटे को रगड़कर उसका अस्तित्व समाप्त कर देना चाहते थे। क्रांतिकारियों की गुप्त बैठक हुई और योजना बन गई। एफ.जे. लोमैन की हत्या का दायित्व विनय बोस को दिया गया। उसे दो रिवॉल्वर और काफी संख्या में कारतूस दिए गए।

नारायणगंज की जेल पुलिस का सुपरिंटेंडेंट बीमार होकर ढाका के मिटफोर्ड अस्पताल में पड़ा हुआ था। उसे देखने का ही कार्यक्रम पुलिस महानिरीक्षक ने बनाया था। वह ढाका पहुँचा और वहाँ के पुलिस सुपरिंटेंडेंट हॉडसन को साथ लेकर वह मिटफोर्ड अस्पताल जा पहुँचा।

प्रातः सवा नौ बजे का समय था। अस्पताल के अहाते में पुलिस महानिरीक्षक एफ.जे. लोमैन ढाका के पुलिस सुपरिंटेंडेंट हॉडसन के साथ बातचीत कर रहा था कि एक नौजवान भागता हुआ उनके निकट पहुँचा और पचास फीट की दूरी से उन दोनों पर गोलियाँ दागने लगा। उसने अपने रिवॉल्वर से पाँच गोलियाँ दागीं। उसकी एक भी गोली व्यर्थ नहीं गई। उसकी तीन गोलियाँ हॉडसन को लगीं और दो लोमैन को। वह युवक क्रांतिकारी विनय बोस था।

विनय बोस वहाँ आँधी की तरह पहुँचा और तूफान की भाँति चला गया। एक व्यक्ति ने विनय बोस का पीछा किया और उसका हाथ पकड़ भी लिया; पर तेज झटके के साथ अपना हाथ छुड़ाकर वह भाग निकला। भागता हुआ वह अस्पताल के अहाते की दीवार के पास जा पहुँचा, जो उसके सीने तक की ऊँचाई की थी। पैरों में जूते और हाथ में रिवॉल्वर उसके मार्ग में व्यवधान थे। उसके रिवॉल्वर में एक गोली शेष थी। वह उसने पीछा करनेवालों को धमकाने के लिए चला दी और खाली रिवॉल्वर उसने वहीं पटक दिया। जूते भी उसने वहीं छोड़े। दीवार पर दोनों हाथ रखकर उसने इस तरह छलाँग लगाई जैसे वह घोड़े पर सवार हो रहा हो। दीवार पर सवार होकर वह दूसरी ओर फाँद गया। कुछ लोग फिर भी उसका पीछा करते रहे। वह अपने दूसरे रिवॉल्वर की सहायता से पीछा करनेवालों को दूर रखता गया। अंततोगत्वा वह भाग निकलने में सफल हो गया।

विनय बोस की तीन गोलियाँ हॉडसन को लगी थीं; पर वे घातक नहीं थीं। पुलिस महानिरीक्षक लोमैन को लगीं उसकी दोनों गोलियाँ घातक थीं। लोमैन अस्पताल में तो था ही। वहाँ तुरंत ही उसका ऑपरेशन किया गया; पर वह बचाया नहीं जा सका। उसकी मृत्यु ३१ अगस्त, १९३० को प्रातः सवा नौ बजे हो गई।

पुलिस को इस बात की खिसियाहट थी कि वह हत्यारे को पकड़ नहीं सकी। 'खिसियानी बिल्ली खंभा नोचे' वाली कहावत ढाका पुलिस ने चरितार्थ कर दिखाई। उसने आरोप लगाया कि मेडीकल कॉलेज के छात्रावासियों ने हत्यारे को भगाने में सहायता की है। छात्रावास में रहनेवाले पचास लड़कों को पकड़कर पुलिस ने इतनी पिटाई की कि उन्हें अस्पताल में भरती किया गया।

इस घटना के पश्चात् विनय बोस कर्नल सिंपसन को मौत के घाट उतारनेवाले सफल अभियान में सम्मिलित हुआ और मृत्यु के पूर्व के बयान में उसने ही बताया कि एफ.जे. लोमैन की हत्या उसीने की थी।

बंगाल के क्रांतिकारी अत्याचार और अत्याचारी को कभी बरदाश्त नहीं कर सके।

□

# ★ विनय भूषण डे

विनय भूषण डे उन क्रांतिकारियों में से था, जो यह विश्वास करते थे कि दमनकारियों को कड़ा दंड दिया जाना चाहिए; वह दमनकारी चाहे भारतीय हो या अंग्रेज। अपने इस सिद्धांत को कार्यरूप में परिणत करने के लिए विनय भूषण डे ने ढाका के एडीशनल पुलिस सुपरिंटेंडेंट मि. ग्रासबी को मृत्युदंड देने का निश्चय कर डाला। मि. ग्रासबी क्रांतिकारियों का दमन करने में बहुत रुचि ले रहे थे। जब वे २२ अगस्त, १९३२ को अपने दफ्तर से घर जा रहे थे, तो एक चौराहे पर पहले से मोरचा लिये हुए विनय भूषण डे ने उनपर गोली चला दी। गोली घातक थी। विनय ने भागने का प्रयत्न किया, लेकिन वह पकड़ लिया गया। उसपर मुकदमा चला और उसे आजन्म कालापानी का दंड मिला।

□

# ★ विनोद किनारीवाला

गांधीजी की भूमि गुजरात और क्रांतिकारियों तथा शहीदों के प्रदेश गुजरात में अगस्त क्रांति की गतिविधियाँ एक-दूसरे से भिन्न रहीं। पंजाब में अगस्त क्रांति की घटनाएँ विशेष उल्लेखनीय नहीं हैं, जबकि गुजरात में प्रदर्शनों ने क्रांतिकारी रूप धारण कर लिया।

अहमदाबाद में विद्यार्थियों, मजदूरों और गुमाश्ते लोगों ने एक मिली-जुली युद्ध समिति का निर्माण किया। १० अगस्त को एक जुलूस निकाला गया। एक विद्यार्थी विनोद किनारीवाला तिरंगा झंडा लेकर आगे-आगे चल रहा था। पुलिस ने उसके हाथ से झंडा छीनना चाहा; पर उसने झंडा नहीं दिया। इसपर उस विद्यार्थी को गोली मार दी गई। वह वहीं शहीद हो गया।

इस हत्या के प्रतिक्रियास्वरूप आंदोलन ने बहुत उग्र रूप धारण कर लिया। स्थान-स्थान पर बम फेंके गए और कार्यालयों को नष्ट कर दिया गया। दमन के लिए आठ बार पुलिस ने गोलियाँ चलाईं। कई व्यक्ति घायल हुए।

□

# ★ विष्णुशरण दुबलिश
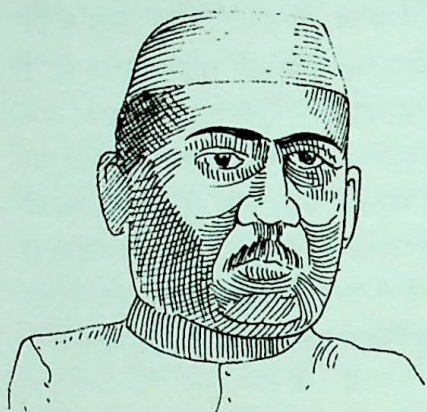
विष्णुशरण दुबलिश

नैनी जेल में गवर्नर साहब का दौरा होने वाला था। गवर्नर साहब तो अंग्रेज थे ही, जेल के सुपरिंटेंडेंट महोदय भी अंग्रेज थे। उनका नाम पामर था। पामर साहब ने बड़ी तत्परता के साथ स्वयं ही जेल का निरीक्षण किया और जेलर तथा अन्य अधिकारियों को निर्देश दे दिया कि गवर्नर साहब के निरीक्षण के समय सभी कैदी उन्हें झुककर सलाम करें। यदि उनसे कुछ पूछताछ की जाए तो अपनी किसी कठिनाई का उनके सामने उल्लेख न करें। जेल की सभी कोठरियों और प्रांगण की अच्छी तरह से सफाई करा दी गई।

निरीक्षण के लिए नैनी जेल में गवर्नर महोदय का आगमन हुआ। उनके पीछे जेल सुपरिंटेंडेंट मि. पामर थे, जो उन्हें सभी बातों का स्पष्टीकरण देते जा रहे थे। निरीक्षण के क्रम में ऐसी कोई बात देखने को नहीं मिली, जिसके कारण पामर साहब को नीचा देखना पड़ता।

गवर्नर महोदय अपना निरीक्षण समाप्त करने ही वाले थे कि जेल की एक कोठरी पर उन्हें ताला लटका हुआ दिखाई दिया। वे पूछ बैठे—

''इस कमरे के कैदी लोग कहाँ हैं?''

''वे लोग जेल के बगीचे में काम कर रहे हैं।'' पामर साहब का संक्षिप्त उत्तर था।

''हम कैदियों की अनुपस्थिति में ही उनकी कोठरी का निरीक्षण करेंगे।'' गवर्नर महोदय ने अपनी इच्छा व्यक्त की।

कोठरी का ताला खोला गया। गवर्नर महोदय ने देखा कि कमरा साफ-सुथरा है और कैदियों का सामान करीने से रखा हुआ है। सभी कैदियों के बिस्तर लपेटकर रखे गए थे। गवर्नर महोदय ने एक लपेटे हुए बिस्तर को खुलवाकर देखने की इच्छा व्यक्त की। पामर साहब ने लपेटे हुए कंबल को झटक दिया। बिस्तर को झटकना था कि उसमें से कुछ सिगरेटें और बीड़ियाँ भूमि पर गिरकर बिखर गईं।

गवर्नर महोदय ने प्रश्नवाचक दृष्टि से पामर साहब को देखा। पामर साहब ने जेलर साहब की ओर देखकर कहा—

''यह बिस्तर किस कैदी का है? उसे हाजिर किया जाए।''

जेलर साहब ने बिस्तर का नंबर देखकर बताया कि वह विष्णुशरण दुबलिश नाम के कैदी का है, जो काकोरी केस में सजा प्राप्त कर जेल में रखा गया है। कैदी को गवर्नरं महोदय की सेवा में हाजिर किया गया।

''तुम्हारे बिस्तर में से सिगरेटें और बीड़ियाँ निकली हैं। यह जेल के नियमों के विरुद्ध है। इस विषय में तुम्हें क्या कहना है?''

''मैं स्वीकार करता हूँ कि मैंने जेल के नियमों के विरुद्ध काम किया है; पर मैं बीड़ी पिए बगैर रह नहीं सकता।'' विष्णुशरण दुबलिश का उत्तर था।

''देखो, या तो तुम बीड़ी पीना छोड़ दो या फिर कालापानी की सजा स्वीकार करो, जहाँ कैदियों को बीड़ी पीने की सुविधा दी जाती है।'' गवर्नर महोदय का कथन था।

''तो मेरा भी यही निर्णय है कि मैं बीड़ी पीना नहीं छोड़ सकता। आप चाहें तो मुझे कालापानी भेज दीजिए।'' दुबलिश का उत्तर था।

और सचमुच ही इस जरा-सी बात पर काकोरी केस के अभियुक्त विष्णुशरण दुबलिश का स्थानांतरण नैनी जेल से अंडमान की सैलुलर जेल में कर दिया गया। उन दिनों अंडमान द्वीप की सैलुलर जेल को 'पृथ्वी का नरक' कहा जाता था। वहाँ कैदियों को इतनी अधिक यातनाएँ दी जाती थीं कि उनमें से कुछ मर जाते थे, कुछ पागल हो जाते थे और जो जीवित रहते थे, वे मरे हुए के समान घर लौटते थे। विष्णुशरण दुबलिश ने स्वेच्छा से पृथ्वी के नरक का चुनाव कर लिया।

विष्णुशरण दुबलिश मेरठ का एक नवयुवक था, जो गांधीजी के आह्वान पर 'असहयोग आंदोलन' में कूद पड़ा। एक जुलूस का नेतृत्व करते हुए उसे गिरफ्तार कर लिया गया। गिरफ्तारी के पहले उसपर लाठियाँ भी बरसाई गई थीं। असहयोग आंदोलन के परिणामस्वरूप मिली हुई सजा के दिनों में दुबलिश का परिचय प्रसिद्ध क्रांतिकारी शचींद्रनाथ सान्याल से हुआ, जो स्वयं भी जेल की सजा काट रहे थे। कालांतर में दोनों जेल से मुक्त कर दिए गए।

अब विष्णुशरण दुबलिश एक पक्के क्रांतिकारी बन चुके थे और वे शचींद्रनाथ सान्याल द्वारा गठित 'हिंदुस्तान प्रजातंत्र संघ' के सदस्य थे। काकोरी में जो ट्रेन रोककर अंग्रेजी खजाना लूटा गया, उसके अंतर्गत विष्णुशरण दुबलिश को भी गिरफ्तार किया गया और उन्हें दस वर्ष के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई। बरेली और नैनी जेलों में दुबलिश को रखा गया। उन्हीं दिनों नैनी जेल में दंगा हो

गया, जिसे भड़काने का आरोप विष्णुशरण दुबलिश पर लगाया गया। इस केस में उन्हें आजीवन कालापानी की सजा मिली। अपील करने पर यह सजा कम करके उन्हें नैनी जेल में ही रखा गया।

आखिर बीड़ी पीना न छोड़ने पर दुबलिशजी ने स्वेच्छा से कालापानी की सजा स्वीकार कर ली।

□

## ★ वी. सर्मा

आंध्र प्रदेश के गुंटूर नगर में जनमे वी. सर्मा ने १३ अगस्त, १९४२ को आयोजित शासन विरोधी प्रदर्शन में भाग लिया। प्रदर्शनकारियों पर गोलियाँ चलाई गईं और परिणामस्वरूप वी. सर्मा की मृत्यु हो गई। व्यापक रूप से नेताओं की गिरफ्तारी के विरोध में ही यह प्रदर्शन हुआ था।

□

## ★ वीणा दास

वीणा दास

कलकत्ता में एक विद्यालय के प्रधानाध्यापक श्री वेणीमाधव दास अपने समय के बहुत ही सम्मानित और प्रभावशाली व्यक्ति थे। उन्होंने सुभाषचंद्र बोस को भी पढ़ाया था। श्री सुभाषचंद्र बोस ने स्वीकार किया है कि उनके चरित्र निर्माण में उनके गुरु श्री वेणीमाधव दास का बहुत बड़ा हाथ रहा है।

श्री वेणीमाधव दास की दो पुत्रियाँ थीं। बड़ी पुत्री का नाम था—कल्याणी देवी। कल्याणी देवी स्वयं फैजुन्निसा गर्ल्स हाई स्कूल की प्रधानाध्यापिका हो गईं और अपनी छात्राओं को क्रांति के पथ पर अग्रसर करने लगीं। कल्याणी

देवी ही स्टीवेंस महोदय के बंगले तक शांति घोष और सुनीति चौधरी को बग्घी में छोड़ गई थीं। इन दोनों बालिकाओं ने जिला मजिस्ट्रेट श्री स्टीवेंस की हत्या कर दी। बाद में किसी आरोप में कल्याणी देवी को गिरफ्तार किया गया और उन्होंने लगभग छह वर्ष की जेल की सजा काटी।

श्री वेणीमाधव दास की छोटी पुत्री का नाम वीणा था। वह अपनी बड़ी बहन कल्याणी देवी की भाँति ही क्रांति के पथ पर अग्रसर हो गई। उन दिनों चटगाँव, ढाका और कई स्थानों पर अंग्रेजों ने क्रांतिकारियों का निर्ममतापूर्वक दमन किया था और कई क्रांतिकारियों को मौत के घाट उतारा था। उन लोगों ने महिलाओं को भी कई प्रकार से अपमानित किया था। वीणा दास यह सब देखकर तिलमिला उठी थी और उसने इन अत्याचारों का बदला लेने का संकल्प कर लिया था।

क्रांतिकारी दल की सदस्या होने के साथ-ही-साथ वीणा दास ने असहयोग आंदोलन में खुलकर भाग लिया और उसे जेल का उपहार भी मिला। जेल में उसकी हत्या करने का भी प्रयास किया गया; लेकिन वह बच गई।

जेल से छूटने पर वीणा दास को बदला निकालने का अवसर शीघ्र ही मिल गया। ६ फरवरी, १९३२ को विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में बंगाल के गवर्नर मि. स्टेनली जैक्सन मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित होकर स्नातकों को उपाधियाँ वितरित करने वाले थे। वीणा दास को बी.ए. (ऑनर्स) का उपाधि पत्र लेना था। उसने निश्चय कर डाला कि जिस समय गवर्नर महोदय उसे उपाधि पत्र देंगे, वह उन्हें दूसरी दुनिया में जाने के लिए पार पत्र दे देगी।

६ फरवरी, १९३२ को दीक्षांत समारोह प्रारंभ हुआ। जब उपाधि पत्र लेने का वीणा दास का क्रम आया, तो वह मुसकराती हुई गवर्नर मि. स्टेनली जैक्सन के सामने पहुँची और अपने गाउन में छिपा हुआ रिवॉल्वर निकालकर गवर्नर पर गोली चला दी। उसकी गोली सही निशाने पर नहीं लगी। उसकी गोली से विश्वविद्यालय के एक अधिकारी श्री दिनेशचंद्र सेन घायल हो गए। वीणा दास ने दूसरी गोली चलाने के लिए हाथ उठाया ही था कि कर्नल सुहरावर्दी ने वीणा दास का हाथ पकड़ लिया। वह गिरफ्तार कर ली गई। समस्त भारत और विश्व में एक लड़की के इस साहस के समाचार फैल गए।

एक बंद कमरे को अदालत का रूप देकर न्यायिक कार्यवाही प्रारंभ हो गई। उस न्यायालय में केवल वीणा दास के परिवार के लोगों को पहुँचने की अनुमति थी। विप्लव भड़क उठने के भय से जनता को वहाँ पहुँचने की इजाजत नहीं थी।

बचाव पक्ष के वकीलों के अतिरिक्त वीणा दास ने स्वयं भी अदालत में एक लिखित बयान पढ़ा। कानून के इतिहास में उसका बयान बहुत महत्त्व रखता है।

एक स्थान पर उसने कहा—

"मैं स्वीकार करती हूँ कि पिछले समारोह के अवसर पर सीनेट हाउस में मैंने गवर्नर पर गोली चलाई थी। इसका पूर्ण उत्तरदायित्व मुझ अकेले पर है। मैंने अपनी आँखों के सामने अपनी बहनों को अपमानित होते हुए देखा है। इस जीवन से मर जाना ही बेहतर था; लेकिन जब मरना ही था तो शान से क्यों न मरती! मैंने उस तानाशाह सरकार को कुछ सबक देकर मरने का निश्चय किया, जिसने मेरे देश को परतंत्र कर रखा है।"

अपने इसी विचार को आगे बढ़ाते हुए उसने कहा—

"मैं नित्य ही यह सोचा करती थी कि क्या ऐसे देश में रहा जा सकता है, जो गुलामी की जंजीरों में बुरी तरह जकड़ा हो! क्या यह संभव नहीं कि इस तानाशाही को चुनौती दी जाए! क्या यह उचित नहीं होगा कि भारत की एक बेटी अंग्रेज की जान लेकर सोए हुए भारत को जगा दे!"

जिन कारणों से वीणा दास के मन में विद्रोह और बदले की भावना जाग्रत हुई थी, उनका उल्लेख करते हुए उसने कहा—

"सरकार जनता के मन में उठी स्वाधीनता की भावना को दबा देना चाहती है। मिदनापुर, हिजली और चटगाँव में जो अत्याचार किए गए थे, वे इतने घिनौने थे कि मैं उन्हें अपने मन से निकाल नहीं सकी। हजारों लोगों को जेलों में यातनाएँ भुगतनी पड़ रही होंगी और उनके माता-पिता तड़प रहे होंगे। इन सारी बातों ने मेरे मन में एक तूफान खड़ा कर दिया और मेरा रोम-रोम क्रोध तथा घृणा से भर गया। मेरी मनोदशा मेरे लिए असहनीय हो उठी और मुझे लगा कि मैं पागल हो जाऊँगी। सरकार द्वारा किए जानेवाले इन सारे अत्याचारों को जन साधारण को सुनाने और उन्हें गुलामी की नींद से जगाने के लिए मुझे यही एकमात्र साधन दिखाई दिया।"

वीणा दास ने संसार में हुई क्रांतियों का अध्ययन किया था। रूसी क्रांतिकारी प्रिंस क्रोपाटकिन और चेक शहीद जूलियस फ्यूचिक के शब्द उसे प्रेरणा देते रहते थे। शहीद यतींद्रनाथ दास और भगतसिंह के बलिदान उसके लिए प्रेरणा बन चुके थे। उन सबसे प्रभावित होकर उसने कहा—

"मैं सभी को विश्वास दिला देना चाहती हूँ कि इस धरती पर न मुझे किसी से घृणा है और न द्वेष। मेरे हृदय में सर स्टेनली के प्रति भी कोई घृणा और द्वेष नहीं है। मेरे लिए वे मेरे पिता के समान हैं। लेडी जैक्सन एक नारी हैं। वे भी मेरे लिए माता के समान पूज्य हैं। लेकिन बंगाल का गवर्नर मेरा कोई अपना नहीं है। वह मेरा और मेरे देश का दुश्मन है। वह एक विदेशी सत्ता का प्रतिनिधित्व करता है—ऐसी सत्ता, जिसने मेरे देश की तीस करोड़ जनता को दासता की जंजीरों में जकड़ रखा

है और उन्हें अपाहिज बना रखा है।''

धर्म, राजनीति और नैतिकता के संबंधों की व्याख्या करते हुए वीणा ने बहुत अच्छी बात कही—

''मेरी समझ में भौतिक रूप से राजनीतिक स्वतंत्रता, धर्म और नैतिकता सबको एक में मिला देना चाहिए। संसार में जितनी भी जातियाँ हैं, सभी को स्वतंत्रता प्राप्त होनी चाहिए।''

अपने उठाए गए उग्र कदम के प्रति संतोष व्यक्त करते हुए अंत में उसने कहा—''मेरा उद्देश्य सफल हो गया है। मेरे अशांत मन को शांति मिली है। मैं अपने देशवासियों का ध्यान उनपर किए जानेवाले सारे कष्टों की ओर आकृष्ट कराना चाहती थी। मेरा कदम पूरा हो गया है।''

वीणा दास पर चले मुकदमे के निर्णय ने उसे तेरह वर्षों के कठोर कारावास का दंड दिया। जब वह सन् १९३९ में जेल से छूटी तो 'भारत छोड़ो आंदोलन' में फिर उसे तीन वर्ष के लिए कारावास का दंड दिया गया।

□

## ★ वीरेंद्र डे

चटगाँव के युवकों ने जब सुना कि पुलिस ने एक क्रांतिकारी को मार डाला है और एक अन्य को गिरफ्तार कर लिया है, तो पुलिस के प्रति उनका आक्रोश बढ़ गया। वे स्वयं क्रांतिकारी बनने का विचार करने लगे और उनमें से एक ने तो कहीं से एक रिवॉल्वर भी प्राप्त कर लिया। उसका नाम वीरेंद्र डे था।

चटगाँव के बचे हुए क्रांतिकारियों के साथ वीरेंद्र डे का संबंध स्थापित हो गया और वह उनसे निशाना साधने का प्रशिक्षण प्राप्त करने लगा। शीघ्र ही वह एक अच्छा निशानेबाज भी बन गया।

अब क्रांतिकारियों की योजना बनी कि या तो पुलिस के किसी अफसर को या किसी प्रशासनिक अधिकारी को गोली से उड़ाकर श्यामकुमार नंदी की मृत्यु का बदला लिया जाए। इस कार्य का दायित्व वीरेंद्र डे ने अपने ऊपर लिया।

एक दिन वीरेंद्र जब गोलियाँ चलाने का अभ्यास समाप्त करके रिवॉल्वर को खाली समझ उसके साथ खिलवाड़ कर रहा था तो उसने भूल से ट्रिगर दबा दिया। ट्रिगर का दबना था कि भयानक आवाज के साथ गोली निकलकर वीरेंद्र के पेड़ू में समा गई।

वीरेंद्र डे को तत्काल कोई डॉक्टरी सहायता नहीं पहुँचाई जा सकी। काफी खून उसके शरीर से बह गया। खून बह जाने के कारण वह अचेत हो गया और कुछ समय पश्चात् उसकी मृत्यु हो गई।

पुलिस से बदला लेने की तमन्ना वीरेंद्र डे के मन में ही रह गई, पर क्रांतिकारी के अनुरूप शहादत का गौरव उसने प्राप्त कर लिया।

□

## ★ वैद्यनाथ सेन

कलकत्ता में अगस्त क्रांति का उग्र रूप नहीं रहा। वहाँ कांग्रेस की ओर से कार्यवाही होने के बजाय विद्यार्थियों की ओर से हुई। विद्यार्थियों ने छुटपुट हमले किए और तीन ट्राम गाड़ियों में आग लगा दी। श्रीमानी बाजार के पास पुलिस ने उस जुलूस को रोका, जो सामने से आ रहा था। पुलिस ने गोलियाँ चलाईं और वैद्यनाथ सेन नाम का व्यक्ति शहीद हो गया।

इस घटना के पश्चात् आंदोलन लगभग सभी क्षेत्रों में फैल गया और ट्राम गाड़ियों में आग लगा देना आम बात हो गई। मिलिट्री भी सक्रिय हो गई और ब्रेनगन तथा टामीगनों से गोलियाँ बरसाई गईं।

कलकत्ता में आंदोलन धीमी गति से कई दिनों तक चलता रहा।

□

## ★ शंकरभाई धोबी

शंकरभाई की उम्र उस समय केवल चौदह वर्ष की ही थी। वह एक हाई स्कूल में पढ़ रहा था, जब वह सन् १९४२ के आंदोलन में कूद पड़ा। उसमें नेतृत्व की प्रवृत्तियाँ थीं और जुलूस के आगे झंडा उसीने थामा। गुजरात के केरा नगर में शासन विरोधी जुलूस निकाला जा रहा था। पुलिस ने प्रदर्शनकारियों पर गोलियाँ चला दीं और बालक शंकरभाई ने शहादत प्राप्त कर ली।

शंकरभाई का जन्म सन् १९२८ में गुजरात के केरा जिले के 'डाकोर' नामक ग्राम में हुआ था। वह डाह्याभाई धोबी का पुत्र था।

□

## ★ शंभूनाथ आजाद
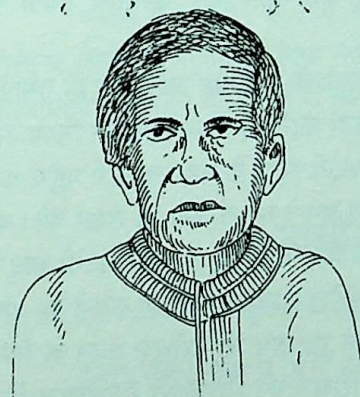
शंभूनाथ आजाद

शंभूनाथ आजाद को इस बात का दु:ख अवश्य था कि सरदार भगतसिंह और चंद्रशेखर आजाद जैसे क्रांतिवीरों के चले जाने से क्रांतिकारी आंदोलन को बहुत आघात पहुँचा है, पर उसका क्रांतिकारी मन निराश होकर बैठ जानेवाला नहीं था। उसके संकल्प ने निराशा के आवरण को झटक दिया और वह नए सिरे से दल के विस्तार में लग गया।

उस समय शंभूनाथ आजाद का

कार्यक्षेत्र पंजाब था। उसने अमृतसर के एक सत्रह वर्षीय नौजवान रोशनलाल मेहरा को क्रांति दल में सम्मिलित किया। रोशनलाल मेहरा के द्वारा कुछ और होनहार युवक भी दल के हाथ लगे।

विचार-विमर्श के पश्चात् शंभूनाथ आजाद और रोशनलाल मेहरा इस निर्णय पर पहुँचे कि अब क्रांतिकारी गतिविधियों का कार्यक्षेत्र मद्रास प्रांत बनाया जाए। उनके इस निर्णय के पक्ष में तीन बिंदु थे। पहला तो यह कि पुलिस की नजरों से बचने के लिए ऐसे स्थान पर जाना उचित था, जो अपेक्षाकृत सुरक्षित माना जाता था। दूसरी बात यह थी कि मद्रास के अंग्रेज शासक की गर्वोक्ति को झुठलाना था, जिसका कथन था कि उसके प्रांत की जनता राजभक्त है और वह श.सन विरोधी कार्यों में भाग नहीं लेती। तीसरी बात यह थी कि दक्षिण भारत में भी क्रांति का प्रसार अत्यंत आवश्यक था।

रोशनलाल मेहरा के पिता वस्त्र व्यवसायी थे। रोशनलाल ने अपने पिता की तिजोरी से पाँच हजार आठ सौ रुपए निकाले और शंभूनाथ आजाद को दे दिए। पैसा हाथ लगते ही आजाद ने रोशनलाल तथा कुछ अन्य साथियों को साथ लेकर मद्रास पहुँचने की योजना बना डाली। आजाद ने वह धन अपने एक साथी रामविलास शर्मा के पास रख दिया, जो पुलिस के हाथों पड़ गया। इस प्रकार एक साथी और पैसा, दोनों ही क्रांतिकारियों के हाथ से चले गए।

शंभूनाथ आजाद निराश होनेवाले नहीं थे। जोड़-तोड़ करके उन्होंने कुछ अन्य व्यवस्थाएँ कीं और उनका दल मद्रास पहुँच गया। उनकी योजना के अनुसार उटकमंड के एक बैंक पर डाका डाला गया, जो सफल रहा और काफी पैसा उनके हाथ लगा। उनके कुछ साथी नए-नए थे, जो असावधानी के कारण पुलिस के चंगुल में पहुँच गए। इस प्रकार नित्यानंद वात्स्यायन और खुशीराम मेहता को शंभूनाथ आजाद ने खो दिया।

साथियों की गिरफ्तारी के कारण आजाद के लिए यह आवश्यक हो गया कि मद्रास में वे अपने रहने का स्थान बदलें। बड़ी कठिनाई से उन्हें मकान मिला और वे रामपुरम् क्षेत्र के मकान को छोड़कर तंबूचट्टी स्ट्रीट के नए मकान में पहुँच गए।

मद्रास के इस क्रांतिकारी दल ने बम बनाने की योजना भी तैयार की। बम बनाने के लिए रासायनिक पदार्थ तो एकत्रित कर लिये गए, पर समस्या थी धातु के खोल की। एक अपरिचित प्रांत में बम के खोल ढलवाए नहीं जा सकते थे, अत: चूड़ीदार मद्रासी लोटे काम में लाए गए। बने हुए बम का परीक्षण करने के लिए, वे लोग रात्रि को समुद्र के किनारे पहुँचे। परीक्षण की जिम्मेदारी रोशनलाल मेहरा ने अपने ऊपर ली। वह हाथ में बम लेकर समुद्र के किनारे बढ़ने लगा। अँधेरे में

एक चट्टान पर से पैर फिसलने के कारण रोशनलाल मेहरा गिर पड़ा और बम का विस्फोट हो गया। इस प्रकार शंभूनाथ आजाद का एक विश्वस्त साथी अपनी कुर्बानी दे गया। यह घटना १ मई, १९३३ को हुई।

बम विस्फोट के परिणामस्वरूप पुलिस घटनास्थल पर पहुँच गई और वह इस निष्कर्ष पर पहुँची कि मद्रास भी क्रांतिकारियों का गढ़ बन गया है। पुलिस ने भी अपनी गतिविधियाँ तेज कर दीं। उसने उन सारे स्थानों की खोज प्रारंभ कर दी, जहाँ बंगाल और उत्तरी प्रांतों के लोग रहते थे।

एक दिन शंभूनाथ आजाद का दल घर में ही था कि किसीने बाहर की कुंडी खटखटाई। क्रांतिकारियों ने सुराखों में से झाँका तो पाया कि बाहर सशस्त्र पुलिस खड़ी थी। जल्दी-जल्दी में उन्होंने आपत्तिजनक कागज और उटकमंड बैंक से लूटी गई नोटों की गड्डियाँ जला डालीं और मुकाबले के लिए तैयार हो गए। दोनों ओर से दनादन गोलियाँ चलने लगीं। उसी समय मोहर्रम का जुलूस उस सड़क पर से निकला। स्थिति का लाभ उठाने के लिए पुलिस ने घोषित कर दिया कि वह डाकुओं को पकड़ने का प्रयत्न कर रही है और जुलूस के लोगों को भी इस काम में सहायता देनी चाहिए। यह स्थिति क्रांतिकारियों के लिए बड़ी विषम हो गई। क्रांतिकारी लोग भी जोर-जोर से देशभक्ति के नारे लगाने लगे और चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगे कि वे डाकू नहीं, क्रांतिकारी हैं। उनकी युक्ति काम दे गई और जुलूस आगे बढ़ गया। वे पुलिस का मुकाबला करते रहे। पुलिस की सहायता के लिए नई कुमुक पहुँच गई। पुलिस ने दरवाजा तोड़ डाला और क्रांतिकारी लोग वहाँ से एकदम भागे। उनका एक साथी गोविंदराम वर्मा पुलिस की गोली का शिकार होकर शहीद हो गया और अन्य साथियों सहित शंभूनाथ गिरफ्तार कर लिये गए। जब मद्रास की जनता को मालूम पड़ा, तो भारी संख्या में लोग उनके दर्शनों के लिए पहुँचने लगे।

'मद्रास बम केस' के नाम से मुकदमा चला और शंभूनाथ आजाद को आजन्म द्वीपांतरवास का दंड दिया गया। अपने जीवन के अमूल्य बीस वर्ष उन्होंने कालापानी की काल कोठरियों में बिताए।

□

## ★ शचींद्रनाथ बख्शी
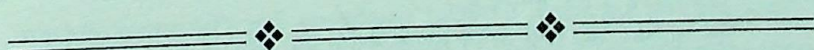
डेंटल सर्जन वर्मा ने अभी अपनी डिस्पेंसरी खोली ही थी, एक नौजवान उनके पास पहुँचा। डॉ. वर्मा ने युवक को कुरसी पर बैठने का इशारा किया और

शचींद्रनाथ बख्शी

डिस्पेंसरी चालू करने की प्रारंभिक तैयारियों में जुट गए। तैयारियाँ पूरी कर लेने के पश्चात् वे युवक की ओर मुखातिब होकर बोले—

"कहिए, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ?"

"डॉक्टर साहब, आप मेरे सामनेवाले इन दाँतों को देखिए। ऊपर की पंक्ति का एक दाँत दूसरे दाँत पर चढ़ा हुआ है और वह मुँह को कुछ अस्वाभाविक-सा बना रहा है। मैं चाहता हूँ कि आप इस चढ़े हुए दाँत को बाहर निकाल दें।"

"देखिए मिस्टर! आपका यह चढ़ा हुआ दाँत मुझे जन्मजात लग रहा है। मेरा मतलब है कि यह दाँत प्रारंभ से ही ऐसा निकला है और इसे उखाड़ने में भी कठिनाई होगी; क्योंकि इसकी जड़ अन्य दाँतों की ही तरह गहरी व मजबूत है।"

"यह तो मैं भी जानता हूँ, डॉक्टर साहब! पर मैं इसे निकलवाना चाहता हूँ और इसीलिए तो आपके पास आया हूँ।"

"और मैं भी यह जानता हूँ, जनाब, कि आप इस दाँत को निकलवाने आए हैं, इसीलिए तो मैं आपको यह सलाह दे रहा हूँ कि आप यह दाँत न निकलवाएँ। आखिर यह दाँत आपका क्या बिगाड़ रहा है और आप इसें क्यों निकलवाना चाहते हैं?"

इस प्रश्न को सुनकर युवक ने कुछ शरमाने का अभिनय किया और इधर-उधर देखकर धीरे से डॉक्टर से बोला—

"बात यह है, डॉक्टर साहब, कि एक लड़की के साथ मेरा प्रेम-प्रसंग चल रहा है और वह मेरे साथ प्रेम विवाह करने के लिए राजी भी है; पर यह चढ़ा हुआ दाँत मुझे शरमिंदा करता रहता है। इसीलिए तो मैं चाहता हूँ कि बदसूरती का प्रतीक यह दाँत निकल जाए तो फिर हम दोनों की शादी होने में कोई अड़चन नहीं रहेगी।"

"अच्छा, तो यह मामला है। मुझे आपके साथ पूरी हमदर्दी है और मैं आपकी परेशानी दूर किए देता हूँ।"

यह कहकर डॉ. वर्मा अपने युवक मरीज को अंदर ले गए। उन्होंने बहुत सावधानी से उस दाँत के पासवाले मसूड़े में इंजेक्शन लगाकर उस स्थान को सुन्न किया और फिर अपने औजार से उस दाँत को पकड़कर बाहर खींच दिया।

युवक का मंतव्य पूरा हो चुका था। उसने दस रुपए का नोट निकालकर डॉक्टर को थमाया और वह चलने लगा। डॉक्टर ने उसे टोकते हुए कहा—

''दाँत निकालने की मेरी फीस केवल एक रुपया है। आप अपने बाकी नौ रुपए तो लेते जाइए।''

''नहीं, डॉक्टर साहब! वे रुपए आप अपने पास ही रखिए। हम लोगों की शादी शीघ्र ही होने वाली है। हमारी शादी की खुशी में आप मिठाई खाएँ, इसीलिए ये पैसे मैं आपके पास छोड़ रहा हूँ।''

डॉक्टर कुछ उत्तर दे या कुछ पूछताछ करे, इसके पहले ही सीढ़ियों से उतरकर वह युवक पास की गली में प्रवेश करके ओझल हो गया।

जिस युवक ने अपना चढ़ा हुआ दाँत निकलवाया, उसका नाम शचींद्रनाथ बख्शी था। वह 'हिंदुस्तान प्रजातंत्र संघ' का एक उग्र क्रांतिकारी था। वह काकोरी ट्रेन डकैती में भाग ले चुका था और उसके विरुद्ध गिरफ्तारी का वारंट था। पुलिस ने उसकी गिरफ्तारी के लिए उसके जिस हुलिया का बखान किया था, उसमें बताया गया था कि अभियुक्त के ऊपर के दाँतों में एक दाँत दूसरे दाँत पर चढ़ा हुआ है। इस दाँत के कारण वह क्रांतिकारी आसानी से पकड़ा जा सकता था। अपना हुलिया बदलने के लिए ही उसने दाँत निकलवाया। उसने बड़ी चतुराई से एक लड़की के साथ अपने प्रेम विवाह की बात कहकर डेंटल सर्जन वर्मा की सहानुभूति अर्जित की और उससे चढ़ा हुआ दाँत निकलवाने में सफल हो गया। शचींद्रनाथ बख्शी ने क्रांति के क्षेत्र में क्या-क्या किया, यह भी जानने योग्य है।

शचींद्रनाथ बख्शी एक बंगाली युवक थे। उनका घर बनारस के पातालेश्वर मोहल्ले में था और उनके पिता एक बर्फ के कारखाने के मालिक थे। आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी थी। मूल रूप से शचींद्रनाथ बख्शी बंगाल की अनुशीलन समिति की उस शाखा के सदस्य थे, जो उत्तर प्रदेश में खोली गई थी। जब अनुशीलन समिति और शचींद्रनाथ सान्याल के क्रांतिकारी दल का एकीकरण हुआ तो स्वभावत: शचींद्रनाथ बख्शी 'हिंदुस्तान प्रजातंत्र संघ' के सदस्य बन गए।

क्रांतिकारी दल का विस्तार करने के लिए शचींद्रनाथ बख्शी को पहले लखनऊ भेजा गया। पता चला कि लखनऊ में उस समय क्रांतिकारी संगठन के विस्तार की अधिक गुंजाइश नहीं थी, इस कारण शचींद्रनाथ बख्शी को झाँसी भेज दिया गया।

झाँसी में शचींद्रनाथ बख्शी ने बहुत अच्छा कार्य किया। लोगों के संदेह से बचने के लिए उन्होंने वहाँ नगरपालिका समिति में नौकरी कर ली। शेष समय में बख्शीजी युवकों को व्यायाम प्रशिक्षण देने लगे। उन्होंने वहाँ 'सरस्वती व्यायामशाला' नाम की एक संस्था स्थापित की, जिसके अंतर्गत एक वाचनालय भी चलता था।

झाँसी में दो बहुत अच्छे युवक बख्शीजी के हाथ लगे, जो अंत तक बहुत अच्छे क्रांतिकारी सिद्ध हुए। वे युवक थे भगवानदास माहौर और सदाशिवराव मलकापुरकर।

झाँसी में संगठन का कार्य दृढ़ करने के पश्चात् शचींद्रनाथ बख्शी बनारस पहुँच गए और वहाँ विश्वविद्यालय के छात्रों में अपने दल के लिए युवकों की खोज करने लगे। बनारस की क्रांतिकारी गतिविधियों के संगठक उस समय राजेंद्रनाथ लाहिड़ी थे। उन दोनों ने मिलकर काम को खूब आगे बढ़ाया।

बनारस में शचींद्रनाथ बख्शी कई व्यायामशालाएँ और युवक क्लब चलाते थे। वे 'तैराकी संघ' के सचिव भी थे। एक बार उन्होंने तेरह मील लंबी तैराकी प्रतियोगिता आयोजित की। चुनार से तैरते-तैरते बनारस तक पहुँचना था। तैराकों की सुरक्षा के लिए कुछ नावें साथ चल रही थीं, जिनमें बचाव दल के लोग थे और डॉक्टर भी। एक-एक मील के फासले पर तैराकों की सुरक्षा के लिए कुछ नावें स्थायी रूप से भी रख छोड़ी गई थीं। दोनों किनारों पर दर्शकों की खूब भीड़ थी। प्रतियोगिता प्रारंभ हुई। पचास प्रतियोगी गंगा नदी में कूद पड़े। प्रतियोगिता का प्रथम पुरस्कार मिला बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के एक नौजवान छात्र केशव चक्रवर्ती को। केशव चक्रवर्ती भी क्रांतिकारी दल का सदस्य था।

केशव चक्रवर्ती को तैराकी का और अधिक अभ्यास कराया गया तथा जब जर्मनी में एक तैराकी प्रतियोगिता का आयोजन हुआ तो बनारस के तैराकी संघ ने इस प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए केशव चक्रवर्ती को जर्मनी भेजा।

केशव चक्रवर्ती को जर्मनी भेजने में क्रांतिकारियों का एक अन्य उद्देश्य भी था। उन्हें मालूम था कि स्वतंत्र देशों में हथियारों की बिक्री पर कोई पाबंदी नहीं होती और वहाँ दुकानों से कोई भी हथियार खरीद सकता है। बनारस के क्रांतिकारी दल ने केशव चक्रवर्ती को समझाया कि वे जर्मनी में किसी फर्म के साथ अनुबंधन करके कुछ माउजर पिस्तौलें समुद्री मार्ग से भारत भिजवाएँ। उस समय क्रांतिकारियों को माउजर पिस्तौलों की बहुत जरूरत थी। यह पिस्तौल आकार में छोटी, चलाने में आसान और बहुत प्रभावशाली होती थी। केशव चक्रवर्ती तैराकी प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए जर्मनी पहुँचे और एक कंपनी के साथ उन्होंने माउजर पिस्तौलों का सौदा पक्का कर लिया। उस कंपनी का एक जहाज अन्य माल लेकर भारत जाने वाला था। यह तय हुआ कि भारतीय लोग हथियारों का वह पार्सल ब्रिटेन की समुद्री सीमा से दूर समुद्र में पहुँचकर नकद दाम देकर ही छुड़ाएँ।

अपना काम पूरा करके केशव चक्रवर्ती भारत लौट आए। वे तैराकी प्रतियोगिता में तो सफल नहीं हो सके, पर क्रांतिकारी दल का कार्य संपन्न कर देने में सफल हो गए। हथियारों का वह पार्सल छुड़ाने की चिंता अब शचींद्रनाथ

बख्शी पर सवार हो गई।

उन दिनों विदेशों से जो मालवाही जहाज आते थे, उनकी सूचना कलकत्ता से छपनेवाले 'डेली स्टेट्समैन' के व्यापारिक पृष्ठ के 'शिपिंग इंटेलिजेंस' कॉलम में छपती थी। शचींद्रनाथ बख्शी अब नियमित रूप से 'डेली स्टेट्समैन' पढ़ने लगे और पता लगाने लगे कि हथियारोंवाला जहाज भारत कब आता है। एक दिन के अखबार में उनको पढ़ने को मिला कि उनके हथियार लानेवाला जहाज सन् १९२५ के जुलाई मास के तीसरे हफ्ते में पहुँचेगा। उन्हें माल की डिलीवरी लेने की चिंता सवार हो गई। माल की डिलीवरी समुद्र के बीच पहुँचकर ही लेनी थी; क्योंकि तभी वह सामान जर्मनी की दर पर सस्ता मिल सकता था। यह भी तय था कि यदि संबंधित पार्टी माल की डिलीवरी लेने समुद्र में नहीं पहुँची तो किनारे पर उसे माल नहीं दिया जाएगा; क्योंकि ऐसा करना अंतरराष्ट्रीय कानून के अनुसार अपराध था। उस समय ब्रिटेन की समुद्री सीमा समुद्र में तीन मील तक थी। उसके बाहर किसी जहाज की तलाशी नहीं ली जा सकती थी।

शचींद्रनाथ बख्शी इस उधेड़बुन में लग गए कि हथियारों का पार्सल छुड़ाने के लिए पैसा किस तरह जुटाया जाए। उन्हें इस चिंता से मुक्त करने के लिए शीघ्र ही अवसर भी दल के हाथ लग गया।

क्रांतिकारी दल की फौजी शाखा के प्रभारी रामप्रसाद बिस्मिल ने दल की एक बैठक शाहजहाँपुर में आयोजित की। उन्होंने दल के सामने प्रस्ताव रखा कि सहारनपुर-लखनऊ पैसेंजर गाड़ी में से सरकारी खजाना ले जानेवाला संदूक छीन लिया जाए तो उससे काफी धन प्राप्त हो सकता है। इससे पहले वे खजाने को ले जाने की प्रक्रिया की अच्छी तरह से जाँच कर चुके थे और उन्होंने बताया कि उसे लूट लेने में विशेष कठिनाई नहीं होगी। योजना पक्की हो गई।

रामप्रसाद बिस्मिल के साथ कुछ क्रांतिकारी उस गाड़ी में शाहजहाँपुर स्टेशन से सवार होने वाले थे। शचींद्रनाथ बख्शी को यह दायित्व दिया गया कि वे अपने साथ राजेंद्रनाथ लाहिड़ी और अशफाक उल्ला खाँ को लेकर काकोरी स्टेशन से ट्रेन के दूसरे दर्जे के डिब्बे में सवार हों और आगे की योजना का संचालन करें।

९ अगस्त, १९२५ को शचींद्रनाथ बख्शी अपने दोनों साथियों के साथ काकोरी स्टेशन पर थे। वे नेकर और कमीज पहने हुए थे। टिकट घर के अंदर पहुँचकर उन्होंने टिकट बाबू से लखनऊ के दूसरे दर्जे के तीन टिकट माँगे। टिकट बाबू ने आश्चर्य के साथ उनकी तरफ देखा और वह कुछ क्षण रुका भी रहा कि कहीं भूल से उन्होंने दूसरे दर्जे के टिकट तो नहीं माँग लिये। उसके आश्चर्य का

कारण यह था कि गाँव के उस स्टेशन से शायद ही कभी छह महीने में दूसरे दर्जे के एक-दो टिकट बिकते हों। जब टिकट बाबू ने टिकट देने में देर की तो शचींद्रनाथ बख्शी ने उससे अंग्रेजी में कहा—

''मैंने आप से लखनऊ के दूसरे दर्जे के तीन टिकट माँगे हैं।''

टिकट बाबू थोड़ा सकपका गया और उसने पैसे लेकर झट दूसरे दर्जे के लखनऊ के तीन टिकट दे दिए। तीनों साथी प्लेटफॉर्म पर टहलने लगे और गाड़ी आने पर उन्होंने देखा कि उनके साथी लोग खिड़कियों से बाहर झाँक रहे हैं। दोनों ही दल आश्वस्त हुए। शचींद्रनाथ अपने दोनों साथियों के साथ दूसरे दर्जे के डिब्बे में जा बैठे। उस समय दूसरे दर्जे का डिब्बा खाली पड़ा था, पर एक बर्थ पर किसी साहब का हैंड बैग रखा था। गाड़ी चलने पर वे साहब भी अंदर आ गए। वे साहब रेलवे विभाग में डॉक्टर थे और उनका नाम चंद्रपाल गुप्त था। शचींद्रनाथ बख्शी उनकी ओर से मुँह घुमाकर दूसरी ओर देखने लगे।

काकोरी स्टेशन छोड़कर गाड़ी काकोरी और आलमपुर स्टेशनों के बीच पहुँची होगी कि शचींद्रनाथ बख्शी ने घबराने का अभिनय करते हुए अपने दोनों साथियों को सुनाते हुए कहा—

''अरे! वह अपना जेवरोंवाला बक्सा कहाँ है?''

राजेंद्रनाथ लाहिड़ी ने उत्तर दिया—

''वह तो कुँअरजी के हाथ में था। क्यों कुँअरजी, क्या आपने उसे डिब्बे में नहीं रखा?''

'कुँअरजी' नामधारी अशफाक ने भी घबराहट के साथ कहा—

''अरे, गजब हो गया! वह तो उसी बेंच के पास रखा रह गया, जहाँ प्लेटफॉर्म पर हम लोग बैठे थे।''

शचींद्रनाथ बख्शी ने घबराहट का अभिनय करते हुए कहा—

''हम तो लुट गए, भाई! बीस हजार रुपए के जेवरों का बक्सा प्लेटफॉर्म पर छोड़ आए। जल्दी गाड़ी की जंजीर खींचो और बक्से की खोज में भागो।''

यह कहकर शचींद्रनाथ बख्शी स्वयं भी जंजीर की ओर लपके; पर राजेंद्रनाथ लाहिड़ी का हाथ उसपर पहले ही पड़ चुका था। ट्रेन की गति धीमी हुई और वह खड़ी हो गई। वे तीनों नीचे कूद पड़े। तीसरे दर्जे के डिब्बे में बैठे हुए साथी भी कूद पड़े। फायर किए गए। मुसाफिरों को चेतावनी दे दी गई कि कोई नीचे नहीं उतरे और सब अपने-अपने स्थान पर बेफिक्री के साथ बैठे रहें। गार्ड और ड्राइवर को भूमि पर पेट के बल लेट जाने का आदेश दिया गया। शचींद्रनाथ बख्शी पाँच-पाँच मिनट पर फायर करते रहे। अशफाक उल्ला खाँ के प्रहारों से संदूक टूट गया।

क्रांतिकारी लोग उसका सारा धन निकालकर चलते बने। वे जंगल के रास्ते से पैदल चलकर लखनऊ जा पहुँचे।

जो रुपया ट्रेन डकैती से मिला, उसमें से कुछ रुपया लेकर शचींद्रनाथ बख्शी कलकत्ता चले गए, जहाँ दूर समुद्र में जाकर जर्मन जहाज से उन्हें हथियारों का पार्सल प्राप्त करना था। नियत तिथि को जर्मन जहाज समुद्र में पहुँचा। एक नाव किराए पर लेकर शचींद्रनाथ बख्शी पहले से ही ब्रिटिश सीमा के बाहर समुद्र में मौजूद थे। बिलटी और पैसे देकर उन्होंने पार्सल प्राप्त किया। लौटते समय उन्होंने मछुए का वेश बना लिया और समुद्र में मछलियों के शिकार के लिए जाल फेंकते हुए वे एक सुनसान किनारे पर जा लगे। नाववाले का किराया पहले ही चुका दिया था। पार्सल लेकर वे निश्चित स्थान पर जा पहुँचे। उस पार्सल में पचास माउजर पिस्तौलें थीं। दल को ये पिस्तौलें बाँट दी गईं। जब चंद्रशेखर आजाद इलाहाबाद के अल्फ्रेड पार्क में लड़ते-लड़ते शहीद हुए तो उनके पास से इन्हीं पिस्तौलों में से एक पाई गई थी।

काकोरी की ट्रेन डकैती से सरकारी क्षेत्रों में सनसनी फैल गई। पुलिस ने बड़ी तत्परता के साथ अपराधियों की खोज प्रारंभ की। २६ सितंबर, १९२५ को रामप्रसाद बिस्मिल सहित अधिकांश क्रांतिकारी गिरफ्तार कर लिये गए। शचींद्रनाथ बख्शी पुलिस के हाथ नहीं लगे। उन्होंने अपना दाँत निकलवाकर अपना हुलिया बदल लिया। बंबई पहुँचकर वे बंदरगाह से माल उतारनेवाले गोदी कर्मचारी बन गए। शरीर से वे तगड़े थे ही, मेहनत करके वे अच्छा पैसा कमाने लगे।

केवल गिरफ्तारी से बचे रहना ही शचींद्रनाथ बख्शी का उद्देश्य नहीं था। वे कुछ अन्य साथियों को बटोरकर दल का पुनर्गठन करना चाहते थे। होते-करते वे बिहार पहुँच गए। कुछ दिन वे हजारीबाग रहे और फिर भागलपुर जा पहुँचे। जिन दिनों शचींद्रनाथ बख्शी भागलपुर में अपना फरारी जीवन व्यतीत कर रहे थे, उन्हीं दिनों अशफाक उल्ला खाँ भी उनसे लगभग एक सौ मील की दूरी पर डाल्टनगंज में अपना फरारी जीवन व्यतीत कर रहे थे। किसी एक को दूसरे के अस्तित्व का पता नहीं था।

आखिरकार भागलपुर से शचींद्रनाथ बख्शी भी गिरफ्तार कर लिये गए और उन्हें काकोरी केस में सम्मिलित करने के लिए लखनऊ पहुँचाया गया। दिल्ली से अशफाक उल्ला खाँ भी गिरफ्तार करके लखनऊ भेजे गए। उस समय काकोरी केस के अन्य अभियुक्तों को फैसला सुनाया जा चुका था। काकोरी केस के पूरक के रूप में इन दोनों पर भी मुकदमा चलाया गया।

शासन ने जानबूझकर शचींद्रनाथ बख्शी और अशफाक उल्ला खाँ को

पृथक्-पृथक् जेलों में रखा था। उद्देश्य यह था कि इन लोगों से अलग-अलग पूछताछ करके कुछ नए रहस्य प्राप्त किए जाएँ। किसी एक को मालूम भी नहीं था कि दूसरा गिरफ्तार हो चुका है। अलग-अलग गाड़ियों में ही उन्हें अदालत ले जाया गया। अदालत के बाहर दोनों ने एक-दूसरे को देखा; पर वे अपनी भावनाओं को जब्त किए रहे और एक-दूसरे से अपरिचित बने रहे। वह शासनजन्य विवशता थी कि उन्हें एक-दूसरे से अलग रखा गया था; पर यहाँ विवशता उन्हींकी पैदा की हुई थी कि एक-दूसरे के घनिष्ठ होते हुए भी वे अजनबी बने रहे।

अदालत की कार्यवाही समाप्त होने पर वे बाहर निकले। पुलिसवाले भी समझ रहे थे कि ये दोनों बन रहे हैं। उनकी असलियत खुलवाना चाहते थे। जेल के अधिकारी ने जानबूझकर शचींद्रनाथ बख्शी को नाम लेकर पुकारा। अशफाक उल्ला खाँ उनके पास ही खड़े थे। नाम पुकारे जाने पर उन्होंने बख्शीजी की ओर देखकर पूछा—

''अच्छा, आप ही शचींद्रनाथ बख्शी हैं! मैंने आपकी बड़ी तारीफ सुन रखी है।''

बख्शीजी ने अशफाक के प्रश्न का सीधा उत्तर न देते हुए उनकी ओर इशारा करके जेल के अधिकारी से पूछा—

''क्या आप मुझे इनका परिचय देंगे, जो मुझसे सवाल कर रहे हैं?''

जेल के अधिकारी ने बख्शीजी से कहा—

''ये प्रसिद्ध क्रांतिकारी अशफाक उल्ला खाँ हैं।''

बख्शीजी ने बनकर अशफाक उल्ला खाँ को संबोधित करते हुए कहा—

''अच्छा, आप ही अशफाक उल्ला खाँ हैं! मैंने भी आपकी बहुत तारीफ सुन रखी है।''

अब दोनों अपनी भावनाओं पर और अधिक लगाम लगाकर नियंत्रण न रख सके। अगले ही क्षण दोनों एक-दूसरे की भुजाओं में बँधे हुए एक-दूसरे को दबोच रहे थे। उनका यह मिलन देखकर पुलिस के लोग तालियाँ बजा उठे। जेल के अधिकारी ने कहा—

''राम और भरत का यह मिलन देखने के लिए ही तो हम लोग तरस रहे थे। अब हमारे नेत्र तृप्त हो गए।''

अशफाक उल्ला खाँ से उम्र में शचींद्रनाथ बख्शी डेढ़ साल बड़े थे और कद में भी वे बख्शीजी से लगभग एक फुट ऊँचे थे। दोनों ही बहुत कसरती और बलिष्ठ नौजवान थे। बाद में उन दोनों को एक ही जेल में काकोरी केस के अन्य साथियों के साथ रख दिया गया।

जब इन दोनों के पूरक मुकदमे का फैसला सुनाया गया तो अशफाक उल्ला खाँ को फाँसी की सजा सुनाई गई और शचींद्रनाथ बख्शी को आजीवन कालापानी की। यह सुनकर शचींद्रनाथ बख्शी को बहुत बुरा लगा। जज की ओर देखकर उन्होंने कहा—

''एक ही जुर्म के लिए आपने दो प्रकार की सजाएँ देकर हम लोगों को अलग-अलग क्यों कर दिया?''

और सचमुच ही शासन ने उन दोनों को अलग-अलग कर दिया। फाँसी की सजा पाने के लिए अशफाक उल्ला खाँ को फैजाबाद जेल भेज दिया गया और शचींद्रनाथ बख्शी को उम्रकैद की सजा के लिए सीखचों के अंदर बंद कर दिया गया।

□

# ★ शांति घोष ★ सुनीति चौधरी

सुनीति चौधरी

कोमिला के डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट मि. स्टीवेंस ने अपने जिले से क्रांतिकारियों का सफाया करने का संकल्प कर लिया था। वे क्रांतिकारियों को इतनी कड़ी-कड़ी सजाएँ दे रहे थे कि उनका खयाल था कि उनके जिले में क्रांतिकारी गतिविधियाँ समाप्त हो जाएँगी। क्रांतिकारी भी इस उधेड़-बुन में थे कि डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट साहब को ही दंड दिया जाए।

मि. स्टीवेंस अपने प्रति खतरे से सावधान थे। वे अपनी सुरक्षा का पूरा ध्यान रखते थे। अदालत में वे बहुत कम जाते थे। अदालत का अधिकांश काम वे अपने बंगले पर ही निबटा दिया करते थे। उनके बंगले पर हमेशा पुलिस गार्ड रहता था। उनसे मिलने जानेवालों की तलाशी ली जाती थी। उनके साथ कोई-न-कोई अफसर हमेशा ही रहता था।

१४ दिसंबर, १९३१ को शांति घोष और सुनीति चौधरी नाम की कक्षा आठ में पढ़नेवाली दो छात्राएँ बग्घी में बैठकर जिला मजिस्ट्रेट एवं कलेक्टर मि. सी.जी.बी. स्टीवेंस के बंगले पर पहुँचीं और उन्होंने पहरे के संतरी से कहा कि हम लोग

मजिस्ट्रेट साहब से मिलना चाहती हैं। एक लड़की ने एक परचे पर दोनों के नाम लिख दिए। उसने असली नाम न लिखकर छद्‌म नाम इला सेन और मीरा देवी लिखकर परचा साहब के पास भिजवा दिया। वह परिचय पाकर साहब बहादुर अपने एक एस.डी.ओ. साथी के साथ स्वयं बाहर पहुँचे और उन्होंने दरवाजे पर ही उन बालिकाओं से भेंट की। बालिकाओं ने उन्हें बताया कि हम लोग तैराकी की एक प्रतियोगिता आयोजित कर रही हैं और उस स्पर्द्धा में आपसे शासकीय व्यवस्था का सहयोग चाहती हैं। उन लोगों ने साहब को एक लिखित प्रार्थना-पत्र भी दिया। साहब ने उसे पढ़ा और अंदर के अपने कार्यालय कक्ष में पहुँचकर उसपर एक वाक्य लिख दिया—'प्रधानाध्यापिका अपना अभिमत दें।'

यह वाक्य लिखकर मजिस्ट्रेट महोदय ने वह परचा एक बालिका को लौटा दिया। जिस समय वे परचा लौटा रहे थे, दूसरी बालिका ने अपना रिवॉल्वर निकालकर बिलकुल निकट से उनपर दो गोलियाँ छोड़ दीं। गोलियाँ खाकर साहब अंदर भागे और एक कमरे में छाती के बल गिर पड़े। उनके साथी एस.डी.ओ. तथा पहरेदारों ने दोनों बालिकाओं को पकड़कर काबू में कर लिया।

मि. स्टीवेंस को एक गोली हृदय पर लगी थी। उनकी तत्काल मृत्यु हो गई। दोनों बालिकाओं—शांति घोष और सुनीति चौधरी पर १८ जनवरी, १९३२ को मुकदमा चला। २७ जनवरी, १९३२ को मुकदमे का निर्णय सुना दिया गया। उनकी उम्र सोलह वर्ष से कम थी। उन्हें फाँसी की सजा न देकर आजीवन कालापानी की सजा दी गई

□

## ★ शालिग्राम तिवारी

शालिग्राम तिवारी ने सन् १९४२ के आंदोलन में अपना उग्र रूप प्रदर्शित किया। एक जुलूस का नेतृत्व करते हुए उसपर लाठियाँ भी पड़ीं और उसे गिरफ्तार भी कर लिया गया। उसे सागर जेल में रखा गया। खतरनाक कैदी समझकर उसे अमरावती जेल में स्थानांतरित कर दिया गया। जेल में उसे यातनाएँ दी गईं। जेल से मुक्त होते ही उसकी मृत्यु हो गई।

शालिग्राम तिवारी का जन्म सन् १८८२ के लगभग मध्य प्रदेश के सागर नगर में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री कन्हैयालाल तिवारी था।

□

## ★ शिवबरनसिंह यादव

❖ ❖

२८ अगस्त, १९४२ को अगस्त क्रांति के एक दल ने आगरा जिले के चमरौला रेलवे स्टेशन पर आक्रमण किया। आंदोलनकारियों ने रेलवे संपत्ति को नष्ट करना प्रारंभ कर दिया। स्टेशन मास्टर द्वारा भेजी गई सूचना के अनुसार पुलिस भी घटनास्थल पर पहुँच गई और उसने आंदोलनकारियों पर गोलियाँ चला दीं। इस गोली कांड में शिवबरनसिंह यादव घटनास्थल पर ही मारा गया।

शिवबरनसिंह का जन्म उत्तर प्रदेश के आगरा के 'खंडा' नामक ग्राम में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री गेंदालाल यादव था।

□

## ★ शिवराम

❖ ❖

महाराष्ट्र के नागपुर जिले के 'कोंडेली' स्थान के शिवराम को जब गिरफ्तार किया गया तो लोगों को यही हैरानी थी कि उसे क्यों गिरफ्तार किया गया है। यह ठीक है कि उसने सन् १९४२ के आंदोलन में भाग लिया था; पर न तो उसने तोड़-फोड़ की थी और न ही उसने हिंसा का सहारा लिया था। इतना होने पर भी उसे गिरफ्तार किया गया और छह महीने के कठोर कारावास का दंड सुना दिया गया।

शिवराम की मृत्यु नागपुर के केंद्रीय कारागार में हो गई। लोगों के अनुमान को कोई चुनौती नहीं दे सका कि पुलिस ही उसकी मृत्यु के लिए जिम्मेदार है। उसकी मृत्यु ८ सितंबर, १९४३ को हुई।

□

## ★ शिवलाल पटेल

❖ ❖

शिवलाल पटेल स्वयं भी डॉक्टर था और उसके पिता श्री पुरुषोत्तमदास पटेल भी एक प्रसिद्ध डॉक्टर थे। शिवलाल का जन्म १४ जनवरी, १९०२ को अहमदाबाद जिले के 'जैतपुर' ग्राम में हुआ था।

डॉ. शिवलाल पटेल ने सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो आंदोलन' में सक्रिय

शिवलाल पटेल

भाग लिया और शासन विरोधी गतिविधियों में भाग लेने के कारण गिरफ्तार कर लिया गया।

जेल में शिवलाल पटेल को अमानवीय यातनाएँ दी गईं। उसे बर्फ की सिल्लियों पर बार-बार लिटाया जाता था और रात को सोने नहीं दिया जाता था। नींद आने पर उसे बाँस से कोंचा जाता था। इन यातनाओं के कारण २० मई, १९४३ को शिवलाल पटेल की जेल में ही मृत्यु हो गई।

□

# ★ शीतलप्रसाद पांडेय

पहले तो वह स्वयं भी क्रांतिकारियों का शत्रु था और उनको पकड़ने में वह पूरी तत्परता दिखाता था। वह पुलिस का एक सिपाही था और उसका नाम था शीतलप्रसाद पांडेय।

एक दिन शीतलप्रसाद अपने किसी काम से शहर के बाहर एक बगीचे में गया। वहाँ कुछ लड़के खा-पीकर आनंद मना रहे थे। शीतलप्रसाद उन लोगों के पास पहुँच गया और उनसे बातचीत करने लगा। शीघ्र ही वह इस नतीजे पर पहुँचा कि वे लोग क्रांतिकारी हैं और उन सभी के पास हथियार भी हैं। क्रांतिकारी लोग भी उसे पहचान गए। शीतलप्रसाद ने सोचा कि आज मैं यहाँ से जीवित बचकर नहीं जा सकता। उसे देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि उसे मार डालने का कोई इरादा क्रांतिकारियों में दिखाई नहीं दिया। क्रांतिकारियों ने उसे कुछ खिलाया-पिलाया भी। उसने सोचा कि ये लोग खिला-पिलाकर मुझे मारेंगे; पर उन्होंने ऐसा कुछ भी नहीं किया। जब वह चलने लगा तो उन लोगों ने उसे जाने की इजाजत भी दे दी। उसने सोचा कि जब मैं चलने के लिए मुड़ूँगा, तो ये लोग मुझे मार देंगे। यह भी नहीं हुआ और वह काफी दूर तक चला भी गया। जाने किस विचार से वह उन लोगों के पास फिर जा पहुँचा और उनसे बोला—

''मैं तो सोच रहा था कि आज मैं आप लोगों के बीच फँस गया हूँ तो

आप मुझे अवश्य मार डालेंगे; पर आपने ऐसा कुछ भी नहीं किया, इसका क्या कारण है?''

क्रांतिकारियों ने उसे समझाया—

''हम लोग हत्यारे नहीं हैं और अकारण ही हम किसीको मारते नहीं फिरते। हम लोग क्रांतिकारी हैं और देश की आजादी के लिए फरार हुए हैं। हम तो हर अंग्रेज को भी नहीं मारते। हम केवल उन लोगों को मारते हैं, जो हमारा दमन करते हैं। हम गद्दारों को भी नहीं छोड़ते। तुमको हमने इसलिए नहीं मारा, क्योंकि तुम तो अपने अफसर का हुक्म बजानेवाले एक मामूली सिपाही हो। तुम्हारे बाल-बच्चे होंगे। यदि हमें मारना होगा तो हम तुम्हारे अफसर को मारेंगे, तुमपर क्या हाथ उठाएँ!''

क्रांतिकारियों की इस बात से शीतलप्रसाद पांडेय बहुत प्रभावित हुआ और वह क्रांतिकारियों के दल में सम्मिलित हो गया।

क्रांतिकारी के रूप में शीतलप्रसाद पांडेय चौबीस परगना क्षेत्र के पुलिस विभाग के लिए सिरदर्द बन गया। उसकी गिरफ्तारी के प्रयत्न क्रिए जाने लगे।

सियालदा-दिल्ली एक्सप्रेस गाड़ी ३ अप्रैल, १९३२ को ज़ब झाझा स्टेशन पर रुकी, तो सूचना पाकर रेलवे विभाग का थानेदार मजहर हुसैन एक डिब्बे में पहुँचा और उसने बताए गए संदिग्ध व्यक्ति से पूछताछ प्रारंभ की। थानेदार के प्रश्न थे—

'क्या तुम शीतलप्रसाद पांडेय हो?'

'क्या तुम्हारे पास बिना लाइसेंस का रिवॉल्वर है?'

शीतलप्रसाद पांडेय ने पहले प्रश्न का उत्तर 'हाँ' में दिया और दूसरे प्रश्न के उत्तर में उसने कहा कि मेरे पास रिवॉल्वर अवश्य है, पर उसका लाइसेंस भी मेरे पास है। थानेदार ने लाइसेंस दिखाने को कहा। लाइसेंस निकालने के स्थान पर शीतलप्रसाद ने रिवॉल्वर निकालकर थानेदार पर गोलियाँ चला दीं। जिस व्यक्ति ने थानेदार को सूचना दी थी, उसपर भी शीतलप्रसाद ने एक गोली चलाई। थानेदार मजहर हुसैन की घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई। पुलिस के अन्य लोग शीतलप्रसाद को पकड़ने के लिए दौड़ें, इसके पहले ही एक गोली स्वयं को मारकर सारी कार्यवाहियों से स्वयं को उसने मुक्त कर लिया।

□

# ★ शैलेशचंद्र चटर्जी
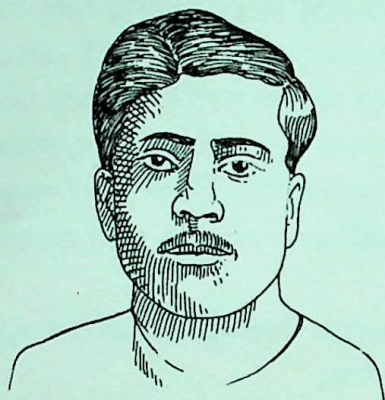
शैलेशचंद्र चटर्जी

शैलेशचंद्र चटर्जी को गिरफ्तार तो कर लिया गया, लेकिन उसे इतना खतरनाक क्रांतिकारी समझा गया कि उसे बंगाल की किसी भी जेल में रखना उचित नहीं माना गया। उसे राजपूताना की देवली कैंप जेल में स्थानांतरित कर दिया गया। शैलेशचंद्र और उसके रिश्तेदारों ने इस स्थानांतरण का काफी प्रतिरोध किया; लेकिन उनकी कोई सुनवाई नहीं हुई।

देवली जेल में शैलेशचंद्र बीमार पड़ गया। उसे भयंकर मलेरिया हो गया। कुछ दिन तक तो उसके इलाज की उपेक्षा की गई; लेकिन जब उसकी दशा बिगड़ने लगी तो जेल के नए और अनुभवहीन डॉक्टर ने इंजेक्शन द्वारा कुनेन की तगड़ी मात्रा उसके शरीर में पहुँचा दी। डॉक्टर के साथ उसका कंपाउंडर भी था, जो काफी अनुभवी था। उसने डॉक्टर को इतना तगड़ा इंजेक्शन देने से रोका भी; पर डॉक्टर ने उसका कहना नहीं माना। परिणाम यह हुआ कि शैलेशचंद्र चटर्जी की १७ अक्तूबर, १९३३ को जेल में मृत्यु हो गई।

□

# ★ शैलेश्वर चक्रवर्ती

"देखो शैलेश्वर! तुम्हारे पास एक भरा हुआ रिवॉल्वर है ही, तुम अपने पास ये दो बम भी रख लो। मैं समझता हूँ कि अब आक्रमण करने के लिए तुम्हारे पास पर्याप्त सामग्री है।"

"वैसे तो यह ठीक है, लेकिन यदि देर तक मुकाबला हुआ तो केवल भरा हुआ रिवॉल्वर काफी नहीं होगा। कुछ अतिरिक्त कारतूस भी आवश्यक प्रतीत होते हैं।" शैलेश्वर ने पार्टी के नेता को उत्तर दिया।

"हाँ, ठीक है। तुम अपनी कमर से कारतूसों की एक पेटी भी लपेट लो।

तुम अपना कार्य अच्छी तरह से समझ गए हो न?''

''हाँ, मैंने अपना काम भलीभाँति समझ लिया है। मुझे पहाड़तली के यूरोपियन क्लब के पास कहीं छिपकर रहना है और आप लोगों के आते ही क्लब के सदस्यों पर आक्रमण कर देना है।''

''हाँ, बिलकुल ठीक। यह याद रखना कि तुम्हारे संकेत पर ही हम लोग आक्रमण प्रारंभ करेंगे। हम लोग एक बारात की शक्ल में क्लब के सामने पहुँचेंगे और वहाँ आतिशबाजियाँ छोड़ेंगे। जब क्लब के सदस्य तमाशा देखने के लिए तार के सहारे खड़े होंगे, तभी उनपर आक्रमण किया जाएगा।''

''ठीक है। मैं अपनी भूमिका भलीभाँति समझ चुका हूँ। आप लोग मेरी ओर से निश्चिंत रहें।''

चटगाँव के नए क्रांतिकारी दल ने इस प्रकार यूरोपियन क्लब पर आक्रमण की योजना निश्चित कर ली। पुलिस के साथ उनकी नोक-झोंक चलती ही रहती थी। यदि पुलिस उनके किसी साथी को गिरफ्तार कर लेती या जेल के अंदर उनके किसी साथी को यातनाएँ देती, तो वे भी बाहर कहीं-न-कहीं आक्रमण करते और किसी गद्दार या अत्याचारी अफसर को मौत के घाट उतारकर बदला अवश्य चुकाते। इसी क्रम में यूरोपियन क्लब पर आक्रमण की योजना बनाई गई थी।

वह सितंबर सन् १९३२ की एक रात थी। पहाड़तली के नीचे चटगाँव के यूरोपियन क्लब के सदस्य नाच-गाने और आमोद-प्रमोद में व्यस्त थे। उसी समय धूम-धड़ाके के साथ एक बारात उधर से निकली। बाराती लोग क्लब के सामने रुके और आकर्षक आतिशबाजियाँ छोड़ने लगे। वहाँ उन्हें काफी समय लगा। वे अपने साथी शैलेश्वर के प्रकट होने की प्रतीक्षा करते रहे; पर शैलेश्वर प्रकट नहीं हुआ। शैलेश्वर की अनुपस्थिति ने सारा काम बिगाड़ दिया। क्रांतिकारियों को बिना कुछ किए वापस लौटना पड़ा। अपनी पूर्व योजना के अनुसार क्रांतिकारियों ने यह निश्चय किया था कि क्लब पर आक्रमण के पश्चात् वे लोग अपने-अपने घर नहीं लौटेंगे। अपने सोने के लिए उन्होंने एक कमरे की व्यवस्था कर रखी थी।

क्लब पर आक्रमण किए बिना क्रांतिकारी लोग जब सोने के लिए अपने उसी कमरे पर पहुँचे तो वहाँ उन्होंने शैलेश्वर को सोते हुए पाया। जब एक साथी उसे जगाकर कारण पूछने गया तो उसने देखा कि शैलेश्वर की गरदन एक ओर को लटकी हुई है और उसके मुँह में सफेद पाउडर लगा है। उन लोगों को मालूम हुआ कि आक्रमणस्थल पर न पहुँचने की लज्जा के कारण शैलेश्वर चक्रवर्ती ने विष खाकर आत्मबलिदान का पथ अपनाया था।

□

# ★ श्यामकुमार नंदी

चटगाँव के यूरोपियन क्लब पर २४ सितंबर, १९३० को आक्रमण करके क्रांतिकारी पुलिस की छाती पर मूँग दल चुके थे। उनमें से एक भी क्रांतिकारी पकड़ा नहीं गया था। शासन की बिल्ली बुरी तरह से खिसियाई हुई थी। उसने सचमुच ही खंभा नोचकर दिखाया। जब क्रांतिकारी लोग हाथ नहीं लगे तो शासन ने उस क्षेत्र के लोगों पर सामूहिक जुर्माना कर डाला, जहाँ यूरोपियन क्लब स्थित था। उस क्षेत्र के लोगों पर शासन ने आरोप लगाया कि जब क्रांतिकारियों ने क्लब पर आक्रमण किया तो आप लोगों ने उन्हें पकड़ने में पुलिस की सहायता क्यों नहीं की।

पुलिस चाह रही थी कि वह किसी क्रांतिकारी को पकड़कर या उसे मारकर उनके साथ चल रही स्पर्द्धा में कुछ अंक अर्जित कर ले। उसे अवसर भी शीघ्र ही मिल गया। २७ नवंबर, १९३२ को पातिया के निकट एक उजाड़ मकान में कुछ क्रांतिकारी बैठे हुए कोई योजना बना रहे थे। पुलिस को सुराग मिल गया और उसने उस उजाड़ मकान को घेर लिया। पुलिस ने क्रांतिकारियों को समर्पण के लिए ललकारा। पुलिस ने चेतावनी दी कि जो क्रांतिकारी भागने का प्रयत्न करेगा, वह गोली से उड़ा दिया जाएगा।

चेतावनी की कोई चिंता किए बिना दो क्रांतिकारी पुलिस का घेरा तोड़कर बाहर भागे। उनमें से एक तो भागने में सफल हो गया, पर दूसरे क्रांतिकारी श्यामकुमार नंदी को कई गोलियाँ लगीं और घटनास्थल पर ही उसकी मृत्यु हो गई।

पुलिस ने जब देखा कि मकान के अंदर से कोई प्रतिरोध नहीं कर रहा है तो उसने मकान के अंदर प्रवेश किया। एक कमरे में एक क्रांतिकारी किशोर पाया गया, जो काफी जल गया था और एक डॉक्टर उसके घावों का उपचार कर रहा था। दोनों को गिरफ्तार करके पुलिस स्टेशन भेज दिया गया। तलाशी लेने पर उस कमरे में बम बनाने की सामग्री पुलिस के हाथ लगी।

□

# ★ संतवान गुहा

उसकी उम्र केवल सोलह वर्ष की थी, लेकिन उसकी जिह्वा पर और लेखनी पर सरस्वती का वास था। जब वह बोलने खड़ा होता तो घंटों तक धारा-प्रवाह बोलकर श्रोताओं को मंत्रमुग्ध रखता था। उसकी लेखनी का चमत्कार तो पत्र-पत्रिकाओं में देखने को मिलता था। विद्यार्थी जीवन से ही उसके लेख बंगाल के प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं में छपने लगे थे। उसका नाम संतवान गुहा था।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी संतवान का संपर्क क्रांतिकारियों के साथ हो गया और पुलिस के साथ उसकी आँखमिचौनी होने लगी। जब वह बीस वर्ष का हुआ तो सन् १९३१ में उसे बंगाल क्रिमिनल लॉ संशोधन कानून के अंतर्गत गिरफ्तार करके राजशाही जेल में डाल दिया गया। संतवान गुहा की आत्मा विद्रोह कर उठी। पुलिस के लोगों से कई बार उसका झगड़ा हुआ। ऐसे झगड़ालू क्रांतिकारी से निबटने के जो उपाय पुलिस के पास होते हैं, वे सब संतवान गुहा पर आजमाए गए।

एक दिन १९ दिसंबर, १९३४ को लोगों ने सुना कि तरुण क्रांतिकारी संतवान गुहा की मृत्यु जेल में हो गई।

□

# ★ सज्जनसिंह

लाहौर के एक क्रांतिकारी सज्जनसिंह पर कत्ल का मुकदमा चल रहा था। सरकारी वकील ने जो उससे जिरह की, वह इस प्रकार थी—

वकील—मि. सज्जनसिंह! आपके ऊपर मिलिट्री के कैप्टेन करटिस की पत्नी की हत्या का आरोप है। क्या आपने श्रीमती करटिस की हत्या की है?

सज्जनसिंह—मैंने हत्या की नहीं है, वह तो हो गई है।

वकील—क्या आप अपने इस कथन का खुलासा करेंगे?

सज्जनसिंह—मेरे कथन का खुलासा यह है कि मैं कैप्टेन करटिस के बंगले पर श्रीमती करटिस को नहीं, मि. करटिस को मारने गया था।

वकील—फिर आपके द्वारा श्रीमती करटिस की हत्या किस प्रकार हुई?

सज्जनसिंह—बंगले पर पहुँचकर मैंने जानना चाहा कि कैप्टेन करटिस हैं या नहीं। मैं बंगले के अंदर जाकर तलाश करना चाहता था, लेकिन श्रीमती करटिस ने मुझे अंदर जाने से रोका। जब उन्होंने प्रबल प्रतिरोध किया तो मैंने उनको उठाकर फेंक दिया। मुझे क्या पता था कि इस तरह फेंक देने से उनकी मृत्यु हो जाएगी!

वकील—आपने उनके दो बच्चों को भी तो चोट पहुँचाई है। क्या उन मासूम बच्चों पर प्रहार करते हुए आपको शर्म नहीं आई?

सज्जनसिंह—जनाब! मेरे द्वारा दो-चार चाँटे जमा देने से तो उन बच्चों को चोट ही पहुँची है। मैं पूछना चाहता हूँ, जब जलियाँवाला बाग में निरीह हिंदुस्तानी बच्चों को बेरहमी के साथ गोलियों से भूना गया, उन्हें संगीनों पर उछाला गया और जब घायल बच्चों को रात-भर 'पानी-पानी' चिल्लाने पर भी एक बूँद पानी नहीं दिया गया, क्या उस समय अंग्रेज बहादुरों को शर्म नहीं आई थी?

वकील—मैं आपसे पूछना चाहता हूँ कि आखिर कैप्टेन करटिस की हत्या करने के पीछे आपका उद्‌देश्य क्या था?

सज्जनसिंह—मेरा उद्‌देश्य यही था कि मैं अमृतसर और पेशावर में किए गए नरसंहार का बदला किसी अंग्रेज अफसर को मारकर लेना चाहता था।

वकील—आप तो स्वयं मिलिट्री के सैनिक हैं। आपको तो अपने अफसरों के प्रति वफादारी निभानी चाहिए।

सज्जनसिंह—जनाब! मैं वेतन पाने के लिए सेना में भरती नहीं हुआ था। मैं सेना में भरती हुआ इसी उद्‌देश्य से था कि मैं बंदूक चलाना सीखूँगा और जब मुझे अवसर मिलेगा, मैं किसी अंग्रेज अफसर को पटक दूँगा।

वकील—तो आप स्वीकार करते हैं कि कैप्टेन करटिस की हत्या करने के इरादे से आप उनके बंगले पर गए थे और आपके प्रहार से श्रीमती करटिस की हत्या हुई है?

सज्जनसिंह—अगर खून का बदला खून से लेना कोई जुर्म है, तो मैं अपना जुर्म कुबूल करता हूँ।

सज्जनसिंह ने अपना जुर्म कुबूल कर लिया था। न्यायाधीश ने उसे फाँसी

की सजा सुना दी। जब सज्जनसिंह फाँसी के तख्ते पर चढ़ा तो उसने 'अमर शहीद भगतसिंह जिंदाबाद' का जोरदार नारा लगाया और वह फाँसी के फंदे पर झूल गया।

सज्जनसिंह लाहौर जिले के 'वालटोहा' गाँव का रहनेवाला था। सन् १९३० में वह पंजाब रेजीमेंट में भरती हुआ था। अप्रैल १९३१ में उसे फाँसी हो गई।

□

## ★ एस. सत्यमूर्ति
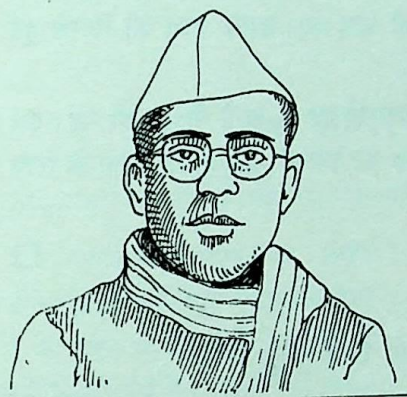
एस. सत्यमूर्ति

एस. सत्यमूर्ति बहुत प्रभावशाली व्यक्ति थे। उनका जन्म सन् १८८९ में मद्रास में हुआ था। वे कांग्रेस के प्रमुख सदस्य और प्रसिद्ध वकील थे। मद्रास विधान परिषद् में वे कांग्रेस दल के प्रतिनिधि भी थे।

एस. सत्यमूर्ति ने सन् १९३० के 'सविनय अवज्ञा आंदोलन' में भाग लिया था और जेल का उपहार भी कई बार प्राप्त किया था। आखिरी बार वे १९४२ के 'भारत छोड़ो आंदोलन' में गिरफ्तार किए गए और २८ मार्च, १९४३ को जेल में ही उनकी मृत्यु हुई।

□

## ★ सतचारी बनर्जी

उसका नाम सतचारी बनर्जी था। वह बंगाल के चौबीस परगने के 'माहीनगर' का रहनेवाला था। अपने गाँव के लोगों और क्रांतिकारियों में वह बहुत ही लोकप्रिय था। उम्र में बड़े लोग उसे 'सत्तू' और उम्र में छोटे लोग उसे 'सत दा' कहकर पुकारते थे।

सतचारी के जीवन का एक ही ध्येय था—भारत माता की मुक्ति के लिए जीवन अर्पण। यह क्रांतिकारी अनुशासन का पालन स्वयं भी कठोरता से करता था

और अपने साथियों से भी उसकी वही अपेक्षा थी। वह कहा करता था—

"जो लोग क्रांति के संपूर्ण मार्ग में साथ देने को तैयार हों, वे ही मेरे दल में आएँ, अन्यथा वे अपने घर बैठें।"

यह उसका दुर्भाग्य ही था कि सतचारी बनर्जी गिरफ्तार कर लिया गया। अपने जेल जीवन में उसने इस प्रकार के व्यवहार का परिचय दिया, जिसे अभूतपूर्व हो कहा जा सकता है। क्रांतिकारी रहस्य उगलवाने के लिए उसे भाँति-भाँति की यातनाएँ दी गईं, पर उसके होंठ न तो रहस्य उगलने के लिए खुले और न पुलिस की शिकायत करने के लिए। किसी भी असुविधा का उल्लेख उसने कभी नहीं किया। अपने माता-पिता या रिश्तेदारों से भेंट करने के लिए उसने कागज की एक चिंदी का भी उपयोग नहीं किया। वह हर हाल में मस्त रहनेवाला क्रांतिकारी था। उसकी मोटी फाइल में केवल शासकीय आदेश ही पाए गए। उसके हाथ की लिखी हुई एक चिंदी भी उस फाइल में नहीं मिली।

आखिर सतचारी को जेल के खराब भोजन से खूनी पेचिश हो गई। इस बीमारी से देवली जेल में ६ फरवरी, १९३७ को उसकी मृत्यु हो गई। देश के लिए वह अपना मौन बलिदान दे गया।

□

# ★ सनंद स्वेन ★ हरिबंधु पंडा

ब्रिटिश सरकार ने १९४२ के आंदोलन का दमन करने के लिए स्थान-स्थान पर आंदोलनकारियों पर गोलियाँ चलाईं और उन्हें घोड़ों से कुचलवाया गया। हरिबंधु पंडा का उदाहरण केवल ऐसा था कि उसके पेट में संगीन भोंककर उसे मारा गया।

हरिबंधु पंडा का जन्म सन् १८९७ में उड़ीसा के कटक जिले के 'शेरपुर' ग्राम में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री महेश्वर पंडा था। श्री महेश्वर पंडा कृषक थे।

कटक जिले के 'बारी' गाँव में होनेवाले प्रदर्शन में हरिबंधु पंडा ने भाग लिया और वहीं पुलिस ने उसके पेट में संगीन घुसेड़कर उसे मार डाला।

'बारी' ग्राम में ही होनेवाले प्रदर्शन में पुलिस ने सनंद स्वेन को गोली चलाकर मार डाला।

सनंद स्वेन का जन्म भी 'शेरपुर' ग्राम में सन् १८९७ में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री स्वप्नेश्वर स्वेन था।

□

## ★ सर्वजीतसिंह

उत्तर प्रदेश के वाराणसी जिले के ग्राम 'रामसिंहपुर' के युवक सर्वजीतसिंह में राजनीतिक चेतना कुछ अधिक ही थी। उसकी गिनती वाराणसी जिले के अच्छे कार्यकर्ताओं में थी। उसने व्यक्तिगत रूप से लोगों से मिलकर उन्हें आंदोलन के लिए तैयार किया और एक दिन उस तैयारी ने शासन विरोधी विशाल जुलूस का रूप धारण कर लिया। पुलिस ने उन अगस्त क्रांतिकारियों पर गोलियाँ चलाईं और सर्वजीतसिंह को जीवन का सर्वोच्च पुरस्कार प्राप्त हुआ अर्थात् वह देश की आजादी के प्रयत्नों में शहीद हो गया।

□

## ★ सागरमल गोपा

सागरमल गोपा

सागरमल गोपा का संपूर्ण जीवन क्रांति की अटूट शृंखला के रूप में था। वह कभी खाली नहीं बैठा। उसे किसी भय ने आक्रांत नहीं किया और किसी प्रलोभन ने उसे डिगाया नहीं।

सागरमल गोपा का जन्म राजस्थान के जैसलमेर में सन् १९०० में हुआ था। उसने १९२१ के 'असहयोग आंदोलन' में खुलकर भाग लिया और फिर १९३० के 'अवज्ञा आंदोलन' में भी खूब नाम कमाया। उसने १९३० में राज्य की निरंकुशता के विरुद्ध संचालित अभियान का भी नेतृत्व किया। जब आर्यसमाज ने हैदराबाद आंदोलन छेड़ा तो सागरमल गोपा उसमें सम्मिलित हो गया।

कुछ दिन महाराष्ट्र के नागपुर नगर में भी उसने कार्य किया। फिर जैसलमेर पहुँचकर वहाँ के राजा के विरुद्ध अभियान तेज कर दिया। जैसलमेर पुलिस ने २५ मई, १९४१ को सागरमल को बिना वारंट गिरफ्तार कर लिया और सड़क पर

घसीटती हुई जेल तक ले गई। उसे न्यायालय ने आठ वर्ष के कठोर कारावास का दंड सुनाया।

जेल के अत्याचारों के कारण ३ अप्रैल, १९४६ को जेल में ही सागरमल गोपा ने शहादत प्राप्त की।

□

## ★ सातप्पा तोपन्नवार
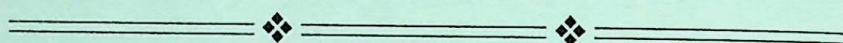
सातप्पा तोपन्नवार एक कृषक पुत्र था। उसका जन्म ४ दिसंबर, १९१३ को मैसूर राज्य के बेलगाम जिले के 'शिवपुर' ग्राम में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री ब्रह्मप्पा तोपन्नवार था। वह कृषि कार्य में अपने पिता के साथ काम करता था।

१५ अगस्त, १९४२ को 'भारत छोड़ो आंदोलन' के एक शासन विरोधी जुलूस में सातप्पा ने भाग लिया और पुलिस की गोली खाकर शहीद हो गया।

□

## ★ साबूलाल बैसाखिया
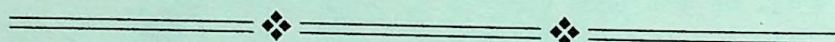
गढ़ाकोटा नगर के विद्यालय में गंभीरतापूर्वक पढ़ाई चल रही थी। अध्यापकगण भी मनोयोगपूर्वक पढ़ा रहे थे और विद्यार्थी लोग भी रुचिपूर्वक पढ़ रहे थे। इस अध्ययन-अध्यापन में व्यवधान उस समय उपस्थित हुआ, जब नगर से निकलनेवाले जुलूस के कुछ नारे विद्यालय की दीवारों से आकर टकराने लगे। जैसे-जैसे जुलूस विद्यालय के निकट पहुँचता गया, नारे स्पष्ट होने लगे। कक्षाओं में बैठे हुए विद्यार्थी अब स्पष्ट रूप से 'भारत माता की जय', 'महात्मा गांधी की जय' और 'इनकलाब जिंदाबाद' के नारे सुन रहे थे और जुलूस में सम्मिलित हो जाने के लिए उनके मन ललंचा रहे थे। ये नारे विद्यालय के प्रधानाध्यापक महोदय के कानों में भी पड़े और उनका माथा ठनका। उन्होंने सोचा कि यदि मेरे विद्यालय के विद्यार्थी जुलूस में सम्मिलित हो गए तो शासन की प्रताड़ना मुझे सहन करनी पड़ेगी। वे अपनी कुरसी से उठे, अपना बेंत हाथ में लिया और उसे लपलपाते हुए सभी कमरों के सामने से निकलते हुए प्रांगण में खड़े हो गए। विद्यार्थी लोग सहम गए और अध्यापक लोग सन्नद्ध हो गए।

अगस्त आंदोलन का जुलूस अब विद्यालय के ठीक सामने था। छात्रों को सुनाकर नारे लगाए जाने लगे। एक नारा उठा—"विद्यार्थी भाइयो! जुलूस में शामिल हो जाओ।" विद्यार्थियों के मन कक्षाओं से बाहर कूद पड़ने के लिए ललचा रहे थे; लेकिन बेंत लिये हुए प्रधानाध्यापकजी भी उन्हें दिखाई दे रहे थे। एक कक्षा के बाहर बरामदे में स्कूल की घंटी लटक रही थी और ठोका भी पास में ही रखा हुआ था। उस कक्षा के अध्यापक की नजर ज्यों ही दूसरी ओर घूमी, शोभाराम नाम का एक विद्यार्थी कक्षा के बाहर लपका और उसने ठोका उठाकर घंटी बजा दी। घंटी का बजना था कि सभी कक्षाओं के विद्यार्थी फुर्र से बाहर निकल आए और जुलूस में सम्मिलित होने के लिए सड़क पर पहुँचने लगे। प्रधानाध्यापकजी के बेंत कुछ विद्यार्थियों की पीठों पर पड़े; लेकिन वे किसीको रोक नहीं सके।

छात्र दल के सम्मिलित हो जाने से जुलूस में नई जान आ गई। अब जुलूस पूरी शक्ति के साथ नारे लगाता हुआ पुल पार करके पुलिस थाने की ओर बढ़ने लगा। थानेदार ने स्थिति का अनुमान लगाकर थाने में उपस्थित सभी जवानों को हथियार लेकर यथास्थान तैनात कर दिया। थानेदार साहब स्वयं हाथ में पिस्तौल लेकर सबके आगे खड़े हो गए। ज्यों ही आंदोलनकारी जुलूस थाने के फाटक पर पहुँचा, थानेदार ने गर्जना करके चेतावनी दी—"आप लोग वापस चले जाइए। यदि किसीने अंदर घुसने का दुस्साहस दिखाया तो वह गोलियों से भून दिया जाएगा।"

थानेदार की गर्जना सुनकर एक युवक ने भी उसी लहजे में गर्जना करके कहा—"थानेदार साहब! भाड़े के टट्टू आजादी के दीवानों की राह नहीं रोक सकते। हम लोग थाने के ऊपर तिरंगा झंडा फहराकर खुद ही लौट जाएँगे।"

इतना कहकर भीड़ ने एक साथ थाने के अहाते के अंदर प्रवेश किया। पुलिस ने पहले हवा में कुछ गोलियाँ चलाईं; लेकिन जब भीड़ की ओर से पत्थर आने लगे तो पुलिस को लोगों पर गोलियाँ चलानी पड़ीं। पुलिस को ललकारनेवाला वह नौजवान न जाने कब थाने के ऊपर चढ़ गया और उसने वहाँ तिरंगा झंडा फहरा दिया। वहीं से उसने 'इनकलाब' का नारा उठाया और भीड़ ने 'जिंदाबाद' कहकर नारे को पूरा किया। पुलिस के खिसियाए हुए जवानों ने उसपर एक साथ कई गोलियाँ दाग दीं। साबूलाल बैसाखिया नाम का वह युवक नीचे आ गिरा। भीड़ का मकसद पूरा हो चुका था। वे युवक साबूलाल का शव लेकर जुलूस की शक्ल में फिर नगर की ओर चल पड़े। गोलियों से कई लोग घायल भी हुए।

साबूलाल बैसाखिया शहीदों की टोली में जा मिला। गढ़ाकोटा वर्तमान मध्य प्रदेश के दमोह जिले का एक नगर है।

□

# ★ सुकुमार कानूनगो

चटगाँव के क्रांतिकारी दल के अधिकांश सदस्य या तो मारे गए या बंदी बना लिये गए। लोगों को आतंकित करने के लिए क्रांतिकारियों और उनके परिवार के लोगों को सार्वजनिक रूप से मारा-पीटा गया। यह सब इसलिए किया गया था कि लोग भयभीत हों और क्रांति के मार्ग पर जाने का विचार भी न करें; लेकिन चटगाँव के पानी में न जाने क्या बात थी कि लोग क्रांतिकारी बनने से बाज न आते थे। बच्चे गुड्डे-गुड़ियों के खेल खेलने के बजाय क्रांतिकारियों के खेल खेलते थे।

लोग सचमुच ही क्रांति के पथ पर चल रहे थे। इंडियन रिपब्लिकन आर्मी के वे बाल सैनिक, जिन्हें कुछ बताया नहीं गया था कि उन्हें क्यों प्रशिक्षित किया जा रहा है, अब अपना कर्तव्य निश्चित कर चुके थे और स्वयं ही हथियार एकत्रित कर निशानेबाजी का अभ्यास करने लगे थे।

सुकुमार कानूनगो इसी प्रकार का एक बालक था। उसने कहीं से एक रिवॉल्वर प्राप्त कर लिया था और वह अपने साथियों को निशाना साधने का अभ्यास कराता रहता था। एक दिन अभ्यास समाप्त करने के पश्चात् बाल सैनिक बैठ गए और बात चल निकली कि पुलिस द्वारा पकड़ लिये जाने पर कौन क्या करेगा। सुकुमार कानूनगो ने कहा कि भाई, मैं तो गोलियाँ रहते हुए डटकर पुलिस का मुकाबला करूँगा और जब मेरे रिवॉल्वर में आखिरी गोली रह जाएगी, तो पुलिस के हाथों पड़ने के बजाय मैं अपने रिवॉल्वर की नाल अपनी गरदन से लगाकर ट्रिगर दबा दूँगा। उसने बात कहने के साथ ही अभिनय भी करके दिखाया। अभिनय की यथार्थता के लिए सचमुच ही उसने अपने गले से रिवॉल्वर की नाल लगाकर ट्रिगर दबाकर दिखाया। ट्रिगर का दबना था कि 'धाँय' की आवाज हुई और एक गोली गले के आर-पार हो गई। उसकी भूल से रिवॉल्वर में एक गोली रह गई थी और वह समझ बैठा था कि रिवॉल्वर खाली है। खेल-खेल में ही एक बाल क्रांतिकारी अपने प्राण दे बैठा।

□

# ★ सुखदेव सुरालकर

सुखदेव सुरालकर

सुखदेव सुरालकर का भी वही अपराध था, जो अगस्त क्रांति के अन्य आंदोलनकारियों का था। उसने इंटर की कक्षा से ही अपने अध्ययन को तिलांजलि देकर 'भारत छोड़ो आंदोलन' में भाग लिया था और गिरफ्तार करके उसे नासिक के केंद्रीय कारागार में डाल दिया गया था। १९४३ में कभी सुखदेव सुरालकर की मृत्यु अपने जेल जीवन में ही हो गई। यद्यपि वह बीमार नहीं पड़ा था, पर जेल में उसकी मृत्यु रहस्य नहीं बनी; क्योंकि सामान्य बुद्धिवाला कोई भी व्यक्ति इतना तो अनुमान लगा ही सकता है कि जेल में उसके साथ किस तरह का व्यवहार किया गया होगा।

सुखदेव सुरालकर को नौ महीने के कठोर कारावास का दंड दिया गया था और उससे बहुत सख्ती के साथ काम लिया जाता था। □

# ★ सुखलाल

मध्य प्रदेश के नरसिंहपुर जिले के 'चीचली' ग्राम के निवासी सुखलाल ने २३ अगस्त, १९४२ को अपने हाथों में तिरंगा झंडा थामा और वह एक बहुत बड़ी भीड़ लिये थाने की तरफ बढ़ चला। 'भारत माता की जय' और 'अंग्रेजो! भारत छोड़ो' के नारे बड़ी बुलंदी के साथ लगाए जा रहे थे। पहले से ही तैयार पुलिस दल ने आंदोलनकारियों पर गोलियाँ चलाईं। सुखलाल के शरीर में दो गोलियाँ समा गईं और उसने शहादत का पथ अपना लिया। □

# ★ सुखलाल गूजर
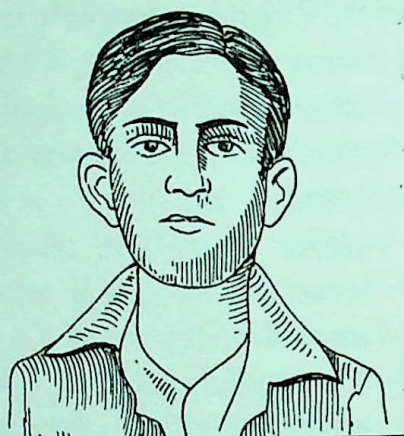
सुखलाल गूजर

सुखलाल गूजर की उम्र ही क्या थी! वह कक्षा सात में ही तो पढ़ रहा था; लेकिन कर्तव्य की पुकार सुनकर वह देश की आजादी के आंदोलन में कूद पड़ा। वह महाराष्ट्र के जलगाँव जिले के 'शेंदुर्नी' गाँव का रहनेवाला था। गाँववालों ने कार्यक्रम बना डाला कि गाँव के डाकखाने को लूटा जाए और गाँव के पटेल पर आक्रमण करके उसकी पिटाई की जाए। गाँव का पटेल अंग्रेज सरकार का पिट्ठू था और वह गाँववालों की राजनीतिक गतिविधियों की सूचनाएँ अफसरों को देता रहता था।

१० अगस्त, १९४२ को पहले आक्रमण किया गया डाकखाने पर। जब डाकखाने पर आक्रमण हुआ तो पोस्ट मास्टर ने हमले की सूचना पुलिस को तत्काल दे दी। डाकखाना तो लूट लिया गया, लेकिन आंदोलनकारी जब पटेल के घर पहुँचे तो पुलिस भी वहाँ पहुँच चुकी थी। पुलिस ने आंदोलनकारियों पर गोलियाँ चला दीं। पुलिस की गोलियाँ से कुछ लोग घायल हुए; पर सुखलाल गूजर मारा गया। एक चेतनाशील विद्यार्थी ने अनंत जीवन का वरण कर लिया। सुखलाल के पिता श्री भीखा गूजर ने जब अपने पुत्र की शहादत की बात सुनी तो उन्हें गर्व का अनुभव हुआ।

□

# ★ सुखेंदुविकास दत्त

सन् १९२८ में कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन कलकत्ता में होने वाला था। कांग्रेस के इस अधिवेशन के अध्यक्ष थे पं. मोतीलाल नेहरू। इस अधिवेशन के समय महात्मा गांधी ने भी क्रांतिकारियों से अपील की थी कि वे अपनी उग्रता का मार्ग छोड़कर स्वाधीनता के लिए वैधानिक आंदोलन को अपना सहयोग प्रदान करें। ब्रिटिश

सरकार ने भी इस अवसर पर सभी नजरबंद क्रांतिकारियों को रिहा कर दिया था।

क्रांतिकारी युवकों ने भी समय को देखते हुए अपना पैंतरा बदला तथा रिहाई के पश्चात् वे सब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्य बन गए और कांग्रेस संगठन में उन्होंने अच्छे पद भी प्राप्त कर लिये। क्रांतिकारियों को अपनी इस उपलब्धि की कीमत चुकानी पड़ी। जिन लोगों ने यह सोचा कि क्रांतिकारियों ने उन्हें प्राप्त होनेवाले पदों से वंचित कर दिया है, उन लोगों ने इन क्रांतिकारियों पर हमला बोल दिया और उनकी जमकर पिटाई कर दी। जिन लोगों पर आक्रमण किया गया था, उनमें से निर्मल सेन और सुखेंदुविकास दत्त की हालत गंभीर हो गई। निर्मल सेन को तो किसी प्रकार बचा लिया गया, लेकिन सुखेंदुविकास ने अपने जीवन की बलि दे दी। जिस समय सुखेंदुविकास दत्त ने कलकत्ता में अपना दम तोड़ा, उस समय उसके सिरहाने नेताजी सुभाषचंद्र बोस बैठे हुए उसकी परिचर्या कर रहे थे।

□

## ★ सुधांशुशेखर नंदी

बंगाल के क्रांतिकारियों ने बम निर्माण को गृह उद्योग का रूप प्रदान कर दिया था। पुलिस के साथ उनकी ठनती ही रहती थी। भीषण दमन के बावजूद क्रांतिकारी लोग बाज नहीं आ रहे थे।

बोगरा के निकट जेपुर हाट नामक स्थान पर चार क्रांतिकारियों का एक दल बम बनाने के काम में लगा हुआ था। वे लोग इस कला में दक्ष नहीं थे। तनिक असावधानी हो जाने के कारण बम फट हो गया। इस विस्फोट के फलस्वरूप सुधांशुशेखर नंदी की घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई और उनके तीनों साथी घायल हो गए।

□

## ★ सुधीर रंजन मैती

अक्तूबर १९४२ में भेंटगढ़ पुलिस स्टेशन पर आक्रमण करनेवालों में सुधीर रंजन मैती भी सम्मिलित थे। पुलिस की गोली से वे घटनास्थल पर ही शहीद हो गए। वे मिदनापुर जिले के 'वासुदेव बारिया' के निवासी थे।

□

# ★ सुबरे तिमना भाट

सुबरे तिमना भाट मैसूर में मंदिर के एक पुजारी थे; पर उनमें काफी राजनीतिक चेतना थी। यही कारण था कि जब १९४२ में 'भारत छोड़ो आंदोलन' छिड़ा तो पुजारीजी उसमें अपनी पूरी शक्ति के साथ कूद पड़े। एक बहुत बड़े समुदाय पर उनका प्रभाव था। उनका भक्त संप्रदाय काफी उग्र हो उठा था।

श्री सुबरे तिमना को गिरफ्तार करके मुकदमा चलाया गया और उन्हें चार वर्ष तीन महीने के कारावास का दंड दिया गया। जेल में ही २० दिसंबर, १९४२ को उनकी मृत्यु हो गई।

□

# ★ सुबोध डे

सुबोध डे ने अपनी आयु के सत्रह वर्ष भी पूरे नहीं किए थे कि वह मातृभूमि के आह्वान पर चटगाँव शस्त्रागार कांड में सम्मिलित हो गया। वह उस दल में था, जिसने १८ अप्रैल, १९३० को फौज के शस्त्रागार पर आक्रमण किया था। चलते समय जब उसने अपनी माँ के पैर छुए तो माँ ने आश्चर्य के साथ पूछा—

''क्यों सुबोध! शयन करने के लिए जाने के पहले तुम मेरे पैर छूकर गए थे, अब फिर दुबारा पैर छूने में तुम्हारा क्या आशय है?''

''माँ! मुझे नींद नहीं आई। मुझे ऐसा लगा जैसे कोई मुझे बुला रहा है। मैं जा रहा हूँ, माँ!''

''तुझे कौन बुला रहा है रे? उसे अंदर लाकर तो बिठा। मैं उससे पूछना चाहूँगी कि वह तुम्हें कहाँ ले जा रहा है!''

''जो मुझे बुला रहा है, मैं केवल उसकी आवाज ही सुन सकता हूँ। मातृभूमि के प्रति मेरे कर्तव्य ने ही मुझे बुलाया है। मैं जा रहा हूँ, माँ।''

''अच्छा, अब मैं समझ गई कि तू कठिन रास्ते पर जा रहा है। मैं तेरे मार्ग में बाधा नहीं बनूँगी। मैं तुझसे इतना कहना चाहती हूँ कि तू कोई ऐसा काम मत करना, जिससे मेरा दूध कलंकित हो।''

और जब सुबोध दुबारा माँ के चरणों पर झुका तो उसके मस्तक पर गरम-गरम बूँदें टपक पड़ीं।

सुबोध ने दिलेरी के साथ फौज के शस्त्रागार को लूटने के अभियान में भाग लिया। उसका दुर्भाग्य यह था कि वह अपने दल से बिछुड़ गया। वह चटगाँव नगर में ही पाँच दिन तक छिपता हुआ घूमता रहा। इस बीच कभी उसे खाना नसीब हुआ, कभी नहीं भी हुआ। वह चाहता तो अपने घर भी पहुँच सकता था; किंतु उसने ऐसा इसलिए नहीं किया, क्योंकि उसे मालूम था कि सभी क्रांतिकारियों के घरों पर पुलिस की निगरानी होगी। वह घर पहुँचकर अपने परिवार को संकट में नहीं डालना चाहता था। उसकी माँ ने शस्त्रागार की लूट के समाचार सुन लिये थे। वह अपने बेटे की सुरक्षा के लिए दुआ माँग रही थी।

एक दिन पुलिस द्वारा सुबोध गिरफ्तार कर लिया गया। उसके पास से कुछ हथियार भी बरामद हुए। पहले तो उसे चटगाँव की जेल में ही रखा गया। नवंबर सन् १९३० में उसे कलकत्ता की प्रेसीडेंसी जेल में स्थानांतरित कर दिया गया।

यह पूछने के लिए कि उसके साथी कौन-कौन हैं और उन लोगों ने लूट के हथियार कहाँ रखे हैं, पुलिस ने सुबोध को निर्मम यातनाएँ दीं। अपने साथियों को फँसाने के लिए सुबोध का मुँह नहीं खुला तो नहीं खुला। हर समय अपनी माँ के शब्द उसे प्रेरणा देते रहे—'तू ऐसा कोई काम मत करना, जिससे मेरा दूध कलंकित हो।'

सुबोध यातनाओं को सह तो गया, पर उसे निरंतर बुखार रहने लगा। सरकार ने उसके इलाज में कुछ असावधानी की। उसका रोग बढ़ता ही गया। उसका टाइफाइड बिगड़ चुका था और अस्पतालवालों को उसके बचने की आशा नहीं थी।

पुलिस ने सोचा कि सुबोध को मुक्त करके क्यों न उसके परिवारवालों पर एहसान लाद दिया जाए। पुलिस जब सुबोध का मुक्ति-पत्र लेकर उसके पास अस्पताल पहुँची, तो वह इस दुनिया से ही मुक्ति पा चुका था। उसकी चिरमुक्ति का दिन १५ अप्रैल, १९३१ था।

□

## ★ सुब्बारेड्डी तम्मीनेनी

सुब्बारेड्डी तम्मीनेनी का जन्म सन् १९१७ में आंध्र प्रदेश के गुंटूर जिले के 'पारिमी' ग्राम में हुआ था। उसके पिता का नाम श्री गुर्वा रेड्डी था।

सुब्बारेड्डी ने तेनाली में होनेवाले शासन विरोधी प्रदर्शन में भाग लिया और अपने छह साथियों के साथ वह पुलिस की गोलियों का शिकार हो गया।

□

# ★ सुरेशचंद्र भट्टाचार्य

कानपुर के 'प्रताप' कार्यालय में गणेशशंकर विद्यार्थी संपादन कार्य में व्यस्त थे। उन्हें सूचित किया गया कि एक नौजवान उनसे मिलना चाहता है। वह नौजवान उनके सामने उपस्थित किया गया।

नमस्ते का आदान-प्रदान हुआ और विद्यार्थीजी की प्रश्नवाचक दृष्टि नौजवान के चेहरे पर गड़ गई। नौजवान ने कहना प्रारंभ किया—

''मेरा नाम सुरेशचंद्र भट्टाचार्य है। १९१४ के विश्वयुद्ध के दिनों में अंग्रेज सरकार ने मुझे चार साल तक जालौन जिले के 'उरई' नामक स्थान पर नजरबंद रखा था। बाद में उरई से ही निकलनेवाले हिंदी साप्ताहिक 'उत्साह' का संपादन भी मैंने किया है। मैं आपके पास इस उद्देश्य से आया हूँ कि आपके साथ रहकर संपादन कला तथा पत्रकारिता का और अधिक अनुभव प्राप्त करूँ।''

विद्यार्थीजी ने सुरेशचंद्र भट्टाचार्य के कथन पर विश्वास तो किया, पर उन्होंने एक प्रश्न और कर डाला—''आपका उद्देश्य केवल पत्रकारिता का ही अनुभव प्राप्त करना है अथवा इसके पीछे कोई अन्य प्रमुख उद्देश्य है?''

सुरेशचंद्र भट्टाचार्य को विद्यार्थीजी के विषय में सबकुछ ज्ञात था। उसे मालूम था कि विद्यार्थीजी के संरक्षण में क्रांतिकारी नौजवान प्रश्रय भी पाते हैं और अपनी आजीविका का उपार्जन भी करते हैं। उसने अपने विषय में जो कुछ और कहना था, वह भी कह दिया—

''सही बात तो यह है कि मैं 'हिंदुस्तान प्रजातंत्र संघ' का सदस्य हूँ और क्रांति के विच्छिन्न सूत्रों को जोड़ने की दृष्टि से यहाँ आया हूँ, पर यह भी सत्य है कि पत्रक़ारिता में निपुणता प्राप्त करना भी मेरा उद्देश्य है। मैं अपने दोनों उद्देश्यों की पूर्ति में आपका सहयोग चाहता हूँ।''

''अच्छी बात है। आप फिलहाल 'प्रताप' के संपादकीय विभाग में ही कार्य करें। यदि आप स्वतंत्र रूप से किसी पत्र का संपादन करना चाहेंगे तो 'वर्तमान' के संपादक के रूप में आपकी नियुक्ति संभव होगी। आप अपने रहने की व्यवस्था पटकापुर के बंगाली मैस में कर लें। मुझे आशा है कि आप अपने दायित्वों का निर्वाह बहुत सावधानीपूर्वक करेंगे।''

विद्यार्थीजी की इस व्यवस्था ने सुरेशचंद्र भट्टाचार्य को सभी प्रकार की सुविधाएँ प्रदान कर दीं।

पटकापुर में बंगाली मैस में रहकर सुरेशचंद्र भट्टाचार्य ने क्रांति संगठन को

दृढ़ करने का काम प्रारंभ कर दिया। बहुत से क्रांतिकारी नौजवान उनसे प्रेरणा लेने लगे। इनमें से प्रमुख थे—बटुकेश्वर दत्त, सरदार भगतसिंह, रामदुलारे त्रिवेदी, विजयकुमार सिन्हा और सुरेंद्रनाथ पांडे। सन् १९२३-२४ में उन्होंने कानपुर में क्रांतिकारियों का अच्छा संगठन खड़ा कर डाला।

सन् १९२५ में काकोरी केस के अंतर्गत जो क्रांतिकारियों की धर-पकड़ हुई, उसके अंतर्गत सुरेशचंद्र भट्टाचार्य भी गिरफ्तार कर लिये गए। इस मुकदमे में उन्हें दस वर्ष के कठोर कारावास का दंड सुनाया गया।

सुरेशचंद्र भट्टाचार्य का जन्म १ अगस्त, १८९७ को बनारस में हुआ था। उनके पिता का नाम पं. ईश्वरचंद्र था। प्रारंभिक शिक्षा बनारस के बंगाली टोला हाई स्कूल में हुई और बाद में बनारस के सेंट्रल कॉलेज में प्रविष्ट होकर उच्च अध्ययन करने लगे।

स्वभाव से प्रसन्नचित्त, मृदुभाषी और प्रभावशाली व्यक्तित्व के होने के कारण नौजवान सहज रूप से ही उनकी ओर आकर्षित होते थे और वे उनके प्रेरणा मंत्र से कुछ भी कर गुजरने के लिए तैयार रहते थे।

स्वाधीन भारत में इस क्रांतिवीर का देहावसान हुआ।

□

## ★ सोहरू गोवारा

बालाघाट जिले के 'कनकी' ग्राम के सोहरू गोवारा में राजनीतिक चेतना अपने बचपन से ही थी। वह राष्ट्रीय वीरों की कहानियाँ सुनने में बहुत रुचि लेता था। उसका जन्म सन् १८९१ के लगभग हुआ था। उसके पिता का नाम श्री उपाक्य गोवारा था। सोहरू गोवारा कृषक परिवार का व्यक्ति था और उसकी पढ़ाई-लिखाई प्राथमिक कक्षाओं तक ही सीमित रही थी।

सोहरू गोवारा ने पहले तो नागपुर पहुँचकर झंडा आंदोलन में सन् १९२३ में भाग लिया। उसे गिरफ्तार किया गया और कुछ दिन जेल में डालकर छोड़ दिया गया।

जब सन् १९४२ का आंदोलन छिड़ा तो सोहरू गोवारा ने उसमें बढ़-चढ़कर भाग लिया और वह फिर गिरफ्तार कर लिया गया। सोहरू को एक वर्ष की कैद की सजा दी गई। जेल के कठोर जीवन ने उसे तोड़ दिया और वह अधिक दिनों तक जीवित नहीं रह सका।

□

## ★ हरदेवसिंह

१९४२ के आंदोलन का जादू ही ऐसा था कि वह हर किसीके सिर पर चढ़कर बोला। सरकारी कर्मचारी भी उसमें कूद पड़े। हरदेवसिंह सरकारी ऑफिस का एक बाबू था और प्रदर्शन में तो उसने भाग लिया ही, वह विध्वंसक कार्यों में भी सम्मिलित था। गिरफ्तार करके उसपर मुकदमा चलाया गया और उसे छह महीने के कठोर कारावास का दंड सुना दिया गया। जबलपुर जेल में उसे यातनाएँ दी गईं और परिणाम यह निकला कि जेल में ही ७ नवंबर, १९४२ को उसकी मृत्यु हो गई।

हरदेवसिंह के पिता का नाम श्री धीरजसिंह था और वे जबलपुर के मिनौलीगंज में रहते थे।

□

## ★ हरलाल कोहद

अगस्त आंदोलन में महाराष्ट्र के आष्ठी और चिमूर स्थान बहुत प्रसिद्ध हो गए हैं। आष्ठी में १६ अगस्त, १९४२ को भीड़ ने पुलिस थाने को घेर लिया और फरमाइश की कि पुलिसवाले भी आंदोलनकारियों में सम्मिलित होकर आजादी की लड़ाई में भाग लें। पुलिस दल ने आंदोलनकारियों पर गोलियाँ चला दीं और हरलाल कोहद घटनास्थल पर ही शहीद हो गया।

हरलाल कोहद महाराष्ट्र के वर्धा जिले के 'खादकी' ग्राम का निवासी था।

□

# ★ हरिगोपाल बल उर्फ टेगरा
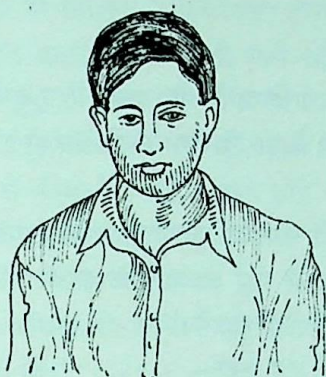
हरिगोपाल बल उर्फ टेगरा

लोकनाथ बल के भाई हरिगोपाल बल की उम्र बहुत कम थी। उसने चौदहवें वर्ष में प्रवेश किया था और वह चटगाँव के एक हाई स्कूल में कक्षा नौ में पढ़ रहा था। कम उम्र होने पर भी क्रांतिकारी दल का सदस्य था। वह बड़े हौसले के साथ क्रांतिकारी कार्यों में भाग लेता रहा था। वह स्वभाव से बहुत चंचल और उग्र था। प्राय: वह अपने समवयस्क साथियों का नेतृत्व करता पाया जाता था। शहर के गुंडों से उलझने और उनकी पिटाई करने में उसे विशेष आनंद आता था। अपनी चंचलता और नटखटपन के कारण दल में उसे 'टेगरा' नाम से पुकारा जाता था।

चटगाँव की क्रांतिकारी गतिविधियों के सूत्रधार सूर्यसेन ने जब चटगाँव स्थित फौज और पुलिस के हथियारखानों को लूट लेने की दुस्साहसपूर्ण योजना बनाई, तो उसमें चौंसठ क्रांतिवीरों को सम्मिलित किया गया। आक्रामक दल में हरिगोपाल उर्फ टेगरा को सम्मिलित नहीं किया गया। ऐसा शायद इसलिए किया गया था कि चंचल स्वभाव होने कारण स्थिति में कोई उलझन पैदा करने की उससे आशंका थी।

टेगरा ने जब देखा कि अभियान के लिए चुने गए लोगों में वह सम्मिलित नहीं किया गया तो उसने अपना अपमान समझा और वह अभियान दल में सम्मिलित होने के लिए छटपटाने लगा। स्वभाव से वह क्रांतिकारी तो था ही, उसने अपने बड़े भाई लोकनाथ बल की गतिविधियों पर निगरानी रखना प्रारंभ कर दिया। १८ अप्रैल, १९३० की संध्या को जब उसका भाई सैनिक सज्जा में बाहर जाने की तैयारी करने लगा तो उसने समझ लिया कि उसका भाई अभियान के लिए ही जा रहा है। अँधेरे का लाभ उठाकर वह अपने भाई के पीछे-पीछे हो लिया।

क्रांतिकारी आक्रमणकारियों को निजाम पल्टन के अहाते में एकत्र होना था। लोकनाथ बल वहाँ पहुँच गया। उसका पीछा करता हुआ टेगरा भी वहाँ जा पहुँचा। जब दल नायक सूर्यसेन ने टेगरा को वहाँ देखा तो उन्होंने लोकनाथ बल से

उसे अपने साथ लाने का कारण पूछा। लोकनाथ बल कोई उत्तर दे, इसके पहले टेगरा स्वयं ही बोल पड़ा—

"मुझे भैया अपने साथ नहीं लाए। मैं तो स्वयं ही इनका पीछा करता हुआ यहाँ आ गया हूँ।"

सूर्यसेन ने कहा—

"तुमने दल के अनुशासन के विरुद्ध कार्य किया है और इसके लिए तुम्हें मौत की सजा भी दी जा सकती है। क्या तुम दल के इस विधान से परिचित हो?"

टेगरा का उत्तर था—

"मुझे इसी बात का तो दुःख है कि मुझे मौत का मुकाबला करने लायक नहीं समझा गया। यह सरासर मेरा अपमान है। मेरे यहाँ आ जाने के कारण यदि आप मुझे मृत्युदंड देना चाहते हैं तो यह दंड मुझे स्वीकार है।"

सूर्यसेन ने लोकनाथ बल की ओर देखते हुए कहा—

"लोकनाथ! यदि मैं तुम्हें अपने भाई को गोली से मारने का आदेश दूँ, तो क्या तुम यह कार्य कर सकोगे?"

"मैं अपने नेता के आदेश का पालन करूँगा।" लोकनाथ का उत्तर था।

सूर्यसेन ने नकली आक्रोश का आवरण उतारते हुए कहा—

"तुम दोनों भाई परीक्षा में खरे उतरे हो। मेरा निर्णय है कि टेगरा भी आक्रमण में हमारे साथ चलेगा। उसका काम होगा कि वह लूटे गए हथियारों को गाड़ी में भरे। कुछ और लोग भी इस काम में इसका हाथ बँटाएँगे।"

अपने नेता की स्वीकृति मिल जाने पर टेगरा का चेहरा प्रसन्नता से चमकने लगा। वह गौरैया की भाँति फुदकने लगा।

१८ अप्रैल, १९३० को चटगाँव का फौजी शस्त्रागार और पुलिस का शस्त्रागार क्रांतिकारियों ने लूट लिये। इस लूट के पश्चात् पचास क्रांतिकारियों का एक दल जलालाबाद की पहाड़ी पर पहुँच गया। कुछ लोग चटगाँव नगर में रह गए और उन्होंने नगर का प्रशासन अपने हाथ में ले लिया।

२२ अप्रैल को शासन चटगाँव पर पूर्ववत् हावी हो गया। ब्रिटिश आर्मी से लदी हुई एक पूरी ट्रेन चटगाँव पहुँच गई और इस फौज ने जलालाबाद की पहाड़ी पर क्रांतिकारियों को घेर लिया। संध्या के ठीक पाँच बजे युद्ध का बिगुल बज उठा। यद्यपि सूर्यसेन उस दल में मौजूद थे, पर युद्ध के संचालन का भार उन्होंने लोकनाथ बल को दिया।

युद्ध का संचालन कर रहे अपने बड़े भाई को यश मिले, इस विचार से टेगरा हौसले के साथ युद्ध करने में संलग्न हो गया। वह पेट के बल रेंगता हुआ फौज के

जवानों के बिलकुल निकट पहुँच गया और अपनी गोलियाँ उनपर छोड़ने लगा। क्रांतिकारियों की ओर से पहली बलि लेने का श्रेय टेगरा को ही मिला। उसके बाद तो उसका हौसला आसमान को छूने लगा। वह स्वयं की चिंता न करते हुए सेना के जवानों पर गोलियाँ छोड़ने लगा। लगभग आधा दर्जन शत्रु सैनिकों को उसने मौत के घाट उतार दिया। अपनी भारी क्षति होते देख ब्रिटिश सैनिकों ने उस क्रांति अभिमन्यु को अपने व्यूह में घेर लिया और उसपर गोलियों की बौछार छोड़ने लगे। एक शत्रु सैनिक की सधी हुई गोली टेगरा के शरीर में प्रवेश कर गई और उसके हाथ से बंदूक गिर पड़ी। अपने छोटे भाई को छटपटाता हुआ देख लोकनाथ बल उसकी ओर सरकने लगा, तो टेगरा ने ललकारकर कहा—

''भैया! यह समय मुझे सँभालने का नहीं, भयंकर युद्ध करने का है। आप अधिक-से-अधिक शत्रु सैनिकों को मौत के घाट उतारकर मेरी मौत का बदला लें।''

अपने भाई की मौत का बदला लेने के लिए लोकनाथ बल क्रोधांध होकर युद्ध करने लगा। उस समय तक अँधेरा हो गया। दोनों पक्षों को युद्ध बंद करना पड़ा। अँधेरे का लाभ उठाकर क्रांतिकारियों का दल खिसककर दूसरी पहाड़ी पर जा पहुँचा।

लोकनाथ बल को यह अफसोस अवश्य था कि युद्ध में उसका भाई मारा गया; पर उसे इस बात का गर्व था कि उसके भाई ने अपने वरिष्ठ क्रांतिकारियों की अपेक्षा अधिक भयंकर युद्ध किया था और सर्वाधिक शत्रु सैनिकों का संहार उसीने किया था।

नन्हा टेगरा महान् कार्य करके देश की स्वाधीनता के लिए समर्पित हो गया।

□

## ★ हरिपद बागची
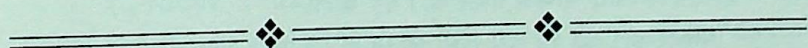
हरिपद बागची राजशाही जिले का था। बंगाल के क्रांतिक्षेत्र में उसने शीघ्र ही अपना स्थान बना लिया था। बहुत दौड़-धूप के पश्चात् उसे गिरफ्तार करने में पुलिस को सफलता मिली थी। यही कारण था कि पुलिस उससे बदला लेना चाहती थी। अभी वह कच्ची हवालात में था। उसे भाँति-भाँति की यातनाएँ दी गईं। फिर भी वह दृढ़ रहा। पुलिस के दुर्व्यवहार और शारीरिक एवं मानसिक यंत्रणाओं के परिणामस्वरूप वह बीमार पड़ गया।

हरिपद बागची को पहले बक्सा शिविर में रखा गया। पुलिस का प्रयत्न रहा कि उसकी बीमारियाँ कम होने के स्थान पर बढ़ जाएँ। उसे राजपूताना के रेगिस्तानी इलाके की एक जेल में स्थानांतरित कर दिया गया। उसे पेटदर्द की बीमारी भी हो गई। विक्टोरिया अस्पताल में उसके एपेंडिसाइटिस का ऑपरेशन हुआ। उसके बाद उसे तेज निमोनिया हो गया। आखिरकार २२ अगस्त, १९३३ को पुलिस को उससे हमेशा के लिए छुटकारा मिल गया। एक मूल्यवान् जीवन और बलि चढ़ गया।

□

## ★ हरिपद भट्टाचार्य

वह केवल पंद्रह वर्ष का एक कोमल किशोर था। उसका नाम हरिपद भट्टाचार्य था। चटगाँव शस्त्रागार कांड की ओट लेकर पुलिस द्वारा जनता पर किए जानेवाले नित्य नए अत्याचार उसे सहन नहीं हुए। एक दिन उसने अपने मास्टर दा (सूर्यसेन) के सामने प्रस्ताव रखा—

"मास्टर दा! यह जो पुलिस इंस्पेक्टर खान बहादुर असनुल्ला हम क्रांतिकारियों का दमन करने में आनंद ले रहा है, वह अब अधिक सहन करने के योग्य नहीं है। यदि आप आज्ञा दें तो मैं उसको ठिकाने लगा दूँ?"

मास्टर दा ने जब हरिपद की बात सुनी तो उन्हें आंतरिक प्रसन्नता हुई। वे बोले—

"हरिपद! मैं तुम्हारे हौसले की दाद देता हूँ। सच पूछा जाए तो तुम जैसे अबोध बालक ही अब कुछ करके दिखा सकते हैं; क्योंकि वरिष्ठ क्रांतिकारियों पर तो पुलिस की कड़ी निगरानी रहती है और उन्हें पास नहीं फटकने नहीं दिया जाता। लेकिन प्रश्न यह है कि तुम उसके पास तक पहुँच कैसे पाओगे?"

हरिपद के पास योजना तैयार थी। वह बोला—

"मास्टर दा! यह तो हम सभी जानते हैं कि खान बहादुर असनुल्ला को फुटबॉल के खेल से बहुत प्रेम है। मुझे सूचना मिली है कि उसकी टीम रेलवे कप प्रतियोगिता के लिए कोहिनूर टीम से ३० अगस्त को फुटबॉल मैच खेलेगी। उस दिन उस अत्याचारी पुलिस इंस्पेक्टर से निबटने का अच्छा अवसर मिलेगा। आपसे मेरी प्रार्थना है कि आप मुझे एक अच्छा रिवॉल्वर दे दें और निशानेबाजी का भी थोड़ा अभ्यास करा दें। मुझे विश्वास है कि शेष काम मैं करके दिखा दूँगा।"

सूर्यसेन ने हरिपद भट्टाचार्य का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। उन्होंने हरिपद

को एक अच्छा रिवॉल्वर देकर उसे निशानेबाजी का अच्छा अभ्यास करा दिया।

३० अगस्त, १९३१ को पुलिस इंस्पेक्टर खान बहादुर असनुल्ला की टीम टाउन क्लब और कोहिनूर टीम में फुटबॉल प्रतियोगिता का मुकाबला हुआ। टाउन क्लब ने इस खेल में कोहिनूर टीम को हरा दिया। खेल खत्म होने पर असनुल्ला खुशी के मारे उछल रहा था। उसे बधाई देनेवाले लोगों की भीड़ उसके आसपास जमा हो गई थी। इसी समय अवसर पाकर हरिपद भट्टाचार्य भी उसके बिलकुल निकट पहुँचा और अपना रिवॉल्वर निकालकर चार गोलियाँ उसके ऊपर छोड़ दीं। एक गोली असनुल्ला के दिल पर लगी और वह भूमि पर गिर पड़ा।

गोलियाँ चलने की आवाज सुनकर भीड़ बिखर गई और जिसको जिधर भागने का अवसर मिला, वह उधर भाग खड़ा हुआ। इस समय तक हरिपद भट्टाचार्य घटनास्थल पर ही यह देखने के लिए खड़ा रहा कि असनुल्ला मरा या नहीं। वह उसे जीवित छोड़कर नहीं जाना चाहता था। उसे निश्चल खड़ा देखकर कुछ पुलिसवालों ने झपटकर उसे पकड़ लिया और उसका रिवॉल्वर छीन लिया। पुलिसवालों ने हरिपद भट्टाचार्य को लात, घूँसों, बूटों की ठोकरों और डंडों से इतनी बुरी तरह मारा कि पिटते-पिटते वह बेहोश हो गया। बेहोशी की हालत में ही उसे उठाकर ले जाया गया। उसे चटगाँव कोतवाली में बंद कर दिया गया। होश आने पर फिर बेरहमी के साथ उसकी पिटाई की गई।

चटगाँव की पुलिस को इतने पर भी संतोष नहीं हुआ। वह हरिपद भट्टाचार्य के घर पहुँची और उसके वृद्ध पिता को भी पीटा गया। हरिपद के अबोध भाई को पुलिसवालों ने जूतों से कुचल-कुचलकर मार डाला। पुलिस के पाले हुए गुंडे शहर में छोड़ दिए गए। उन लोगों ने चटगाँव में तीन दिन तक लूटमार मचाई और दुकानों एवं घरों में आग लगा दी। लोगों को सड़कों पर से घसीटते हुए थाने तक लाया गया और उन्हें तंग कोठरियों में एक-दूसरे के ऊपर थैलों की भाँति पटक दिया गया। उनका खून बह-बहकर बाहर निकल चला।

१६ सितंबर, १९३१ को अवैध हथियार रखने तथा हत्या का अभियोग हरिपद भट्टाचार्य पर चलाया गया। कम उम्र होने के कारण हरिपद भट्टाचार्य फाँसी के दंड से तो बच गया, लेकिन २२ दिसंबर, १९३२ को उसे आजीवन कालापानी की सजा सुना दी गई।

□

# ★ हरिपद महाजन

चटगाँव शस्त्रागार कांड में भाग लेनेवाला क्रांतिकारी हरिपद महाजन आठ महीने तक चटगाँव नगर में ही रहा; पर पुलिस उसकी छाया भी नहीं छू सकी। उसे गिरफ्तार करने या उसके मृत शरीर को प्रस्तुत करने के लिए आकर्षक पुरस्कार की घोषणा की गई; लेकिन फिर भी वह अछूता ही रहा।

जब चटगाँव में रहना हरिपद के लिए असंभव हो गया तो उसने बर्मा पहुँचने का निर्णय ले लिया। वह अपने निश्चय के पथ पर अग्रसर हो गया। जंगलों, पर्वतों और नदियों को पार करता हुआ हरिपद महाजन अकियाब जा पहुँचा। बर्मा की आबोहवा हरिपद महाजन को रास नहीं आई और अपनी मातृभूमि से बहुत दूर वहाँ उसने अपने प्राण विसर्जित कर दिए। अपने देश को दुबारा देखने की उसकी लालसा पूर्ण नहीं हो सकी।

□

# ★ हरेंद्रनाथ मुंशी

जेल के अंदर किए जानेवाले दुर्व्यवहार का प्रतिरोध करने के लिए क्रांतिकारियों के पास एक ही साधन रहा है और वह है भूख हड़ताल।

क्रांतिकारी हरेंद्रनाथ मुंशी को गिरफ्तार करके जब उसपर मुकदमा चलाया गया तो उसको पाँच वर्ष के कठोर कारावास का दंड सुनाया गया। हरेंद्रनाथ ने यह कारावास देशभक्ति के पुरस्कार के रूप में स्वीकार किया।

हरेंद्रनाथ मुंशी ने यह शिकायत कभी नहीं की कि उसे जेल में खराब खाना मिल रहा है या उससे निर्दयतापूर्वक काम लिया जा रहा है। उसकी शिकायत तो यह थी कि उसे गुंडों और कातिलों के समकक्ष माना जा रहा है। अपने सम्मान की रक्षा के लिए उसने ढाका के केंद्रीय कारागार में भूख हड़ताल प्रारंभ कर दी।

जब भूख हड़ताल के फलस्वरूप हरेंद्रनाथ की दशा बिगड़ने लगी तो जेल के अधिकारियों ने हत्या के कलंक से बचने के लिए बलात्पान की योजना बना डाली। जेल के अनाड़ी डॉक्टर ने नाक के रास्ते से जब रबड़ की नली हरेंद्रनाथ मुंशी के हलक के नीचे उतारी तो वह नली फेफड़े के अंदर पहुँच गई और उसके

सहारे काफी मात्रा में दूध उड़ेल दिया गया। हरेंद्रनाथ को जोरदार निमोनिया हो गया। उपचार भी उसी अनाड़ी डॉक्टर ने किया और परिणाम यह हुआ कि ३० जनवरी, १९३८ को वह इस दुनिया से कूच कर गया।

□

## ★ हिमांशु विमल सेन

सूर्यसेन की योजना के अनुसार चटगाँव स्थित फौज के शस्त्रागार पर १८ अप्रैल, १९३० की रात को दस बजे आक्रमण किया गया। इस टोली के नेता गणेश घोष थे और अनंतसिंह उनके सहायक थे। आक्रमण बहुत सफल हुआ। आक्रमणकारियों में से किसीकी जान नहीं गई। शस्त्रागार की रक्षा के लिए नियुक्त एक सैनिक की जान गई। पूरा हथियारखाना लूट लिया गया। उसमें इतने अधिक हथियार थे कि क्रांतिकारी लोग उन सभी को अपने साथ ले नहीं जा सकते थे। यह निश्चित किया गया कि अपनी गाड़ी में लादने के पश्चात् बचे हुए हथियारों में आग लगा दी जाए। यह काम हिमांशु विमल सेन ने अपने ऊपर लिया।

हिमांशु पेट्रोल का डिब्बा लेकर हथियारखाने में घुस गया और उसने बचे हुए सभी हथियारों पर पेट्रोल छिड़क दिया। वह यह नहीं देख सका कि उसके कपड़ों पर भी काफी पेट्रोल गिर गया है। उसने हथियारों में आग लगा दी। असावधानी से लपटों का स्पर्श उसके कपड़ों से भी हो गया। उसके कपड़ों ने आग पकड़ ली और उसका पूरा शरीर जलने लगा। साथियों ने झपटकर किसी प्रकार उसकी आग बुझाई। किसी स्थान पर उसे उपचार के लिए भेजना बहुत आवश्यक था। चार व्यक्तियों ने उसे हाथों पर उठाकर गाड़ी में डाला और गणेश घोष एवं अनंतसिंह उसे लेकर घटनास्थल से चल पड़े। भेद खुल जाने के भय से उसे किसी दवाखाने में नहीं ले जाया जा सकता था। दोनों साथी उसे चंदनपुरा क्षेत्र में ले गए और अपने दल के एक शुभचिंतक के खाली पड़े मकान में उसे छोड़ आए।

जिस मकान में घायल हिमांशु विमल सेन को छोड़ा गया था, वह सड़क के किनारे ही था। सड़क की तरफ ही उसके दो दरवाजे थे। एक दरवाजे में बाहर से ताला डाल दिया गया और दूसरा द्वार अंदर से बंद कर लिया गया।

गश्त लगानेवाला सिपाही जब उधर से निकला तो वह कुछ क्षण विश्राम करने के लिए उस मकान के चबूतरे पर बैठ गया। कमरे के अंदर से उसे किसीके कराहने की आवाज सुनाई दी। दरवाजे से कान लगाकर उसने अपने संदेह की पुष्टि

कर ली। थाने पर पहुँचकर वह एक थानेदार और कुछ सिपाहियों को अपने साथ ले आया। थानेदार ने उस दरवाजे को खटखटाया, जो अंदर से बंद था। दरवाजा खुला और सब लोग अंदर पहुँच गए। उन्होंने देखा कि एक युवक घायल अवस्था में चारपाई पर पड़ा कराह रहा है। एक छोटा बालक उसकी सेवा के लिए नियुक्त था। घावों में अधिक जलन होने के कारण हिमांशु ने उनपर गीली मिट्टी लपेट ली थी। मिट्टी सूखकर तड़कने लगी थी और उसके घावों में असहनीय पीड़ा होने लगी थी। उसी पीड़ा से वह कराह रहा था। घायल अवस्था में ही हिमांशु को गिरफ्तार करके अस्पताल भिजवाया गया। उसके घावों में जहर पैदा हो गया और उसे बचाया नहीं जा सका। २८ अप्रैल, १९३० की शाम को अस्पताल में उसकी मृत्यु हो गई। पुलिस ने उससे कुछ बयान अवश्य लिये थे; पर हिमांशु ने कोई महत्त्वपूर्ण बात उन लोगों को नहीं बताई।

□

# ★ हेमू कलानी
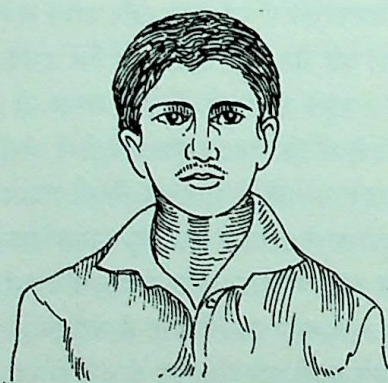
हेमू कलानी

हेमू कलानी सिंध प्रदेश का रहनेवाला था। अपेक्षाकृत शांत रहनेवाले हेमू कलानी ने अगस्त क्रांति में अपना नाम कमा लिया। हेमू कलानी ने अपनी किशोरावस्था में ही फाँसी का फंदा चूमा।

हेमू कलानी ने अपने साथियों के सामने विचार रखते हुए कहा—

''देश की आजादी के लिए कुछ कर गुजरने का यह बहुत अच्छा समय है। इस समय जब समस्त भारत में 'करो या मरो' का नारा गूँज रहा है तो सिंध प्रांत में भी कुछ कर दिखाना चाहिए।''

हेमू कलानी के साथी उसके विचारों से सहमत थे; पर उन लोगों के सामने कोई स्पष्ट कार्यक्रम नहीं था। उनके सामने कार्यक्रम की रूपरेखा भी हेमू कलानी ने ही रखी—

''मुझे ज्ञात हुआ है कि अंग्रेज सैनिकों की एक पल्टन ट्रेन द्वारा सक्खर से गुजर रही है। ये लोग 'भारत छोड़ो आंदोलन' के आंदोलनकारियों को कुचलने के लिए ही जा रहे हैं। अपनी गोलियों से ये लोग जाने कितने लोगों की जान लेंगे! ये लोग ऐसा कर सकें, इसके पहले ही हम ट्रेन की पटरियाँ उखाड़कर इनके इरादों को मिट्टी में मिला दें।''

नंद और किशन नाम के दो युवक हेमू कलानी का साथ देने के लिए तैयार हो गए। तीनों युवकों ने रेल की पटरियाँ उखाड़ने का सामान जुटा लिया और सक्खर की बिस्कुट फैक्टरी के पास पहुँचकर रेल की पटरियाँ उखाड़ने का काम करने लगे।

चाँदनी रात थी। तीनों युवक बड़ी तेजी से रेल की पटरियाँ उखाड़ने के काम में लग गए। निस्तब्ध दिशा में खटखट की आवाज दूर तक पहुँच रही थी। पटरियों की रक्षा के लिए तैनात प्रहरी दल भी उस तरफ ही घूम रहा था। उसने कुछ आवाज सुनी और आवाज की दिशा में कुछ आकृतियाँ भी देखीं। प्रहरी दल ने घटनास्थल पर पहुँचकर तीनों युवकों को गिरफ्तार कर लिया।

फौजी अदालत में उन लोगों पर मुकदमा चला। हेमू कलानी ने पटरियाँ उखाड़ने की सारी जिम्मेदारी अकेले अपने ऊपर ले ली। उसने कह दिया कि नंद और किशन उसके साथी न होकर राहगीर थे, जो खड़े होकर पटरियाँ उखाड़ने का काम देखने लगे थे।

फौजी अदालत ने हेमू कलानी को फाँसी का दंड सुना दिया। १९४२ की क्रांति के लिए वह नौजवान हँसते-हँसते फाँसी के फंदे पर झूल गया।

☐

## ★ सन् १९४२ का 'भारत छोड़ो आंदोलन'

### दुनिया की सबसे बड़ी जनक्रांति

भारत की आजादी के प्रयास में सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो आंदोलन' को अगस्त क्रांति के नाम से भी पुकारा जाता है। यह दुनिया की सबसे बड़ी जनक्रांति थी। वर्णन के विस्तार में न जाकर उस समय के सरकारी आँकड़ों की जबानी, उस क्रांति की कहानी सुन लीजिए। वास्तविक आँकड़े कुछ और थे। ब्रिटिश हुकूमत द्वारा दिए गए आँकड़े इस प्रकार हैं—

अगस्त क्रांति को दबाने के लिए—

पुलिस और फौज की गोलियों से नौ सौ चालीस आदमी मरे और एक हजार छह सौ तीस घायल हुए। पुलिस एवं फौज ने पाँच सौ अड़तीस बार गोलियाँ चलाईं और हवाई जहाजों से छह बार हमले हुए। विभिन्न स्थानों पर साठ हजार दो सौ उनतीस व्यक्ति गिरफ्तार हुए और अठारह हजार लोग नजरबंद किए गए। साठ स्थानों पर क्रांति को कुचलने के लिए सेना को बुलाना पड़ा।

क्रांति की चपेट में उनसठ रेलगाड़ियाँ गिराई गईं और तीन सौ अठारह स्टेशन नष्ट हुए। नौ सौ चौवन डाकखानों पर हमले हुए और बारह हजार स्थानों पर टेलीग्राफ तार काटे गए।

सन् १९२१ और सन् १९३० के आंदोलनों में जनता के दिलों से यदि जेल का भय दूर हुआ था, तो सन् १९४२ की जनक्रांति से लोगों के दिलों से मृत्यु का भय दूर हो गया।

इतनी बड़ी जनक्रांति के विषय में जान लेना आवश्यक है कि क्या वह क्रांति विशुद्ध रूप से अहिंसात्मक थी या वह सशस्त्र क्रांति का एक स्वरूप थी। इसमें कोई संदेह नहीं कि अगस्त क्रांति का प्रारंभ अहिंसात्मक आंदोलन के रूप में ही बंबई में पास हुए अगस्त प्रस्ताव से हुआ। अगस्त प्रस्ताव पर बोलते हुए गांधीजी ने भावावेश में कहा—

"पूर्ण गत्यवरोध, हड़ताल और समस्त अहिंसात्मक साधनों का प्रयोग करके प्रत्येक व्यक्ति अहिंसा के अंतर्गत चरम सीमा तक जाने के लिए स्वतंत्र है। सत्याग्रही मरने के लिए बाहर जाएँ, जीने के लिए नहीं। राष्ट्र का उद्धार केवल उसी अवस्था में होगा, जबकि लोग मृत्यु को ढूँढ़ने और उसका सामना करने के लिए बाहर निकलेंगे। हमारा नारा होगा—'करो या मरो'।"

गांधीजी तो 'करने या मरने' का मंत्र देकर जेल में चले गए। उनके साथ ही वे सभी लोग भी जेल में बंद कर दिए गए, जो यह निर्देश दे सकते थे कि कैसा मरना है। हर स्थान पर नेतृत्वविहीन जनता ने स्वयं यह निर्णय किया कि क्या करना है और कैसे मरना है!

नेताओं के जेलों में चले जाने के कारण 'करो या मरो' का नारा जनता के लिए अस्पष्ट नारा बन गया। लोगों ने सोचा कि यदि मरने के लिए बाहर जाना है तो जेलों से दूर रहना है और वे सब काम करने हैं, जिनसे मृत्यु का वरण होता है। मृत्यु का वरण करने के लिए तो तोड़-फोड़ और आगजनी ही साधन हो सकते हैं। इसी कारण जनता ने तोड़-फोड़, लूटपाट, आगजनी और अन्य हिंसक उपायों का सहारा लिया; जिनसे मृत्यु आसानी से कमाई जा सकती है। मृत्यु-वरण के लिए आमरण अनशन भी एक साधन हो सकता था; पर वह साधन अपनाने के लिए जेलों में डाल दिया जाता और लोग जेलों से बाहर रहकर मौत कमाना चाहते थे। अत: उन्होंने वही किया, जो उन्होंने उचित समझा।

इन सभी तथ्यों की समीक्षा करके हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि अगस्त क्रांति एक मिश्रित क्रांति थी और वह सशस्त्र क्रांति के अधिक निकट थी। अगस्त क्रांति के सभी क्रांतिकारियों के विवरण देना संभव नहीं था, अत: केवल उन्हीं शहीदों के विवरण दिए जा सके हैं, जिनकी शहादत की पुष्टि विभिन्न सूत्रों से हो सकी।

□□□
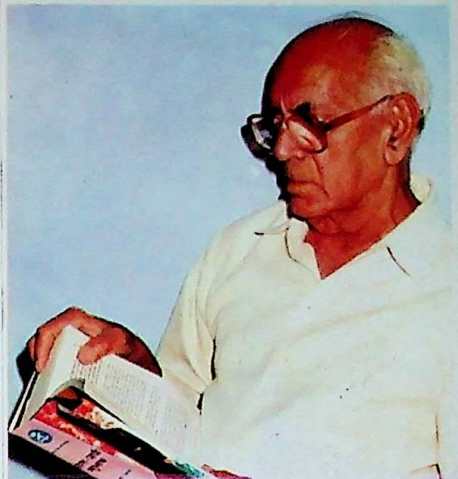
**श्रीकृष्ण 'सरल'**

**जन्म :** १ जनवरी, १९१९ को अशोक नगर, गुना (म.प्र.) में।

श्रीकृष्ण सरल उस समर्पित और संघर्षशील साहित्यकार का नाम है, जिसने लेखन में कई विश्व कीर्तिमान स्थापित किए हैं। सर्वाधिक क्रांति-लेखन और सर्वाधिक महाकाव्य (बारह) लिखने का श्रेय सरलजी को ही जाता है।

श्री सरल ने एक सौ सत्रह ग्रंथों का प्रणयन किया। नेताजी सुभाष पर तथ्यों के संकलन के लिए वे स्वयं खर्च वहन कर उन बारह देशों का भ्रमण करने गए, जहाँ-जहाँ नेताजी और उनकी फौज ने आजादी की लड़ाइयाँ लड़ी थीं।

श्रीकृष्ण सरल स्वयं स्वतंत्रता संग्राम सेनानी रहे तथा प्राध्यापक के पद से निवृत्त होकर आजीवन साहित्य-साधना में रत रहे। उन्हें विभिन्न संस्थाओं द्वारा 'भारत-गौरव', 'राष्ट्र-कवि', 'क्रांति-कवि', 'क्रांति-रत्न', 'अभिनव-भूषण', 'मानव-रत्न', 'श्रेष्ठ कला-आचार्य' आदि अलंकरणों से विभूषित किया गया।

**निधन :** १ सितंबर, २००० को।